गो० श्री हरिरायजी प्रणीत

अष्टसखान की वार्ता.

(रंग बेरंगी १३ चित्रों के साथ)

(तीन जन्म की लीला भावना वाली)

★

[ऐतिहासिक, सैद्धान्तिक एवं भावना के सैकड़ों पद तथा
विश्वस्त बहिःसाक्ष्य-परिचय संयुक्त]

★

संपादक :
द्वारकादास परीख

प्रकाशक :
अग्रवाल प्रेस, मथुरा

प्रथम संस्करण

संवत् २००७ विक्रम

वल्लभाब्द ४७३

सर्व स्वत्व स्वाधीन

मूल्य ३), सजिल्द ४)

मुद्रक एवं प्रकाशक :

प्रभुदयाल मीतल, अग्रवाल प्रेस, अग्रवाल भवन, मथुरा.

वार्ताओं के टीकाकार :

गो० श्रीहंरिरायजी महाप्रभु

आविर्भाव सं० १६४७ भाद्र कृष्णा ५, तिरोधान सं० १७७२.

भूतल स्थिति वर्ष १२५

★

भूमिका

★

प्रस्तुत ग्रन्थ आज से आठ वर्ष पूर्व "प्राचीन वार्ता-रहस्य" द्वितीय भाग के रूप में कांकरौली विद्या विभाग द्वारा प्रकाशित हुआ था। वह संस्करण कुछ ही दिनों में अप्राप्य हो गया था। किन्तु प्रेस, समय आदि की असुविधा के कारण काफी माँग रहते हुए भी उसका द्वितीय संस्करण प्रकाशित नहीं हो सका। अब अनुकूल समय आने से उसी ग्रन्थ के दो संस्करण एक साथ प्रकाशित हो रहे हैं। एक कांकरौली विद्या-विभाग से दूसरा वल्लभीय ग्रन्थ माला से। कांकरौली का संस्करण मूल चौरासी वार्ता के साथ भाषा की दृष्टि से प्रकाशित हो रहा है। दूसरा यह प्रस्तुत संस्करण ऐतिहासिक अंतः साक्ष्यादि महत्वपूर्ण सामग्री के साथ निकल रहा है। दोनों संस्करण तत्तत् दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं।

प्रस्तुत ग्रन्थ में इन आठ वार्ताओं के साथ उनके महत्वपूर्ण ऐतिह्य प्रसंगों की पुष्टि करने वाली सामग्री उसके परिचय के साथ यथोपलब्ध प्रकाशित की जा रही है। यह सामग्री अंतः साक्ष्य एवं अष्टछाप से संबंधित ऐसे दो प्रकार की हैं। यह सामग्री विशेषतः कांकरौली सरस्वती भंडार, बहादरपुर के कीर्तनकार भाई छगन लालजी, श्रीनाथद्वारा के कीर्तनकार श्रीजमनादासजी जरी वाले, शास्त्री बसन्तराम द्वारा प्रकाशित कीर्तन कुसुमाकर, नडियाद से प्रकाशित कीर्तन रत्नाकर, और अहमदाबाद तथा बम्बई से प्रकाशित नित्य कीर्तन तथा उत्सव कीर्तनादि प्रसिद्ध ग्रन्थों से एकत्रित की गई हैं। इनके अतिरिक्त कुछ सामग्री हमारे अन्वेषण में उपलब्ध कीर्तन की कतिपय हस्तप्रतियाँ और अन्य पत्र पत्रिकादि से भी संग्रहीत की गई है। इसमें जो विवादास्पद विषयों के महत्वपूर्ण और अप्रसिद्ध पद आदि हैं, उनका परिचय प्रमाण तथा विज्ञान से प्रस्तुत ग्रन्थ के "सामग्री परिचय" प्रकरण में विशेष रूप से दिया गया है। इससे इनके अध्ययन कर्ताओं को संतोष हो सकता है। मुद्रित प्रसिद्ध एवं सामान्य सामग्री का परिचय स्थानाभाव के कारण विशेष रूप से नहीं दिया जा सका है।

हमारी इच्छा यह थी कि हम इन आठों कवियों के चरित्र ग्रन्थ, सिद्धांत तथा काव्य पर विज्ञान एवं प्रमाण दोनों दृष्टि से इसी ग्रंथ में कुछ लिखें। किन्तु इस पुस्तक में उतना स्थान नहीं है। अतः इस लेखन को हमने अपने "ब्रजभाषा के पुष्टिमार्गीय भक्त कवि" नामक ग्रन्थ के लिए अभी स्थगित कर दिया है।

हिन्दी विद्वानों ने अष्टछाप में से अभी तक केवल सूरदास और नंददास पर ही कुछ गवेषणा और अध्ययन किया है। इन दो कवियों के चरित्रों में भी दो विषय सबसे विशेष विवादास्पद हो रहे हैं। एक सूरदासकी जन्मांधता का दूसरा नंददासको गार्हस्थ्य का सद्भाग्य से इन दोनों विवादास्पद विषयों के निश्चित एवं विश्वस्त अंतः साक्ष्य उपलब्ध हो चुके हैं। उन साक्ष्यों को प्रमाण एवं विज्ञान की कसौटियों पर प्रस्तुत ग्रंथ के "सामग्री परिचय" प्रकरण में पूर्णतया कसा गया है। अतः यहाँ हम इन दोनों महत्वपूर्ण विषयों की वास्तविकता पर ही केवल वैज्ञानिक ढंग से संक्षिप्त किंतु गम्भीर विचार करना उचित समझते हैं।

१ नन्ददास का गार्हस्थ्य—यह विशुद्ध ऐतिहासिक विषय केवल विश्वस्त प्रमाणापेक्षित है। इसकी पुष्टि के विश्वस्त प्रमाण "सामग्री-परिचय" में विशेष विवेचन पूर्वक दिये गये हैं। अतः उनसे विशेष कुछ कहने की यहाँ अपेक्षा नहीं रह जाती है।

२. सूर की जन्मांधता—इस विषय में जो विवाद है, वह यह है, कि सूरदास यदि जन्मांध होते तो उनके काव्य में उपलब्ध प्रकृति के यथार्थ रूप रंगादि का वर्णन होना सर्वथा सम्भव नहीं था। इस प्रश्न का उत्तर शास्त्रीय विज्ञान पद्धति से सयुक्ति हम अपने "सूर-निर्णय" ग्रन्थ में विस्तारपूर्वक दे चुके हैं। फिर भी आज की मनोविज्ञान की दृष्टि से यहाँ उस पर विशेष विचार किया जाता है।

प्राणी-विज्ञान का ज्ञाता यह जान सकता है, कि मानसी भावों का कितना भारी असर हो सकता है। इसके दो दृष्टांत यहाँ दिये जा रहे हैं। एक कबूतर का, दूसरा कीट-भ्रमर का। कबूतर जो अंडा धरता है उसमें निखालस प्रवाही पदार्थ-रस होता है। किन्तु २१ दिन तक अपने स्वरूप का मानसी-भावों द्वारा ध्यान करता हुआ वह

उसका सेवन करता है तब वही प्रवाही रस कबूतर बन जाता है। यहाँ यह स्मरण दिलाना भी आवश्यक है कि यदि सुचारू रूप से वह कबूतर उसे अंडे का सेवन नहीं करता तो उसमें कुदरती प्रकार से बच्चा सर्वथा नहीं होता है। इसलिये मानना होगा कि कबूतर के सेवन से ही वह रस, मूर्त रूप धारण करता है। कबूतर के सेवन की क्रिया केवल उस अंडे को अपने नीचे दाब कर स्व स्वरूप का ध्यान करना मात्र है। इससे कबूतर की गरमी उस अंडे में पहुँचती है। और उसका ध्यान रूप मानसी-भाव उसमें कबूतर के रूप को प्रकट करता है।

दूसरा दृष्टांत कीट-भ्रमर का है। भ्रमरी जिस कीड़ा को डंक लगाती है वह कीड़ा डंक की असह्य वेदना के आंतरिक दुःख से दुःखी होकर भ्रमरी के पुनः आने के भय से निरन्तर भ्रमरी के ही ध्यान में रत हो जाता है। इस प्रकार का निरन्तर ध्यान उस कीट को स्वतः भ्रमरी का रूप प्राप्त करा देता है। यह भावना का वास्तविक विज्ञान इस बात को सिद्ध करता है कि जो जिसमें तन्मय होता है, उसमें उनके धर्म, रूप, आदि सब प्रकट होते हैं, और वह तद्रूप हो जाता है। इसी बात को नन्ददासजी कहते हैं—

भृंगी भजे ते भृंग होय यह कीट महा जड़।
कृष्ण प्रेम में कृष्ण होय कछू नाहिन अचरज बड़॥

सूरदास ने इसी विज्ञान की पद्धति से अपनी चैतन्य आत्मा का आनन्द-मूर्त्त रूप में साक्षात्कार किया था। उन्होंने महाप्रभु वल्लभाचार्यजी से इस आत्मा का यथार्थ ज्ञान प्राप्त कर निरंतर उसका अपने हृदय में श्रवण मनन द्वारा निदिध्यासन किया। इससे उसके आनन्द मूर्त्त रूप की हृदय में सुचारू प्रकार से स्थिति हुई। यह चैतन्य आत्मा सर्व इन्द्रियों को प्रकाशमान करने वाली है। अतः उसके साक्षात्कार से सूरदास की कुंठित नेत्रेन्द्रिय भी स्वयं-प्रकाश अर्थात् दिव्य हुई, जैसा कि वे इस पद में कहते हैं—

सन्मुख आवत बोलत बैन।
ना जानूं तिहिं समै जु मेरे "सब तन श्रवन कि नैन"॥
रोम रोम में सुरति शब्द की "नख सिख लोचन ऐन"।
इते माँझ बानी चंचलता सुनी न समुझी सैन॥
तब जकि थकि चकि ठई मौन मुख अब न परै चित्त चैन।
सुन हू 'सूर' यह सत्य किधौं है सुपनौ दिन रैन॥

इस आत्म—साक्षात्कार का ज्ञान सूरदास के वात्सल्य के पदों के अध्ययन से भी हो सकता है। यह तो मानी हुई बात है कि सूरदास वात्सल्य रस के सर्वोच्च एवं सर्व प्रथम कवि थे। सूरदास से पूर्व किसी भी कवि ने वात्सल्यरस की सर्वांगपूर्ण रचनाएँ नहीं की थीं। संस्कृत एवं भाषा का ऐसा कोई ग्रन्थ उपलब्ध नहीं जिसमें वात्सल्यरस का परिपूर्ण वर्णन हुआ हो। इस वर्णन में सूरदास को किसी से प्रेरणा नहीं मिली है। यह तो उनकी आत्मानुभूति का ही सामर्थ्य था कि उन्होंने बालोचित समस्त भावों तथा चेष्टादिका इतनी मार्मिकता और गभीरता पूर्वक पुष्ट एवं परिपूर्ण वर्णन किया। ऐसा वर्णन उनके पश्चात् भी आज तक किसी ने नहीं किया हैं। इससे यह सिद्ध है कि उन्होंने आत्मानुभूति प्राप्त करके ही इस प्रकार का अद्भुत वर्णन किया है। इससे उनके आत्मसाक्षात्कार की पुष्टि होती है। इस प्रकार अन्तः साक्ष्यादि विश्वस्त सामग्री तथा वैज्ञानिक विचार पद्धति से सूरदास की जन्मांधता सिद्ध होती है। अतः हमें लब्धप्रतिष्ठ विद्वानों के पूर्व कथनों के प्रभाव को अपने हृदय से हटाकर इस विषय पर पुनः गंभीर एवं स्वतंत्र विचार करना आवश्यक है।

अंत में हम ऐसी महत्वपूर्ण सामग्री की प्राप्ति में योग देने वाले महानुभाव गो० श्रीव्रजभूषणलालजी महाराज काँकरौली, श्रीकण्ठमणि जी शास्त्री काँकरौली, श्रीछगनलाल जी बहादरपुर, श्रीजमनादास जी कीर्तनिया जी नाथद्वारा आदि का उपकार मानते हैं। अष्टछाप के ब्लॉक तथा प्रस्तुत पुस्तक के मुद्रणादि के लिये श्री प्रभुदयालजी मीतल का भी उपकार भूलाया नहीं जा सकता। इन कीर्तनों की छपाई में रु० १००) की स्व इच्छा से सहायता देने वाले प० भ० भाई चुन्नीलाल लालजी भाई मोडासा का भी हम आभार मानते हैं।

सुरभिकुण्ड (जतीपुरा) —द्वारकादास परीख

रामनवमी २००७

चि० श्री ब्रजेशकुमार कांकरौली

सामग्री-परिचय

अंतःसाक्ष्य सामग्री

★

१ सूरदास—प्रस्तुत ग्रंथ में सूरदास के चरित्र विषयक इन विषयों की अंतःसाक्ष्य सामग्री दी गई है—

१ जाति, २ जन्मांधता, ३ गृह त्याग समय, ४ सगुन ज्ञान ५ स्वामित्व ६ विरह, ७ नाम निवेदन, ८ शरणकाल, ९ गुरूआश्रय, १० सुबोधिनी श्रवण, ११ श्रीनवनीत प्रियजी १२ स्वमार्ग उत्कृष्टता १३ मंदिर संबंध १४ सख्यता १५ सूरसागर १६ शुद्धाद्वैत सिद्धांत १७ उपस्थितिकाल १८ दशविध लीला सूचक ।

इसमें जाति (पद सं० १-२), स्वामित्व (७-८) विरह (९) गुरू आश्रय (१३-१४) श्रीनवनीतप्रियजी (१६-१७) मंदिर संबंध (२०-२१) सख्यता (२२) सूरसागर (२३) उपस्थिति काल (२५) ये पद मुद्रित सूरसागर की प्रतियों में तथा वार्ता में प्रसिद्ध हैं ।

जाति विषयक पद—सं०२ की गई "जाति अभिमान मोह मद पति हरिजन पहचानि" इस पंक्ति में 'हरिजन'के स्थान पर 'परजन' पाठ भेद मिलता है । किन्तु इससे अर्थापत्ति उपस्थित नहीं होती है । इस विषय के दोनों पद सूरदास की उच्च जाति, ब्राह्मणत्व-के सूचक है । प्रस्तुत वार्ता के सूरसागर प्रसंग की पुष्टि करने वाला पद (२३) लखनऊ से प्रकाशित 'सूरसागर' संस्करण सातवाँ ,पृष्ठ ६०९ पर है । उपस्थिति काल सूचकपद (२५) के "तीनों पन भरि बहौरि निबाह्यो" उल्लेख से सूरदास बाल, युवा, और वृद्ध अवस्था को पूर्ण कर उसके आगे अर्थात् सौ वर्ष की पूर्ण आयु भुगत कर उससे भी विशेष आयु प्राप्त कर चुके थे यह स्पष्ट होता है । ऐसे उल्लेख वाले दो तीन प्रसिद्ध पद और भी है । इनसे उनकी पूर्ण आयु सूचित होती है ।

शेष विषयों के पद हस्त प्रतियों में तथा साम्प्रदायिक कीर्तन की मुद्रित पुस्तकों में होने से हिन्दी विद्वानों के लिये अपरिचित हैं। उनका परिचय इस प्रकार है—

जन्मांधता—इस विषय के दो पद (सं० ३-४) हैं। उनमें "नाथ मोहि अब की बेर उबारो" यह पद "नवजीवन कार्यालय" अहमदाबाद से मुद्रित भजनावली पृ० १०६ तथा राग रत्नाकर पृ० २०३ पर प्रकाशित हो चुका है। इन दोनों प्रतियों में कहीं भी पाठ भेद नहीं मिलता है। इसी प्रकार उसका "करमहीन जनम को अन्धो" यह उल्लेख विशुद्ध भौतिक चरित्र का सूचक है। उसका कोई आध्यात्मिक अर्थ नहीं किया जा सकता।

वैज्ञानिक अध्ययन से भी इस पद की प्रमाणिकता इस प्रकार सिद्ध होती है—

इस पद का प्रत्येक शब्द एवं उसकी सार्थक योजना, जिस प्रकार सूरदास के इस विषय के अन्य प्रसिद्ध पदों के शब्द और उनकी शैली से संपूर्ण मिलती है, उसी प्रकार इस पद के भाव, दृष्टांत आदि भी उन पदों के भाव-दृष्टांत आदि से पूर्णतः मिलते हैं।

जन्मांधता का प्रथम पद (३) किन तेरो गोविंद नाम धरयो" हमारे संग्रहालय में संग्रहित सूरदासादि के पद—संग्रहों की दो प्रतियों में उपलब्ध है। उनमें एक बिना सन् संवत् की है। और दूसरी वि० सं० १८६६ के अश्वनि (आश्विन ?) सुदि ७ शुकर वार श्रीमस्कत बंदर मध्ये लिखित ठकर कचरा परमानंद की है। बिना सन् संवत की लिखी हुई प्रति सन् संवत् वाली से विशेष प्राचीन है। उसमें अष्टछाप के कवियों के अतिरिक्त विष्णुदास, रसिक (हरिराय), संतदास तथा मतिराम के ज्ञान, वैराग्य और लगन के पद है। इससे इस प्रति का लेखनकाल संवत् १८०० के आस पास का अनुमान होता है। इसकी स्याही, कागज और लेखन शैली से भी हमारे उक्त अनुमान की पुष्टि होती है।

वैज्ञानिक अध्ययन से भी "किन तेरो गोविंद नाम धरयो" उस पद की प्रामाणिकता सिद्ध होती है। इसमें भी सूरदास के अन्य प्रसिद्ध पदों के समान ही शब्द सार्थक योजना, † ईश्वर

---

† इसे समझने के लिये देखिये 'सूर निर्णय' पृ० ७

को भी खरी खोटी सुनाने की उनकी प्रकृति, तथा दृष्टांत आदि का संपूर्णसाम्य है। राग रत्नाकर में यह पद पृ० २०२ पर दिया हुआ है। किन्तु उसमें "जन्म अंध करयो" के स्थान पर 'कानन मूंद धरयो' ऐसा छपा है, जो स्पष्ट अशुद्ध प्रतीत होता है। इसका कोई अर्थ नहीं है। इस प्रकार विज्ञान से भी इन दोनों पदों की प्रमाणिकता सिद्ध होती है। और उनसे सूरदास जन्मांध सिद्ध होते हैं।

गृहत्याग समय—इस विषय का संख्या ५ का पद भी हमारे संग्रहालय की उक्त दोनों प्रतियाँ में प्राप्त है। इस पद के शब्द आदि भी पूर्ववत् सूरदास के अन्य प्रसिद्ध पदों से संपूर्णत: मिलते हैं। इसका " चल्यो सवेरो आयो अवेरो लेकर अपने साजा " प्रस्तुत वार्ता के इस विषय के कथन को संपूर्ण रूप से पुष्ट करता है। इसमें सूरदास बाल्य अवस्था में गृहत्याग करके बहोत समय पश्चात् महाप्रभु वल्लभाचार्य जी के शरण में आये थे, ऐसा स्पष्ट आभास मिलता है। इसकी विशेष पुष्टि इस पद से और भी होनी है।

" मन तू मूरख क्यों कर रह्यो ?
पहेलो पन खेल में खोयौ बृथा जनम गयो।
क्यों न भजे तू पुरुषोत्तम कों जातै काम भयो।
'सूरदास' भगवन्त भजन बिनु जगमें हार गयो।

यह पद भी हमारी उक्त दोनों हस्त प्रतियाँ में प्राप्त है। इस से यह स्पष्ट होता है कि सूरदास पहले पन अर्थात् बालपन के अनन्तर युवापन में महाप्रभु वल्लभाचार्यजी के जिनको वे पुरुषोत्त-माभिन्न मानते थे, शरण में आये थे। बाह्यसाक्ष्यों के अनुसंधान से सूरदास अपनी ३१ वर्ष की वय में महाप्रभु के शरण में आये थे, ऐसा सिद्ध होता है। यह वय उनके द्वितीय युवापन को स्पष्ट करती है। इस प्रकार विश्वस्त बहि:साक्ष्यों से इन पदों की पुष्टि होती है।

सगुन का ज्ञान—इस विषय का एक पद सं०६ का सम्प्रदायकी अनेक मुद्रित प्रतियों में भी प्राप्त होता है। भाषा आदि के अध्ययन से इसकी प्रामाणिकता स्पष्ट है। इसलिये सूरदास सगुन तथा ज्योतिष का ज्ञान प्राप्त कर चुके थे, यह जाना जा सकता है। इससे प्रस्तुत वार्ता के इस विषय की पुष्टि होती है।

नाम निवेदन मंत्र—'अजहू सावधान किन होई' यह सं० १०

का पद हमारे उक्त दोनों हस्तप्रतियों में है। और मुद्रित सूरसागर म भी है। दूसरा पद 'यामें कहा घटेगो तेरो' सं-१६ का सम्प्रदाय को 'कीर्तन रात्नाकर' 'कीर्तन कुसुमाकर' आदि अनेक पुस्तकों में मुद्रित हो चुका है। और भाषादि के अध्ययन से भी इन दोनों की प्रामाणिकता में किसी भी प्रकार का संदेह उपस्थित नही हो सकता है। इनसे सूरदास का पुष्टिमार्गीय होना सिद्ध होता है।

शरणकाल—'श्रीवल्लभ दीजे मोहि बधाई' यह सं० १२ का पद भी छगन भाई बहादरपुर वाले की बधाई की पुस्तक से लिया गया है। और मंदिरों में गाया भी जाता है। इसलिये यह श्री गुसांई जी के ढाढी का पद है। नवजात शिशु श्री विट्ठलेश को लेकर महाप्रभु गोवर्द्धन पधारे थे तब का यह है। सूरदास के निम्न लिखित पद से इसके भाव, शब्दादि की पुष्टि होती है।

हरि हरि हरि सुमिरन करौं हरि चरनारविंद उर धरो।
श्रीमद्वल्लभ प्रभु के चरन तिनके गहौ सुदृढ करि सरन॥
विट्ठलनाथ कृष्ण सुत जाके,सरन गहे दुख नासहिं ताके।
तिनके पद मकरंदहिं पाउं 'सूर' कहे हरि के गुन गाऊं॥

यह पद वि० सं० १६१२ में लिखे गये कांकरोली सरस्वती भडार के 'सूरसागर' के ११ स्कंध के प्रारंभ में दिया हुआ है।

उक्त पद से सूरदास का शरण काल वि० सं० १५७२ के पूर्व का ठहरता है। जो अन्य बहि:सक्ष्यों से पुष्ट है।

सुबोधिनी श्रवण—यह पद अभी तक हमें वसंतराम शास्त्री द्वारा प्रकाशित केवल 'कीर्तन कुसुमाकर' में ही मिला है। अन्यत्र देखने में नहीं आया है। फिर भी भाषादि से इस पद में कोई संदेह नहीं होता है इसलिये इसकी प्रामाणिकता ग्राह्य की जाती है। इससे यह ज्ञात होता है कि सूरदास महाप्रभु की सुबोधिनी का सुनते थे, जिसकी पुष्टि वार्ता से भी होती है।

स्वमार्ग की उत्कृष्टता—सं० १८, १६ के ये दोनों पद हमारे संग्रहालय की उक्त पुस्तकों में प्राप्त है। और साम्प्रदायिक कीर्तन की

पुस्तकों में मुद्रित भी हो चुके हैं। भाषाआदि से भी इनकी प्रामाणिकता स्पष्ट है । इससे सूरदास की स्वमार्ग प्रति की निष्ठा जानी जा सकती है।

शुद्धाद्वैत सिद्धांत तथा भागवतोक्त दशविधि लीला—इन विषयों के दोनों पद सं० कांकरौली सरस्वती भंडार के उक्त सूरसागर में मिलते हैं । और भाषा सिद्धांतादि से भी उसकी सुचारु रूप से पुष्टि हो जाती है । इनसे सूरदास के शुद्धाद्वैत सिद्धांतानुयायी होने की तथा 'श्रीवल्लभ गुरु तत्व सुनायो लीला भेद दिखायो, यह सारावली वाले कथन की भी पुष्टि हो जाती है।

२. परमानंददास—प्रस्तुत ग्रंथ में परमानंददास के चरित्र विषयक इन विषयों की अंतःसाक्ष्य सामग्री दी गई है—

१. शरणागति, २. गुरू ईश्वर में अभेद बुद्धि, ३. समर्पण दीक्षा, ४. शरण काल, ५. ब्रज में बसिवे की अभिलाषा, ६. लीला स्मरण, ७. महाप्रभु से कथा सुनने का संकेत, ८. सुबोधिनी का अनुसरण, ९. यमुनाष्टक का अनुसरण, १०. पुष्टिमार्ग का स्वरूप सूचक, ११. प्रत्यक्ष विरह, १२. पुष्टिमार्गीय विश्वास, १३. अनुग्रह भक्ति, १४. अनुग्रह की महिमा, १५. अड़ेल से गोकुल आने के समय यमुना पार उतरने की उत्सुकता, १६. ब्रजवास सूचक, १७. मंदिर संबंध सूचक, १८. साम्प्रदायिक सेवा शृंगार पद्धति, १९. स्वतंत्र लेख का अनुसरण, २०. निबंध का अनुसरण, २१. सख्यता सूचक, २२. विविधि आसक्ति सूचक, २३. वल्लभ सिद्धांत और उसके विविधि विषय सूचक, २४. 'मंगलं मंगलं' का अनुसरण, २५. उपस्थिति काल सूचक, २६. खड़ी बोली।

शरणागति वृत सूचक—यह पद संख्या १ छगन भाई बहादरपुर वाले की हस्तलिखित कीर्तनों की पोथी में से प्राप्त हुआ है। इससे वार्तोक्त परमानंददासके शरण वृत्त वर्णन की पुष्टि होती है। इस पद के 'दुसंग संग सब दूरि किये' कथन का तात्पर्य स्वामित्व अवस्था के सब प्रकार के संग से है । 'परमानंददास को ठाकुर नैनन प्रगट दिखायो'' का तात्पर्य वार्ता में उल्लिखित श्रीनवनीतप्रियजी के दर्शन से है।

गुरु ईश्वर में अभेद बुद्धि सूचक—ये दोनों पद सं० २, ३ भी छगनभाई की पुस्तकों में से प्राप्त हुए हैं। इनसे वार्ता के इस विषय

के कथन की पुष्टि होती है। वार्ता में लिखा है कि—'सो परमानंदस्वामी कौं श्रीआचार्यजी के दरसन अत्यद्भुत अलौकिक साक्षात् श्रीकृष्ण के स्वरूप सौं भये। (पृ० ४०) परमानंददास के भाव भाषा आदि का अध्ययन करने वालों को इन पदों की प्रामाणिकता में संदेह नहीं हो सकता है।

समर्पण दीक्षा सूचक-ये पद सं० ४-५-६-७ 'परमानंदसागर' में तथा सम्प्रदाय की अन्य मुद्रित पुस्तकों में सर्वत्र उपलब्ध हैं।

शरणकाल सूचक—यह पद सं० ८ छगन भाई की बधाई की पुस्तक में से उपलब्ध हुआ है। इस पद में प्राप्त वर्णन 'कुंडल लोल कपोल की सोभा नासा मोतिन राजै हो' श्री विट्ठलेश की चार पाँच वर्ष की आयु को स्पष्ट करता है। इससे परमानंददास के शरण काल का बहिःसाक्ष्यों से निश्चित किया हुआ वि० सं० १५७७ का समय पुष्ट होता है।

ब्रज में बसिबे की अभिलाषा तथा लीला का स्मरण सूचक—ये सब पद सं० ६ से १३ वार्ता एवं सूरसागर के प्रारंभिक नित्य कीर्तन संग्रह में प्रसिद्ध हैं। इनसे वार्तोक्त इन विषयों के कथनों की पुष्टि होती है।

महाप्रभु से कथा सुनने का संकेत—यह पद सं० १४ सम्प्रदाय के मुद्रित कीर्तन-संग्रहों में प्रसिद्ध है। इसका 'तीर्थ माहात्म्य जानि जगतगुरुसौं परमानंददास लही' कथन वार्ता के 'सो जा समय (जो) प्रसंग की कथा श्रीआचार्यजी के श्रीमुख तैं सुनते ताही प्रसंग के कीर्तन कथा भये पाछे परमानंददास श्री आचार्यजी कौं सुनावते' (पृ० ४३) इस उल्लेख की पुष्टि करता है।

सुबोधिनी का अनुसरण—'लालकौं भावे गुड़ गांड़े और बेर' इस पद सं० १५ का 'परमानंददास को ठाकुर पिल्ला लायो घेर' यह कथन श्रीसुबोधिनी प्रमेय प्रकरण अध्याय १६ के 'अजागावो महिष्यश्च निर्विशन्त्यो वनाद् वनम् ।' श्लोक की सुबोधिनी के स्पष्टीकरण रूप है। सुबोधिनी में 'श्च' के प्रयोग पर आचार्य जी लिखते हैं कि—

'चकारादन्ये हरिणाद्यश्च लीलार्थं गृहीता श्वानो वा ।—सु०

यह प्रसंग श्रीकृष्ण के ग्वालरूप से संबंधित है । श्रीकृष्ण जब गाय, भैंस और अजा चराने को जाते थे, तब साथ में श्वान आदि को क्रीडार्थ रखते थे। आज भी ग्वालें इसी प्रकार से बन में जाते हुए दिखाई देते हैं। इसी ग्वाल रूपका परमानंददास ने इस पद में दर्शन कराया है।

'देखौं कौन मन राखि सकैरी' यह पद सं० १६ श्रीमद्भागवत के १०-२६ के 'कास्त्र्यंगते कल पदामृत' का भावानुसरण है।

यमुनाष्टक का अनुसरण-'गंगा तीन लोक उद्धारक'सं० १७ यह पद कीर्तन की पुस्तकों में प्रकाशित हो चुका है। इसका 'परमानंददास' स्वामिनी के संगम आपुन भई सुकारथ' उल्लेख आचार्य जी कृत यमुनाष्टक के—

"यया चरणपद्मजा मुररिपोः प्रियं भावुका ।
समागमन तोऽभवत् सकल सिद्धिदा सेविताम् ।"

इस कथन के अनुसरण रूप है।

पुष्टिमार्ग का स्वरूप सूचक—यह पद सं० १८ कीर्तन-रत्नाकर आदि सम्प्रदाय की प्रत्येक पुस्तक में प्रकाशित होचुका है। इसमें विधि-निषेध से पर ऐसा शुद्ध प्रेम रूप पुष्टिमार्ग का वर्णन है।

प्रत्यक्ष विरह सूचक—यह पद (सं० १६) छगन भाई बहादुर पुर वाले के संग्रह में से लिया गया है। इसमें शुद्ध पुष्टि की तन्मय अवस्था का वर्णन है।

पुष्टिमार्गीय विश्वास, अनुग्रह भक्ति तथा अनुग्रह महिमा सूचक-ये सब पद सं० २० से २२ प्रकाशित हो चुके हैं। इनमें पुष्टि भक्ति का स्वरूप प्रदर्शित किया गया है।

यमुना पार उतरने की उत्सुकता सूचक—यह पद सं० २३ छगनभाई के संग्रह में से लिया गया है। इसमें अडेल से गोकुल आने के समय यमुना पार उतरने की उत्सुक्ता का आभास मिलता है।

व्रजवास सूचक—ये प्रसिद्ध पद २४ से २८ परमानंददास के व्रजवास तथा व्रज के पर्यटन का स्पष्ट सूचक है।

मंदिर संबंध सूचक-यह पद सं.२६सर्वत्र प्रसिद्ध और मुद्रित हैं।

इसका "परमानंद" "द्वारें दाद न पावै" कथन श्रीनाथजी के मंदिर में परमानंददास की नियुक्ति का सूचन करता है। दूसरा संख्या ३० का पद "परमानंद सिंघद्वारें होऊ" यह कथन उक्त बात की विशेष पुष्टि करता है।

साम्प्रदायिक सेवा शृंगार पद्धति—ये पद संख्या ३१ से ३५ सम्प्रदाय की कीर्तन पुस्तकों में प्रसिद्ध हैं। उनसे परमानंददास का पुष्टिमार्गीय सेवा शृंगार विषयक संबंध स्पष्ट होता है।

स्वतंत्र लेख का अनुसरण—यह पद सं० ३६ सम्प्रदाय के उत्सव कीर्तन की पोथियों में प्रकाशित होचुका है। यह श्रीगुसांईजी के 'अतः सर्वरस भोक्ता भगवान वृन्दावने विजयते, इति निरुपितम्' (वेणुगीत श्लोक १६) कथन के अनुसरण रूप है। 'यदा खलु वै पुरुषः श्रियमश्नुते वीणास्मै वाद्यत'—यह श्रुति यहाँ द्रष्टव्य है।

निबंध का अनुसरण—यह पद सं० ३७ उत्सव कीर्तन की मुद्रित प्रतियाँ में भी प्रसिद्ध है। हस्त लिखित में पंद्रह घड़ी हैं। किन्तु उन प्रतियों में सात घड़ी का उल्लेख है, जो गलत है। महाप्रभुजी ने अपने निबंध में श्रीराम के जन्म समय का इस प्रकार वर्णन किया है-

क्रिया रूपं चरित्रंहि तदादौ सुनिरूपितम्।
मध्यन्दिने हरेर्जन्म सूर्यवंशे तदा रविः ॥७७॥

(नवमस्कंध निबंध)

इससे १५ घड़ी वाला कथन ही प्रामाणिक सिद्ध होता है। क्योंकि चैत्र शुक्ल में दिन रात समान होने से १५ घड़ी पर ही मध्याह्न होता है।

सख्यता सूचक—ये पद ३८ से ४० "परमानंद सागर" में उपलब्ध हैं। इनसे परमानंददास की सख्यता स्पष्ट हो जाती है।

कुमार वय प्रति एवं श्रीविट्ठलेश प्रति आसक्ति तथा श्रीविट्ठलेश महिमा—ये पद ४१ से ४३ तक के सुप्रसिद्ध हैं और कीर्तन की पुस्तकों में भी प्रकाशित हैं। सं० ४१ पद परमानंद सागर में है। इनसे वार्तोक्त परमानंददास की बाललीला में आसक्ति तथा श्रीगुसांई जी प्रति के आदर की पुष्टि होती है।

वल्लभ सिद्धांत—ये पद संख्या ४४ से ४६ 'परमानंद सागर' के हैं। इनमें शुद्धाद्वैत ब्रह्मवाद तथा विशुद्ध प्रेम-पुष्टि भक्तिका तथ्य रूप से निरूपण किया है।

रामकृष्ण की अभेदता-यह प्रसिद्ध पद सं० ४७ सर्वत्र उपलब्ध है। यह पद श्रीमदाचार्यचरण के 'कृष्ण एव रघुनाथः' आदि सुबोधिनी के कथनों के अनुसरण रूप है। इसी प्रकार के पद सूरदास, नंददास और तुलसीदास के भी मिलते हैं। इनमें वार्ता के श्रीनाथजी तथा श्री रघुनाथजी के राम रूप से दर्शन देने वाले कथनों का आभास भी पाया जाता है।

नवधा भक्ति, भागवत और प्रेम भक्ति की महत्ता, गोपी प्रेम महिमा—ये सब पद सं० ४८ से ५२ कीर्तनों की मुद्रित प्रतियों में प्रसिद्ध हैं। इनमें पुष्टि-प्रेम मार्ग का विस्तार किया गया है।

वात्सल्य भाव, धनतेरस, जाड़े की बिदा संवत्सर-ये पद सं० ५३ से ५८ मुद्रित कीर्तन की पुस्तकों में विशेषतः कीर्त्तन कुसुमाकर में प्रसिद्ध हैं। ये सब पुष्टिमार्ग की सेवा प्रणाली से संबंधित हैं।

प्रीति विषयक-ये पद सं० ५६से६१ प्रसिद्ध हैं। इनमें पुष्टि मार्ग के दिव्य स्नेह का वर्णन है। दासी भाव सूचक-ये पद सं०६२-६३ कीर्तन की मुद्रित प्रतियों में प्रसिद्ध हैं। इनमें पुष्टिमार्गीय सेवा-भजन में आवश्यक भाव का संकेत है। श्री राधिका चरन महिमा—यह पद सं० ६४ कीर्तन की मुद्रित प्रतियों में उपलब्ध है। इसमें पुष्टिमार्गीय भावनानुसार श्री स्वामिनी का उत्कर्ष प्रकट किया गया है। साम्प्रदायिक परिपाटी—यह पद सं० ६५ नित्य सेवा के कीर्तनों की मुद्रित प्रतियों में उपलब्ध है। इसमें शयन अनन्तर मंदिरों में चुप रहने की अथवा ऊंचे स्वर से नहीं बोलने की परिपाटी का, जो श्रीनाथजी के यहां आज भी विद्यमान है, दर्शन होता है। ऐसा पद सूरदास का भी मिलता है।

किशोरलीला में बालभाव की झलक—यह पद सं० ६६ छगन भाई की पुस्तक से लिया गया है। इससे परमानंददास की बाल लीला प्रति की विशेष आसक्ति वाले प्रस्तुत वार्ता के कथन की पुष्टि होती है।

मंगलं मंगलं का अनुसरण—ये दोनों पद सं० ६७-६८ सूरसागर के नित्य कीर्तन के संग्रह में तथा कीर्तन कुसुमाकर आदि में

मुद्रित एवं प्रसिद्ध हैं। इनसे वार्ता के इस विषय के कथनकी पुष्टि होनी है। उपस्थिति काल--यह पद सं० ६६ भी सूरसागर के नित्य कीर्तन संग्रह तथा अन्यत्र भी मुद्रित एवं प्रसिद्ध है। इसके 'श्रीघनस्याम पूरनकाम पोथी में ध्यान' इस उल्लेख से परमानददास श्रीघनस्याम जी की किशोर अवस्था तक अर्थात् वि० सं० १६४० तक अवश्य विद्यमान थे एसा ज्ञात होता है। खडी बोली--यह पद सं० ७० सूर-सागर तथा अन्य कीर्तन की प्रायः सभी पुस्तकों में मिलता है। इससे अष्टछाप के समय में आज की खडी बोली का आविर्भाव हो चुका था एसा निश्चय होता है। राग रत्नाकर में सूरदास के भी खडी बोली के 'मैं योगी यस गाया' 'इस सूरसागर में प्रकाशित प्रसिद्ध पद के अतिरिक्त 'बरजो जसोदा जी कहाना' आदि पद मिलते हैं। "हे दैया मतवाला योगी द्वारे मेरे आया है" ये पद सम्प्रदाय की हस्त लिखित बाल लीला के पदों की प्रतियों में उपलब्ध होता है। इसी प्रकार रसखान का खड़ी बोली मिश्रित यह पद भी छगन भाई की होरी विषयक पदों की हस्त लिखित प्रति में हमें मिला है —।

काफी--

कैसा है यह देस निगोडा, जगत होरी ब्रज होरा ॥ कैसा० ॥
मैं जमुना जल भरन जात ही देखि बदन मेरा गोरा।
मोंसों कहैं चलो कुंजन में तनक तनक से छोरा,
परै आंखिन में डोरा ॥ कैसा० ॥
जियरा देखि डरात है सजनी आयो लाज सरम को ओरा।
कहा बूढै कहा लोग लुगाई एक तैं एक ठठौरा,
न काहू को काहू सें जौरा ॥ कैसा० ॥
मन मेरो हरयो नंद के ने सजनी चलत लगावत चोरा।
कहे 'रसखान' सिखाय सबन सों सब मेरा अंग टटौरा,
न मानत करत निहौरा ॥ कैसा० ॥

इन पदों से हिन्दी खडी बोली का आविर्भाव अकबर के समय में हुआ था, एसा निश्चय होता है।

३. कुंभनदास—प्रस्तुत ग्रंथ में कुंभनदास के चरित्र विषयक इन विषयों की अंतः साक्ष्य सामग्री दी गई हैं—

१. गुरु और ईश्वर में अभेद बुद्धि, २. मंदिर संबंध सूचक, ३. श्री गुसांई जी के प्राकट्य की बधाई, ४. आरती का रूपक, ५, सख्यत्व सूचक टोंड के घना का, ६. जाडे की बिदा, ७. स्वरूपासक्ति, ८. सीकरी जाने का, ९. विरह, १०. श्रीनाथजी का कुंभनदास के खेत में जाने का आभास, ११, नदगाँव प्रति गमन सूचक, १२. छप्पन भोग, १३. वर्षा का पद, १४. गोवर्द्धन एव ब्रज की धरनी की शोभा, १५. श्रीनाथ जी के मथुरागमन समय की उपस्थिति सूचक, १६. वि० स० १६२८ से ३४ तक की उपस्थिति सूचक, १७. भागवत दशम प्रारंभ ?

उक्त सामग्री में से विषय संख्या १२, १३, १५ और १७ के सिवाय सभी के सभी पद नित्य कीर्तन तथा कीर्तन कुसुमाकर की मुद्रित प्रतियाँ में छप चुके हैं। और उनके अर्थ भी स्पष्ट हैं। स्थानाभाव से हम यहां पर केवल अप्रसिद्ध पदों का ही परिचय दे रहे हैं— छप्पन भोग—यह पद संख्या १६ श्री जमनादास जरी वाले की हस्तलिखित वर्षोत्सव की पुस्तक से लिया गया है। यह श्रीनाथजी के सन्मुख भी गाया जाता है। इससे कुंभनदास वि० सं० १६१५ तक विद्यमान थे, ऐसा स्पष्ट होता है। वर्षा का—यह पद संख्या १७ छगन भाई की पुस्तक से लिया है। इससे अनुमान होता है कि कुंभनदास के समय में किसी वर्ष वर्षा का अभाव रहा होगा।

मथुरा गमन—यह पद सं० २० छगनभाई की नित्य कीर्तन की हस्तप्रति से लिया गया है। इसका 'कुंभनदास प्रभु गोवर्द्धनधर गवनत, तन मन प्रान सङ्ग लियो।' उल्लेख श्रीनाथ जी के मथुरा गमन का सूचक है। उस समय कुंभनदास जी मथुरा नहीं जा सके थे। इस लिये श्रीनाथ जी के विरह में उन्होंने यह पद गाया है। श्रीनाथ जी का मथुरा गमन का समय वि० सं० १६२३ निश्चित है। अतः तब तक कुंभनदास जी विद्यमान अवश्य रहे थे। इससे आगे की उनकी स्थिति पवित्रा वाले पद सं० १९ के "बैठें सत बालक परिवार" वाले उल्लेख से होती है। सांतवें बालक घनस्याम जी का अविर्भाव काल वि० सं० १६२८ निश्चित है। उस समय वे भी अन्य भाइयोंके साथ पवित्रा पहेरनेके लिये बैठे थे। इससे उस समय वे कम से कम ५-६ वर्ष के अवश्य रहे होंगे। इस प्रकार कुंभनदास जी की वि० सं० १६३४ पर्यंत की स्थिति स्पष्ट होती है। मुद्रित प्रतों में 'सत'

के स्थान पर 'सब' छपा हुआ है, जो हस्त लिखित प्रतियों के मिलान करने पर गलत सिद्ध होता है।

भागवत दशम प्रारंभ—यह पद संख्या २० हमें छगनभाई की पुस्तक से विशेष मिला है। इसे हम बधाई नहीं कह सकते। क्यों कि इसमें दशम के प्रारंभिक श्रीकृष्ण, चरित्र का क्रमबद्ध वर्णन मिलता है। इससे अनुमान होता है कि कदाचित् कुंभनदासजी ने दशम का आद्योपांत वर्णन करना प्रारंभ किया हो। किंतु वह गृहस्थ की झंझटों के कारण पूर्ण न हो सका हो। उस समय भागवत का अनुवाद करना एक सामान्य बात थी। "सूरदास मदनमोहन" ने भी भागवत दशम का अनुवाद किया है, जो कांकरौली सरस्वती भंडार में उपलब्ध है।

४ कृष्णदास—प्रस्तुत ग्रंथ में कृष्णदास के चरित्र विषयक इन विषयों की अंतःसाक्ष्य सामग्री दी गई है—

१ शरणागति सूचक, २ नाम निवेदन मंत्र, ३ वल्लभ अवतार ४ श्रीवल्लभ स्वरूपासक्ति, ५ श्रीनाथजी के मंदिर का सूचक, ६ गोपीनाथजी की बधाई, ७ श्रीगुसांईजी का ढाढ़ी ८ अनिष्ट प्रसंग, ९ अपराध क्षमा सूचक १० संकटकाल सूचक, ११ द्वादश राशि, १२ आरती १३ वसंत, १४ नेचुकी १५ वृंदावन गये उस समय का १६ वृंदावन जाने की पुष्टि, १७ स्वामिनी स्वरूप १८ आचार्य चरित्र सूचक, १९ प्रेम की पेंठ, २० स्वामिनी प्रति कृष्णासक्ति २१ उपस्थिति काल, २२ हिन्दी भाषा मिश्रित।

उक्त सामग्री के प्रायः सभी पद वार्ता, नित्य कीर्तन तथा कीर्तन कुसुमाकर में प्रसिद्ध हैं। उपस्थिति काल का सं० २७ का पद भी "सूर निर्णय" में प्रकाशित हो चुका है। यह पद हमें छगनभाई बहादरपुर वाले के वसंत होरी के कीर्तन संग्रह में से मिला है। इसकी विशेष छानबीन करने पर यही पद गो० श्रीव्रजभूषणलालजी कांकरौली के निजी संग्रह में भी देखने में आया। इसी प्रकार के कृष्णदास के दो तीन और पद भी इस संग्रह में हमें मिले। इससे इस पद की

प्रामाणिकता स्पष्ट हो गयी। इसी प्रकार के खेल की परम्परा आज भी गुसांई बालकों के यहाँ देखने में आती है। इससे भी यह पद पुष्ट होता है। " घनश्याम धाय फेंटन भराय " इस उल्लेख से इस खेल के समय श्री घनश्याम जी की कम से कम दस वर्ष की आयु होनी स्पष्ट होती है। इससे आठों सखाओं की उपस्थिति कम से कम वि० सं० १६३८ तक अवश्य थी, ऐसा ज्ञात होता है।

५ छीतस्वामी—प्रस्तुत ग्रंथ से छीतस्वामी के चरित्र विषयक इन विषयों की अंतःसाक्ष्य सामग्री दी गई है।

१ शरण मंत्र प्राप्ति, २ शरणकाल, ३ शरण समय का पद, ४ गिरिराज बास, ५ गोकुल का स्वामित्व, ६ गुसांई पदवी, ७ नहीं जाँचने का प्रण, ८ आश्रय, ९ प्रकट कृष्ण अवतार, १० अष्ट समय का, ११ काशी का शास्त्रार्थ, १२ उपस्थिति सूचक।

उक्त सामग्री के सभी पद प्रसिद्ध तथा मुद्रित हैं। इनमें से विषय सं० ५-६-१०-११ प्रभुचरण श्रीविट्ठलेश के चरित्र से संबधित हैं। छीतस्वामी श्रीनाथजी की अपेक्षा श्रीगुसांईजी में विशेष अनुरक्त थे। इसी लिये इनके पद श्रीगुसांईजी के चरित्र संबंधी विशेष मिलते हैं। विषय सं० १०-११ के पद गोकुल के श्रीगोकुलदासजी गोधरा वाले के संग्रह से लिये हैं। काशी शास्त्रार्थ (वि० सं० १६१३) वाले पद से छीतस्वामी वि० सं १६१३ से पूर्व सम्प्रदाय में दीक्षित हो चुके थे, यह ज्ञात होता है। श्रीगुसांईजी के तिरोधान अनन्तर गाया हुआ सं० १५ का वार्तोक्त पद छीतस्वामी की वि० सं० १६४२ पर्यंत की उपस्थिति को स्पष्ट करता है।

६ गोविंदस्वामी—प्रस्तुत ग्रंथ में गोविंदस्वामी के चरित्र विषयक इन विषयों की अंतःसाक्ष्य सामग्री दी गई हैः—

१ शरण पूर्व का वृंदावन बास, २ शरणकाल के अनुमान में सहायक, ३ शरण पश्चात स्वदेश गमन का, ४ सख्यता, ५ गिल्ली दंडा खेल की पुष्टि, ६ स्वामिनी का देवी पूजन, ७ गोविंददास नाम की पुष्टि, ८ साक्षात्कार, ९ जन्म संवत विषय, १० ज्योतिष ज्ञान।

उक्त सामग्री के सभी पद मुद्रित प्रतियों में उपलब्ध हैं। इन सबसे वार्ता के कथनों की पुष्टि होती है। श्री गिरिधरजी की कुमारा-

वस्था के वर्णन पद सं० २ से गोविंदस्वामी वि० सं० १६०० के पूर्व सम्प्रदाय में दीक्षित हो चुके थे, ऐसा अनुमान होता है। गोविंदस्वामी शरण के पश्चात् स्वदेश गये होने चाहिए। यद्यपि वार्ता में इसका उल्लेख नहीं है, फिर भी पद सं०३में इसका स्पष्ट आभास मिलता है। संभव है अपनी बहन कान्ह बाई को लेने तथा गृहस्थी की झंझट के आवश्यक कार्य के लिये गये हों। गोविंदस्वामी ज्योतिषज्ञ भी थे इसका आभास पद सं० १३ में मिलता है।

७ चतुर्भुजदास—प्रस्तुत ग्रंथ में चतुर्भुजदास के चरित्र विषयक इन विषयों की अंतःसाक्ष्य की सामग्री दी गई हैं:—

१ अल्प वयमें शरण आने का संकेत, २ शरण समय का, ३ गुरू ईश्वर में अभेद बुद्धि, ४ विरह, ५ प्रथम मिलन, ६ छप्पन भोग (पद संख्या, ७ यह शीर्षक-भूलसे छपना रह गया है) संस्कृत मिश्रित रचना, ८ जाड़े की विदा, ९ मंगल मंगल का अनुसरण, १० खट ऋतु वार्ता का समर्थन।

उक्त सभी सामग्री कीर्तन कुसुमाकर आदि ग्रंथों में प्रकाशित हो चुकी है। संस्कृत मिश्रित रचना (पद सं० ८) से ज्ञात होता है कि उस समय संस्कृत को सरल बना कर उसका व्यापक प्रचार करने का विचार समाज में अवश्य हुआ होगा। क्योंकि और भी अन्य कई कवियों के ऐसे पद मिलते हैं। इन से इस बात की पुष्टि होती है।

८ नंददास—प्रस्तुत ग्रंथ में नंददास के चरित्र विषयक इन विषयों की अंतःसाक्ष्य सामग्री दी गई हैं—

१ नाम दीक्षा, २ निवेदन, ३ शरण समय के पद, ४ द्वितीय समय व्रजागमन, ५ व्रज के विरह, ६ भक्ति भावना, ७ द्वितीय व्रजागमन समय का पद, ८ व्रजवास, ९ पुष्टि भक्ति, १० छप्पनभोग, ११गनगौरि, १२ मकर संक्रांति, १३ पतंग, १४ लक्ष्मण भट्ट के जन्म दिन का, १५ पांडव यज्ञ, १६ रागों की माला, १७ नंदछाप, १८ द्वार-स्थिति, १९ रामकृष्ण की अभेदता, २० रघुनाथजी की बधाई (तुलसीकृत), २१ तुलसीदास के गोकुल जाने का, २२ बाल भाव मिश्रित किशो लीला का, २३ स्वामिनी शृंगार, २४ आचार्य मत का अनुसरण—

उक्त सामग्री में से विषय संख्या १, २, ३ ७, ८, ९, १२, १३, १६, १८, १९, २२, २३, २४, के पद विशेष प्रसिद्ध हैं।

द्वितीय समय ब्रजागमन सूचक—विषय संख्या ४, ५, ६, के इस विषय के पद श्रीभट्टजी महाराज के संग्रह-ग्रंथ से प्राप्त हुए हैं। ये पद छगन भाई बहादरपुर वाले के संग्रह में भी हैं। ये पद नंददास के इतिहास में विशेष उपयोगी हैं। विषय संख्या ४ के पद का प्रामाणिक विस्तृत विवेचन हमने अपने 'सूर-निर्णय, में किया है। उसके कथन की पुष्टि विषय सं० ५-६ के पदों से होती है। नंददास के ये विरह और भक्ति भावना के पद (सं० ६-७) भाषा और भावों से इतने प्रामाणिक जान पड़ते हैं कि नंददास की सामग्री का अध्ययनशील कोई भी व्यक्ति इनमें संदेह नहीं कर सकता है। इन पदों के शब्दों का माधुर्य और उनकी तादश प्रकार शैली बरबस चित्त को विश्वास कराती है।

छप्पनभोग का—यह पद सं० १३ जमनादासजी जरी वाले के संग्रह से मिला है। यह श्रीनाथ जी के यहाँ भी भोग सरने के समय गाया जाता है। इससे नंददास का वि० सं० १६१५ के पूर्व इस सम्प्रदाय में दीक्षित होना निश्चित होता है।

लक्ष्मण भट्ट के जन्म दिन का—यह पद छुट्टन लालाजी गोकुल वाले से काँकरौली में मिला था। इससे महाप्रभु जी के पिता का जन्म दिवस अषाढ़ सुदी० ६ का निश्चित होता है।

पांडव यज्ञ—यह बृहद पद सं० १८ हमारी संग्रहीत तथा छगन भाई बहादरपुर वाले की पुस्तकों में उपलब्ध है। इससे वार्ता के 'भागवत के दशम कथा के अनुवाद वाले कथन की पुष्टि होती है। नंददास रचित 'सुदामा चरित्र' 'रुक्मणि विवाह' आदि दशम उत्तरार्द्ध के ही यह प्राप्त अंश हैं।

रघुनाथजी की बधाई—यह पद (सं० ३५) छगनभाई बहादरपुर वाले की सात बालकों की बधाई की पुस्तक में है। यह मंदिरों में भी गाया जाता है। इसलिये इसकी प्रामाणिकता निर्विवाद सिद्ध है। तुलसीदास और नंददास के भ्रातृत्व तथा गोवर्द्धन-गोकुल में रघुनाथ जी के दर्शन होने के वार्तोक्त प्रसंगों की पुष्टि 'सम्प्रदाय कल्पद्रुम' (संवत् १७२६) से होती है। इससे भी विशेष प्राचीन उल्लेख श्री गोकुलनाथ जी के वचनामृत का है + जो इस प्रकार है—

+ इसका परिचय 'ब्रजभारती' में अंक सं० ४।४ में दिया गया है।

श्रीगोकुलनाथ जी का वचनामृत—

नंद्दास तुलसीदास का भ्रातृत्व—

'एक बार श्रीमुखैं बातनें प्रसंगै आज्ञा करी जो तुलसीदास मर्यादामार्गी हते। पर टेक कैसी हती, ते ऊपर दोहो कह्यौ ॥ दोहा ॥ बनै तो रघुवर ते बनैं बिगरैं तौ भरपूर । तुलसी औरन के बनें ता बनिबे में धूर ॥ १ ॥ जीव कों सर्वथा अनन्यता चाहिये ॥ ये तुलसीदास श्री गोकुल आये हते ॥ ता दिन श्रीरघुनाथ जी महाराज (श्री गुसांई जी के पंचम लाल जी) कौ विवाह हतौ । सो ठौर ठौर आनन्द होय रह्यौ हतो ॥ तब तुलसीदासजी नै पूछौ जो कहाहै ॥ ठौर२ आनंद दीसत है ॥ तब कोई ब्रजवासी बोल्यौ ॥ जो जानै नाहीं जो रघुनाथ जी को विवाह है ? तब तुलसीदास नैं कही जो कौन सौं विवाह है ? तब ब्रजवासी ने कह्यौ जो श्री जानकी जी सों विवाह है ॥ सो तुलसीदास जी श्री रघुनाथजी और जानकीजी को नाम सुनिक विह्वल ह्वै गये ॥ कह्यौ श्री रघुनाथ और जानकी कहां ? तब काहू ब्रजवासी ने श्री गुसांईजी कौ घर बतायौ ॥ सो उहां चले आये तब श्री गुसांईजी न श्रीरघुनाथ जी सों कह्यौ देखियो जो तुलसीदास आवत हैं तिनकौ अनन्य व्रत न जाय । तब श्रीरघुनाथ जी नैं तुलसीदास कौंश्रीरामचन्द्र जी के दर्शन दीये । तब दर्शन होत मात्र साष्टांग दण्डवत कीये ता समैं श्री रघुनाथ जी वर्ष पंद्रह के हते । सो पचीस वर्ष की बात श्री रघुनाथ जी ने तुलसीदास कौं (कही) ॥ जो फलानें फलानें दिन अयुध्या में तने हमकौं सामग्री समर्पी हती सो तोकौं इहां देहैं । तब तुलसीदास विस्मय होय गये । कह्यौ जो रैं जाकौं परमतत्व जानत हो ॥ सो तौ श्री गुसांई जी के घर सहज ही दर्शन भए । तब एक बधाई करिकै गाई ॥ 'बरनों अवध गोकुल गाम' ।

नन्ददासजी अष्टकाव्य वारे सो तुलसीदास के छोटे भाई ॥ तुलसीदास बड़े भाई । नन्ददासजी जब श्री गुसांईजी के सेवक भए ॥ तब तुलसीदास नैं कह्यौं 'भाई तैंने विभीचार कीयों' तब नन्ददास जी नें कह्यौ 'विभीचार तौ कीयों परन्तु सुख बहुत पायौ' ॥२३०॥

इन विश्वस्त बहिः साक्ष्यों से प्रस्तुत सामग्री के तुलसीदास के इन तीनों पदों की (संख्या २४, २५, २६,) पुष्टि होती है । पद संख्या २५)कॉंकरौली सरस्वती भंडार बन्ध १ × २ पृ० ६० में है पद संख्या २६ सम्प्रदाय के प्रत्येक कार्तन की पुस्तक में प्रकाशित है। ऐसे ही अन्य कई पद तुलसीदास के और भी प्राप्त हैं।

बहिःसाक्ष्य सामग्री

★

प्रस्तुत ग्रंथ की अष्टछाप से चरित्र संबंधित विश्वस्त बहिः साक्ष्य सामग्री का परिचय इस प्रकार है—

•

१ श्री गोपीनाथ जी की उपस्थित सूचक पत्र—यह पत्र महाप्रभु के प्रथम पुत्र श्री गोपीनाथ जी द्वारा वि० सं० १५६५ में जगदीश के पुरोहित को वृत्ति पत्रक के रूप में लिखा गया है। इसको हमने पढ़ा है। यह काँकरौली के इतिहास में भी प्रकाशित होचुका है। इससे गोपीनाथजी वि० सं० १५६५ तक विद्यमान थे, ऐसा निश्चित होता है। २ कनकाभिषेक का समय—यह ताड़पत्र तेलगू लिपि में था। यह सावली गुजरात के एक कूआ में से निकला था। इसका विशेष परिचय वि० सं० १६७६ के बम्बई से प्रकाशित 'गुजराती' पत्र के दीपावली के अंक में दिया गया है। इससे महाप्रभु के कनकाभिषेक का समय वि० सं० १५६५ निश्चित होता है। ३ श्री गुसांईजी के विप्रयोग का समय सूचक उल्लेख—यह 'संवाद' का उद्धरण है। इस से श्रीगोपीनाथजी के पुत्र श्रीपुरुषोत्तमजी के आधिपत्य के कारण श्री गुसांईजी के हुए विप्रयोग का समय श्रीबालकृष्ण जी के प्राकट्य सं० १६०६ के पूर्व का निश्चित होता है। ४ श्रीगुसांईजी का श्रीनाथजी के मन्दिर पर अधिकार प्राप्ति समय—यह उद्धरण वि० सं० १६१० में रचे हुए 'संप्रदाय प्रदीप' का है। इससे ज्ञात होता है कि वि० सं० १६१० के पूर्व श्रीगुसांईजी का श्रीनाथजी के मंदिर तथा सम्प्रदाय पर सर्वाधिकार हो चुका था। ५ श्रीगुसांई जी का एक पत्र—श्री गुसांई जी के १४ पत्र बम्बई के 'पुष्टि भक्ति सुधा' मासिक में प्रकाशित होचुके हैं। इनकी हस्त लिखित एक पुस्तक हमारे संग्रह में भी है। इस पत्र में कुंभनदास जी का उल्लेख तथा कृष्णदास के अधिकार का सूचन है। अंत में विज्ञप्ति के दो श्लोक हैं। इनसे यह पत्र का समय वि० सं० १६०६ के पश्चात् का ज्ञात होता है। ६ श्रीगुसांई जी का द्वितीय पत्र—उसमें 'कृष्णराय' (प्रा० सं० १६३३) का उल्लेख है। इससे यह पत्र का समय वि० सं० १६३३ के पश्चात् का ज्ञात होता है। इसमें कीर्तनकार गोविंददास (गोविंदस्वामी) को श्रीगुसांई जी ने

भगवद् स्मरण लिखा है। इसमे उभय की वय आदि की समान शीलता प्रतीत होतीहै। इससे गोविंद स्वामी का सख्यत्व भी ज्ञात होताहै। इस समय तक कृष्णदास की उपस्थिति थी, ऐसा उनके नाम के उल्लेख से जाना जा सकता है। ७ माधवदास रचित कडवें—यह कडवैं कॉंकरौली सरस्वती भंडार से प्राप्त हुए हैं। इसमें अकबर के निमंत्रण पर वि० सं० १६३८ के माघ वदी ६ (गुर्जर ?) को श्रीगुसांईजी आगरा में बादशाह द्वारा बुलायी गयी तत्त्ववादियों की सभा में पधारे थे, इसका स्पष्ट उल्लेख है। इस समय बादशाह ने संतुष्ट होकर श्री गुसांई जी को अपना राज्य समर्पण किया था; किन्तु गुसांई जी ने उसे अस्वीकार कर दिया था। फिर एक देश देने को कहा उसे भी अस्वीकार कर दिया। और कहा कि यदि तुम मुझे कुछ देना चाहते हो तो आज पीछे हमें यहाँ नहीं बुलाना। ये कडवें अपूर्ण हैं। अन्यथा इनमें तत्त्ववाद के शास्त्रार्थ तथा अन्य महत्त्वपूर्ण विशेष वर्णन भी मिल सकता था। ये कडवें भी गुसांईजी के २५२ वैष्णवों में से एक माधवदास द्वारा रचे गये होने से विश्वस्त बहिः साक्ष्य रूप हैं। ८-९ छप्पनभोग के दो पद—इन पदों के कर्ता श्रीगुसांईजी के सेवक माणिकचंद जी तथा भगवानदास हैं। इनसे श्रीगुसांई जी द्वारा किये गये छप्पनभोग की पुष्टि हाती है। ये दोनों पद कॉंकरौली सरस्वती भंडार के प्राचीन पुस्तकों में उपलब्ध हैं। १० घन्नूजी के वचनामृत—यह हमारे संग्रह में प्राप्त हैं। इससे वि० सं० १६४० में श्रीगुसांईजी ने श्री गोकुल में श्रीनवनीतप्रियजी के पास सात स्वरूप को पधरा कर राज-भोग अरोगा था। उस बात की पुष्टि होती है। ११ नाथद्वारे की नोंध-यह नोंध कृष्ण भंडार नाथद्वारे के एलकार मगनलाल ईश्वरदास बहादरपुर वाले ने भंडार की किसी नोंध पोथी से उतार ली थी। उसे वि० स० १६६१ में छगनलाल बहादरपुर वाले ने उतरवा ली थी। उन से हमें प्राप्त हुई है। इसकी भाषा गुजराती, मेवाड़ी और व्रज मिश्रित है। नाथद्वारे का नामा इसी मिश्रित भाषा में आज तक लिखा जारहा है। इससे इसकी प्रामाणिकता स्पष्ट होती है। इसका प्रत्येक कथन ऐतिहासिक होने के कारण बड़ा महत्त्वपूर्ण है। बहिः साक्ष्यों से माला प्रसग के संवत् में दो वर्ष का अंतर आता है। इसके अतिरिक्त सब संवत प्रामाणिक सिद्ध होते हैं। बंगालियों वाला उल्लेख वार्ता के

बीरबल-टोडरमल के कथनों की पुष्टि करता है। वि० सं० १६२८ में ये दोनों राज-पुरुष महत्वपूर्ण पदों पर विद्यमान थे। श्रीगुसांईजीके संस्कृत पत्रों में भी बीरबल, राय पुरुषोत्तमदास आदि का नामोल्लेख मिलता ही है। किन्तु 'प्रदीप' आदि के उद्धरणों से हमारा अनुमान है कि बंगालियों को गोस्वामी श्री विट्ठलनाथजी ने वि० सं० १६१० के पूर्व ही मंदिर से निकाल दिया था। उसका झगड़ा अकबर के पूर्व शेरशाह के समय में होचुका था। यह झगड़ा मंदिर के नौकरी के संबंध में था। फिर बादशाह अकबर के सुदृढ़ शासन होने पर वि० सं० १६२८ में बंगालियों ने श्रीनाथजी की मालिकी का झगड़ा और उठाया। जिसका सूचन इसमें है। यह झगड़ा तय हो जाने पर बंगालियों का संपूर्ण अधिकार नष्ट हो गया।

——×——

विषय सूची

★

१.	अंतः साक्ष्य सामग्री		पृ० १ से ६६
२.	अष्टछाप से संबंधित सामग्री		पृ० ६७ से ८७
३.	सूरदास	(वार्ता)	पृ० १
४.	परमानंददास	,,	पृ० ३३
५.	कुंभनदास	,,	पृ० ५७
६,	कृष्णदास	,,	पृ० ९७
७.	छीतस्वामी	,,	पृ० १३९
८.	गोविंदस्वामी	,,	पृ० १४७
९.	चतुर्भुजदास	,,	पृ० १६६
१०.	नंददास	,,	पृ० १८९

चित्र-सूची

१. चि० श्री ब्रजेशकुमार

२. अष्टछाप का संयुक्त चित्र

३. श्रीनाथ जीका (त्रिरंगा)

शुद्धि-पत्र

पुस्तक के पढ़ने से पूर्व कृपया इन पंक्तियों को सुधार लें—

पृ०		पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१.	सूरदास (अंतःसाक्ष्य)	१०.	भगवंत भजन बिनु	भगवंत भजन लगि
२६.	परमानंददास	२५.	मंगलं मिह	मंगलमिह
५६	चतुर्भुजदास	१८	विरहन के	विरहनि के
५८	नंददास	६	प्रान नहीं रहै	प्रान नहीं रहैं
५६	,,	१५	लै लै दधि भौतरी	लैलै दधि भागतरी
६०	,,	१०	ब्रज की बालनं	ब्रज की बालन
६०	,,	१६	गह पर	गह्वर
६१	,,	४	एंचन	ऐंचत
,,	,,	५	भट्ठ	भट्ट
,,	,,	१६	हाध	हाथ
६४	,,	२	धूप द्वीप	धूप दीप
६४	,,	१४	चितवैरी जै जै	चितवैरी मो तन । जैजै
,,	,,	१५	करति 'मोतन हंसि'	करति 'बड़ हँसि'
,,	,,	२३	दसमें	दसयें
६७	,,	१४	पुत्रं	पत्रं
,,	,,	२२	मांधवामर्शा	माधवा मायां
,,	,,	२६	स्वकीय	स्वकीयै
,,	,,	३०	वैशाख कृष्णामादिने	वैशाख कृष्णामादिने
६८	,,	४	श्रीसामराज्ये	श्रीसाम्राज्ये
		२३	शु० १	शु० ११
३२	सूरदास (वार्ता)		उद्धार करि दियो ता	उद्धार करि दियो तासों
१४४	छीतस्वामी	६	गोप बधू ब्रज में	गोप बधू ही ब्रज में
१४७	,,	८	श्रीहरिराय जी कृत सोउ	सोउ
१५०	गोविंदस्वामी	६	वे सेवन करते	वे सेवक करते
,,	,,	८	चरणविंद्र प्राप्ति	चरणारविंद की प्राप्ति
,,	,,	२६	तातें तेरे ऊपर	तातें मेरे ऊपर
,,	,,	३३	को आथय करनो	को आश्रय करनो
१७१	चतुर्भुजदास	२६	और एसे समे	और एक समें
१६१	नंददास	३०	कंठ पान बिना	कंठ पानी बिना
२०३	,,	३	खों मिलिवे कों	सों मिलिवे कों

अन्य समझ में आने वाली सामान्य भूलों को स्वयं सुधार लें।

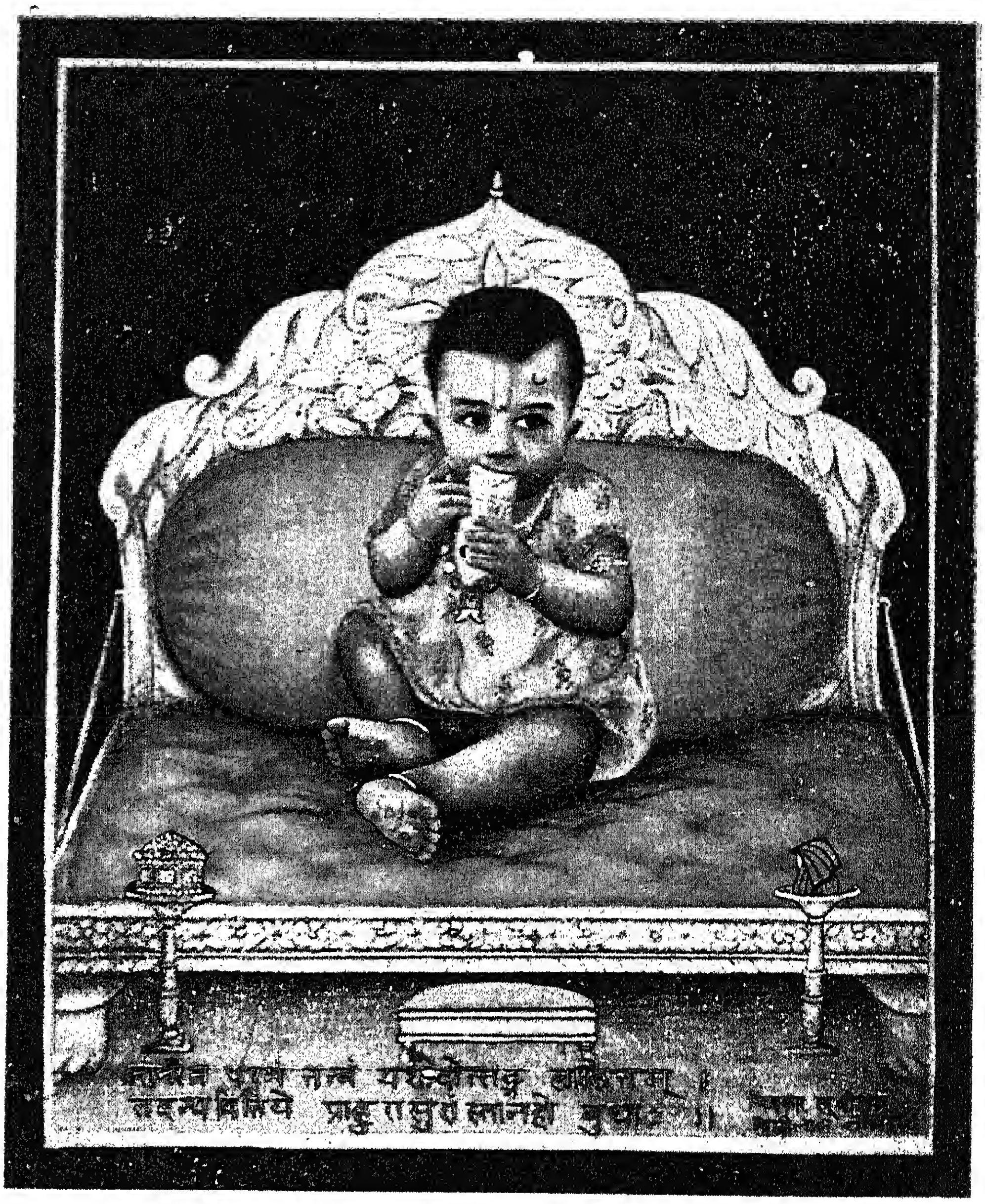

श्रीगिरिधरगोपाल

★

१—सूरदास

जाति सूचक—

(सारंग)

मेरे जिय ऐसी आय बनी।
छाँड़ि गोपाल औरें जो सुमिरौं, तो लाजै जननी ॥
विष को मेरू कहा लै कीजै, अमृत एक कनी।
मन कर्म बचन और नहिं चितवौं, जब तब स्यामधनी ॥
कहाँ लौं करौं काच को संग्रह, छाँडि अमोल मनी।
'सूरदास' भगवंत भजन बिनु, तजी जाति अपनी ॥१॥

(सारंग)

बिकानी हौं हरि मुख की मुसकानि।
परबस भई फिरत संग निसदिन, सहज परी यह बानि ॥
नैननि निरखि बसीठी कीन्हीं, मन मिलियो पय पानि।
गह रतिनाथ लाज निज पुरतैं, हरिकौं सौंपी आनि ॥
सुनरी सखी मुखी नंदनंदन की, चेरी सब जग जानि।
जोई जोई कहेत करत सोई कृत, आयस माथे मानि ॥
गई जाति अभिमान मोह मद, पति हरिजन पहचानि।
'सूर' सिंधु सरिता मिलि जैसै, मनसा बुंद हिरानि ॥ २ ॥

जन्मांधता सूचक—

(धनाश्री)

किन तेरौ गोविंद नाम धरयो॥।
सांदीपनि के सुत तुम ल्याये, जब विद्या जाय पढ्यो ॥
सुदामा की दारिद्र तुम काटी, तंदुल भैंटि धरयो।
द्रुपद सुता की लाज तुम राखी, अंबर दान करयो ॥
जब तुम भए लेवा देवा के दाता, हमसों कछु न सरयो।
'सूर' की बिरियाँ निठुर होइ बैठे, जन्म-अंध करयो ॥ ३ ॥

(भूपाली)

नाथ ! मोहि अबकी बेर उबारौ।
तुम नाथन के नाथ सुवामी, दाता नाम तिहारौ ॥
करम हीन जनम को अंधो, मौतैं कौन नकारौ।

तीन लोक के तुम प्रतिपालक, मैं तो दास तुम्हारौ ॥
तारी जाति कुजाति प्रभु जू, मोपैं किरपा धारौ।
पतितन में इक नायक कहिये, नीचन में सरदारौ ॥
कोटि पापी इक पासंग मेरे, अजामिल कौन बिचारौ।
धरम नाम सुनिकैं मेरो, नरक कियौ हठ तारौ ॥
मोकौं ठौर नहीं अब कोऊ, अपुनौ बिरद सम्हारौ।
छुद्र पतित तुम तारे रमापति, अब न करो जिय गारौ ॥
'सूरदास' साँचौ तब माने, जो ह्वै मम निस्तारौ ॥ ४ ॥

गृहत्याग समय सूचक—

(धनाश्री)

सब पतितन को राजा, प्रभु मैं०卐।
करि नहिं सक बराबरि मेरी, पाप करन कौं ताजा ॥ प्रभु० ॥
चारि चुगली के चँमर ढरत हैं, काम क्रोध दुलबाजा।
निंदा के मेरैं छत्र फिरत हैं, तौऊ न उपजी लाजा ॥
चल्यो सवेरो आयो अबेरो, लेकर अपने साजा।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरे मिलि हैं, देखत जमदल भाजा ॥५॥

सगुन विषयक ज्ञान सूचक—

(धनाश्री)

मिलैं गोपाल सोई दिन नीकौ।
जोतिष निगम पुरान बड़े ठग, जानो फाँसी जीकौ ॥
जो बूझे तो उत्तर देहौं, बिनु बूझे मत फीकौ।
कमल मीन दादुर यों तरसब, सब घन बरखत अमीकौ ॥
भद्रा भली भरनी भय हरनी, चलत मेघ अरु छींकौ।
अपुने ठौर सबे ग्रह नीके, हरन भयो क्यों सीयकौ ॥
सुन मूढ़ मधुकर ब्रज आयो, लै अपयस को टीकौ।
'सूर' जहाँ लौं नेम धरम व्रत, सो प्रेमी कोडीकौ ॥ ६ ॥

स्वामित्व सूचक—

(धनाश्री)

हौं हरि सब पतितन को नायक।
को करि सकै बराबरि मेरी, इतै मान को लायक ॥

जो तुम अजामिलसौं कीनी, सो पाति लिखि पाऊं।
होय विश्वास भलो जिय अपने, और पतित बुलाऊं ॥
सिमिट जहँ तहँ तैं सब कोऊ, आय जुरैं इक ठौर।
अब के इतने आन मिलाऊं, बेर दूसरी और ॥
होडा होडी मन हुलास करि, करैं पाप भरि पेट।
सबहि लैं करि पाँयन पौरौं, यहे हमारी भेंट ॥
एसी कितेक बनाऊं प्रानपति, सुमरिन ह्वै भयो आड़ौ।
अबकी बेर निबेर लेहु प्रभु, 'सूर' पतितको टाँड़ो ॥७॥

(धनाश्री)

प्रभु मैं सब पतितन को टीकौ।
और पतित सब द्यौस चार के, मैं तो जनमत हीकौ ॥
बधिक अजामिल गनिका तारी, और पूतना हीकौ।
मोहि छाँडि तुम और उद्धारे, मिटे सूल कैसें जीकौ ॥
कोउ न समर्थ सुद्ध करन कौं, खैंचि कहत हौं लीकौ।
मरीयत लाज 'सूर' पतितन में, कहत सबै मोहि नीकौ ॥ ८ ॥

विरह सूचक—

(धनाश्री)

जियरा कौन नींद कर सोयो।
भूलि गयो विषया सुख में सठ, जन्म अकारज खोयो ॥
करत दगा तामें हित माने, मरम बिचारि न जोयो।
घर दारा मानत करि मेरे, मिथ्या तापर मोह्यो ॥
संकट समैं नहीं कोई तेरे, जैसे नीर बिलोयो।
'सूर' हरिको सुमिरन करकैं, मिलिजा जातैं (भयो) बिछोयो ॥९॥

नाम निवेदन मंत्र सूचक—

(धनाश्री)

अजहू सावधान किन होहि।
माया सुख हि भुवंगन कौ विष, उतर्यौ नाहिन तोहि ॥
कृष्ण नाम सो मंत्र संजीवनि, जिन जग मरत जिवायो।
बार बार ह्वै श्रवन निकट तोहि गुरु गारुडी सुनायो ॥

बहुत अध्यास देह अभिमानी, मो देखत इन खायो ।
कोऊ कोऊ उबरे साधु संगति मिलि, स्याम धनंतर पायो ॥
सलिल मोह नदी क्यौं तरि सकि, बिना गीत ताके गाये ।
'सूर' मिटैं अज्ञान मूरछा, ज्ञान मूरि कै खाये ॥१०॥

(केदारौ)

यामें कहा घटेगो तेरौ ।
नंदनंदन करि घर कौ ठाकुर, आपुन ह्वै रहे चेरौ ॥
भली भई जो संपति बाढ़ी, बहुत कियो घर घेरौ ।
कहुं हरि-सेवा कहुं हरि-कथा, कहुं भक्तन कौ डेरौ ॥
जूवती जूथ बहुत संकेलै, वैभव बढ्यो घनेरौ ।
सबै समर्पन 'सूर' स्यामकौं, यहे साँचौ मत मेरौ ॥११॥

शरण काल सूचक—

(धनाश्री)

श्रीवल्लभ दीजै मोहि बधाई ।
श्री लक्ष्मन सुत द्विज के राजा, कीजै कहा बड़ाई ॥
बहुरि कृष्ण अवतार लियो है, सदन तुम्हारैं आई ।
कोटि कोटि कलि जीव उद्धारन, प्रगटे श्री जदुराई ॥
चिरजीवो अक्काजी को सुत, श्री विट्ठल सुखदाई ।
गिरिधरलाल कौ ढाढी कहावै, 'सूरदास' बलि जाई ॥१२॥

गुरु आश्रय—

(बिहाग)

श्रीबल्लभ भले बुरे तोउ तेरै ।
तुम ही हमारी लाज बढ़ाई, बिनती सुनो प्रभु मेरै ॥
अन्य देव सब रंक भिखारी, देखे बहुत घनेरै ।
हरि प्रताप बल गिनत न काहू, निडर भये सब चेरै ॥
सब त्यजि तुम सरनागत आये, दृढ़ करि चरन गहेरै ।
'सूरदास' प्रभु तिहारे मिले तैं, पाये सुखजु घनेरै ॥१३॥

(बिहाग)

दृढ़ इन चरनन केरौ भरोसौ ।
श्रीवल्लभ नख चन्द्र छटा बिनु, सब जग माँझ अंधेरौ ॥

साधन और नहीं या कलि में, जामें होत निवेरौ।
'सूर' कहा कहै द्विविध आँधरौ, बिना मोल को चेरौ ॥१४॥

सुबोधिनी श्रवण सूचक—

(जंगला)

कहा चाकरी अटकी जनकी।

वेस्यन के द्वार पर भटकत जात जन्म आसा करि धनकी ॥
जाय धरम धन आवे न आवे, छाया है रवि पीठ करनकी।
दिनकर पुनः फिरत मर साँधे, बाँध कमर नित्य चाह लरनकी ॥
आयुष नेम नहिं या कलि में, छन भंगुर जानौ या तनकी।
तजौ त्रिलोक बड़ाई सौंज करौ, भव सिंधु तरन की ॥
कहा परतीत सक्ति संपति की, कर पालना गर्भ वचन की।
ऐसो समय बहोरि नहिं पैये, यह बिरियाँ नहिं नाद करन की ॥
करम ज्ञान आसय सब देखें, वहाँ ठौर नहिं पाँव धरन की।
श्री सुकदेव के बचन आसय, सुनो सुबोधिनी टीका जिनकी ॥
नित्य संग करो वैष्णव को, सेवा करो नंद सुवनकी।
'सूर' कहे मन ! सेवा त्यजिकैं, चिंता कहा करे उदर भरनकी ॥१५॥

श्रीनवनीतप्रियाजी का वर्णन—

(बिलावल)

देखेरी हरि नंगमनंगा।

जलसुत भूषन अंग बिराजित, बसन हीन छबि उठत तरंगा ॥
कहा कहुं अंग अंग की सोभा, निरखत लज्जित कोटि अनंगा।
कछु दधि हाथ कछु मुख माखन, 'सूर' हँसत ब्रजयुवतिन संगा॥१६॥

(बिलावल)

सोभित कर नवनीत लिये।

घुटुरूवन चलत रेनु तन मंडित, मुख दधि लेप किये ॥
चारु कपोल लोल लोचन छबि, गोरोचन को तिलक दिये।
लर लटकन मानौं मत्त मधुप गन, मादिक मधुहि पिये ॥
कठुला कंठ वज्र केहरि नख राजत हैं सखी रुचिर हिये।
धन्य 'सूर' एको पल यह सुख, कहा भयो शत कल्प जिये ॥१७॥

स्वमार्ग की उत्कृष्टता सूचक—

(विहाग)

हौं पतित सिरोमनि सरन परयो ।
कह्यो कछु और करयो कछु औरैं, तातैं तिहारे मन तैं उतरयो ।।
यह ऊंचा संतन को मारग, ता मारग में पैंड धरयो ।
नैन श्रवन नासिका इंद्रि वस्य ह्वै खिसल परयो ।।
और पतित ह्वै बहुतेरैं तिनकी छोलन हौं जु धरयो ।
'सूरदास' प्रभु पतित पावन हो, बिरदकी लाज करो तो करो।।१८।।

(कान्हरो)

जाकुं नेक स्याम को बानौ ।
ताकैं निकट जाय नहिं कोऊ, कहा रंक कहा रानौ ।।
माला कंठ तिलक बिराजत, अरु चंदन लपटानौ ।
शंख चक्र गदा पद्म बिराजत, सो कहा रहेगो छानौ ।।
रवि सुत कहत पुकार पुकारी, सुन कैं दूत अकुलानौ ।
'सूरदास' कहत यह हित की, समझ सोच जिय जानौ ।।१६।।

श्रीनाथजी के मंदिर के संबंध सूचक—

(बिहाग)

मेरे तो तुमहिं गतिपति नेक दरस पाऊं ।
हौं तिहारो कहाय कैं कहो कौन कैं जाऊं ?
कामधेनु छोड़ि कैं कहा अजा जाय दुहाऊं ?
हस्ती कंध उतरि कैं, कहा गर्दभ चढ़ि धाऊं ?
पाटंबर अँबर तजि, गूदर पहराऊं ?
सागर की लहरि छाँडि, छिल्लर कत न्हाऊं ?
कुमकुमा को लेप तजि, काजर मुख नाऊं ?
कंचन मनि खोलि डारो, काँच कंठ लगाऊं ?
आँब को फल छाँड़ि कहा, सेमरि फल खाऊं ?
'सूर' कूर आँधरो ज, द्वार परयो गाऊं ।।२०।।

(बिहाग)

बिनती कैसैं कै मैं करौं ।
मैं अवगुन परिपूरन कीनो, सुकृत न एक धरौं ।।
जहाँ तहाँ इंद्री जब जब मांग्यो, तब मुरझाय परयो ।

नेत्र अछत अरु दिवस होत नहिं, कूप ही धसत मरयो ।।
अपने ही अभिमान अहंकृत, यामैं अधिक जरौं ।
बनहि लगाय चहुं दिस अपने, निज तन निजही वरौं ।।
जो कोउ सिखवैं नीति कथा तैं, तासौं तमकि लरौं ।
अब जम त्रास भयानक सुनिकैं, तातैं अधिक डरौं ॥
पतित उद्धारन विरद जानिकैं, द्वारे तैं न टरौं ।
'सूरदास' कृपाल कृपा करि, भवजल सिंधु तरौं ।।२१।।

सख्यता सूचक—

(विहाग)

तुमहि मोकौं ढीट कियो ।
नन सदा चरनन तर राखे सुख देखत नहीं गनत बियो ।।
प्रभु मेरी सकुच मिटाई, जोई जोई माँगत पेलि ।
माँगौं चरन सरन वृंदावन, जहाँ करत नित केलि ॥
यह बानी भजनीक श्रवन बिनु, सुनत बहुत सरमाउं ।
श्री वृषभान सुता पति सेवौं, 'सूर' जगत भरमाउं ।।२२।।

सूरसागर नाम सूचक—

(धनाश्री)

है प्रभु मोहू तैं अति पापी ?
घातक कुटिल चबाई कपटी, मोह क्रोध संतापी ।।
लंपट धूत पूत दमरी कौ, विषम जाप नित जापी ।
काम विवस कामिनी के बस, हठ करि मनसा थापी ॥
भक्ष अभक्ष अपय पीवन कौं, लोभ लालसा धापी ।
मनकर्म बचन दुसह सबहीन सौं, कटुक वचन अलापी ।।
जेते अधम उधारे प्रभु तुम, मैं तिनकी गति मापी ।
सागर 'सूर' विकार जल भरयो, बधिक-अजामिल बापी ।२३।।

शुद्धाद्वैत सिद्धांत सूचक—

(धनाश्री)

कृष्ण भक्ति करि कृष्णहिं पावै ।
कृष्णहिं तैं यह जगत प्रगट है, हरि में लय ह्वै जावै ।।

यह दृढ़ ज्ञान होय जासौं ही हरि लीला जग देखैं।
तौ तिहिं सुख दुख निकट न आवैं, ब्रह्म रूप करि लेखैं॥
अज्ञानी मैं मेरी करिकैं ममता बस दुख पावै।
फिरि फिरि जोनी भ्रमैं चौरासी मद मत्सर करि आवै॥
हरि है तिहुँ लोक के नायक, सकल भली सो करि हैं।
'सूरदास' यह ज्ञान होय जब तब सुख सौं नर तरि हैं॥२४॥

उपस्थिति काल सूचक—

(धनाश्री)

बिनती करत मरत हौं लाज।

नख सिख लौं मेरी यह देही, है पाप की जहाज॥
और पतित न आवैं आँख तर, देखत अपनो साज।
तीनौं पन भरि बहोरि निबाह्यो, तोउ न आयो बाज॥
पाछे भयो न आगे ह्वै हौ, सब पतितन सिर ताज।
नरको भज्यो नाम सुनि मेरो, पीठ दई जमराज॥
अबलौं नान्हे सुने मैं तारे, ते सब वृथा अकाज।
साँचो बिरद 'सूर' के तारैं, लोकन लोक अवाज॥२५॥

भागवतोक्त दशविध लीला सूचक—

(धनाश्री)

श्री भागवत सकल गुन खानि।

सर्ग, विसर्ग, स्थान, रू पोषण, उति, मन्वंतर, जानि॥
इश, प्रलय, मुक्ति, आश्रय पुनि, ये दस लच्छन होय।
उत्पत्ति तत्त्व सर्ग सो जानो, ब्रह्माकृत विसर्ग है सोय॥
कृष्ण अनुग्रह पोषण कहिये, कर्मवासना उतिही मानो।
आछे धर्मन की प्रवृत्ति जो, सो मन्वंतर जानौ॥
हरि हरिजन की कथा होय जहाँ, सो ईशानु ही मान।
जीव स्वतः हरि ही मति धारे, सो निरोध हिय जान॥
तजि अभिमान कृष्ण जो पावे, सोई मुक्ति कहावै।
उत्पत्ति, पालन, प्रलय करैं, सो हरि आश्रय कहावै॥
'सूरदास' हरिकी लीला लखि, कृष्णरूप ह्वै जावै॥२६॥

२—श्री परमानंददास जी

शरणागति वृत्त-सूचक—

(बिहाग)+

श्री बल्लभ रतन जतन करि पायो। (अरी मैं)
बह्यो जात मोहि राखि लियो है, पिय रुग हाथ गहायो॥
दुःसंग संग सब दूरि किये हैं, चरनन सीस नँवायो।
'परमानंददास' कौ ठाकुर, नैनन प्रगट दिखायो॥ १॥

गुरू और ईश्वर में अभेद बुद्धि सूचक—

(भैरव)+

प्रात समैं रसना रस पीजै, लीजै श्री बल्लभ प्रभुजी कौ नाम।
आनंद में बीतत निसबासर, मन बाँछित सुधरैं सब काम॥
सुजस गान मन ध्यान आनि उर, जे राखैं दृढ़ आठौं जाम।
'परमानंददास' कौ ठाकुर, जे बल्लभ ते सुंदर स्याम॥ २॥

(भैरव)+

बंदौं सुखद श्री बल्लभ चरन।
अमल कमल हू तैं कलूष-कलिमल हरन॥
करत वेद विचार जाकौ, अभय असरन सरन।
ध्यान मुनि जन धरत जाकौ, भक्ति दृढ़ विस्तरन॥
होत मन कर्म वचन चारौं, भजे एकहि बरन।
'परमानंद' के उर बसौ निरंतर, अखिल मंगल करन॥ ३॥

समर्पण दीक्षा–सूचक—

(आसावरी)

बाढ्यौ है माई माधौ सौं सनेह रा।
जै हौं तहाँ जहाँ नंदनदन, राज करौ यह गेह रा॥
अब तो जिय ऐसी बनि आई, किये समर्पन देह रा।
'परमानंद' चली भींजत ही, बरखन लाग्यो मेह रा॥ ४॥

(सारंग)

हौं लोभी लटकनि लाल की।
मुरि मुसिकानि आन उर अंतर, निकसत नहीं सरसान की॥
बाँकी पाग राग मुख सारंग, मधुप लपट लट माल की।

सखा सुबल के अंस बाहु दिये, बलि गई दैन उगाल की ॥
चंपक दाम बीज उर चमकत, गंध सुमन गुलाब की।
चंचल दृष्टि समर की सोभा, ढूलनि कमल कर माल की ॥
उन मेरो सर्वस्व चोरयोरी सजनी, अरु लई चाल मराल की।
अब यह देह दूसरो न छूहैं, 'परमानंद' गोपाल की ॥ ५ ॥

(आसावरी)

मैं तो प्रीति स्याम सौं कीनी।
कोऊ निंदौ कोऊ बंदौ, अब तो या घर दीनी ॥
जो प्रतिव्रत तो या ढोटा सौं, इनहिं समरप्यौ देह।
जो व्यभिचार तो नंदनंदन सौं, बाढ्यो अधिक सनेह ॥
जो व्रत गह्यौ सो निबाहउ, मर्यादा को भंग।
'परमानंद' लाल गिरिधर कौ, पायौ मोटो संग ॥ ६ ॥

(आसावरी)

हौं नंदलाल बिना ना रहौं।
मनसा वाचा और कर्मणा, हित की तो सौं कहौं ॥
जो कछु कहौं सो सिर ऊपर, हौं सबै सहौं।
सदा समीप रहौं गिरिधर के, सुंदर बदन चहौं ॥
यहै तन अरपन हरि कौं कीनो, वह सुख कहाँ लहौं।
'परमानंद' मदन मोहन के चरन सरोज गहौं ॥ ७ ॥

शरण काल सूचक—

(आसावरी) +

श्री विट्ठलनाथ पालने झूलैं, मात अक्काजू झूलावैं हो।
प्रगट भई सोभा त्रिभुवन की, देखत मनहिं लुभावैं हो ॥
अद्भुत रूप स्वरूप की महिमा, कौन बरनैं कवि ऐसौ हो।
ब्रह्मादिक जाकौ पार न पावे, हारे सेस महेसौ हो ॥
छोटे चरन जाकी छोटी अंगुरिया, नख मनिचंद बिराजैं हो।
ता पर फूल पान सोभित अति, नूपुर सोभा छाजैं हो ॥
जंघा कदली की अति सोभा, ता पर गुल्फ बिराजैं हो।
कटि पर छुद्र घंटिका राजत है, केहरि सोभा लाजै हो ॥
ता पर नाभि कमल की सोभा, उदर की सोभा भ्राजै हो।
ता पर पीत झगुलिया सोभित, मोतिन हार बिराजैं हो ॥

कुंडल लोल कपोल की सोभा, नासा मोतिन राजैं हो।
नेत्र कमल की सोभा कहा कहुं, काजर रेख बिराजैं हो।।
भ्रकुटी काम के बान बिराजत, चितवनि मनही लुभावैं हो।
ए अद्भुत छबि कही न जाय कछु, लहरि समुद्रही छावैं हो।।
केसरि कमल पत्र दोऊ राजत, कुलहि केसरी छाँई हो।
ता पर मोर चंद्रिका सोभित, कस्तूरी तिलक सुहाई हो।।
नख सिख ध्यान धरैं जो कोई, सोई नर तरि जाई हो।
श्री बल्लभ नंदन रूप अनूपम, ब्रजजन कें सुखदाई हो।।
पौष कृष्ण नोमि तिथि प्रगटे, लगन नक्षत्र सुहाई हो।
पुष्टि प्रकास करेंगे भूतल, दैवी जीव उधराई हो।।
घर घर मंगल बजत बधाई, मोतिन चौक पुराई हो।
देत दान श्रीलक्ष्मननंदन, बारत नहीं अघाई हो।।
विविध भाँति के सब्द करत हैं, श्रवन सुनत सुखदाई हो।
देति असीस कहति ब्रज सुंदरि, चिरंजीवौ कुँवर कन्हाई हो।।
धन्य अक्काजू तेरे भाग्य की, महिमा कहेत न जाई हो।
यह अवतार भक्त हित कारन, सुरनर मुनि सुखदाई हो।।
'परमानंद' श्री विट्ठलनाथ के, गुन गावत न अघाई हो।। ८।।

ब्रज में बसिबे की अभिलाषा सूचक—

(धनाश्री)

यह माँगौं गोपीजन बल्लभ।
मनुष्य जन्म और हरिकी सेवा, ब्रज बसिबौ दीजै मोहि सुलभ।।
श्री बल्लभ कुलको हौं चेरो, वैष्णव जन कौ दास कहाऊं।
श्री यमुना जल नित्य प्रति न्हाऊं, मन वच कर्म कृष्ण गुन गाऊं।।
श्रीमद्भागवत श्रवन सुनौं नित्य, इन तजि चित्त कहुंअनंत न ध्याऊं।
'परमानंददास' इह माँगत, नित्य निरखौं कबहूं न अघाऊं।। ९।।

(धनाश्री) *

जइए वह देस जहाँ नंदनंदन भैंटिए।
निरखिए मुख कमल कांति, विरह ताप मैंटिए।।
सुंदर मुख रूप सुधा, लोचन पुट पीजिए।
लंपट लव निमिष रहति, अँचय अँचय जीजिए।।
नख सिख मृदु अंग अंग, कोमल कर परसिए।

अरु अनन्य भावसौं भजि, मन कर्म बच सरसिए ॥
रास हास भ्रू बिलास, लीला सुख पाइए।
भक्तन के यूथ सहित, रसनिधि अवगाहिए ॥
इह अभिलाष अंतर गति, प्राननाथ पूरिए।
सागर करुना उदार, विविध ताप चूरिए ॥
छिनु छिनु पल कोटि कलप, बीतत अति भारी।
'परमानंद' प्रभु कल्पतरु, दीनन दुखहारी ॥१०॥

लीला का स्मरण सूचक—

(धनाश्री)

वह बात कमलदल नैंन की।
बार बार सुधि आवत सजनी, वह दूर देनी सेन की ॥
वह लीला वह रास सरद को, गौरंजित आवनि।
अरु वह ऊँचे टेर मनोहर, मिष करि मोहि सुनावनि ॥
वे बातैं साले उर अंतर, को पर पीर ही पावै।
'परमानंद' कह्यो न परै कछु, हियो सो रुंध्यो आवै ॥११॥

(धनाश्री)

सुधि करत कमल दल नैन की।
भरि भरि लेति नीर अति आतुर, रति वृंदावन चैन की ॥
दै दै गाढ़े आलिंगन मिलति कुंज लता द्रुम ऐन की।
वे बतियाँ कैसैंकैं बिसरति, बाँह उसीसे सैन की ॥
बसि निकुंज में रास खिलाये, व्यथा गँवाई मैन की।
'परमानंद' प्रभु सो क्यों जीवे, जो पोषी मृदु बैन की ॥१२॥

(धनाश्री)

हरि तेरी लीला की सुधि आवैं।
कमल नैन मोहन मूरति कै, मन मन चित्र बनावैं ॥
कबहूक निविड़ तिमिर आलिंगन, कबहूक पीक सुर गावैं।
कबहूक संभ्रम क्वासि क्वासि कहि, संग हिलमिलि उठिधावैं ॥
कबहूक नैन मूंदि उर अंतर, मनि माला पहिरावैं।
मृदु मुसिकानि बंक अवलोकनि, चाल छबिली भावैं ॥
एक बार जाहि मिलहिं कृपा करि, सो कैसें बिसरावैं।
'परमानंद' प्रभु स्याम ध्यान करि, ऐसे बिरह गँवावैं ॥१३॥

महाप्रभु से कथा सुनने का संकेत—

(रामकली)

यह यमुना गोपालहिं भावैं ।
यमुना यमुना नाम उच्चारत धर्मराज ताको न चलावैं ॥
जे यमुना को जानि महात्म्य बारंबार प्रनाम करैं ।
ते यमुना अवगाहत मज्जन चिंतित ताप तन के जु हरैं ॥
पद्मपुरान कथा यह पावन धरनी प्राने वराह कही ।
तीर्थ महात्म्य जानि जगतगुरु सों 'परमानंददास' लही ॥१४॥

सुबोधिनी का अनुसरण—

(धनाश्री)

लालकों भावैं गुड़ गांडै और बेर ।
और भावैं याहि सैंद कचरिया लाओ बाबा बन हेर ।
और भावैं याहि गैयनकौ बसिबौ संग सखा सब टेर ॥
'परमानंददास' को ठाकुर, पिल्ला लायो घेर ॥१५॥

(सारंग)

देखौं, कौन मन राखि सकैरी ।
वहै मुसकनि वहै चारु बिलोकनि अवलोकत दोउ नैन छकैरी ॥
जिनकौं अनुभव कबहू नाहिन ते घर बैठि न्याय बकैरी ।
जिन न सुनि मुरली वहै कानन ते पसु पंछी मृग व थकैरी ॥
'परमानंददास' प्रभु यहै अवस्था जे हरि रूप निरखि अटकैरी ।
बिनु देखे अब रह्यो न परे हो सुंदर बदन कुटिल अलकैरी ॥१६॥

यमुनाष्टक का अनुसरण—

(बिभास)

गंगा तीन लोक उद्धारक ।
ब्रह्म कमंडल तें तुम प्रगटी सकल विश्व की तारक ॥
दरसन परसन पान कियेतैं तुम कीने जीव कृतारथ ।
'परमानंददास' स्वामिनी के संगम आपुन भई सुकारथ ॥१७॥

पुष्टिमार्ग का स्वरूप सूचक—

(विभास)

कैसैं कीजैं वेद कह्यो ।
हरि मुख निरखत विधि निषेध कौ नाहिन ठौर रह्यो ॥
दुखको मूल सनेह सखीरी सो उर पैठि रह्यो ।
'परमानंद' प्रेमसागर में परयौ सो लीन भयो ॥१८॥

प्रत्यक्ष विरह सूचक—

(धनाश्री)

आंखन आगे स्याम उदय स्याम कहन लागी गोपी कहां गये स्याम ।
आदि हु स्याम अंत हु स्याम रोम रोम रमि रह्यो स्याम ॥
मधुवन आदि सकल बन ढूंढ्यो निधिबन कुंज धाम ।
'परमानंददास' कौ ठाकुर अंग-अंग अभिराम ॥१६॥

पुष्टिमार्गीय विश्वास—

(धनाश्री)

नाँचत हम गोपाल भरौसैं ।
गावत बाल-विनोद कान्ह के नारद के उपदेसैं ॥
संतन कौ सर्वस्व सुखसागर नागर नंदकुमार ।
परम कृपाल यसोदा नंदन जीवन प्रान आधार ।
ब्रह्म रुद्र ईंद्रादिक देवता जाकी करत विचार ।
पुरुषोत्तम सबही कै ठाकुर यह लीला अवतार ॥
स्वर्ग नर्क कौ अब डर नांही विधि निषेध नहिं त्रास ।
चरन कमल मन राखि स्याम के बलि 'परमानंददास' ॥२०॥

अनुग्रह-भक्ति—

(सारग)

अनुग्रह तो मानों गोविंद ।
वारक चरन कमल दिखरावहु, वृन्दावन के चंद ॥
नीकै सो नीकै सब कोऊ, सुनि प्रभु आनंद कंद ।
पतितन देत प्रसाद कृपा करि, सोई ठाकुर नंद नंद ॥

अपराधी आदि सब कौऊ, अधम नीच मति मंद।
ताकौं तुम प्रसिद्ध पुरुषोत्तम गावत 'परमानंद' ॥२१॥

भगवद् अनुग्रह की महिमा—

(बिलावल)

जा पर कमला कंत ढरै।
लकरी घास को बेचनहारो ता सिर छत्र धरै।
विद्यानाथ अविद्या समरथ,जो कुछ चाहे सोई करै।
रीते भरै भरै पुनः ढोरै, जो चाहे तो फेर भरै॥
सिद्ध पुरुष अविनासी समरथ, काहु तै न डरै।
'परमानंददास' यह संपति मन तें कबहू न टरै। २२॥

अडेल से गोकुल आने के समय यमुना पार उतरने की उत्सुकता सूचक—

(मारू)

खेवटियारे बीर अब मोहे, क्यों न उतारै पार।
मेरे संग की सबहि उतरकैं, भेंटी नंदकुमार॥
अति गहरी जमुनाजु बहत हैं मैंजु रही चलि बार।
'परमानंद' प्रभु सों मिलाय तोहि देऊ गरे को हार॥२३॥

ब्रजबास सूचक—

(धनाश्री)

ब्रज बसि बोल सबन के सहियैं।
जो कोउ भली बुरी कहैं लाखैं, नंदनंदन रस लहीयैं॥
अपने गूढ़ मतैं की बातैं, काहू सों नहि कहीयै।
'परमानंद' प्रभु के गुन गावत, आनंद प्रेम बढैयै॥२४॥

(धनाश्री)

धनि धनि वृन्दाबन के बासी।
नित्यप्रति चरन कमल अनुरागी, स्यामा स्याम उपासी॥
या रस को जो मरम न जानैं जाय बसौ सो कासी।

भस्म लगाय गरैं लिंग बांधौ, सदा रहो उदासी ॥
अष्ट महा सिद्धि द्वारैं ठाढ़ी मुक्ति चरन की दासी।
'परमानंद' चरन कमल भजि, सुंदर घोख निवासी ॥२५॥

(धनाश्री)

लगे जो श्रीवृन्दावन रंग।
देह अभिमान सबैं मिटि जैहैं अरु विषयन कौ रंग ॥
सखी भाव सहज होय सजनी, पुरुष भाव होय भंग।
श्रीराधावर सेवत सुमिरत, उपजत लहर तरंग ॥
मन कौ मैल सबैं छुटि जैहैं, मनसा होय अपंग।
'परमानंद' स्वामी गुन गावत मिटि गये कोटि अनंग ॥२६॥

(बिहाग)

माई बरसानो सुबस बसौ।
राधा कान्ह कुँवर चिर जियो, न्हात ही जिनि बार खसौ ॥
गोवर्द्धन गोकुल वृंदाबन नव निकुंज प्रति नित्य बिलसौ।
रास बिलास रहसि करि छायो, आनंद प्रेम हिये हुलसौ ॥
अविचल राज करौ इह भूतल, गोपीजन देति असीसौ।
'परमानंददास' बलिहारी जीवो कोटि बरीसो ॥२७॥

नंदगाँव-बठैन—

(आसावरी)

चलरी सखी नंदगाँव जाय बसिये, खिरक खेलत ब्रजचंद जू सों हँसिये।
बसि बठैन सबै सुख माई। एक कठिन दुख दूरि कन्हाई ॥
माखन चोरत दुरि दुरि देखौं। जीवन जन्म सुफल करि लेखौं ॥
जलचर लोचन छितु छितु प्यासा। कठिन प्रीति 'परमानंददासा' ॥२८

श्रीनाथ जी के मंदिर संबंध सूचक—

(बिहाग)

तातैं तुम्हारो मोहि भरोसौ आवैं।
दीनदयाल पतित पावन जस, वेद उपनिषद गावैं ॥
जो तुम कहो कौन खल तारैं, जो हौं जानौं साखि।
पुत्र हेत हरि लोक चल्यो द्विज, सक्यो न कोऊ राखि ॥

गनिका कहा कियो व्रत संजम, सुक हित मनहि खिलावैं।
कारन करि सुमिरैं गज बपुरौ, ग्राह परम गति पावैं॥
चरनि आपदा तें द्विजपत्नि पति द्वारिका पठावैं।
ऐसौ को ठाकुर जे जनकौं, सुख दै भलो मनावैं॥
दुखित देखि द्वै सुत कुबेर कै, तिन तैं आपु बंधावैं।
करुनानाथ अनाथ के बंधु बिनु, यह औसर क्यौं आवै॥
ऐसे दुष्ट देखि अरि राच्छस, दिन प्रति त्रास दिखावैं।
सिसु प्रहलाद प्रगट हित कारन, इंद्र निसान बजावैं॥
द्रुपद सुता दुष्ट दुर्योधन, सभा माँहि दुख द्यावै।
ऐसी करै कौन पैं हौवैं, बसन प्रवाह बढ़ावै॥
बकी गई इहि भाँति घोख में, जसुदा की गति दीनो।
जो मति कही सो प्रगट ब्याध की, प्रभु जैसी तुम कीनी।
अभयदान दीवान प्रगट प्रभु, साँचो बिरद लावैं।
कारन कौन दास 'परमानंद', द्वारें दाद न पावै॥ २६॥

(बिहाग)

कुञ्ज भवन में पौढ़ैं दोऊ।
नंदनंदन वृषभानुनंदनी, उपमा कों दूजौ नहीं कोऊ।
लाल कुसुम की से बनाई, कोक कला जानत है सोउ॥
रस में मातैं रसिक मुकुट मनि, "परमानंद" सिंघद्वारे होऊ॥ ३०॥

(बिलावल)

साम्प्रदायिक सेवा श्रृंगार पद्धति—

सुन्दर आउ नंदजू के छगन मगनीयां।
कटि पर आडबंद अति झीनो, भीतर झलकत तनीयां॥
लाल गोपाल लाडिले मेरे, सोहत चरन पैंजनीयाँ।
'परमानंद दास' के प्रभु की, यह छबि कहत न बनीयाँ॥३१॥

मकर संक्रांति भोजन—

(पंचम)

भयो नंदराय घर खीच।
सब गोकुल के लरिकन संग, बैठे हैं आय बीच॥
परोस थार धरि हैं आगैं, सद्य माखन की बीच।
'परमानंद' प्रभु अति रुचि कीनो, लाग्यो अरोगन ईंच॥ ३२॥

मकर संक्राति अचवन--

(पंचम)

आज भूख अति लागी, रे बाबा।
भोजन भयो अघानो नीकौ, तृपति होय रुचि भागी ॥
अचवन कों यमुनोदक लैकैं, आई परम सुहागी।
भोजन अंत सीत 'परमानंद' दीजिये मेरी आंगी ॥ ३३ ॥

संक्रांति संध्या समय का—

(पूर्वी)

गहै रहै भामिनी की बांह।
मदन गोपाल चतुर चिंतामनि, जानत हो सब मांह ॥
ठाढ़ै बात करत राधा सों, तहां जसोदा आई।
जूठौ मिस करि रोवन लागै, इन मेरी गेंद चुराई ॥
कौन टेव तेरे ढोटा की, बरजत काहे न माई।
या गोकुल में स्याम मनोहर, उलटी चाल चलाई ॥
सुनि सुत वचन तबैं स्यामा कैं, महेरि चली मुसक्याई।
'परमानंद' अटपटी हरि की, सबैं बात मन भाई ॥ ३४ ॥

पतंग उडायवे का--

(धनाश्री)

उडी उडावन लागै बाल।
सुन्दर पथक बांधि मनमोहन, बाजत है मोरन के ताल ॥
कोउ पकरत कोउ एंचत कोऊ देखत नैन विसाल।
कोऊ नाचत कोऊ करत कुलाहल, कोऊ बजावत बहौ करताल।
कोऊ गुडी गुडी सों उरझावत, आपुन एंचत डोर रसाल।
'परमानंद' स्वामी मनमोहन, रीझि रहत एक ही तत्काल ॥ ३५ ॥

श्रीगुसांई जी के 'स्वतंत्र लेख' का अनुसरण—

(आसावरी)

भोगी भोग करत सब रस को।
नंद नंदन जसोदा को जीवन, राधा प्रानपति सरबस को ॥
तिल भर संग तजत नहीं निज जन, गान करत मन मोहन जसको।
तिलतिल भोग धरत मन भावत, 'परमानंद सुख लेत यह रसको ॥ ३६ ॥

श्री महाप्रभु के निबंध का अनुसरण—

(सारंग)

नौमी के दिन नौबत बाजै कौसल्या सुत जायो हो।
पन्द्रह घरी दिन उदित भयो है, सब सखियन मङ्गल गायो हो॥
कांप्यो सिंधु कङ्गुरा ढरियो, लङ्का अगम जनायो हो।
सब लङ्का में सोक परयो है, राजदेव ग्रह आयो हो॥
× × × × ×
पाट पटम्बर खासा झीनो, जैसो जाहि मन भायो हो।
'परमानन्द' कहां लौं बरनौं, तीन लोक यस छायो हो॥२७॥

सख्यता सूचक—

(सारंग)

मोहन लई बातन लाई।
खेलन के मिष आऊँ तेरैं, राखि दूध जमाई॥
कनक बरन सुढ़ार सुन्दरि, देखि मुख मुसिकाई।
रूप राधे स्याम सुन्दर, नैन रहे अरुझाई॥
गुपत प्रीति जिनि प्रगट कीजे, लाल रहो अरुगाई।
दास 'परमानन्द' सङ्ग है, नाँतर परती पाई॥२८॥

(गौरी)

ढोटा कौन कौ मन मोहन।
सन्ध्या समैं खिरक में ठाढौ, सखी! करत गोदोहन॥
ग्वालिनी एक पाहुनी आई, देखि ठगी सी ठाढ़ी।
चित चलि गयो मदन मूरति पैं, प्रीति निरन्तर बाढी॥
चल न सकति पग एक सुन्दरि, चित्त चोरयो व्रजनाथ।
'परमानन्द दास' वह जाने जिहिं खेल्यो मिलि साथ॥२६॥

(कान्हरो)

आवत हुती सांकरी खोरि।
दोऊ हाथ पसारि रहे हरि हों बात लजाइ रही मुख मोरि॥
बालक सों अब कहा कहूँ सखी! लीनी दोहनी हाथ मरोरि।
एसो चपल हठीलो ढोटा भाज्यो बहुरि मटुकिया फोरि॥
का प्रकार अटपटी बतियां अंगिया हार लियो मेरो तोरि।
ताकी साखि 'दास परमानंद' इक इक लाल लहैं लख कोरि॥३०॥

कुमार वय प्रति आसक्ति—

(बिलावल)

माई तेरो कहान कौनऽब ढंग लाग्यो ।
मेरी पीठ पर मेलि कछूरा, वह देखि जात भाग्यो ॥
पाँच बरस को स्याम मनोहर, ब्रज में डोलत नागो ।
'परमानंददास' को ठाकुर, काँधे परयो न तागो ॥४१॥

श्रीविट्ठलेश प्रति आसक्ति—

(कान्हरो)

तिहारे चरन कमल को मधुकर, मोहि कबजू करोगे ।
कृपावंत भगवंत गुसाँई, यह बिनती चित्त जू धरोगे ॥
सीतल आत पत्र की छैयाँ, कर अंबुज सुखकारी ।
प्रेम प्रवाल नैन रतनारे, कृपा कटाक्ष मुरारी ॥
'परमानंद' रास रस लोभी, भाग्य बिना को पावै ।
जा पर कृपा करैं नंदनंदन, ताहि सबै बनि आवै ॥४२॥

श्रीविट्ठलेश महिमा—

(कान्हरो)

जब लग यमुना गाय गोवर्द्धन, जब लग गोकुल गाम गुसाँई ।
जब लग श्री भागवत कथा रस, तब लग कलिजुग नाँही ॥
जब लग हैं सेवा रस जग मैं, नंदनंदन सौं प्रीति बढ़ाई ।
'परमानंद' तासौं हरि क्रीडत, श्रीवल्लभ चरन रैनु जिन पाई ॥४३॥

वल्लभ सिद्धांत—

(सारंग)

हरि जसु गावत होइ सो होई ।
विधि निषेध कै खोज परहो जिन, अनुभव देखौ जोई ॥
आदि मध्य अवसान विचारत, हरि स्वरूप ठहरात ।
बीच एक अविद्या भासत, वेद विदित यह बात ॥
राम कृष्ण अवतार मनोहर, भक्त अनुग्रह काज ।
'परमानंददास' यह मारग, बीतत राम कै राज ॥४४॥

(सोरठ)

कमल नयन कमलापति, त्रिभुवन के नाथ।
एक प्रेम तैं सब बनैं, जो मन होइ हाथ॥
सकल लोक की संपदा, जो आगैं धरिए।
भक्ति बिना मानैं नहिं, जो कोटिक करिए॥
दास कहावन कठिन है, जौलौं चित्त अनुराग।
'परमानंद' प्रभु साँवरो, पैयत बड़ भाग॥४५॥

(सारंग)

सब सुख सोई लहै जाहि कान्ह प्यारौ।
करि सत्संग विमल जस गावै, रहै जगत तैं न्यारौ॥
तजि पद कमल मुक्ति जे चाहैं, ताकौ दिवस अंधियारौ।
कहत सुनत फिरत हैं भटकत, छाँडि भक्ति उजियारौ॥
जिन जगदीस हृदे धरि गुरुमुख,एकौ छिनु न बिसारयौ।
बिनु भगवंत भजन 'परमानंद', जनम जूवा ज्यौं हारयौ॥४६॥

राम कृष्ण की अभेदता—

(केदारो)

मदन गोपाल हमारे राम।
धनुष बान धरि विमल बेनु कर, पीत वसन अरु तन घनस्याम॥
अपुनी भुजा जिन जलनिधि बाँध्यौ, रास नचाये कोटिक काम।
दस सिर हत सब असुर संघारे, गोवर्द्धन धारेउ कर बाम॥
तब रघुबर अब यदुबर नागर, लीला नित्य विमल बहु नाम।
'परमानंद' प्रभु भेद रहित हरि,निजजन मिलि गावत गुनग्राम॥४७॥

नवधा भक्ति—

(सारंग)

तातैं नवधा भक्ति भली।
जिनि जिनि कीनी तिन तिन की गति नैंक न अनत चली॥
श्रवन परीछित तरैं राज रिषि, कीर्तन तैं सुकदेव।
सुमरन तैं प्रहलाद निरभै भये, हरि पद कमला सेव॥
अर्चन पृथु बंदन सुफलक सुत, दास भाव हनुमान।

सख्य भाव अर्जुन बस कीनै, श्रीपति श्री भगवान ॥
बलि आत्मनिवेदन कीनौ, राखैं हरि कौं पास।
प्रेम भक्ति गोपी बस कीनैं, बलि 'परमानंददास' ॥४८॥

भागवत और प्रेम भक्ति की महत्ता—

(कान्हरो)

माधौ या घर बहुत धरी ॥
कहन सुनन कौं लीला कीनी, मर्यादा न टरी ॥
जो गोपिन कैं प्रेम न होतौ, अरु भागवत पुरान।
तौ सब औघड पंथहि होतौ, कथत गमैया ज्ञान ॥
बारह बरस को भयो दिगंबर, ज्ञान हीन सन्यासी।
खान पान घर घर सबहिन कैं, भस्म लगाय उदासी ॥
पाखंड दंभ बढ्यो कलियुग में, श्रद्धा धर्म भयो लोप।
'परमानंद' वेद पढ़ि बिगरे, कापै कीजै कोप ॥४६॥

गोपी प्रेम महिमा—

(आसावरी)

हरि सौं एक रस प्रीति रहीरी।
तन मन प्रान समर्पन कीनौ अपनो, नेम ब्रत लैं निवहीरी ॥
प्रथम भयो अनुराग दृष्टि तैं मानौ, रंक निधि लूट लईरी।
कहत सुनत चित्त अनत न भटक्यो,वेहि हिलग जिय पैठ गईरी ॥
मर्यादा उल्लंघ सबन की, लोक वेद उपहास सहीरी।
'परमानंददास' गोपिन की, प्रेम कथा सुक ब्यास कहीरी ॥५०॥

(सोरठ)

कौन रस गोपिन लीनो घूंट।
मदन गोपाल निकट कर पाये, प्रेम काम की लूट ॥
निरखि स्वरूप नंदनंदन कौ, लोक लाज गई छूट।
'परमानंद' वेद मारग की, मर्यादा गई टूट ॥५१॥

(सोरठ)

गोपी प्रेम की ध्वजा।
जिन गोपाल कियो बस अपने, उर धरि स्याम भुजा ॥

सुक मुनि ब्यास प्रसंसा कीनी, उधौ संत सराही।
भूरि भाग्य गोकुल की बनिता, अति पुनीत भवमाँही।।
कहा भयो जो विप्रकुल जन्म्यो, जो हरि सेवा नाँही।
सोई कुलीन दास 'परमानंद', जो हरि सन्मुख धाई।।५२।।

वात्सल्य भाव—

(रामकली)

आजु सवारे के भूखे हो मोहन! खावउ, मोहि लगो बलैया।
मेरो कह्यो तू नहीं मानत, हौं अपुने बलदाऊ की मैया।।
दौरि कैं कंठ लग्यो मनमोहन, मेरी सौं कहि मेरो कन्हैया।
'परमानंद' कहत नंदरानी, अपने आँगन खेलो दोऊ भैया।।५३।।

धनतेरस का पद—

(बिलावल)

धनतेरस रानी धन धोवति।
गर्ग बुलाय वेद विधि पूजत, ठौर ठौर घृत दीप संजोवति।।
धूप दीप नैवेद्य भोग धरि, स्याम सुन्दर एक टक मुख जोवति।
'परमानंद' त्यौहार मनावति सब ब्रज पुष्टिमारग धन बोवत।।५४।।

जाडे की बिदा—

(बिहाग)

सुंदर नंदनंदन जो पाऊं।
द्वार कपाट बनाय जतन कैं, नीके माखन दूध खवाऊं।।
अति विचित्र सुंदर मुख निरखौं, करि मनुहार मनाऊं।
'परमानंद' प्रभु या जाड़े कौं, देस निकालो दिवाऊं।।५५।।

(बिहाग)

माई मोहि मोहन लागै प्यारो।
जब देखौं तब नैनन निरखौं, इन आँखियन को तारो।।
काँपत तन थरथरात अति धूजत, सीत लगत तन भारौ।
'परमानंद' प्रभु या जाड़े कौ कीजिये मुँह कारौ।।५६।।

(बिहाग)

मदन मत्त कीनोरी मतवारौ।
नागर नवल प्रेम रस बस कीनौ नंद दुलारौ।।

कैधौं प्रीतम पराये भवन मैं, करत हैं नित टारौ ।
आजु रैनि अकेली सोई, सीत दहत तन वारौ ॥
प्रथम कियो कर जोरि मिलन हित पायो प्रान पियारो ।
'परमानंद' प्रभु या जाड़े कौं, दीजै देस निकारौ ॥५७॥

संवत्सर के दिन का—

(सारंग)

वरस प्रवेस भयौ है आज ।
कुंज महल बैठें पिय प्यारी, लालन पहेरें नौतन साज ।
आछैं कुसुम मंद मलयानिल, तरु कदंब की छाँह ।
तहाँ निवास कियो नंदनंदन, चित्त तेरे तन माँह ॥
ऐसीरी बात सुनत व्रज सुंदरि, तोहि रह्यौ क्यौं भावै ।
'परमानन्द' स्वामी मनमोहन, भाग्य बड़े तैं पावै ॥५८॥

प्रीति विषयक पद—

(बिहाग)

प्रीति तो काहू सौं नहिं दीजै ।
बिछुरें कठिन परैं मेरी आली, कहौ कैसैं करि जीजै ॥
एक निमिष यह सुख के कारन, जुग समान दुख लीजै ।
'परमानन्द' प्रभु जानि बूझकैं, काहू कैं विषजल क्यौं पीजै॥५९॥

(बिहाग)

प्रीति तो नंदनंदन सौं कीजै ।
संपत विपत परैं प्रतिपारैं, कृपा करैं तो जीजै ॥
परम उदार चतुर चिंतामनि, सेवा सुमरन मानैं ।
हस्त कमल की छाया राखैं, अंतरगत की जानैं ॥
वेद पुरान श्री भागवत भाखैं, करत भक्त मन भायो ।
'परमानन्द' इंद्र कौ वैभव, विप्र सुदामा पायो ॥६०॥

(मलार)

लगन कौ नाम न लीजै, सखीरी ।
लगन कौ मारग अति ही कठिन हैं, पाय धरैं तन छीजै, सखीरी ॥
जो तू लगन लगायो चाहैं, तन की आस न कीजै, सखीरी ।
'परमानन्द' स्वामी के ऊपर, बार बार तन दीजै, सखीरी ॥६१॥

दासी भाव सूचक--

(केदारो)

दोउ मिलि पोढ़ैं सजनी देख अगासी।
पटतर कहा दीजैं गोपीजन नेनन कों सुखरासी ॥
स्यामा स्याम संग यों राजत हैं मानो चंद्रकला सी।
कुसुम सेज पर श्वेत पिछोरी, सोभा देत हैं खासी ॥
पवन दुरावत नेन सिरावत, ललिता करत खवासी।
मधुर सुर केदारो गावत, 'परमानंद' निज दासी ॥६२॥

(बिहाग)

पौढ़ैं रंग महल गोविंद ।
राधिका संग सरद रजनी, उदित पून्यौ चंद ।
अनेक चित्र विचित्र चित्रित, कोटि कोटिक बंद ॥
निरखि निरखि बिलास बिलसत, दंपति रस फंद ।
मलय चंदन अग लेपन, परस्पर आनंद ॥
कुसुम बीजना व्यार ढोरत, सजनी 'परमानंद' ॥६३॥

श्री राधिका चरन महिमा—

(बिहाग)

भजि मन राधिका के चरन।
सुभग सीतल परम कोमल, कमल कैसे बरन ॥
नख चंद्रिका अनूप राजत, विविध सोभा वरन ।
कुनित नूपुर कुञ्ज बिहरत, परम कौतुक करन ॥
रसिक वर मन मोदकारी, विरह सागर तरन ।
विसद 'परमानंद' छिनु छिनु, स्याम जाकी सरन ॥६४॥

साम्प्रदायिक परिपाटी—

(बिहाग)

राम कृष्ण दोउ सोये माई ।
कहानी कहति यसोदा रोहिनी, सुनत हैं दोऊ अति ही मन लाई ।
जब जान्यो हरि सोय गयेरी, तब चुप रही यसोदा माई ।
यह सुख नंद भवन में नित्य ही देख देवगन मनही सिहाई ॥
जाको नाम रटत सिव सारद, सेष सहस्र मुख गीत न गाई ।
'परमानंद दास' को ठाकुर, निज भक्तन के अति सुखदाई ॥६५॥

किशोर लीला में बाल भाव की झलक—

(नट)

चंद में देख्यो मोर मुकुट कौ।
टेढी बानन छांडि देहु अब, झगरी यहां सों सटकौ ॥
देखैं लोग चवाय करि हैं, यह मेरे मन खटकौ।
जानै सास ननद बैरिन सब, बन में आजु न भटकौ ॥
मोकों पिय मिलेंगे तब ही, मिष जमुना जल घट कौ।
मिलै अपुन कौं छेड़ करेगौ, प्रान है नागर नटकौ ॥
घर घर डोलन खात लतकरा, नाहिन काहू के वट कौ।
'परमानंद' लागी ना छुटै, लाज कूआ में पटकौ ॥६६॥

मंगल मंगलं का अनुसरण—

(भैरव)

मंगल माधौ नाम उचार।
मंगल वदन कमल कर मंगल, मंगल जनकी सदा सम्हार ॥
देखत मंगल पूजत मंगल, गावत मंगल चरित उदार।
मङ्गल श्रवन कथा रस मङ्गल, मङ्गल तन वसुदेव कुमार ॥
गोकुल मंगल मधुवन मंगल, मङ्गल रुचि बृन्दावन चन्द।
मङ्गल करन गोवर्धनधारी, मङ्गल वेष यसोदा नंद ॥
मङ्गल धेनु रेनु भुव मङ्गल, मङ्गल मधुर बजावत बैनु।
मङ्गल गोपवधू परिरंभन, मङ्गल कालिंदि पय फैनु ॥
मङ्गल चरन कमल मनि मङ्गल, मङ्गल कीरति जगत निवास।
अनुदिन मङ्गल ध्यान धरत मुनि, मङ्गल मति 'परमानंददास' ॥६७॥

(भैरव)

मङ्गलं मङ्गलं व्रज भुवि मङ्गलं, मङ्गलंमिह श्रीलक्ष्मण नंद। मङ्गल रूप महालक्ष्मीपति, जलनिधि पूरणचंद ॥ मङ्गलमय कृत सात्मज गोपीनाथ, मङ्गल रूप रुक्मणि मङ्गल पद्मावतीशं। मङ्गल जनित तनुज श्री गिरिधर गोविंद, बालकृष्ण, गोकुलपति, रघुनाथ जगदीशं ॥ मंगल बर्द्धक श्रीयदुपति, घनस्याम, पितु समान श्री विट्ठल सुखाभिधानं। मंगलमय कृत कृत महाप्रिय वल्लभ, सेवन मतमंगल कृत दैवी संतानं ॥ मंगल मंगल गोवर्द्धनधर मंगलमय, रस लीलासागर रस पूरित भावं। वन्देऽहं त सततं मन्मथ 'परमानन्द', मदनमय व्रजपति मुखगत मुरली रावं ॥ ६८ ॥

उपस्थिति काल-सूचक—

(भैरव)

प्रात समैं उठ करियै श्रीलछमन सुत गान। प्रगट भये श्री बल्लभ प्रभु, देत भक्ति दान॥ श्री विट्ठलेस महाप्रभु, रूप के निधान। श्रीगिरधर श्री गिरधर, उदय भयो भान॥ श्री गोविंद आनंदकंद, कहा बरनों गुन गान। श्री बालकृष्ण बाल केलि, रूप ही सुहान॥ श्री गोकुलनाथ प्रगट कियो मारग वखान। श्री रघुनाथलाल देखि, मन्मथ ही लजान॥ श्री यदुनाथ महाप्रभु, पूरन भगवान। श्री घनस्याम पूरनकाम, पोथी में ध्यान॥ पांडुरंग विट्ठलेस,—करत वेद गान। 'परमानंद' निरख लीला थके सुर विमान॥६९॥

खड़ी बोली—

(बिलावल)

देखोरी यह कैसा बालक, रानी जसुमति जाया है।
सुन्दर बदन कमल दल लोचन, देखत चन्द्र लजाया है॥
पूरन ब्रह्म अलख अबिनासी, प्रकट नन्द घर आया है।
मोर मुकुट पीताम्बर सोहे, केसरि तिलक लगाया है॥
कानन कुंडल गल बीच माला, कोटि भानु छवि छाया है।
संख चक्र गदा पद्म बिराजैं, चतुर्भुज रूप बनाया है॥
परमेश्वर पुरुषोत्तम स्वामी, यसोमति सुत कहलाया है।
मच्छ कच्छ वराह और बामन, राम रूप दरसाया है॥
खंभ फारि प्रगटे नरहरि वपु जन प्रह्लाद छुड़ाया है।
परसराम वपु निःकलंक होय, भूव का भार मिटाया है॥
काली मरदन कंस निकंदन, गोपीनाथ कहाया है।
मधुसूदन माधव मकुन्द प्रभु, भक्त वत्सल पद पाया है॥
दामोदर गिरधर गोपाल हरि, त्रिभुवन पति मन भाया है।
सिब सनकादिक अरु ब्रह्मादिक, सेस सहस मुख गाया है॥
सुर नर मुनि के ध्यान न आवत, अद्भुत जाकी माया है।
सो परब्रह्म प्रगट होय ब्रज में, लूट लूट दधि खाया है॥
'परमानंद' कृष्ण मन मोहन, चरन कमल चित लाया है॥७०॥

नाम महात्म्य—

(गोरी)

हरिजू को नाम सदा सुख दाता।
करो जू प्रीति निश्चल मेरे मन, आनंद मूल विधाता ॥
जाके सरन गये भय नांहीं, सकल बात को ज्ञाता ।
'परमानंद दास' को ठाकुर, संकर्षन को भ्राता ॥७१॥

(सारंग)

कृष्ण कथा बिनु कृष्ण नाम बिनु, कृष्ण भक्ति बिनु दिवस जात।
वह प्रानी काहे कों जीवत, नहीं मुख बदत कृष्ण की बात ॥
श्रवन न कथा स्याम सुन्दर की, राम कृष्ण रसना नहीं फुरति ।
मानुष जनम कहाँ पावेगो, ध्यान धर घनस्याम चतुर मति ॥
जो यह लोक परम सुख राखत, अरु परलोक करत प्रतिपाल ।
'परमानंद दास' को ठाकुर, अति गंभीर दीनानाथ दयाल ॥७२॥

दूराशा—

(सारंग)

गई न आस पापिनी देहैं।
तजि सेवा बैकुंठनाथ की, नीच लोक के संग रहैं हैं।
जिनको मुख देखें दुख लागे, तिनसों राजा राय कहै हैं॥
फिट मंद मूढ अधम अभिमानी, आसा लागि दुर्वचन सहै हैं।
नाहिन कृपा स्याम सुंदर की, अपने खागे जात बहै हैं।
'परमानंद' प्रभु सब सुखदाता, गुन विचार नहीं नेम गहै हैं ॥७३॥

३—कुंभनदास

गुरु और ईश्वर में अभेद बुद्धि सूचक—

(देवगंधार)

बरनौं श्रीवल्लभ अवतार ।
श्रीगोकुलपति प्रगटे फिर गोकुल, सकल विश्व आधार ॥
सेवा भजन बताये निज जनकौं मेटयो है यम व्यवहार ।
'कुंभनदास' प्रभु गिरिधर आये सबहि उतारें पार ॥१॥

मंदिर संबंध सूचक—

(बिहाग)

वे देखौ बरत झरोखन दीपक हरि पौढ़ें ऊंची चित्रसारी ।
सुंदर बदन निहारन कारन, राखी है बहुत यतन करि प्यारी ॥
कंठ लगाय भुज दै सिरहानैं अधर अमृत पीवत सुकुमारी ।
तन मन मिलिरी प्रान प्यारेसों नौतन छबि बाढ़ी अति भारी ।
'कुंभनदास' दंपति सौभग सींवा जोरी भली बनी इक सारी ।
नवनागरी मनोहर राधे नवल लाल श्रीगोवर्द्धनधारी ॥२॥

श्रीगुसांईजी के प्राकटय की बधाई—

(सारंग)

प्रगट भये फिरि वल्लभ आय ।
सेवारस विस्तार करन कौं, गूढ़ ज्ञान सब प्रगट दिखाय ॥
निजजन सकल किये पावन धन घर-घर बंदनवार बंधाय ।
'कुंभनदास' गिरिधर गुन महिमा बंदीजन चारन गुन गाय ॥३॥

(देवगंधार)

आज बधाई श्रीवल्लभद्वार ।
प्रगट भये पूरन पुरुषोत्तम, लीला करन अवतार ॥
भागि उदै सब दैवी जीवन के नि:साधन जन किये उद्धार ।
'कुंभनदास' गिरिधरन जुगल वपु निगम अगम सब साधन सार ॥४॥

आरती का रूपक—

(केदारो)

लाल के बदन पर आरती वारौं।
चारु चितवन करौं साजनी की युक्तिबाती अगनित घृत कपुर की बारौं॥
संख धुनि भेरी मृदंग झालरि झाँझ ताल घंटा बाजे बहुत विस्तारौं।
गाउं गुन स्याम स्यामा रसनको स्वादरस परम हरखत चमर कर ढारौं॥
कोटि उद्योत रविकांत अंग अंग छबि सकल भूलोकको तिमिर टारौं।
'दास कुंभन' पिय लाल गिरिधरनको रूप देखि नयन भरभर निहारौं॥५॥

सख्यत्वसूचक टोंडके घना का पद—

(सारंग)

लाल तोहि भावें टोंडको घनौ।
कांटा भागै गोखरू लागै फट्यो जात यह तनौ॥
सिहैं कहा लौकड़ी को डर, यह कहा बानिक बन्यो।
'कुंभनदास' तुम गोवर्द्धनधर वह कौन रांड ढेढ़निको जन्यो॥६॥

जाड़े की विदा—

(सारंग)

विधाता अबलन की सुधि लीजै।
जो प्रीतम पर घर जैहैं, यह दुख तुम सुन लीजै॥
बैरी मनोज उष्ण अंग अंग में सीत लगें तन छीजै।
'कुंभनदास'प्रभु गोवर्द्धनधर या जाड़ेकों बिदा करिदीजै॥७॥

स्वरूपासक्ति—

(सारंग)

केते दिन व्है जु गये बिनु देखैं।
तरुन किसोर रसिक नंदनंदन कछूक उठत मुख रेखैं॥
वह सोभा वह कांति वदन की कोटिक चन्द बिसेखैं।
वह चितवनि वह हास्य मनोहर वह नटवर वपु भेखैं॥
स्यामसुंदर मिलि संग खेलन की आवत जीय अपेखैं।
'कुंभनदास' लाल गिरिधर बिनु जीवन जन्म अलेखैं॥८॥

(धनाश्री)

निरखत रहीये गोवर्द्धन रानौ ।
मनसा बाचा सुन मेरी सजनी मन इनही कै हाथ बिकानौ ।।
सुंदर स्याम कमलदल लोचन मो तन मुरि मुसिकानौ ।
'कुंभनदास' प्रभु गोवर्द्धनधर नैनन मांझ समानौ ।।९।।

फतहपुर सीकरी जाने का पद--

(सारंग)

भक्तन कौं कहा सीकरी काम ।
आवत जात पन्हैया टूटी. बिसर गयो हरि नाम ।।
जाकौ मुख देखैं दुःख उपजे,ताकौं करन परयो परनाम ।
'कुंभनदास' लाल गिरिधरन बिनु यह सब झूंठो धाम ।।१०।।

विरह के—

(केदारो)

औरन कौं समीप बिछुरनौ आयौ मेरे ही हीसा ।
सब कोउ सोवै अपुने सुख आली मोकौं चाँहत जाय चहुं दीसा ।।
ना जानौं यह बिधाता की गति मेरे आंक लिखे ऐसैं कौन रीसा ।
'कुंभनदास' प्रभु गिरिधर कहत निसिदिन रही रटत ज्यों चातक
घन तृसा ।।११।।

(विहाग)

अब दिन राति पहार से भये ।
तबतैं निघटत नाहिन जबतैं हरि मधुपुरी गये ।
यह जानियत विधाता जुग समकीनैं जाम नये ।
जागति जात बिहात न नेकहु, एसे भाँति ठये ।।
ब्रजबासी सब परम दीन अति व्याकुल सोच लये ।
जनु बिनु प्रान दुखित जलरुहगण दारुण हेम हये।।
'कुंभनदास' बिछुरत नंदनंदन बहुत संताप दये ;
अब गिरिधर बिनु रहत निरंतर लोचन नीर छये।।१२।।

विरह के--

(बिहाग)

तुम्हारे मिलन बिनु दुखित गोपाल ।
अति आतुर कुलवधू ब्रजसुंदरि प्यारे विरह बिहाल ॥
सीतल चंद तपत भयो दाहत कमल पत्र जानु गरल व्याल ।
चंदन कुसुम सुहाय नहीं घनसार लगत बाढ़ी तन ज्वाल ॥
'कुंभनदास'प्रभु नवघन तुम बिनु कनकलता मानो सुखी ग्रीष्मकाल॥
अधरामृत सींचि लेहु चलहु श्रीगिरिवरधरलाल ॥१३॥

श्रीनाथजी का कुंभनदास के खेत में जाने का आभास —

(राग रामकली)

माइरी गिरधर के गुन गाऊं ।
मेरे तो बर स्यामसुंदर और न रुचि उपजाऊं ॥
खेलन आंगन आउ लाडिले इहि मिस दरसन पाऊं ।
'कुंभनदास' प्रभु हिलगके कारन लालच लागि रहाऊं॥१४॥

नंदगाँव प्रति गमन का सूचक—

(सारंग)

लालन तेरी चितवनि चितही चुरावै ।
नंदगाम वृषभान पुरा बीच मारग चलन न पावै ॥
हों तो डग भरों डरौं नहिं काहू ललिता दगन चलावैं ।
'कुंभनदास'प्रभु गोवर्द्धनधर धरयो सो क्यौं न बतावैं ॥१५॥

छप्पनभोग का पद—

(सारंग)

छप्पन भोग अरोगन लागै ।
श्रीवृषभानु कुंवरि नंदनंदन लै अपुने गन संग अनुरागै ॥
विविध भांति पकवान मिठाई विविध विंजन धरे रस पागै ।
खटरस धरे प्रेम रुचिकारी मधु मेवा अपुने मुख मागै ॥
खात खवावत हसत हँसावत बिनवत सखी तहां ठाढ़ी आगैं ।
जेंवत देखि लाल गिरिधरको 'कुंभनदास' हरखित बड़भागैं ॥१६॥

वर्षा का पद—

(मल्हार)

काहे न बरसत पानी, गुमानी घन ।
सूखे सरवर उड़ गये हंसा कमल बेलि कुम्हिलानी ॥
दादुर मोर पपैया बोलत कोयल सब्द सुहानी ।
'कुंभनदास' प्रभु गोवर्द्धनधर लाल भये सुखदानी ॥१७॥

गोवर्द्धन एवं ब्रज की धरनी की शोभा—

(मल्हार)

यह छबि मोपें जात न बरनी ।
श्रीगोवर्द्धन की आस पास तैं खिल रही सब अरनी ॥
मदनमोहन पिय खेलन निकसे संग राधे मन हरनी ।
'कुंभनदास' प्रभु गोवर्द्धनधर धन्य धन्य ब्रज की धरनी ॥१८॥

श्रीनाथजीके मथुरा गमन समय (सं० १६२३ पर्यंत) की उपस्थिति सूचक पद—

(बिहाग)

बिछुरनौं ब यह किन ही कियो ।
यातैं बुरी पीर और नाहिन जात भस्म भयो हियो ॥
पल पल जुग सम जाई सखीरी क्यों हू न परत जियो ।
'कुंभनदास'प्रभु गोवर्द्धनधर गवनत,तनमन प्रान संग लियो॥२०॥

वि० सं० १६२८ से ३७ तक की उपस्थिति सूचक—

(सारंग)

पवित्रा पहेरैं श्रीवल्लभ राजकुमार ।
तीनों लोक पवित्र किये हैं श्रीविट्ठल गिरिधार ॥
श्रावन सुक्ल एकादसी होत हैं मंगल चार ।
करि सिंगार सिंहासन बैठैं सत बालक परिवार ॥
गृह गृह तें सब आवत गावत मोतिन भरि भरि थार ।
'कुंभनदास' प्रभु तुम चिरजीयो, देत पवित्रा उदार ॥१६॥

भागवत दशम प्रारंभ ?

(कान्हरो)

पितामह पास धरनि जू गऊ रूप धरि, करति बिनती बहु बिधि पुकारी । भयो खल भार तुम करो हो मन बिचारि, धर्म जज्ञ जन हितकारी ॥ चक्रत ब्रह्मा भये रुद्र ढिंग बैठि कै कहत, चलो विष्णु ढिंग करत विचारी । गये ढिंग विष्णु ने आव आदर कियो, भई चिंता मन होत भारी ॥ धर्म भुवि तैं गयो कह्यो जुगत कैसें करैं, चलो सिंधु के तट धर्म धारी । करत अस्तुति ध्यान देवलोक आदि सब, भयो भुवि भार जग ताप हारी ॥ सुनत मन की बात भक्त जन हित काज, कर हित हरि आइ सब दै हुंकारी । जाउ अपने धाम कौं करो पूरन काम, हरि प्रगट यदुवंस कुल भय हारी ॥ बसत पुर सब बसुदेव देवकी कूख, प्रगटत भये हैं श्री मुरारी । धारे भुज चार कटि पीत पट बनमाल, देखि नत कमल मुख कंस भय भारी ॥ स्याम कह्यो मोहि लै चलो नन्द द्वार में, नन्द के भई है कुमारी । खुले तारे द्वारपाल सोये सब सिसु भयो, पौढ़े पलना जु सुखकारी । चले धन पुत्र लै पुष्प वृष्टि करैं, सिंधु आगै सेष छत्रधारी । चढी अति जमुना चरन जब ही परस, धरयो नंद गृह पलना सभारी ॥ भयो जब प्रात सुत जन्म सुनि कुल बधू, वृद्ध आई जो मन मोद भारी । ग्वाल लै दूध दधि छिरक नाचत सबै, नन्द जू ने जायो पूत जब हँसी व्रजनारी ॥ देत गौदान बह विप्र भाटन जाच के, देत असीस चिरजियो बनवारी । दास 'कुंभन' सकल भयो आनंद ब्रज, देखिये व्रजनारि चढ़ी अटारी ॥

४—कृष्णदास

शरणागति सूचक—

(सारंग)

तब तैं स्याम सरन हों पायो।
जब तैं भेंट भई श्रीवल्लभ, निज पति नाम बतायो॥
और अविद्या छांडि मलिन मति, श्रुतिपथ आइ दृढायो।
'कृष्णदास' जन चहुँ युग खोजत, अब नेहचै मन आयो॥१॥

(सारंग)

वल्लभ पतित उद्धारन जानौ।
सरन लेत लीला दरसावत, तापर ढरत गोवर्द्धनरानौ॥
साधन वृथा करत दिन खोवत, श्रीवल्लभ को रूप न जानैं।
जिनकी कृपा कटाक्ष सकल फल, 'कृष्णदास' तीनौं जनम न मानैं॥२॥

नाम मंत्र अष्टाक्षर—

(सारंग)

कृष्ण श्रीकृष्णः शरणं मम उच्चरैं। रैन दिन नित्य प्रति सदा पल छिन घड़ी करत विध्वंस अखिल अघ परहरैं॥ हौत हरि रूप व्रज भूप भावैं सदा अगम भवसिंधु कों बिना साधन तरैं। रहत निस दिवस आनंद उर में भरयो, पुष्टि लीला सकल सार उरमें धरैं॥ रमा अज सेष सनकादि सुक सारदा, व्यास नारद रटैं पल मुख ना टरैं। लाल गिरिधरन की महिमा अतुल जगमगी, सरन 'कृष्णदास' निगम नेति नेति करैं॥३॥

निवेदन मंत्र का—

(सारंग)

कृष्णाये कृष्ण मन मांहि गति जानिये। देह इंद्रिप्रान दारागारादि वित्त आत्मा सकल श्रीकृष्ण की मानिये॥ कृष्ण मम स्वामी हों दास मन वच कर्म, कृष्ण कर्ता सकल विश्व के जानिये। 'कृष्णदासनिनाथ' लाल गिरिधरन चरन, रज वल्लभाधीस सिर सानिये॥४॥

वल्लभ अवतार—

(देवगंधार)

प्रगटे श्री वल्लभ अवतार।

प्रगट भये पूरन पुरुषोत्तम, सकल श्रुतिन को सार ॥
तबहि प्रगट वसुदेव सुवन तुम, हरयो सकल भुव भार।
बाल केलि सुख नंद महर कों, दियो विविध विस्तार ॥
जात बहे है सकल जीव कलि, भवसागर की धार।
तिन्हे बांह गहि चरन कमल तर, राखै परम उदार ॥
जुग जुग राज करौ श्री गोकुल, व्रज में नित विहार।
'कृष्णदास' कों करो कृपा ये, जीवन प्रान आधार ॥५॥

श्री वल्लभ स्वरूपासक्ति—

(बिहाग)

रसिक बिनु रसकी बात कासौं कहिये।

श्री वल्लभ प्रभु रसिक सिरोमनि सर्वस्व इनकों दइए ॥
ऐसो और कौन जग मांही जा आगै सिर नइए।
'कृष्णदास' श्रीवल्लभ कृपा बिनु गिरधरलाल कहां सौं पइए ॥६॥

श्रीनाथ जी के मन्दिर का सूचन—

(सारंग)

पहेरत पाट पवित्रा मोहन नंदरानी पहेरावैं।

जंबु नग कंचन के तारे बीच बीच रतन जडावे ॥
पूआ सुहारी और लडुवा लै हँसि हँसि गोद भरावे।
'कृष्णदास' श्रीनाथ जू के मंदिर प्रमुदित मंगल गावे ॥७॥

(आसावरी)

भोगी भोग करत सब रस कौ।

आस पास प्रफुल्लित मन फूले गावत भक्त सुजस कौं ॥
करत तहां टहेल निरंतर रहेत श्री राधा बस कौ।
'कृष्णदास' ठाड़ो सिंघद्वारे पीवत प्रेम पीयूषकौं ॥८॥

श्री गोपीनाथ जी की बधाई––

(सारंग)

घर घर आनंद होत बधाई ।
श्री वल्लभ गृह प्रगट भये हैं श्री गोपीनाथ कुंवर सुखदाई ।।
धनि २ आश्विन बदि द्वादसी दिन धनि २ वार नक्षत्र सुहाई ।
धनि धनि भाग खुलै भक्तन के धनि धनि कूंख अक्काजु माई ।।
मंगल कलस बिराजित द्वारैं तोरन माल बंधाई ।
कुमकुम अक्षत थार हाथ लै गावत ब्रजबधू आई ।।
टीकौ करति निहारति श्री मुख बारति आरति लौन कराई ।
जुग जुग राज करौ यह ढौटा देत असीस सबैं मन भाई ।।
जै जैकार भयो त्रिभुवन में देवन दुंदुभी नाद बजाई ।
श्री वल्लभ सुत चरन कमल रज 'कृष्णदास' न्योछावरि पाई ।।९।।

श्री गुसांई जी की बधाई का ढाढी––

(देश)

गोकुल में आनंद भयो है घर घर बजत बधाई ।
श्री वल्लभ गृह प्रगट भये हैं श्री विट्ठल सुखदाई ।।
सब मिलि संग चलौ तुम मेरे जो भावै सो लीजै ।
भये मनोरथ मन के भाये अपुनो चिंत्यो कीजै ।।
उदय भयो गोकुल को चंदा पूजी मन की आस ।
भक्तन मन आनंद भयो है दुख द्वन्द भये सब नास ।।
देस देस के भिक्षुक गुनीजन रहस्य बधायो गावैं ।
एक नाचै एक करे हैं कुलाहल जो मांगै सो पावै ।।
काहे कों बिलंब करत हो भैया वेगि चलो उठि धाई ।
श्री वल्लभ सुत को दरसन देखें जनम जनम दुख जाई ।।
अष्टसिद्धि नवनिधि लक्ष्मी ठाडी रहत हैं द्वार ।
ताकी ओर दृष्टि भरि भरि कैं कोउ नांहि निहार ।।
श्री वल्लभ करुना मय सागर बांह पकरि गहे लीनो ।
'कृष्णदास' ढाढी अपने कों अभय पदारथ दीनो ।।१०।।

अनिष्ट प्रसंग सूचक—

(सारंग)

ताही कौं सिर नाँइये जो श्रीवल्लभ सुत पद रज रति होय ।
कीजै कहा आन ऊंचे पद तिनसों कहा सगाई मोय ॥
जाके मन में उग्र भरम है श्री विट्ठल श्री गिरिधर दोय ।
ताकौ संग विषम विषहू तैं भूले चतुर करौ मति कोय ॥
सारासार विचार मतो करि श्रुति बीच गोधन लियोहै निचोय ।
तहां नवनीत प्रगट पुरुषोत्तम सहजहि गोरस लियो है बिलोय ॥
उग्र प्रताप देख अपने चख अस्मसार ज्यों भिदै न तोय ।
'कृष्णदास' सुर तैं असुर भये असुर तैं सुर भये चरनन छोय ॥११॥

(सारंग)

बलिहारी श्री विट्ठलेस की जिन जगत उद्धारयो ।
माया सिंधु तैं तारि कैं भव पार उतारयो ॥
पाप पुन्य जीव दुष्ट को हृदे नांहि बिचारयो ।
'कृष्णदास' की बांह पकरि मारग में डारयो ॥१२॥

(कान्हरो)

परम कृपाल श्री वल्लभ नंदन करत कृपा निज हाथ दै माथैं ।
जे जन सरन आय अनुसरहि गही सौंपत श्रीगोवर्द्धननाथैं ॥
परम उदार चतुर चिंतामनि राखत भवधारा तैं साथैं ।
भजि 'कृष्णदास' काज सब सरहीं जो जानैं श्रीविट्ठलनाथैं ॥१३॥

श्रीनाथजी ने अपराध क्षमा किया उसका सूचक—

(कान्हरो)

परम कृपाल श्रीनन्दके नन्दन करी कृपा मोहि अपुनो जानिकैं ।
मेरे सब अपराध निवारै श्रीवल्लभ की कानि मानिकैं ॥
श्रीजमुनाजल पान करायो कोटिन अघ कटवाये प्रानकै ।
पुष्टि तुष्टि मन नेम यही निस 'कृष्णदास' गिरिधरन आनकै ॥१४॥

संकटकाल सूचक पद—

(सारंग)

चक्रधर संखधर गदाधर पद्मधर,
नंद के कुमार तुम त्रिविध टारो मेरौ ॥

विघ्न हरन मंगल करन नटवर वपु स्याम बरन।
दुःख दारिद्र संकट सबै करहु निवेरौ ॥
राजन प्रति राज महाराज त्रिभोवन नायक,
परम उदार आयो सरन निज नेरौ ॥
'कृष्णदास' की आस पूजिवो परिपूरन सबै,
बार बार करौं प्रनाम चरनन कौ चेरौ ॥१४॥

द्वादश राशी का—

(अडानो)

मीन से चपल अरु मेष हु न लागे पल,
वृषभ सी गति लिये डोलत भवन में।
मिथुन पैं चलै अंक करक लावै सिंह,
कन्या प्रवेस सो तो आयो तेरे तन में ॥
तुला जिन करै आली वृश्चिक व्यथासमान,
धनुषसी सौंह मौहैं मकर तैरै प्रनमें।
कुंभ जैसै कुच साज भेंट पिय अंक आज,
दंपति छबि निरखि 'कृष्णदास' हरखि मनमें ॥१६॥

आरती—

(बसन्त)

आरती वारती राधिका नागरी।
तन कनक थाल भूषन रत्नदीप कुच कमल मुक्तावली मंगल उजागरी ॥
अनुराग छत्र अंचल चमर नयनचल भाव कुसुमांजली छँडनी गुनआगरी।
कटि रनित मेखला सुभग घंटावली झालरी संख जय कीरति उचागरी॥
सखी जूथन लियै विविध भोगन किये सुखदै गिरिधरन रिझवति सुहागरी।
विष्णुस्वामि सुमतवर्ती श्रीवल्लभ पद पद्म नमत'कृष्णदास'बड़भागरी१७

बंसत आगम—

(मलार)

देखरी देख रितुराज आगम सखी सकल बन फूल आनंद छायो।
ताल कदली ध्वजा उमग अति फरहर संग लै आपनी फौज लायो ॥
कोकिला कीर गुनगान आगैं करत भृंग भौंर लिये संग आयो।
घुरत निसान बनचौर मोरन कियौ करत पिक शब्द गान अति सुहायो ॥

फिरत हैं हंस पदचर चकोरन बहौ सैलरथ चमक चढि धमकि आयो।
उड़त बासध नव कुमकुमा अरगजा त्रियन के कुचन तक तम करायो॥
पांच लै बान चहुं ओर छोड़े प्रथम चांपलै आप हाथन चलायो।
दौर कर धायधप लरत अति बीर लौं घेर चहुं ओर गढ़ मान ढायो॥
परी अति खलबली नारि उर मदनकी मिलन मिलि स्याम अंचल फिरायो
जीत सब सुभट'कृष्णदास'वृंदा विपुन आय गिरिधरनके सीस नायो॥

नेचुकी—

(गोरी)

आवत बनै कान्ह गोप बालक संग नेचुकी खुररैनु छुरित अलकावली। भौंह मन्मथ चाप वक्र लोचन बान सीस सोभित मत्त मयूर चंद्रावली॥ उदित उडुराज सुंदर सिरोमनि वदन निरख फूलीं नवल युवति कुमुदावली। अरुन सकुचत अधरबिंब फल उपहसत कछुक प्रगटित होत कुंद दशनावली॥ श्रवन कुंडल तिलक भाल बेसर नाक कंठ कौस्तुभ मनि सुभग त्रिवलावली। रत्नहाटक जटित उरसि पदकन पांत बीच राजत सुभग झलक मुक्तावलीं॥ वलय कंकन बाजूबंद आजानु भुज मुद्रिका करतल विराजत नखावली। क्वनित कर मुरलिका मोहित अखिल विश्व गोपिका जन मनसि ग्रथित प्रेमावली॥ कटि क्षुद्र घंटिका जटित हीरामनि नाभि अंबुज बलित भृंग रोमावली। धाय कबहुक चलत भक्त जानि पिय गंड मंडित रुचिर श्रमजल कणावली॥ पीतकौशेय परिधान सुंदर अग चलत नूपर बजत गीत शब्दावली। हृदय 'कृष्णदास' गिरिवरधरनलालकी चरन नख चद्रिका हरत तिमिरावली॥१६॥

वृंदावन गये उस समय का—

(कान्हरो)

श्रीविट्ठल जू के चरनन की बलि।
हमसे पतित उद्धारन कारन परम कृपाल आपु आये चलि॥
उज्ज्वल अरून दयारंग रंजित नव नखचंद्र विरह तम निर्दलि।
सेवत मृखकर सोभन पावन भक्ति मुदित ललित पद अंजुलि॥
अति सैं मृदुल सुगंध सुसीतल परसत त्रिविध ताप डारत मलि।
कहैं 'कृष्णदास' बार एक सुधि कर तेरौ कहा करेगौ रिपु कलि॥२०॥

वृंदावन जाने के प्रसंग की पुष्टि—

(कान्हरो)

देख जिऊं माई नयन रंगीलौ ।
लै चलि सखीरी तेरे पाँय लागौं गोवर्द्धनधर छैल छबीलौ ॥
नवरंग नवल गुनसागर नवल रूप नवभांति नवीलौ ।
रसमय रसिकनी मोहन रसमय वचन रसाल रसीलौ ॥
सुंदर सुभग सुभगता सीमा सुभग सुदेस सुभाग्य सुसीलौ ।
'कृष्णदास'प्रभु रसिक मुकुट मनि सुभग चरित्र रिपु दलन हठीलौ॥२७

स्वामिनी स्वरूप —

(सारंग)

अबहीतैं मनमथ चित्त चोरति कहा करैगी जोबन बिरियाँ ।
मनहर लेति तनक चितवनि में फेरति हैं नयनन की नरियाँ ॥
तेरौ तन गिरिधरन लाल हित सब गुन रास बिधाता धरियाँ।
'कृष्णदास' प्रभु गिरिधर नागर रिझवति हूँमति सहज फुल्ल झरियाँ॥२८

आचार्य चरित्र सूचक पद—

(सारंग)

सेवा करन प्रगट ब्रज आये ।
श्रीलछमन गृह वल्लभ प्रगटे तिनके विट्ठलनाथ कहाये ॥
श्रतिमत को अग्रभाष्य बिचारि श्री भागवत अर्थ प्रगटाये ।
मायावाद अन्य धर्म खंडन करि विष्णुस्वामि पथ जग ज्योति चलाये॥
श्रीगोपाल मंत्र अरु चारु अष्टाक्षर को श्रवन कराये ।
गद्यमंत्र सब जीवन कौं दै, कृष्ण चरन सबकै चित्त लाये ॥
तीन परिक्रमा करिकैं द्वारका देसहू, श्रीरनछोड़ छाये ।
नवधाभक्ति बिचारि चित्त, नव स्वरूप को दरस दिखाये ॥
श्रीनवनीत, चंद्र, श्रीनटवर, मदनमोहन, गिरिधरन, भाये ।
द्वारकेस, मथुरेस, विट्ठल, श्रीबालकृष्ण, गिरिधरन सुहाये ॥
सब कौं सेवा कारन श्रीयमुना जल पान कराये ।
श्रीगोवर्द्धन रामकृष्ण को विमल विमल जस गाये ॥
दास भावसौं आपु बिराजत सुनि वचनामृत कोउ न अघाये ।
स्यामसुंदर पदरज प्रताप तैं 'कृष्णदास' यह दरसन पाये ॥२९

प्रेम की पेंठ—

(सारंग)

व्रजपुर पेंठ बिकत हैं प्रेम ।
मनमानिक के बदले पैयत एह नेह कौ नैम ॥
बिरह बांस संपुट में सजनी राखै जिय में एम ।
'कृष्णदास' करि जतन घनेरौ ज्यौं रंक राखत हेम ॥२४॥

स्वामिनी प्रति कृष्णासक्ति—

(आसावरी)

नयनन में बस रही री लाल के नागरी नेक न निसरति ।
तेरे तन की नवरंग बानिक रसिक कुंवर के चितते न बिसरति ॥
तेरौ मन अरु गिरिधर पिय कौ बहु बिधान एकौ करि मिसरत ।
'कृष्णदास' गिरिधरन रसिकवर सुबस करनकौं सीखी हैं कसरत॥२५॥

उपस्थिति काल सूचक—

(गौरी)

वंदों श्रीविट्ठल चरणं ।
वंस तिलक जु भोग मुक्ता जगतपति गिरिधरणं ॥
करुणामय गोविंद प्रकटे कलि-जिव अधोगत तरणं ।
श्रीबालकृष्ण विनोद देखि हिय प्रेम पुलक तन करणं ॥
कर कमल गोकुलनाथ बिराजत नवनीत सुभग सुवरणं ।
द्विजपति श्रीरघुनाथ कीरति कहै हैं श्रुति वरणं ॥
जदुनाथ अनाथ के प्रभु विश्वभार ही हरणं ।
श्रीघनस्याम पूरण काम भक्त मन 'कृष्णदास' शरणं ॥२६॥

उपस्थिति काल सूचक—

(वसंत)

खेलत वसंत वर विट्ठलेस राय । निज सेवक सुख देखत आय ॥
श्रीगिरिधर राजा बुलाय । श्रीगोविंदराय पिचकारी लाय ॥
श्रीबालकृष्ण छबि कही न जाय । श्रीगोकुलनाथ लीला दिखाय ॥
रघुनाथलाल अरगजा लाय । श्रीजदुनाथ चोवा मंगाय ॥
घनस्याम धाय भेंटन भराय । सब बालक खेलत एक दांय ॥
तहां सूरदास नाँवत है आय । परमानंद घोरि गुलाल लाय ॥

चतुर्भुज प्रभु केसर माट भराय । छीतस्वामी हु बूका फैंके जाय ॥
नंददास निरखि छबि कहत आय । गावैं कुंभनदास बीना बजाय ॥
तब गोविंद बाँसि छिरकैं आय । कोउ नाँचत देह दसा भुलाय ॥
सब बालक हो हो बोलें जाय । उडयौ अबीर गुलाल धुंधर फराय ॥
पिचकाई इत उत छींटे जाय । कोउ फेंकत फूलत अपने भाय ॥
कोउ चोवा लै छिरके बनाय । बाजैं ताल मृदंग उपंग भाय ॥
बीच बाजत मुहचंग मुरली जाय । कोऊ डफ लैं महुवरि सों मिलाय ।
एक नाँचत पग नूपुर बजाय । बाढ्यो सुख समुद्र कछु कह्यो न जाय ॥
सब बालक भीने अंग चुवाय । भक्तन घर घर सुख ही छाय ॥
सोभा कहैं कहा कवि हू बनाय । यह सुख सब सेवक दिखाय ॥
सुर कुसुमन बरखत आय आय । सब गावत मीठी गारी भाय ॥
सब अपने मनोरथ करत आय । तहां 'कृष्णदास' बलिहारी जाय ॥२७

हिन्दी भाषा मिश्रित—

(बिलावल)

प्रगटे श्रीविट्ठलनाथ जू जग भया उजियारा ।
पौष कृष्ण नौमी दिना प्रभु लिया अवतारा ॥
निरखत पूरन चंद्रमा कुमुदनी बिकसानी ।
सरिता सिंधु सरोवरा भयो निर्मल पानी ॥
भक्तन मन आनंद भयो गावैं मृदु बानी ।
चढि बिमान सब देवता जै जै मुख बानी ॥
गोकुल में आनंद भयो सब करत कलोला ।
नर नारी नाचै सबै लाजन पट खोला ॥
कलियुग में द्वापर भयौ सब जीव उद्धारैं ।
गुन औगुन प्रभु ना गिनैं किये एक सारैं ॥
सेवा रीति बतायकैं निर्भै करि डारैं ।
जोगी जज्ञ तप नहिं सो, है कलियुग मांहैं ॥
बहैं जात जीव देखिकैं राखैं गहि बांही ।
'कृष्णदास' अपुनो कियौ चरनन की छांही ॥२८।

५–छीतस्वामी

शरण मंत्र प्राप्ति का संकेत—

(कान्हरो)

श्रीविट्ठल प्रभु जगत उद्धारन देखो भूतल आये री।
नख सिख सुंदर रूप कहा कहुं कोटिक काम लजाये री ॥
अनेक जीव किये जू कृतारथ श्रवन सुनत उठि धाये री।
सरन मंत्र श्रवन सुनाइ कें पुरूषोत्तम कर गहाये री ॥
सेष सहस्र मुख निसदिन गावें तोउ पार न पावें री।
'छीतस्वामी' गिरिधरन श्रीविट्ठल प्रेम प्रतीत सब धावें री ॥१॥

(देवगंधार)

श्रीविट्ठल प्रगटे ब्रजनाथ।
नंदनंदन कलिजुग में आये निजजन किये सनाथ ॥
तब असुरन को नास कियो हरि अब माया मत नासै।
तब गोपीजन कों सुख दीनो अब निज भक्तन एसै ॥
तब के वेद पंथ छोड़ि रास रमि नाना भाव बताये।
अब स्त्री शूद्रादिक सबकों ब्रह्मसंबंध कराये ॥
यह विधि प्रगट करी निज लीला वल्लभराज दुलारैं ॥
'छीतस्वामी' गिरिधरन श्रीविट्ठल इनकों वेद पुकारैं ॥२॥

शरणकाल के ज्ञान में सहायक—

(धनाश्री)

कलि में प्रगट भये कल्यान।
सकल अमंगल दूरि किये हैं, नासत तिमिर उदै भयो भान।
भये मनोरथ सब भक्तन के, पायो पद निरवान।
'छीतस्वामी' गिरिधरन श्रीविट्ठल वारौं तन मन प्रान ॥३॥

शरण समय के प्रसंग का—

(बिहाग)

भई अब गिरिधर सों पहचानि।
कपट रूप धरि छलिवे आयो पुरूषोत्तम नहिं जान ॥

छोटो बड़ो कछु नहि जान्यो छाय रह्यो अज्ञान ।
'छीतस्वामी' देखत अपनायो श्रीविट्ठल कृपा उदार ॥४॥

गिरिराज वास सूचक—

(विहाग)

मोहे भरोसौ श्रीगिरिराज कौ ।
कहा जु भयो तन मन धन जोबन जोरे, भक्ति बिना कहा काजकौ ॥
ऊंची मेडी कहाजू कामकी ब्रजवसिवौ भलो छाज कौ ।
'छीतस्वामी' गिरिधरन श्रीविट्ठल श्रीवल्लभ कुल सिरताज को ॥५॥

गोकुल का स्वामित्व सूचक----

(धनाश्री)

श्रीवल्लभनंदन की बलि जाऊं ।
जे गोवर्धन वसत निरंतर गोकुल जाकौ गाऊं ॥
जे द्वारावती जदुकुल नायक मथुरा जाकौ ठांऊं ।
जे वृंदावन केलि करत हैं देखत छबि न अघाऊं ॥
वामन रूप छल्यो बलिराजा ताके चरन चित्त लाऊं ।
'छीतस्वामी' गिरिधरन श्रीविट्ठल कहियत जाकौ नाऊं ॥६॥

जगतगुरू व गुसांई की पदवी सूचक पद----

(देवगंधार)

जगतगुरू श्रीविट्ठलनाथ गुसांई ।
और गुसांई काहे कौं कहावत उदर भरन के तांई ॥
धर्म आदि पुरुषारथ चारौं सो इनके गृह मांही ।
तुम्हारे चरन प्रताप तेज तें त्रिविध ताप भजि जांही ॥
माला तिलक कंठ दै माथैं संख चक्र जो धराई ।
'छीतस्वामी' गिरिधरन श्रीविट्ठल भक्ति पद पंकज पाई ॥७॥

नहीं जाँचने का प्रन—

(बिहाग)

जाँचों श्रीविट्ठलनाथ गुसांई ।
मन कर्म वचन मेरे श्रीविट्ठल और न दूजो सांई ॥

और जाँचे तो जननी लाजैं करौं इनके मन भाई।
'छीतस्वामी' गिरिधरन श्रीविट्ठल तन त्रै ताप नसाई ॥८॥

(बिहाग)

हम तो श्रीविट्ठलनाथ उपासी।
सदा सेवों श्रीवल्लभनंदन कहा करों जाय कासी॥
इनहें छांडि और हि धावें सो कहिये असुरासी।
'छीतस्वामी' गिरिधरन श्रीविट्ठल बानी निगम प्रकासी ॥९॥

आश्रय सूचक—

(बिहाग)

मोहि बल है दोऊ ठौर को।
एक भरोसो हरि भक्तन को दूजो नंदकिसोर कौ॥
मनसा वाचा और कर्मणा नाही भरोसौ और कौ।
'छीतस्वामी' गिरिधरन श्रीविट्ठल श्रीवल्लभकुल सिरमौर कौ ॥१०॥

प्रकट कृष्ण अवतार—

(देवगंधार)

जय श्रीवल्लभराज कुमार, परमानंद कपट खंडनकरि सकल वेदधुरधार।
परम पुनीत, तपोनिधि पावनतन शोभा जित मार॥
निज मुख कथित कृष्ण लीलामृत सकल जीव निस्तार।
निजमत सुदृढ़ सुकृत हरि पद नवधा भक्ति प्रचार॥
दुरित दूरेत अवेत प्रेत गति हातित पतित उद्धार।।
नहिं मति नाथ कहां लों बरनों अगनित गुन गन सार।
'छीतस्वामी' गिरिधरन श्रीविट्ठल प्रगट कृष्ण अवतार ॥११॥

(देवगंधार)

अब कैं द्विजवर ह्वै सुख दीनो।
तब कैं नंद जसोदा नंदन ह्वै हरि आनंद कीनो।
तब कीनो गोपाल रूप अब वेद स्मृति दृढ़ चीनो॥
'छीतस्वामी' गिरिधरन श्रीविट्ठल भक्ति कपा रस भीनो ॥१२॥

अष्ट समय का—

(आसावरी)

श्रीविट्ठलनाथ गात अति कोमलसों मिलि रहत गोवर्द्धन धारी।
कहा कहौं दोउन की प्रीति रीति परत न कहुं पलक ओट टारी ॥
खेलत हसत परस्पर दोउ तोउ करत या विधि सेवारी।
कर जोरें और सीस नमावै पैंठत निज मंदिर की द्वारी ॥
विविध भांति के करत प्रबोधैं उठे जु ब्रज जुवतिन सुखकारी।
आलस भरे नैन रस मातै या छबि पर तन मन बलिहारी ॥
कंचन थार साज धरि आगें श्रीजमुना जलसों भरी झारी।
करि मनुहार लिवाये रुचि सों पुनः मंगल आरती उतारी ॥
सकल सौंज धरि सिंगार कों बैठारै पिय कनक पिढारी।
उबटन उबट स्नान कराये अंग अंगोछ कै बेनी सम्हारी ॥
मोर मुकुट कटि काछिनी किंकनी सूथन चरन नूपुर झनकारी।
भूखन नाना विधि धराये और पहेराये लै गुंजारी ॥१०
भाल तिलक मृगमद को कीनो अंखियनि आंज करी अनियारी।
जिन काहू की दीठ जो लागे तातें कपोल दिठोना पारी ॥
विविध कुसुम बनमाल गूही पहरावत तिन कुंज बिहारी।
करी कटाक्ष ब्रजजन मन दूरन धरि कैं बेनु आरसी निहारी ॥
भोग धरयो गोपीवल्लभ जब ग्वालन धेनु लै चलै बनचारी।
दुही धौरी गैया घैया मथि मथि देत पीवत उपजत सुखभारी ॥
धूप दीप करि राजभोग धरि थार समर्पि तुलसी संख वारी।
किए प्रकार व्यंजन बहुतेरे परम चतुर रस ब्रज की नारी ॥
लेत सराहि सराहि नीके कर, कियौं अचवन जब धरे बीडारी।
बीडी देत समार अपुने कर मुरली लकुट लै निरांजन बारी ॥
करि दंडवत बिनती यह कीनी सदाही रहो ऐसी जो कृपारी।
श्रीवल्लभ के लाडिले ललन जु खेलत गेंद चौगान पधारी ॥
नव निकुंज सोभा अपार है जिन करो बार मग देखि तयारी।
नव पल्लव कुसुमन सिज्या रची नव द्रुम बेलि नवल तिवारी ॥
करि अनोसर गिरि तें उतरे इत उत लगन लागी अति गाढी।
ये चितवत उत वे चितवत कहा कहुं अति व्याकुलता री ॥
वहां तें अपुने धाम पधारे करि संध्या जप पाठ उचारी।

भोजन करि भक्तन सुख दीनो लियो विश्राम गये वहां री ॥
त्रिदल खेल खेले रंग भीने कियो उत्थापन बेगि विचारी ।
झारी भरि धरि अपने करसों कंद मूल फल भोग तयारी ॥
अति ही प्रेम सों लिए हिये में बनसों पधारत बनी बनचारी ।
गोधन ठाट ग्वाल मंडली मधि आवत संझा भोग धरि थारी ॥
वेणु बेत्र धरि करी है आरती बडो शृंगार कियो तिहिं वारी ।
तन तनिया तनसुख को राजत फेंटा सीस लगे घूंघरारी ॥
धौरी धूमर काजर कारी लै लै नाम सबहीन कों पुकारी ।
दूध ग्वाल रये सेन भोग धरि दूसरे गुप्त है मुदित महारी ॥
बीडी देत कपूर सुवासित करि आरती मुख जो निहारी ।
सेन कराय आये जब बाहर हरि जू की कथा कहत विस्तारी ॥
या बिधि सेवा करत करावत भक्ति दिखावत परम उदारी ।
'छीतस्वामी' गिरिधरन श्रीविट्ठल बरनों कहा एक रसनारी ॥१३॥

काशी का शास्त्रार्थ—

(देवगन्धार)

जीति फिर सांवरे ने कासी ।
तब वे रूप सुदरसन मुख तै अब खट दरसन भये नासी ॥
तब पंडरीखन भेख धरी अब पंडित वाद विनासी ।
'छीतस्वामी' गिरिधरन श्रीविट्ठल अब हैं गोकुल बासी ॥१४॥

उपस्थिति सूचक—

(देवगंधार)

विहरत सातों रूप धरें ।
सदा प्रगट श्रीवल्लभनंदन द्विजकुल भक्ति बरें ॥
श्रीगिरिधर राजाधिराज ब्रजराज उद्योत करें ।
श्रीगोविंद इंदु जग किरन सींचत सुधा खरें ॥
श्रीबालकृष्ण लोचन बिसाल देखे मन्मथ कोटि टरें ।
गुन लावन्य दया करुना निधि श्रीगोकुलनाथ भरें ॥
श्रीरघुपति जदुपति घनसांवल मुनिजन सरन परें ।
'छीतस्वामी' गिरिधरन श्रीविट्ठल जिहिं भज अखिल तरें ॥१५॥

६—गोविन्दस्वामी

शरण पहले का वृंदावन बास सूचक—

(बिहाग)

जो कोऊ वृंदावन रस चाखैं।
खारी लगत खांड़ और खारिक आन देस की दाखैं॥
प्रान समान तजैं नहिं सींवा लोभ दिखावै लाखैं।
भूखौ रहैकै पावैं भाजी निरखि रहत रूप साखैं॥
परयौ रहै कुंजन कै महियाँ कृष्ण राधिका भाखैं।
जन 'गोविंद' बलबीर बिहारी ठकुरानी जो राखैं॥१॥

शरणकाल के अनुमान में सहायक—

(धनाश्री)

श्रीविट्ठल राजकुमार श्रीगिरिधर अवलोकत मन भयौ आनंद।
वेद पुराण सज्ञान साध्य सब कलियुग उद्दरन आनंदकंद॥
विमल सरीर नाम यस निर्मल विमल बदन की मुसकनि मंद।
'गोविंद' प्रभु प्रगटित संतनहित लीला रूप धरयौ गोविंद॥२॥

शरण के पश्चात् स्वदेश जाने का सूचक—

(बसंत)

श्रीवल्लभ करुणा करकैं कीजै मोहै निज दासन कौ दास।
पूरन काम है नाम तिहारौ इतनी मो मन पूर हौ आस॥
तिहारी कृपा कटाक्ष तैं दुरलभ पाइयै सुलभ करि ब्रजबास।
तिहारे सेवकजन संगति बिनु निसदिन मोमन रहत उदास॥
श्रीवृंदावन गिरि गोवर्द्धन श्रीयमुना तट करहौं निवास।
श्रीहरि बदन चंद सुविमल यस गान करत सुर सदा अकास॥
कृपानिधान कृपा करि दीजै जो सब लोग मिटै उपहास।
दीजैं दिव्य देह 'गोविंद' कौं इन दृग निरखौं अनुदिन रास॥३॥

सख्यता सूचक—

(विभास)

हौं बलि बलि जाऊँ कलेऊ लाल कीजै।
खीर खाँड़ घृत अति ही मीठौ है अबकौ कौर बछ लीजै॥

बनी बढ़ै सुनौ मनमोहन मेरौ कह्यो जो पतीजै।
औटयौ दूध सद्य धौरी कौ सात घूंट भरि पीजै ॥
बारनै जाऊं कमल मुख ऊपर अचरा प्रेम जल भीजै।
बहोरयो जाय खेलौ जमुनातट 'गोविंद' संग करि लीजै ॥४॥

गिल्ली दंडा खेल की पुष्टि—

(नट)

पोत लै आयौ भाजि गंवार।
खोलि किंवार धस्यौ घर भीतर सिखइ दये लंगवार ॥
कबहू तौ निकसैगौ बाहिर ऐसी दऊंगो मार ।
'गोविंद' सौं तू वैर अब करिकैं सुखै न सोवैं यार ॥५॥

(बिभास)

पक्व खजूर जंबु बदरी फल लैहो काछिन टैरी द्वार।
बालक जूथ संग बलि मोहन चौके करत बिहार ॥
सुंदर कर जननी के ऽब दियौ धाये तबहि नंदकुमार।
हीरा रतन परिपूरन भाजन ऐसै परम उदार ॥
लिये लगाय उदर सौं खात जात मीठै परम रसाल।
जूठी गुठली मारत 'गोविंद' कौं हँसत हँसावत ग्वाल ॥६॥

(बिहाग)

जामैं जेतौ गुन हैं आली लालन सब जानत हैं।
सकल गुन निधान जानि ताकी जू तैसीय मानत हैं ॥
उनके आगै ऽब अपनी अधिकाई भूलि कोउ बखानत है।
'गोविंद'प्रभु सकल कला प्रवीन बात जिन चलावहु ते डफानन है ॥

स्वामिनी का देवी पूजन—

(सारंग)

आयौ है हमारै कौऊ संग पूजन चलौ कदम बनदेवी।
भाव भक्ति मानति सबहिन की बलि न काहू की कछू लेवी ॥
पूजवत सकल चौखकी कामना सीतल सुखद सकल सुर सेवी।
'गोविंद' प्रभुसौं कहत वृषभाननंदनी सुनाय २ कछूक बात औरेगी॥८

गोविंददास नाम की पुष्टि---

(गौरी)

प्रणमामि श्रीमद् विट्ठलं।
वेद धर्म प्रमाण कारणं जीव मात्र सुखकरणं॥
सृष्टि निर्मल भक्ति तत्त्व विशेष वर्णन तत्परं।
पाखंड वर्तित मनसि मायिक मोह संशय खंडनं॥
श्रीवल्लभ आत्मजं अखिलं पुराण श्रुतिरस पारनं।
करुणानिधि 'गोविंददास' प्रभु कलि भय नासनं॥९॥

प्रिया प्रीतम के संगीत का साक्षात्कार—

(राग कान्हरो)

प्यारौ नवल नागरी संग री संग नवल नागर राई।
नवल कुंजबिहारी मनमथ मनहारी सुरत केलि अंग अंग सुखदाई॥
नवल राग कान्हरो जु करत सुघर नवल नवल तान लेत मन भाई।
नवल राग दंपति के देखत 'गोविंद' बलि बलि जाई॥१०॥

श्रीमद् वल्लभाचार्यजी का जन्म संवत विषयक—

(रायसो)

प्रगट भये श्रीवल्लभ प्रभु आनंद बढ्यौ अपार।
भूतल महा महोच्छव घर घर मंगल चार॥
प्रमुदित करत कोलाहल नाचत हैं नरनार।
आनंद मगन भये सब बोलत जै जै कार॥
कुमकुम साथिया धरावति बांधति बंदनवार॥
मोतियन चौक पुरावत कुंभ कलस हैं अपार॥
मात एलम्मा जू कूखैं द्विजवर लियौ अवतार।
कोटि किरन ज्यौं रवि की मुख सोभा उजियार॥
धन्य संवत् पंद्रहा पैंतीस माधौ मास॥
कृष्णपक्ष एकादसी नक्षत्रवार सुप्रकास॥
द्वारैं भीर भई अति गंधर्व करत हैं गान।
नारद सारद सेषजु ब्रह्मा रुद्र समान॥

देत दान कंचन मनि श्री लछमण भटजु उदार।
भूषन बसन दिये सब माता मुरी हार॥
बाजत ताल पखावज बीना, नाद सुढार।
ढोल दमामा भेरी, और नाचत घनसार॥
बाजैं बिविध बजैं तहाँ, गिनत न आवे पार।
देव विमानन चढ़ि कैं बरखत पुष्पन धार॥
महिमा कहां लगि बरनों, कहेत न आवे पार।
यह छबि पर बलिहारी जन 'गोविंद' किये निहार॥११॥

ज्योतिषज्ञान विषयक—

(धनाश्री)

बधावो श्रीवल्लभरायके, गृह प्रगटे श्री विट्ठलनाथ।
तैलंग तिलक श्रीलछमन सुत गृह जन्म लियो है आय।
पुरुषोत्तम वासों कहियत है, निगम सदा गुन गाय॥
पौष मास सुभ नौमी भृगु दिन हस्त नक्षत्र है सार।
वृषभ लगन सुभ योग करण है, धन्य सिसु निरधार॥
अन्य गुरू तृतीये राहु पंचमे राकापति नवमे केत।
सप्तम सुक्र भौम सनि सोभित, अष्टम रवि बुध लेत॥
गिरि चरणाट सुरसरी के तट, फिर लीनो द्विज रूप।
ज्ञातिकर्म सब होत विविध विधि, बैठे श्रीवल्लभ भूप॥
पंच सब्द वाजें बाजत हैं, गावत गीत सुहाये।
मंगल कलस बिराजत द्वारें, बंदनवार बंधाये॥
मागध सुत पुरोहित मिलिकैं, सुभ आसिष सुनाये।
देत दान महाराज श्रीवल्लभ, फूले अंग न समाये॥
महा महोत्सव होत आँगन में, नाचत गुनी अनेक।
विविध भाँति पाटंबर भूषण, देत न आवे छेक॥
नवग्रह की महिमा कहिये, जो कहत सबे द्विज आय।
पाखंड धर्म सब दूर करेंगे, वेद धर्म प्रगटाय॥
निराकार मायामत खंडन, करेंगे सुखदाय।
पुरुषोत्तम साकार भजन विधि, करि सिखवेंगे आय॥
दैवी जीव उद्धारन कारन, महा मंत्र को दान।
सरन गये गिरिधर रति उपजत, करत कथा रसपान॥१२॥

जे हरि ब्रह्म रुद्र के हृदये, आवत नाहिन ध्यान।
सो निजजन गृह बसत निरंतर, अभय करत हैं दान॥
प्राकृत रूप दिखाय मोहित किये, आसुर मानव जेह।
कृपा सुदृष्टि उद्धार किये हैं, स्त्री शूद्रादिक देह॥
पतित जन पावन करि हैं, प्रभु अनेक देस परदेस।
हस्त कमल धर दूर करेंगे, अन्य धर्म को लेस॥
गोवर्द्धन धर सों रति लीला, करेंगे तहाँ जाय।
भोग सृंगार बनाय करेंगे, निरख निरख सुख पाय॥
व्रजमंडल खग मृग को महिमा, करेंगे विस्तार।
श्रीयमुना गोवर्द्धन, द्रुम बेलि, कहत सबे निरधार॥
प्रेम लक्षणा दे दासन कों, कीनो भव निस्तार।
श्रीवल्लभराज तिहारे सुत की, कीरति अपरंपार॥
आनंद मग्न भये सुरनर मुनिगुनि गन सुनि सुख पायो।
निरख मुखारविंद की सोभा, चरन कमल सिर नायो॥
सुखसागर उमग्यो महि ऊपर, बरनत बरन्यो न जाई।
श्रीवल्लभ पद रज महिमा तें, 'गोविंद' यह यश गाई॥१३॥

इस पद के अनुसार कुण्डली

७—चतुर्भुजदास

अल्पवय में शरण आने का संकेत—

(देवगंधार)

श्री विट्ठलनाथ नैन भरि देखैं।
पूरन भये मनोरथ सब कछु हुती जो जिय अपेखैं ॥
श्रीवल्लभ सुत सरन बिना, पिछलै दिना गये अलेखैं।
दास 'चतुर्भुज' प्रभु सुख निधि रहिये कृपा विसेखैं ॥१॥

शरण आने के समय का गाया हुआ पद—

(सारंग)

सेवक की सुखरासि, सदा श्रीवल्लभराजकुमार।
दरसन ही परसन होत मन, पुरुषोत्तम लीला अवतार ॥
सुदृढ़ चितैं सिद्धांत बतायो, लीला जग विस्तार।
यह तज आन ज्ञान को धावत भूले कुमति बिचार ॥
'चतुर्भुज' प्रभु उद्धरे पतित, श्री विट्ठल कृपा उदार।
जिनके कहे गहे भुज दृढ़ करि,गिरिधर नंद दुलार ॥२॥

(सारंग)

सब व्रत भंग सखी तबतें, एकहि व्रत निश्चे करि लियो।
खेलत खिरक रसिक नंदनंदन,आय अचानक दरसन दियो ॥
लोक लाज कान कुल सीमा मानों सब संकल्प ही कियो।
मदन गोपाल मनोहर मूरति, नवरस सींच सिरानो हियो ॥
व्यसन पर्यो संतत चित चाहत,रूप सुधा लोचन भरि पियो।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधरनलाल छबि बिनु देखे परत न जियो ॥३॥

गुरु-ईश्वर में अभेद बुद्धि—

(देवगंधार)

श्रीविट्ठलनाथ गोकुल भूप।
भक्त हित कलिजुग में, कृपा करि धरैं प्रगट स्वरूप ॥
सकल धर्म धुरंधर नर हरिभक्ति' निज दृढ़ जूप।
चरन अंबुज सिर सी परसत, सोषत अंधकूप ॥

आपुनही सेवा सिखवत सकल रीति अनूप ॥
भोग राग सिंगार नाना चरचि दीप रु धूप ।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधरन जुगल वपु लीला सदा अनूप ॥
नंदनंदन वल्लभनंदन एक प्रान द्वै रूप ॥४॥

श्रीनाथ जी का विरह—

(सारंग)

जब तैं जुग समान पल जात ।
जा दिन तैं देखै सखी मोहन मोतन मुरि मुसिकात ॥
दरसन दंत ठगोरी मेली कही न सकत कछु बात ।
बीतत घडी पहर पल पल अब कर मींडत पछितात ॥
हृदै में ठाढ़ी मेन मूरति मन अटक्यो साँवल गात ।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधरन मिलन कौं नैनन बहुत अकुलात ॥५॥

श्रीगुसांई जी का विप्रयोग के पश्चात् का प्रथम मिलन—

(देवगंधार)

ब्रजजन गावत गीत बधाये ।
श्रीविट्ठलनाथ प्रगट पुरुषोत्तम गोकुल गृह जब आये ॥
धनि धनि यह दिन पहर घरी छिनु प्रानजीवन जब आये ।
धनि यह मंगल रूप नाथ कौ दरसन दुःख नसाये ॥
गोवर्द्धनधर सुनि आनंदित अति आतुर उठि धाये ।
मिलि जू करत औसेर पाछली नैनन नीर वहाये ॥
अति आनंद भवन भवन प्रति मुदित निसान बजाये ।
वर घर मंगल होत सबन के मोतिन चोक पुराये ॥
श्रीवल्लभनंदन विरह निकंदन सकल घोख सुख पाये ॥
दास 'चतुर्भुज' प्रभु इह मंडल प्रेम के पुंज छवाये ॥६॥

(सारंग)

तिन मधि बैठैं छाक खात मदन रूप मंडली रची ।
छप्पन भोग छतीसों बिंजन आन आगे थाल सजी ॥
एक खात एक हसत परस्पर सबहिन मन सैना बैनी रची ।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधर मुख निरखत ब्रह्मा इंद्रादिक जै जै कहत सब ठाट ठची ॥७॥

संस्कृत मिश्रित रचना—

(भैरव)

भज श्रीविट्ठल विमल सुखद चरणं ।

ताप त्रय शोक भय मोह माया पटल विपति सम रटण दुःख दुरित हरणं ॥ भक्त हित प्रगट भये दुःख दूर करण घोषपति रसिक रस भक्ति पथ विदित करणं । अमित माया जलधि शोष सर्वज्ञ नृप निगम पथ त्रिभुवन सुदृढ़ करणं ॥ वचन पीयूष मधु सुरति करुणा उदधि दरस परस स्मरण त्रैताप हरणं । अमर नर नाग पुर द्वितीय समता नहीं दास 'चतुर्भुज' प्रभु चरण कमल शरणं ॥८॥

जाड़े की विदा— (ललित)

ससक ससक रही अपने भवन में चार मासको कियो विहार ।
नंदनंदन वृषभानु नंदनी अति कोमल सुंदर सुकुमार ॥
कब आओगे मेरे गृह में बिधना पै माँगो अचरा पसार ।
'चतुर्भुज'प्रभु तारी बजावत जाड़ो चल्यौ दोउ कर झार ॥९॥

(ललित)

नई ऋतुकौ आगम भयो सजनी जबतें बिदा भयो हेमंत ।
विरह न के भाग्यनतें आली चल्यो आवत है वसंत ॥
मन हरि लियो है कुंवरि राधे को तोहीं मिलाऊं भाँमतो कंत ।
'चतुर्भुज' प्रभु पिय तारी बजावत या जाड़े को आयो अंत ॥१०॥

मंगल मगलं का अनुसरण—

(भैरव)

मंगल आरती गोपाल की, माई ।
नित उठि मंगल होत निरखि मुख चितवनि नैन विसाल की ॥
मगल रूप स्याम सुन्दर को मंगल छबि भ्रकुटी सुभाल की ।
'चतुर्भुजदास' सदा मंगलनिधि बानिक गिरिधर लालकी ॥११॥

खटऋतु वार्ता के गद्य ग्रन्थ का समर्थन—

(बिहाग)

ललित ब्रजदेश गिरिराज राजै ।

घोष सिमंतिनी संग गिरिवरधरन करत नित केलि तहाँ काम लाजै ॥
त्रिबिध पवन संचरै सुखद झरना झरै अमित सौरभ तहाँ मधुप गाजै ।
ललित तरु फूल फल फलित खटऋतुसदा 'चतुर्भुजदास' गिरिधर समाजै १२

८—नंददास

नाम दीक्षा सूचक—

(आसावरी)

कृष्ण नाम जबतैं श्रवन सुन्यौरी आली भूली री भवन हौं तौ बावरी भईरी। भरि २ आवैं नैंन चित्त न परत चैन मुख हू न आवैं बैन तन की दसा कछू औरैं भईरी। जैतेक नैम धरम व्रत कीनेरी मैं बहु बिधि अंग अंग भई श्रवन मईरी। 'नंददास' जाके श्रवन सुनें यह गति माधुरी मूरति मानौं कैसी दईरी ॥१॥

निवेदन दीक्षा सूचक—

(बिभास)

प्रात समै श्रीवल्लभ सुत कौ पुण्य पवित्र विमल जस गाऊं।
सुंदर सुभग बदन गिरिधर कौ निरखि निरखि दृग हियौ सिराऊं॥
मोहन मधुर बचन श्रीमुखके श्रवननि सुनि सुनि हृदय बसाऊं।
तन मन प्रान निवेदि बेद बिधि यह अपन पौ इौं सुफल कराऊं॥
रहौं सदा चरनन के आगैं महाप्रसाद कौ जूठन पाऊं।
'नंददास' यह माँगत हौं श्रीवल्लभ कुल कौ दास कहाऊं॥२॥

शरण समय के पद—

(बिभास)

प्रात समैं श्रीवल्लभ सुत कौ उठत ही रसना लीजिये नाम।
आनंदकारी प्रभु मंगलकारी असुभ हरन जन पूरन काम॥
येही लोक परलोक के बंधु को कहि सकै तिहारे गुनग्राम।
'नंददास'प्रभु रसिक सिरोमनि राज करौ पिय गोकुल सुखधाम॥३॥

(बिभास)

प्रात समैं श्रीबल्लभ सुत के बदन कमल कौ दरसन कीजै।
तीन लोक बंदित पुरुषोत्तम उपमा कौ पटतर दीजै॥
श्रीबल्लभकुल उदित चंद्रमा यह छबि नयन चकोरन पीजै।
'नंददास' श्रीबल्लभ सुत पर तन मन धन नौछाबर कीजै ४॥

द्वितीय समय व्रजागमन का सूचक—

(धनाश्री)

प्रीति लगी श्रीनंदनंदन सों इन बिनु रह्यो न जायरी ।
सास ननद को डर लागत है जाउंगी नैन बचायरी ॥
गुरुजन सुरजन कुलकी लाजन करत सबहिन मन भायरी ।
पुत्र कलत्र कहत जिन जाओ हम तुम लागत पाँयरी ॥
जाकों सिव नारदमुनि तरसत श्रुति पुरान गुन गायरी ।
मुख देखे बिनु घट प्रान नहीं रहै जाउंगी पौरि व्रजरायरी ॥
स्यामसुंदर मुख कमल अमृतरस पीवत नांही अघायरी ।
'नंददास' प्रभु जीवनधन मिलै जनम सुफल भयो आयरी ॥५॥

व्रजके विरह सूचक-

(सोरठ)

लागी रे लागी तोही सौं जीवन लागी ।
घर बैठें हौं कहाँ लौं साधौं यह बिरहा बैरागी ॥
अब हौं यह सुख छांड़ि देहौंगी बिहरौ बृंदावन बाग ।
"नंददास" इन प्रान पपैयन उचित नहि है त्याग ॥६॥

व्रजकी भक्ति भावना—

(कान्हरो)

ताहिके पद वंदन करिहौं जो श्रीनंदनंदन चरण रति मानी।
सो सुख कहा कहत नहीं आवैं कृष्ण कृष्ण बोलत मुख बानी ॥
सेवा रीति प्रीति रस जानत श्रीगिरिगोवर्द्धन अति सुखदानी।
सदा रहत व्रज रज में लोटत न्हात सुधा जमुना पटरानी ॥
मुरलीनाद सुन्यो जो व्रजजन सो अमृत पीवत न अघानी।
जिनि जान्यो तिन व्रज बनितारस ज्यों सरिता सब सिंधु समानी ॥
रमा उमा सिव सेस आदि लै स्याम नाम को रट श्रुति ब्रह्म भुलानी।
जप तप तीरथ धरम नेम व्रत भक्ति बिना नर होय अयानी ॥
जो जन कृष्ण चरन सुख बिलसत श्रीभागवत अमृत बखानी।
'नंददास'के प्रभु,नर,भक्ति भजन बिनु फीके ज्यों व्यंजन सैंधव रसपानी॥७

द्वितीय व्रजागमन समय का पद—

(बिलावल)

जयति रुक्मनि रमन पद्मावति प्रानपति बिप्रकुल छत्र आनन्दकारी।
दीपवल्लभ वंस जगत निस्तम करन कोटि उडुराज सम तापहारी॥
भक्तजन भक्ति नित पतित पावन करन कामीजन कामना पूरनचारी।
मुक्तिकांछिय जन भक्तिदायक प्रभु सर्व सामर्थ्य गुन गगन भारी॥
अखिल तीरथ फलद नाम सुमरत मात्र वास व्रज नित्य गोकुलबिहारी।
'नंददासनि'नाथपिता गिरिधर आदि प्रगट अवतार गिरिराजधारी॥८॥

व्रजवास सूचक पद—

(बिलावल)

नंदगाम नीकौ लागत री।
प्रात समैं दधि मथत ग्वालिनी सुनत मधुर ध्वनि गाजत री॥
धन्य ये गोपी धन्य ये ग्वाल जिनकै मोहन उर लागत री।
हलधर संग ग्वाल सब राजत गिरिधर लै लै दधि भात री॥
जहाँ बसत सुर देव महामुनि एकौ पल नहीं त्यागत री।
'नंददास'कौ यह कृपा फल गिरिधर देखैं मन जागत री॥९॥

(बिलावल)

कौन लई कौन दई इंडुरिया गोपाल मेरी।
ग्वाल बाल सखन माँझ तुमहि हसत हौ॥
गहे पद तुम सूधी रहौ कौन लई कासौं कहौ।
लैत कौन देख्यों सखी कहाँ तुम बसत हौ॥
दई है दुराय धरत चौस में कहा चोर परत।
ऐसी होय कबहू लाल कौन पै रीसत हो॥
"नंददास" बसत वास व्रज में गिरिराज पास।
टेड़ो फैंटा आड़बंद कौन पै कसत हो॥१०॥

(बिलावल)

रूखरी मधुवन की मोहन संग निसदिन रहत खरी।
जब तैं परस भयो मोहन कौ तब तैं रहत हरी॥
सीतल जल जमुना कौ सींचत प्रफुल्लित द्रुमलता सगरी।
'नंददास' प्रभु कै सरन आयै तैं जीवन मुक्त करी॥११॥

पुष्टि भक्ति—

(सारंग)

प्रगटित सकल सृष्टि आधार । श्रीमद् वल्लभ राजकुमार ॥
ध्येय सदा पद अम्बुज सार । जग नित गुन महिमा जु अपार ।
धर्मादिक द्वारैं प्रतिहार । पुष्टि भक्ति को अंगीकार ॥
श्रीविट्ठल गिरिधर अवतार । 'नंददास' कीन्हो बलिहार ॥ ॥

छप्पन भोग सरवे का—

(सारंग)

मंडल रचना रुचि सों रची चित्र विचित्र ब्रज की बालनं ॥
दधि पयोधि नवनीत मध्य सर्करा पलासन के पत्रन के पुटन के पंकति रची । छप्पनभोग के पनवारे लोंन वरि खट्टे खारे बिंजन गिनत नाना नाहिन बची ॥ 'नंददास' प्रभु भोजन करि बैठे सहचरी अवसेष लेन निकट आय ललची ॥ ॥

गनगौरि—

(सारंग)

छबिली राधे पूजि लै गनगौरि ।
ललिता विसाखा सब मिलि निकसि आई वृषभान की पोर ॥
सघन कुंज गह पर बन नीको तहां मिलैं नंद किसोर ।
'नंददास' प्रभु आये अचानक घेर लिये चहुं ओर ॥ ॥

मकर संक्रांति—

(भैरव)

भोर भये भोगी रस विलस भयो ठाढो ।
जागे जामिनी जगाय भामिनी अंग अंग न समाय स्वांस सिथिल निडर देत आलिंगन गाढो ॥ घूमत रस मत्त गमन सुधेहू न डग परत वचन पगन छिनु चितचोंप मोजन (२) मानो बाढयो । अति रस भरे रसिकराय सोभा बरनी न जाय बलि बलि बिहारी 'नंददास' प्रेम रंग काढयो ॥ ॥

पतंग के—

(अडानो)

कान्ह अटा चढि चंग उडावत है मैं अपुने आंगन हू तें हेर्यौ ।

लोचन चार भये नंदनंदन काम कटाक्ष कियो मन मेरो ॥
केतो रही समझाय सखीरी अटक न मानत यह मन मेरो ।
'नंददास' प्रभु कबधों मिलेंगे एंचन डोर कियौं मन मेरो ॥ ॥

लक्ष्मण भट्टजी के जन्म दिन सूचक—

(केदारो)

सुदि अषाढ़ 'षष्ठि पंडगू' पुष्टि पंथ धर्म धीर लक्ष्मन भट उदित अंग आनंद उपजायो । धरनीधर भूमि मंडल श्रुति पुरान सास्त्र अर्थ आगम आचार्य जानि गोपीजन मंगल गायो ॥ ग्रीष्म तपत गयो बरखा ऋतु आगम भयो उबट अंग पिय प्यारी जगत जनायो । करि सिंगार सुरंग बसन मुक्तामनि भूषन तन प्रथम समागम अवनि कुंज सो छायो ॥ कोकिल पिक बंदीजन द्विज दादुर प्रगट रूप दाता बिंब विकास रूप घन सम झर लायो: 'नंददास, पूरहिं आस बन बेलि हरित भई भरि हैं सरोवर समीर नदी नीर सुहायो ॥ ॥

पांडव यज्ञ—

(बिलावल)

पांडव कीनो यज्ञ विप्र लख क्रोड जिमाये ।
बोल्यो न संख पंचान कृष्ण कों पूछन आये ॥
हाथ जोरि बिनती करी सुनिये कृपानिधान ।
वेद विचार कियो यज्ञ को बोल्यो न संख पंचान ॥
सुन करि अर्जन के बचन कृष्ण उत्तर तब दीनो ।
वाको एहि बिचार पाप अजहू नहिं चीनो ॥
विष्णु भक्त आयो नहिं यज्ञ तुम्हारे मांहि ।
यज्ञपुरुष न्योत्यो नहि पारथ तातें बोल्यो नांहि ॥
हम तो पूजे जानि विप्र सब तें अधिकारी ।
चारों वेद मुख पढे बडे खट कर्म आचारी ॥
उन सों उत्तम कौन हैं हमें सुनाओ भाखि ।
ब्राह्मन सो भगवान कहावे यों वेद बदत हैं साखि ॥
वेद बचन परमान भेद कछू वाको जान्यो ।
ब्राह्मन सोई सत्य ब्रह्म समरे पहचान्यो ॥
मोहि भजे सो उत्तिम तजे सो मध्यम जान ।

ओर सकल सब बात बनावें ब्रह्म कर्म अरुभ्जान ।।
चारों वेद मुख पढै करै षट कर्मआचार ।
नहि नहि मेरो भक्त स्वपच तू करले निरधार ।।
स्वपच होय मोकों भजे प्रेम भक्ति में लीन ।
ते ब्राह्मण सो देव हमारो हम भक्त जन अधीन ।।
पारथ पूछे प्रभु कों बड़े मुनि जन व्रत धारी ।
बन बैठे तप करें करे कंद मूल फल अहारी ।।
रात दिवस तुमकों भजे पाले कुल आचार ।
सो क्यों नहि भक्त तुम्हारो याको कहा बिचार ?
बोले श्री भगवान भजे कोउ मोकों नाहीं ।
सब माया कों भजे आस लिये मन मांही ।।
कोउ चाहे स्वर्ग कों को एक भोग बिलास ।
को एक चाहे महातम कों एक जगत की आस ।।
हम भूले यदुराय ताहे तुमहि जो बतावो ।।
अनन्य भक्त निज दास कौन सो हम ही दिखावो ।।
जाके दरसन प्राश्चित को भरम करम मिट जाय ।
जाके जैमें पंचान बोले एसो है को कुल मांह्य ।।
अनन्य भक्त निज दास आस कछु बांछित नांहि ।
तप तीरथ व्रत दान सब देखे मो मांहि ।
स्वर्ग लोक इच्छे नहिं इच्छे न भोग विलास ।।
मो बिनु फीको संत कों सब, सो मेरो निज दास ।।
सुनि अर्जुन करि कृष्ण वचन, मन मांहि बिचारयो ।
गर्व भजन भगवान ऋषियन को मान उतारयो ।।
मम भक्त एक स्वरूप है न्योत ताहि जिमावो ।
जाके जैमें पंचान बोले होय कारज तुम्हारो ।।
सेवा करे जो संत चित अंतर मत आनो ।
संत जिमैं हों जिम्यो संत दुःखे दुःखानो ।।
जे तो परदो संत सों एतो हम सों जान ।
सुध मन सेवा कीजिये यों सिख दिये भगवान ।।
राजा अरजुन भीम नकुल सहदेव पधारे ।
कर अंबुज परनाम सीस चरनन पर डारे ।।
हाथ जोरि बिनती करी येहो राजकुंवार ।

जैसे गृह पावन ह्वै मेरो, बहोत करी मनुहार ॥
तुम राजा कुल उंच नीच कुल जन्म हमारो।
मन में आवे भ्रांति चले नहिं चित्त हमारो ॥
तुम हो संत सिरोमनि तुम समान नहिं कोय।
जाके जैमैं पंचान बोलि कारज हमरो होय ॥
बाल्मिक ही पधराय राज मंदिर में लाये।
नाना बिधि पकवान द्रौपदी हाथ बनाये ॥
कनक थाल आगैं धर्यौ धर्यो यमुना जल आन।
पाक परोसि रही पंचाली भोजन लेहो भगवान ॥
आरोगो यदुनाथ यज्ञ परिपूरन कीजै।
कर्ता हर्ता कृष्ण दासकौं सोभा दीजै ॥
भोजन कीनो मिलाय ग्रास लीनो मुख माँही।
देख द्रौपदी दोष बिचार्यो कुल करनी नहिं जाँही ॥
तब ही संख पंचान ग्रास के संग हो बोल्यो।
पुनः रह्यो चुपचाप बहोर अंतर नहिं खोल्यो ॥
कोपि कृष्ण कर में गह्यो संख करौ चकचूर।
मन सुद्ध होय प्रेम आनंद में, काहे न बोल्यो क्रूर ॥
संख कहे सुनो स्याम कछु नहिं दोष हमारो।
साधु को मन माँहि द्रौपदि दोष विचार्यौ ॥
मन में आनि मलिनता तातैं बोल्यो नाँहि।
दौरि द्रौपदी चरनन लगी चूक परी मो माँहि ॥
तैं क्यौं आनी भ्राँति सती सौं कहत मुरारी।
हम संतन की जाति संत है जाति हमारी ॥
संत के हृदये बसौं संत ही मुख खाउं।
संत ही के आधीन सदा हौं संतन हाथ बिकाउं ॥
संत लगायो भोग भोग सो हम ही पायो।
हम पायो स्वाद सकल ब्रह्मांड अघायो ॥
जैसे पोपे पेड़ को कुलकों पहौंचें जाय।
यौं सुर नर मुनि नाग लोग तृपत भये जग माँह्य ॥
सेवा करत साधु की भक्त अंतर मत आनो।
कुल कारन निरवार ताहि तुम ईश्वर करि जानो ॥
प्रेम मगन आनंद सौं चरनामृत सिर लेहु।

धूप द्वीप नैवेद्य आरती भावैं सो भोजन देहु ॥
संसय कीनो दूर कृष्ण मुख में दरसायो।
स्थावर जंगम माँहि प्रगट प्रसिद्ध दिखायो ॥
देखत ही आश्चर्य भयो भ्रम गयो सब भाग।
जै जैकार भयो जगत में रहे चरनन सौं लाग ॥
भक्तवत्सल भगवान भक्त की महिमा राखी।
जो न आवे पतीज संतन जाय पूछो साखी ॥
पाँडव कुल पावन कियो यौं कथा सुनाई व्यास।
सब संतन के चरन में सीस नमावे "नंददास" ॥

रागों की माला—

(कान्हरो)

"येमन" मान मेरौ कह्यौ काहै को रुसानी प्यारे स्याम सौं सुधौ क्यों न चितवैरी "जै जै" हुती सौति तेरी तिनहु की जीत होति "सुघराई" क्यौं न करति "मोतन हँसि" तेरी होति तू करि विचार "नायका" क्यौं न होत तू "नट"। जिन "आडन" पट दीजैरी मेरी आली "काफी" के बचन सुनत "ललित" कहै रस लैयेजु कैसे कै रिझैयै इनकौ मन ॥ अरी "भन" व्हैजु "आसावरि" रहि यै तेरै उन आगै कैसै दिन "भरौरी"। कहैत 'नंददास' "दैशाख" कहत बचन सुन "कान्हर" सौ आय पांयन परै कर "आभरन" उठि अंक मिलि "माल" वन ठन ॥

नंदछाप—

नव लक्षण करि लक्ष जे दसमें आश्रय रूप।
'नंद' बंदि लै ताहिकौं श्रीकृष्णास्य अनूप ॥ दशम मंगला०

(विहाग)

भजि श्रीवल्लभ कुल के चरन।
नंदकुमार भजन सुखदायक पतित पावन करन ॥
दूरि कियै कलि कै पट वेदमत प्रचंड विस्तरन।
अति प्रताप महिमा जस ताकौ ताप सौक दुख हरन॥
पुष्टि मर्याद भजन रस निजजन पोषन भरन ।
'नंद' प्रभु के प्रगट रूप ये श्रीविट्ठल गिरिधरन ॥

द्वार-स्थिति—

(देवगंधार)

श्रीविट्ठल मंगल रूप निधान।
कोटि अमृत सम हँसि मृदु बोलत सब के जीवन प्रान॥
करुनासिंधु उदार कल्पतरु देत अभय पद दान।
सरन आये की लाज चहुँ दिस बाजै प्रगट निसान॥
तुम्हारे चरन कमल के मकरंद मन मधुकर लपटान।
'नंददास' प्रभु द्वारें रटत हैं रुचत नहिं कछु आन॥

रामकृष्ण की अभदेता—

(भैरव)

रामकृष्ण कहियै उठि भोर।
वे अवधेस धनुष कर धारे ये ब्रजजीवन माखनचोर॥
उनकौं छत्र चमर सिंहासन भरत सत्रुहन लछमन ओर।
इनकै लकुट मुकुट पीतांबर गायन के संग नंदकिसोर॥
उन सागरमें सिला तराई इन राख्यौ गिरि नख की कोर।
'नंददास'प्रभु सब तजि भजिए जैसै निरखत चन्दचकोर॥

श्रीगुसांईजी के पंचम पुत्र श्रीरघुनाथजी की वधाई—

(देवगंधार)

श्रीरघुनाथ राम अवतार।
जानकी जीवन सब जग बंदन खल मद हरन उतारन भार॥
श्रीगोकुल में सदा बिराजौ बचन पीयूष काम निरवार।
'तुलसीदास' प्रभु धनुषबान धरौ चरनन देहु सीस तब डार॥

तुलसीदास के गोकुल जाने का सूचक—

(सारंग)

जै कहावत सेवक निज द्वार कै।
धरौं सँवारि पन्हैया ताकी श्रीवल्लभराज कुमार कै॥
चरनोदक की करौं लालसा मन वच कर्म अनुसार कै।
'तुलसी' के सुख कौ बरनन करि कौन सकै संसार कै॥

(सारंग)

बरनौं अवधि श्रीगोकुल गाम।

उत बिराजत जानकीवर इतहि स्यामा स्याम ॥
उहां सरजू बहत अद्भुत इहां श्रीजमुना नीर।
हरत कलिमति दोउ मूरत सकल जन की पीर॥
मनि जटित सिर क्रीट राजत संग लछमन बाल।
मोर मुकुट रु बैन कर इहां निकट हलधर ग्वाल॥
उहां केवट सखा तारे बिहसि के रघुनाथ।
इहां नृग जदुनाथ तारयौ कूप गहि निज हाथ॥
उहाँ सिवरी स्वर्ग दीनो सील सागर राम।
इहाँ कुब्जा ल्याय चंदन किये पूरन काम॥
भक्त हित श्री राम कृष्ण सु धर्यो नर अवतार।
दास "तुलसी" दोउ आसा कोउ उबारो पार॥

बालभाव मिश्रित किशोर भावना—

(ललित)

हों सब रेनि जगाइ गायन भोर भयो तुम जागो हो कान।
निसदिन लगीय रहत श्रवनन में सुन मुरली की तान॥
सासत्रास गृह काज करत हैं कहा करी तुम चतुर सुजान।
"नन्ददास" प्रभु दरस दिखावहु प्रान रहत नहीं यान॥

स्वामिनी-श्रृङ्गार—

(टोडी)

मंजन कर चोकी कंचन पर बैठी बांधति केसनि जूरो।
तेसीय उंचन भुज कीय अनुप ललित कर बीच झलकत चूरो॥
रतन जटित भाल पर बेंदी-कंचु रह्यो फबि मांग सिंदुरो।
"नन्ददास" प्रभु प्यारी के बदन पर वारों कोटि सरद ससि पूरो॥

आचार्यमत का अनुसरण—

रूप प्रेम आनन्द रस जो कछू जग में आही।
सो सब गिरिधर देव को निधरक बरनों ताही॥ रस मंजरी

अष्टछाप से संबंधित सामग्री

श्रीगोपीनाथजी की उपस्थिति सूचक—

श्रीगोपीजनवल्लभोजयति ।

एकं शास्त्रं देवकीपुत्रगीतमेको देवो देवकीपुत्र एव ।
मन्त्रोऽप्येकस्तस्य नामानियानि, कर्माप्येकं तस्य देवस्य सेवा ॥१॥
इति श्रीजगदीशेन महाप्रभु कृते स्वयम् ।
लिखितं पद्यमेतद्धि मायावाद निवृत्तये ॥२॥
बहिर्मुखो यदा नैवमेने विद्वज्जनातिगः ।
पत्रं निरूप्यतांभूयः प्राहैनं कृष्णसेवकः ॥३॥
तदा श्रीवल्लभाः प्रोचुर्वयं नाग्रहवादिनः ।
त्वन्नः पुरोहितः साक्षी यथेच्छसितथा कुरु ॥४॥
गुच्छिकार स्तदातस्य प्रत्ययार्थं हरेः पुरः ।
पुत्रं संस्थापयामासमसीपात्रं च लेखनीम् ॥५॥
"यः पुमान् पितरं द्वेष्टि तं विद्यादन्यरेतसम् ।
यः पुमानीश्वरं द्वेष्टि तं विद्यादन्त्यजोद्भवम् "॥६॥
भूयोऽपि जगदीशेन पत्रे विलिखितंत्विदम् ।
तदा बहिर्मुखोध्वस्तस्तथा ज्ञातश्च सज्जनैः ॥७॥
इति श्रुत्वैवसद्वार्तां कृष्णसेवक पण्डितम् ।
श्रीबल्लभात्मजो गोपीनाथो मन्ये तथा ह्यमुम् ॥८॥
ख रस श्रुति भू (१४६०) संख्ये भासमाने शकेश्वरात ।
लिखितं माधवामयां पूर्वेषां समतं दलम् ॥९॥

"आन्ध्रदेशीय-दीक्षित--वल्लभाचार्येण स्वपूर्वपुरुष सोमयाजी गंगाधर दीक्षितादीनां सम्मानितः श्रीमत्पुरुषोत्तमक्षेत्रेश्रीजगन्नाथ सपर्या कुशलः गुच्छिकारकृष्णसेवकाख्य सेवा पण्डितः; सोमयाजि गंगाधर दीक्षितादीनां स्वपूर्व पुरुषाणां सम्मानित इति स्वकीय रवधार्य विष्णु-पदेन्दु श्रुति धरा शके (१४१०) समागतेन वल्लभ दीक्षितेन वृत्तिदलं निरूपितं० श्रीवल्लभाचार्य महाप्रभु वंश संभूतैः कृष्णसेवकवंशीयाः सम्मान्याः० लिखितं दलमिदं ख रस श्रुति भू मिते (१४६०) शालि-वाहनशके वैशाखकृष्णमादिने ।"

कनकाभिषेक का समय—

प्राचीन लेख ताड पत्र पर खुदा हुआ—

१—विद्यापत्तनम् श्रीवरनृसिंहवर्म सार्वभौम—स्वस्ति श्रीसामराज्ये मीन मासे ११ लोक गुरु आचार्य चक्रवर्ती श्रीप्रभुवल्लभ हेमाभिषिक्तम् ।

२—भट्टारक सप्तदिनाभिषिक्तानन्तर भूमिदेवदक्षिणा सपादलक्षनिष्क रजतमुद्रा निवेदितम् ।

३—गो हस्ति वृषभानिकर्माटिकद्...........

४—द्वादश्या अरुणोदयवेलायां महाराज्ञी पट्टमहिषी माइनाक्षी देवी स्वकरे अभिषेक कृतम् ।

५—आचार्य चक्रवर्ती पितृव्य सहराजपरिषदि आसीनम् ।

६—करि १५ अश्व २१ वृषभ २८ कुम्मादिक १६ गोसवत्सा स्वर्णालंकारसह २७ ।

७—स्वर्णघट १०८ रजत १२१ ताम्र १३१

८—काश्या १३५ मृत्तिका २४० स्वर्णरजत कुर्मासन भद्रासन स्वर्ण दोलिका छत्र चामर नक्षत्रमालिका कृतिका ताडवृत्त भृङ्गारक ।

९—कटक केयूर कुंडल रत्नालंकार समम.........

रायलु सेनानी, रामस्वामी शास्त्री,दोपीक कृष्णमूर्त्तिअमात्य, वेंकट नृसिंहदेव वाल्मीकि लोकेश्वरी टीका आचार्य चक्रवर्ती कृत विजयादशमी पूर्ण । श्रीरामलीला कृपा समक्ष प्रेरणा, श्रीमहाभागवत लोक गुरु आचार्यचक्रवर्ती नित्य पाठक्रम, पंचसप्त आवृत्ति पूर्ण कार्तिक शु० १ अब्द १५६५। पट्ट महिषी स्व इष्ट बलराम सहआचार्य चक्रवर्तिन मभिषिष्य स्वदेवं स्वगुरूं समर्पयेत् ।

श्रीगुसांईजी के विप्रयोग को समय सूचक उल्लेख—

कृष्णदास अधिकारी ने श्री गुसांई जी कौं श्रीनाथजी के मंदिर में बरजे हैं, जो तुम श्रीनाथ जी के मंदिर में मति आओ । श्रीनाथजी की सेवा को अधिकार श्रीमहाप्रभुजी नैं मोकौं सौंप्यो है । और श्री गोपीनाथजी के पुत्र पुरुषोत्तमजी हैं,वे धनी हैं । सो श्रीनाथजी के सेवा-

शृंगार तो श्री पुरुषोत्तमजी करेंगे। यातें तुम मंदिर में मति आउ। ऐसे कृष्णदास अधिकारी ने बरजे हैं। तब श्रीगुसाँई जी श्रीआचार्यजी को सेवक जानि तथा अधिकारी जान कैं आज्ञा प्रमान मानत भये। सो मास छै पर्यंत श्री गुसाँईजी श्रीजीद्वार पांव न धारे। सो ता समै परासोली में एकांत स्थल में श्री गुसांई जी पधारे। सो वहाँ श्रीआचार्य जी की बैठक है; सो तहाँ श्रीआचार्य जी के दरसन करे। पाछे बैठक के सानिध्य बैठिकैं श्री भागवत को पारायण करे। सो वा समै तहाँ दामोदरदास हरसानी आये। तब दामोदरदास बैठक कौं दंडौत करिकैं बैठे। पाछे श्री भागवत को पारायन संपूरन भयो। ता पाछे श्रीगुसांई जी ने दामोदरदास सौं कह्यो, जो—दामोदरदास ! तुम हमकौं श्री आचार्य जी को प्रागट्य कहो, दैवीजीव बिछुरे ताकौ कारन, और जीवन के अंगीकार को प्रसंग ये सब विस्तार करिकैं कहो। काहे तैं जो तुम्हारे हृदय में श्रीआचार्यजी बिराजैं हैं। और यह प्रसंग श्री आचार्यजी बिना कौन कहै ? और कैसे जानि परैं ? तातैं हम तुमसौं प्रसंग कियो है। तब दामोदरदास कहै। × × ×

इतनी बात कहि, श्री दामोदरदासजू श्रीगुसांईजी के चरनारविंद ऊपर ढरे। तब श्रीहस्त सौं पकरिकैं उठाए। अरु कही, जो तुम पाँयन मति परो। तुम्हारे प्रागटय को यह प्रक्रम श्रीकृष्ण जू ने कह्यो है। अरु श्रीआचार्यजी हू तुम्हारे हृदय में बिराजत हैं। तातैं तुम बड़ेन के सेवक हो। अरु बड़े हो। तातैं यह जानिकैं हम संकोच पावत हैं। तब कही जू संकोच काहे को ? निजधाम में तो हमारो प्रागटय तुम्हारे मुखारविंद तैं है। अरु इहाँ भूतल पर फेरि जन्म होइगो। सो तो तुमही तैं। तुम्हारे घर हम बेटा होइगे। तातैं दोऊ प्रकार हमारो प्रागटय तुमही तैं है। तातैं हमकौं पाँयन परनो उचित ही हैं। तातैं श्री गिरिधर गोविंद जू प्रगटे हैं। अरु श्री बालकृष्ण जू अब प्रगटैंगे। पाछैं हम तुम्हारे प्रगटैंगे। तातैं पिता कौं दंडवत करनी उचित है।

संवाद पृ० २००

श्रीगुसांईजी का श्रीनाथजी के मन्दिर पर अधिकार प्राप्ति समय

"ततः कियता कालेन ज्येष्ठ पुत्रो श्रीगोपीनाथ पुरुपोत्तमास्वाद्य स्वरूपमवाप। तत्पुत्रः पुरुषोत्तमाख्यश्च। अतः श्री विट्ठलेश्वर सर्वदा जयति। तत्पुत्रा गिरिधरादयश्च श्रीवल्लभाचार्य वंश्याः पौत्रादयश्च सर्वदा जयन्ति। सम्प्रदाय प्रदीप ४ प्रकरण।

कृष्णदास का अधिकार सूचक—

श्रीगुसांईजी का एक पत्र—

श्रीकृष्णायनमः। स्वस्ति श्रीगोवर्धननाथपादपद्मरागेषु श्रीकृष्णदास, रामदास, ग्वालभट्ट, नरसिंहदास, यादवदास, राघवदास, गोपीनाथदास, केशवदास माधवदास सन्तदास हरिदासगोपालदास स्वामिदास मनालालदास भीष्म, गोवर्द्धनधारिदास अजया दामोदरदास सधू कुम्भना प्रभृतिषु श्री विट्ठलनाथानामाशिषां कोटिः। भद्रमिह। भावत्कं सततमाशास्महे ! अपरंच। सेवा सम्यक् कार्या। ग्वालभट्टः सम्यक् शाकादिसेवां करोतीति श्रुतं तेन सन्तोषो जातः। सम्यक् शिक्षणीयश्च। अग्रे व्यंजनादिकं यथा भवति तथा विधेयम्। भोगसामग्र्यादि सम्यक् दृष्ट्वा देयम्। यथाशक्ति सर्वे भोगा निर्वाह्याः। चतुर्थ प्रहरेमत्तिकाकार्जनार्थं कश्चिन्नियोज्यः। यदि यमुनाजलनिर्वाहः सेवकैर्भवति तदा तथैव कार्यम्। परं त्वति कष्टेन न कार्यम्। मत्स्वामिनःकोमलस्वभावत्वात्।

अन्यच्चत्र यवनादयो ठाकुरद्वारे आगच्छन्ति तथा यथापूर्वं भाषणमिलन प्रसादादिकं कार्यम्। यद्यपिहार्दं न भवति, तथापि बाह्यतोऽपि कार्यम्। सावधानैः सदा परस्परं सस्नेहैर्बहिर्दृष्टिभिःभगवत्सेवापरैः स्थेयम्। चिन्ता कापि न कार्या। श्रीगोकुलजीवनः सर्वं भद्रमेव करिष्यति।

अहं यथा शीघ्रं दर्शनं प्राप्नोमि तथा विधेयं प्रत्यहम्। भवत्स्वधिकं किं लिखामि ? स्वभाग्योदये शीघ्रमेवागमिष्यामि। चिन्ता कापि न कार्या। पत्रं मुहुः प्रेषणीयम्। तत्रत्यसमाचारो लेखनीयः। हरिवंशस्य नतयः। अत्राहं दुग्धं बहु पिबामि। रामदासः पायसादिकं सर्वं गृह्णातु। दुग्धोदन प्रसादः कृष्णदासस्यापि देयः। सर्वैः कृष्णदासस्याज्ञायां स्थातव्यम्। मर्यादायां सर्वैः स्थेयम्।

न स्वाध्यायबलं न यागजबलं नो वा तपस्याबलं।
नो वैराग्य बलं न योगजबलं नोप्युक्त भक्तेर्बलम्।
नैव ज्ञानबलं न चान्यदपि यत्किंचिद्बलं मेऽस्ति किं-
त्वद्यश्वोऽपि यदा तव कृपाकृतेक्षणं मे बलम्॥ १॥

कृष्णदास गोविंददास का उपस्थिति समय सूचक द्वितीय पत्र—

स्वस्ति श्रीविट्ठल दीक्षितानां गिरिधरस्य च श्रीगोविन्द बालकृष्ण

श्रीवल्लभ, रघुनाथ यदुनाथ घनश्यामेषु गिरिधरस्य च भवतां पुत्रेष्वाशिषः। शमिह,भावत्कमाशास्महे। टोडा ग्रामपर्यन्तं श्रीगोकुलनाथेन कुशलेन समानीताः स्मोत्रैव दोलोत्सवश्च कारितः। गिरिधर विषयिण्यस्मद्विषयिणी च कापि चिन्ता न कार्या। श्रीगोवर्धनेश एवापितास्ति। × × × × गिरिधरापत्यानां विशेषतः कुशलं लेख्यम्। चिन्ता कापि न कार्या। श्रीगोवर्द्धननाथोस्मत्कुल पतिरस्मद्धितमेव करिष्यति। चैत्रवदि ४ गोविन्दभट्टेषु गणेशभट्टेषु वासुदेवभट्टेषु चाशिषः। पदकृद्गोविन्ददासेषु भगवत्स्मरणं वाच्यम्। मदनसिंहादिषु कृष्णदासादिष्वाशिषो वाच्याः। वासुदेवभट्टेशेन गन्तव्यं पुरोहितगृहात्। वेङ्कटप्रभृतिषु कृष्णरायादिष्वाशिषः।

श्रीगुसांईजी के सेवक माधवदास दलाल (खंभात वाले) रचित

(कडवा १–*)

श्री गिरिराजजी अति सुखदाई जी। टेक
अद्भुत लीलानी अधिकाइजी। ते केहेवा जोवा अति से थाईजी ॥
द्विजकुल व्रजमां एह बडाई जी। प्रगट देखाडे छे प्रभुताई जी ।।
चतुर कुंवरनी जुओ चतुराई जी। नाना भावे नित्य नवाई जी ॥१॥

(वलण)

नाना भावे भक्त जनशुं करे लीला नित्यजी।
प्रसन्न थई प्रानेशजी आपीये चरणनी रत्यजी ॥
प्रथम कह्यो ते पालीयुं कलिकाल मां कलि धन्यजी।
प्रगट लीला एम करी अवलोकवुं दन दन्यजी ॥
स्त्रीशूद्र ने सुख आपीयुं थापियुं वचन प्रमाणजी।
असुर ने अधिकार आप्यो करयो जाण सुजाणजी ॥
भक्त सही आगे हतो हमणां करयो राजान जी।
स्वज्ञाति संताप घणुं पण भली तेहनी सानजी ॥
तेने दिवस जाये क्रूरता ने करे कोटिक भेद जी।
एकवार दरसन क्यम करूं रखे उपजे प्रभु खेद जी ॥

* यह कड़वें कांकरौली सरस्वती भंडार हिन्दी बं. सं. ७ × ३ में उपलब्ध हैं। यह ग्रन्थ अपूर्ण एवं खंडित है।

एक अलोवतो एम करयो जे पूछियु ब्रह्मदास।
जई पाय लागो मान मागो सदा गोकुल वास॥

वलतो विवेकी विनवे श्रुत करीने कविराय।
जो प्रेम छे तो पामशो एम रच्यो एक उपाय॥

केटलाक दिवस तो एम गया एणे जाण्यु मन एम।
मुने असुर जाणी ने ओसरे हवे कीजिये केम॥

उपनी आरती अति घणी ते धरी जाणे धर्म।
मनना मनोरथ पूरवा मांडिशे एहवो मर्म॥

मनमां मनोरथ उपन्यो तो निपन्यु ततकाल।
तत्त्ववादी तेडिया तेहनी बुद्धि छे रे विशाल॥

सहगल मथुरादास ताहरू काम छे रे आज।
वली वली विनती करी एम कहे, पाउ धारिये महाराज॥

दीन वचन कह्यां घणां ते घणां कह्यां न जाय।
सीख मांगीने संचरयो वाटे विचारज थाय॥
माहात्म्य एहने मन घणु एणे काम आव्यो फोक।
भलु मुख जोवु जई दुःख पामशे व्रजलोक॥
अपराध कोटिक करयो होवे, ते राखि ले जगदीस।
एक भक्त ने उल्लेख्यतां वली वली प्रभु मन रीस॥
आजीविका आधीननी ने मन मांहे विचार।
वेगे ते व्हेलो आवीयो वाटे ते न करी वार॥
जमुना तट सोहामणो रलीयामणो जहाँ रास।
जई नाव मांग्यु बेसवा एकवार उपन्यो त्रास॥
सहू को रही साम्हूं जूए होये आ अनेरी वात।
एहनी आवनी एक पेरनी तणे विश्व वैष्णव साथ॥
कहो ने हवे शु कीजिये दीजिये कहेने दोष।
कृत्य मांहे कूडु आंपणे तो फोक करवो रोष॥
स्यामा सहु को मली वली वली करे प्रणाम।
सदाएहवु मांगीये प्रभु भक्त जन विसराम॥
एटलूं केहतां आवीयो ने लावीयो संदेश।
प्रणाम करतां जाणीयो एम मन तणो उद्देश॥

श्रीमुखे समाधान कीधुं दीधूं अतिशे मान ।
सहांमुं जोई ने लाजीयो पछे बोलियो सावधान ॥
एकांत जई अलगो रही कांई कह्यो जे संदेश ।
प्रभु एक जीभे शुं कहुं पछे शी पेरे शीख देश ॥
परिवार मही लीने परठ मांड्यो आड़ा शा उत्पात ।
न जावुं तहां नाथजी ने एक निश्चे बात ॥
पेरे पेरे प्रभु प्रीछवे गिरिराज सूं गुंभ ।
जाणो छो तमे जुगत सघली एह कहोनी सूंभ ॥
वली वहेला आवजो लावजो बिनती कोड ।
पतित पावन पाउ धारिये स्तुत्य करी छे कर जोड ॥
वारे वारे हुं शां कहुं कांई नथी एहनो वांक ।
अभिलाख जोवा अति घणो करगर्यो छे थई रांक ॥
एक वार आवो यहां लगे एणे आदरयुं आधार ।
कदाचित जाउं एकलो केम जूए सहु परिवार ॥
सहु मलीने प्रकाशियुं हवे चालवुं निरधार ।
उतावल अतिशे घणी लेश मात्र नही ते वार ॥
वेष कीजे विप्रनो जेने रूप साथे प्रीति ।
वस्त्र आण्यां अटपटां हसी बोल्या रस रीति ॥
त्यारे दिव्य वस्त्र ते आणिय अने भव्य कीधो वेष ।
ते शोभा शी शी बर्णवुं जे कथा छे अलेख ॥
एक एक आवी ओचरे उपचार करे अजाण ।
सेन सर्वे साचुं करो भली एहनी सान ॥
सवत १६३८ सो वद नोमी माघ ते मास ।

करुणाल थई कृपा करी पंहोंचाडशे तेनी आश ॥
अन्यना अभिमान हरवा स्वकीय ने संतोष ।
पतित ने पावन करेवा न दीठा तहां दोष ॥
महा दुष्ट पापी जे हुता ते नित्य करता पाप ।
आगल थकी अलगा कर्या तेने सम्हांरू अति आप ॥
हिन्दु सहु को सज्ज थई सहामा रह्या सावधान ।
नगर सिंगारो घणुं तेम आपीयां बहु दान ॥
नाना पेर नी शिख दीधी कही क्यम कहेवाय ।
'माधवदास' बलिहारणे अद्भुत आश्चर्य थाय ॥

कडवा—२

(सामेरी)

सुंदर स्याम करी सामग्री घर २ छांडयां सर्व काज ।
कहोरे आपण कहीने कहुं मारा व्हाला वसिये आज ॥
अणगमता वातो करे रे सेवक जननो साथ ।
अश्व आण्यो रे उतावलो चतुर चढे ब्रजनाथ ॥
अबला जन आवी रह्यां वचन कह्यां करूणाल ।
एम न कीजे आरत घणी दुख पामशे सर्वे बाल ॥
काह्यु न जाय काम न थाये संचरे श्री भगवान ।
आकुल व्याकुल सहु थयां शरीर तणी नहिं सान ॥

(चाल)

शान नहीं रे शरीर तणी श्रीहरि करे प्रयाण ।
मोह्यां ने मटकले प्रीछवे हसे कोटि कल्याण ॥
श्रीनाथजी आ तट मांहे आवीआ अति भूप ।
उतरी पेले तट रह्या ताह्यरे धरयुं तेवुं रूप ॥
प्रथम लीला प्राकट्यनी ह्मणां करे बहु लाख ।
अने जूओरे आदरी श्री भागवतनी साख ॥
असवार थई उतावलो त्यां चलावो तो रंग ।
कहोरे भाई सहुए तम्हो तहां हशे शा शा रंग ॥
आज भाग्य भलां तेह्नां ज्यां पधारया प्राणेश ।
पुरुषोत्तम बस प्रीति ने आपणे नहिं ते लेश ।
जलपान कोई करे नहीं गौ बच्छ न चरे तरण ।
बेगे वहेला आवजो मोह्न मन ना हरण ॥
एक एक वाटे थी भले एक मल्या साथे जोय ।
अधिकारीया जन आवता तेने हइडे हरख न माय ॥
विचारी ए मन मांहे धरे करे रचना बहु ।
पुत्र पौत्र ने प्रीछवे कृत कृत थया सहु ॥
निकट आव्या नगर ने त्यारे पग पग भरीया फूल ।
तेडी आवे तहां जई उतारे बीजो अन्य नहीं समतूल ॥
एह्नो प्रेमछे एक पेरनो घेर नारी घणो परकार ।
उत्तम साधन आचरे तो वली तेह्नी बार ॥

उतावले जई जाए किधो दीधु आयुस श्याम ।
अनेक प्रीति उपजावतो आज आयो मारे काम ।।
वारे वारे करी घणी सांभली कहेरे सत्य ।
घेर आपणे तेडी गयो ए भली ताहरी सत्य ।।
स्वस्थ थई सधावीये आवीये जी आधार ।
सुखे आव्या मन भाव्या करी अति मनुहार ।।
त्रिभुवननाथ सनाथ करवा कृपा करवा कान्ह ।
एणे सुकृत शां कर्यां को नहीं एह समान ।।
क्यम करी मलिये अमो तम्हो······· ··· ···· ···
·········· खंडित है तुक १८ से ३२ तक ······ ····

हैं जु नाथ कृपाल स्वामी अंतरजामी सुजाण ।
बंधव बल मांडी रह्यो मुने आस दीजे प्रमाण ।।
पूछतां पूछ्यु अति घणु अम तणु ए एवाण ।
सपेरे समजावीयो हसे सही श्रं आण ।।
सन्मुख सहामु जोई ने अति होई ने प्रसन्न ।
अंगीकरी पाछु आपांयु एहलु राज्य ले धन्य २ ।।
पराठो पहलो हसे तमे मा करशोरे प्रयास ।
आश्चर्य होशे अति घणु मन आणजो विश्वास ।।
एक देस कहो ते आपीए पाय लागी कहे तब प्राणेश।
मा बोलो बीजु तमो ए बात मन्य मा आणेश ।।
माग्यु आपो तो मन्य रली वली वली मागु मान ।
आज पाछी यहां न तेडवु जो एह दीजे दान ।।
पछे नमीने लाज्यो घणु अम सणा शा अपराध ।
आश्रम सघलो अटपटो म्हारो थशे क्यम निस्तार ।।
शरीर शठ सरजीआ तमे ते एम जाणो धन ।
ओलगो उदम करी मुने एम न करो सन ।।
प्रश्न घणा पूछिया हजी पूछशे वडराय ।
वेगे श्रीगोकुल आवीये 'माधवो' बलि बलि २ जाय ।। ।।

श्रीगुसांईजी के सेवक माणेकचंदजी का छप्पनभोग का पद—

महा महोत्सव होत श्री विट्ठलनाथ के ।
प्रथम यथामति बरनि हो हौं बल्लभ विट्ठल रूप ।

भूतल प्रगटे आयकै हो श्रीगोकुल के भूप ॥
पुष्टिमार्ग रस रूप सिन्धु कौं प्रगट करत जग सोय ।
अतुल प्रताप तेज करुनामय बरनि सकत कवि कोय ॥
श्रीसुक बचन प्रगट करिवे कौं करत कथा रस गान ।
स्याम सुंदर वृषभानकुँवरि कौं बस कीने मन मान ॥
श्रुति मर्याद प्रगट रस सेवा भूतल कीने आय ।
प्रथम विवेक धरयो निज आश्रम महा पदारथ पाय ॥
भक्ति भाव प्रीतम प्यारी कौ निज निकुंज सुख धाम ।
सो सब लीला प्रगट दिखाई भक्तन मन अभिराम ॥
श्री भागवत नवनीत नंदगृह प्रगट कृष्ण अवतार ।
ताकी सेवा नित्य विविध विधि आपु करत श्रुतिसार ॥
दिन के बस द्वादस मास बीच उत्सव अति आनंद ।
कृष्ण कथा रस पान करावत पूरन परमानंद ॥
श्री वृषभान सदन की लीला प्रगट करी निज गेह ।
छप्पनभोग विविध विधि कीनो भगति भाव सुख सनेह ॥
नन्दादिक कौं न्योति बुलाये बरसाने वृषभान ।
उठि कै बेगि आय आदर कारे बहुत करयो सन्मान ॥
प्रथम फुलेल लगाय अरगजा अ गहि उबटिन न्हवाये ।
विविध बसन मनि जडित अमोलिक आभूषन पहराये ॥
मृगमद केसर भुवन लिपाये कुमकुम जलसौं सीच ।
गजमोतिन सौं चौक पुराय धरत साथिये बीच ॥
कंचन कलस धरे जमुना जल पीत बसन बहु भाँति ।
कनक पटा बैठाय सबनकौं करि भोजनकी पांति ॥
मधु मेवा पकवान मिठाई खटरस धरे बनाय ।
कंचन मनि जटित कटोरा धरयो जु थार सजाय ॥
कटू, अम्ल, तिक्त, मधुर रस, लवण, कस्याय, अनेक ।
भक्ष, भोज्य, और चूस्य; लेय, विधि धरेजु आन किंतक ॥
दधि ओदन घृत दूध सँधाने कीने नाना भाँति ।
बड़ा बरा बेसन बहु विधिके मानो उदय करत रविकांति॥
कद मूल फल पत्र साक सब अगनित ही सबकीने ।
करि घृत पय पछ न्यारे न्यारे लाल अति कर दीने ॥

खोवा बासौंदी और मिश्रिदे माखन में सानी।
अग्नि पक्व बहु किये सलौने लेत परम रुचि मानी॥
गुंजा मठरी खूरमा खाजा लडुवा बहु विधि कीने।
कचरी आदि भुजेना तल कैं पापर अति सरसीने॥
हसत परस्पर खात खवावत प्रेम प्रीति रस भीने।
बहु बिधि व्यंजन कहा बखानुं बरन न सकत कविहीने॥
सबकौं साथ बैठाय एकठां नवनिधि दरस दिखाये।
बहोरि निज सुख दे अपने दासनको महा पदारथ पाये॥
जमुना जल अचवन करवायो पुनि बीड़ी दीनी।
करत आरती होत मन आनंद फिरि न्योछावरि कीनी॥
करत बिदा नंदादिक कौं अति सुख चरन नँवावत सीस।
'मानिकचंद' प्रभु सदा बिराजो जीवो कोटि बरीस॥

श्रीगुसांईजी के सेवक भगवानदास रचित छप्पनभोग का पद—

केसरिकी धोती पहेरे केसरी उपरेना ओढ़ें,
तिलक मुद्रा धरि बैठें श्रीलछमन सुत गेह।
जाको नाम विट्ठलेस गावत सुरेस गनेस,
पुष्टि को प्रवाह मुख बरखत है मेह॥
बसें हरि गोकुल गाम पूरत मन सकल काम,
नन्दलाल यह लीला प्रगट दरस देह।
बरखत नित्यरीति उत्सव जग करन प्रीति,
भोग छप्पन को श्रीभानुराय भवन बिकसे एह॥
नित प्रीति लाड लडावत तनमन धन नोछावरि देय,
जीव दरस करत स्थूल अति देह।
कहत अति दीन भव डूबत "भगवानदास",
चरन कमल करहों निवास यही नित मांगों नेह॥

श्रीद्वारकेश जी (घन्नू जी) के वचनामृत—

श्रीनवनीतप्रिय जी के साथ गोकुल में सात स्वरूप भेले राजभोग अरोगे, उसका उल्लेख—

अथ जप करिवे को प्रकार लौकिक भाषा में लिखे हैं—

प्रथम मंगला चरण—

"बन्दे श्रीवल्लभाधीशं वागधीशं परात्परं ।
श्रीविट्ठलं गिरिधरं गुरु सर्वेष्ट दायकं ॥"

.... माला प्रथम या प्रकार फेरनी ।........

.... अब दूसरी माला पंचाक्षर फेरनी । ता समय श्रीनवनीतप्रियजी को बाललीला सहित ध्यान करनो......... और या मारग में तो श्रीमहाप्रभुजी को संबंध है सोई अधिक है । सो या स्वरूप में श्रीनाथजी सू हूं अधिक है । दो रात्रि श्रीमहाप्रभुजी भेले पोढे हैं । एक शैया पे । सो ये शैया आज दिन पर्यंत श्रीमथुरेशजी के इहाँ बिराजे हैं । और श्रीनाथजी तो श्रीमहाप्रभुजी के ठाकुर है । और श्रीनवनीतप्रियजी श्रीगुसांई जी के ठाकुर है । .... तासू ही श्रीनवनीतप्रियजी के पास सात स्वरूप पधारे और राजभोग अरोगे : तासु परमतत्त्व रूप श्रीनवनीतप्रियजी है । सो श्रीगुसांई जी आज्ञा किये हैं—

"जानीतं परमं तत्त्वं यशोदोत्संगलालितम् ।
तदन्यदिति ये प्राहुरासुरांस्तान हो बुधा ॥"...............

—श्रीद्वारकेशजी (घन्नूजी)

नाथद्वारे की नौंध

श्रीनाथजी कौन के हैं ?

श्रीगिरिराजमां संवत १४६५ की सालमां व्रजवासी लोगो सदूपांडे नरोबाई बगेरा ए गुप्त सेवा की दी, ते पछे संवत १५३५ की सालमां प्रसिद्ध हुवा जा पाछे संवत १५४९ मां श्रीमहाप्रभुजी को श्रीनाथजी ऐ झाडखंडमां जताव्यू ते वारे आप श्रीजीद्वार गिरिराज उपर पधारे ओर रामदास चोहानकुं सेवा सोंपी पछी श्रीजीनी स्थापना को विचार श्रीमहाप्रभुजी ने कियां परन्तु ओ विचार संवत १५५६ तांई पार पड्यो नहीं पीछे पूरनमल नाम का एक क्षत्री वैष्णवे आपकी आज्ञासुं श्री को मन्दिर बनवायो परन्तु वो मिन्दर अपूर्ण रह्यो ते संवत १५७६ की साल में पूर्ण बन गयो ने सेवा करवा अड़ेल चरणाट काशी थई आवता ते सेवा करी पाछा अडेल पधारता जा-बिरियाँ सेवा वगेरानुं काम सब व्रजबासिओ तथा गोड़िया ब्राह्मणकूं

सुपुर्द करके पधारते वो लोग श्रीजी की सेवा करते रहे । आप श्री नवनीतप्रियाजी की सेवा करते रहे । जा पीछे संवत १५८७ तांई तो श्रीनाथजी वैष्णवन के और व्रजवासियोन के कहलाये जा पीछे संवत १५६२ श्रीवल्लभाचार्यजी ना मोटा पुत्र श्रीगोपीनाथजी सेवा करन लगे और सब वहिवट व्रजबासीओ और कृष्णदास अधिकारी करते रहे सो संवत १६०० की साल में श्रीगोपीनाथजी लीला मां पधार गये जा पीछे इनके पुत्र श्री पुरुषोत्तमजी दो चार बरसमें लीला में पधार गये । इनके पीछे श्रीगुसांईजी श्रीविट्ठलनाथजी ने बहोत सी लागवग कीनी पाछे संवत १६२८ की साल में गोडिया सेवगो को दूर करके आपने अपनो कबजो करलीनो जापीछे श्रीगुसांईजी ने संवत १६३० में श्रीगिरिराज उपर श्रीनाथजो को शय्या मिंदिर और मणी कोठा बनबायो जापीछे संवत १६३४ में अकबर बादशाह के पास सूं एक परवाना लिखवायो जो हमकूं कोई श्रीजी की सेवा में दखल करे नहीं और टीकेत गुसांई को इलकाब मिलायो पाछे संवत १६४० की साल में श्रीगुसांई जी अपने सातों लालजी को सातों निधी के श्री ठाकुरजी की सेवा पधराय दीनी बाँटा कर दिया श्रीनाथजी की सेवा ओसरा मुजब सर्वे गुसांईजी का बालक करे ऐसे ठेरावसुं श्रीजी की सेवा चालू राखी सो संवत १६७७ ताई तो श्रीजी की आछी रीतीसुं सेवा करत रहे जा पीछे थोड़े दिन बाद श्रीजी के तीसरे टीकायत श्रीविट्ठलराय जी के सामने सब गुसांईजी के बालकन में झगड़ा पड़ गयो सो विट्ठलरायजी ने झगड़ा पताय दियो जैसे के एक वर्ष का दिवस ३६० तीनसो साठ दिवस होयहे जामें ६० दिन उत्सव के सो तो श्रीगिरिधरजी के वंशके होय सो सेवा करे और तीनसो दिवस मां श्रीगुसांईजी के सर्वे बालको सेवा शृंगार करे इसी मुजब झगड़ा पताय के आग्रा में मुगल दरबार की कचेरी में सामासामी आपस में पट्टा लिखाय के नोंद कराय दिया । ये ठहराव आगरा का बादशाह सहाजहान का ही समय में होचुका है, वैष्णवन को फक्त दर्शन को ही अधिकार है चरणस्पर्श नहीं ए मुजब श्रीजी की सेवा को प्रकरण आछी रीती सुं संवत १६७८ ताई चल्यो बाद में संवत १६८० मां बादशाह जहाँगीर जुल्म उठायो जा बखत फक्त एकेला श्रीगोकुलनाथ जी ऐ बहोतसी रीती परिश्रम सूं माला तिलक को धर्म राख्यो और संप्रदाय का रक्षण किया जापीछे संवत १७२६

की साल में बादशा औरंगजेब का जुलम सूं श्रीनाथजी कूं मेवाडमां पाँचमा टीकेत श्रीदामोदरजी अने काकाजी श्री गोविंदरायजी पधराय लाये, वा बखत उदैपुर दरबार श्री राणा रायसिंह ने बहोत मान के साथ श्रीजी कूं अपने मुलक में पधराये संवत १७२७-२८, जा बखत श्रीगुसांईजी के कोई बालकन ने श्रीजी कूं पधराय लायवे में मदत करी नहीं तो पन श्री हरिरायजी महाराज श्रीके कवेसूं सर्व बालकन को सेवा शृंगार को हक इसी मेवाड़ में भी चालू राख्यो ओर संवत १७३० की साल मां हैं। महाराणा श्री जसवन्तसिंह जी के सामने लिखा पड़ी कराय के जैसे पहिले सेवा शृंगार श्रीगुसांई जी के सर्वे बालको करते हते तेसे करते रहे, यामें कोई कनड़गत करे नहीं ऐसे ठेराव लिख दियो, सो आज दिन तांई उसी मुजब सब सेवा शृंगार कर रहे हे हे।

संवत १९९१ में पं० मोहनलालात्मज रामचन्द्र ने वैष्णव छगनलाल नाथा भाई के निमित लिख दियो भाद्र पद कृष्ण ७ भृगुवार—

अष्टछाप

[स्थापना सं० १६०२]

★

मध्य में—गोसाईं विट्ठलनाथजी

दाहिनी ओर—१. सूरदास, २. कुंभनदास, ३. परमानंददास, ४. कृष्णदास

बायीं ओर—५. गोविंदस्वामी, ६. छीतस्वामी, ७. चतुर्भुजदास ८. नंददास

सूरदास की वार्ता

★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक सूरदासजी सारस्वत ब्राह्मण, दिल्ली के पास सींहीं गाम है तहां रहते, तिन की वार्ता को भाव कहत हैं—

★

भावप्रकाश—

सो ये सूरदासजी लीला में श्रीठाकुरजी के अष्टसखा हैं,सो तिन में ये 'कृष्णसखा' को प्राकट्य हैं। तहाँ यह सन्देह होय जो–निकुंज लीला में तो सखीजनन कों अनुभव है, जो सखा तहां नाहीं है। सो सूरदासजी ने रहस्यलीला,बिना अनुभव कैसे गाई ? तहां कहत हैं, जो श्रीभागवत में कहे हैं, जो–जब श्रीठाकुरजी आप बन में गौचारन लीला में सखान के संग पधारत हैं, सो सगरी गोपीजन लीला को अनुभव करत हैं। सो घर में सगरी लीला बन की गान करत हैं। ता पाछें जब श्रीठाकुरजी संध्या समय बन तें घरकूँ आवत हैं, ता पाछें रात्रि कों गोपीजन सों निकुंज में लीला करत हैं। सो तब अंतरंगी सखान कों विरह होत है,तब वे निकुंजलीला को गान करत हैं,अनुभव करत हैं।

सो काहेतें ? कुंजमें सखीजन हैं सो तिनके दोय स्वरूप हैं,सो कहत हैं—पुंभाव के सखा और स्त्री भाव की सखी। सो दिन में सखा द्वारा अनुभव और रात्रि कों सखी द्वारा अनुभव है। सो काहेतें ? जो वेद की ऋचा हैं सो गोपी हैं। और वेद के जो मंत्र हैं सो सखा हैं। परंतु गोपीजन देखिवे मात्र स्त्री हैं, सो इनके पति हैं, परंतु ये स्त्री नांहीं हैं। सो ऐसे–(जैसे) भुज्यो अन्न होय सो धरती में बीज नांही ऊगे। तेसे ही इनकों लौकिक विषय नांही है। सो यहां तो रसरूपलीला सदा सर्वदा एक रस हैं। सो तेसे ही अंतरंगी सखा श्रीठाकुरजी के अंगरूप हैं। सो सखी रूप, सखा रूप, दोय रूप सों रात्रदिन लीलारस करत हैं। सो तासों सूरदास 'कृष्णसखा को प्राकट्य हैं। और कृष्ण सखा को दूसरो स्वरूप सखी है, सो लीला कुंज में हैं तिनको नाम "चंपक-

लता" है। सो तासों सूरदास कों सगरी लीलाको अनुभव श्रीआचार्य जी महाप्रभु की तें कृपा होयगो। सो प्रकार कहत हैं।

तहां यह संदेह होय,जो लीला संबंधी है सो पहले तें अनुभव क्यों नांही भयो। सो इनकों मोह क्यों भयो ? तहां कहत हैं जो–श्रीठाकुरजी भूमिके ऊपर प्रगट होयकैं लौकिककी नांई लीला करत हैं,सो जस प्रकट करनार्थ। सो लीला गाइ जगत में लौकिक जीव कृतार्थ होत हैं। तैसेंई श्रीठाकुरजीके भक्त हू जगतमें लौकिक लीला करि अलौकिक दिखावत हैं। जैसें श्रीरुक्मिनीजी साक्षात् श्रीलक्ष्मीजीको स्वरूप हैं,परंतु जब जन्मी तब देवी पूजिकैं वर मांग्यो। फेरि श्रीठाकुरजीके पास ब्राह्मण ब्याह के लिये पठायो। सो यह जग में लीला प्रगट करनार्थ। जैसे कालिंदीजी सूर्य द्वारा प्रगट होय कैं श्रीयमुनाजी में मंदिर करि तपस्या करि, अर्जुन सों कही, जो मैं श्रीठाकुरजी कों बरूँगी। तब श्रीठाकुरजी आपु विवाह कियो। सो ये लीलामात्र, (क्यों जो) ये सदा श्रीठाकुरजी की प्रिया हैं। सो व्रज में श्रीस्वामिनीजी और श्रीठाकुरजी आपु ये दोउ एक रूप हैं, परतु व्रजलीला प्रगट करिवे के लिये श्रीठाकुरजी श्रीनंदरायजी के घर प्रगटे और स्वामिनीजी श्रवृषभानजी के घर प्रगट होय कैं अनेक उपाय मिलिवे कों रात्रदिन किये। सो यह लीला (केवल) जगत में प्रगट करिवे के लिये (ही)। (नातर) ये तो सदा एक रस लीला करत हैं। सो तैसेंई सूरदास श्रीआचार्यजीके सेवक होयकें भगवल्लीला गाये। सो यामें स्वामी को जस बढ़ै। सो जिनके सेवक सूरदास ऐसे भगवदीय, तिनके स्वामी श्रीआचार्यजी आपु तिन की सरन जैये। सो या प्रकार जगत में लीला करि जस प्रगट किये, सो आगे लौकिक जीव कों गान करि भगवत्प्राप्ति होय।

सो सूरदासजी जगत पर अब ही प्रगटे,परंतु लीलाको ज्ञान नांही है। सो सूरदासजी दिल्ली पास चारि कोस उरे में एक सीहीं गाम है, जहां राजा परीक्षित के बेटा जन्मेजय ने सर्प यज्ञ कियो है। सो ता गाम में एक सारस्वत ब्राह्मण के यहां प्रगटे। सो सूरदासजीके जन्मत ही सों नेत्र नांही हैं। और नेत्रन को आकार गडेला कछू नाहीं; ऊपर भोंह मात्र है। सो या भांति सों सूरदासजी को स्वरूप है। सो तीन बेटा या सारस्वत ब्राह्मण के आगे के हते, और घर में बहोत निष्किंचन हतो। वा सारस्वत ब्राह्मण के घर चौथे सूरदासजी प्रगटे। सो तब इनके नेत्र न देखे, आकार (हू) नांही। सो या प्रकार देख के वा

ब्राह्मण ने अपने मन में बहोत सोच कियो, और दुःख पायो। जो देखो—एक तो विधाता ने हमकों निष्कंचन कियो, और दूसरे घर में ऐसे पुत्र जन्म्यों। जो अब याकी कौन तो टहल करेगो? और कौन याकी लाठी पकरेगो? सो या प्रकार ब्राह्मण ने अपने मन में बहोत दुःख पायो। सो काहेतें जो-जन्में पाछे नेत्र जांय तिनकों आंधरा कहिये, सूर न कहिये। और ये तो सूर है, सो माता-पिता घर के सब कोई इनसों प्रीति करें नांही। जानें, जो नेत्र बिना को पुत्र कहा? तासों इनसों कोई बोलतो नाहीं।

सो एसे करत सूरदासजी बरस छह के भये। तब पिता कों वा गाम के एक द्रव्यपात्र क्षत्री जजमान ने दोय मोहौर दान में दीनी। तब यह ब्राह्मण उन मोहौरन कों ले के अपने घर आयो, और अपने मन में बहोत प्रसन्न भयो, और स्त्री तथा घर में देह संबन्धी बेटा बेटा हते सो तिन सबनसों कही जो-भगवान ने दोय मोहौर दीनी हैं सो कालिह इनकों बटाय के सीधो समान लाऊँगो। तातें अपने घर में दोय चार महीना को काम चलेगो। सो या प्रकार सबन कों वे दोय मोहौर दिखाई। ता पाछें रात्रि कों एक कपड़ा में बांधि के ताक में धरि के सोयो। तब रात्रि कों दोय मोहौरन कों मूसा ले गये। सो घर की छांतिन में भिल्ल में धरि दीनी। तब सवारे उठि के देखे तो मोहौर नाहीं है।

सो तब तो सूरदास के मातापिता छाती कूटन लागे, और रोवन लागे, और अपने मन में अति कलेश करन लागे। सो वा दिन खानपान नांही कियो। सो या भांति सों घनो विलाप करन लागे। सो देखिके सूरदासजी मातापिता सों बोले जो-तुम एसो दुःख विलाप क्यों करन हो? जो भगवान को भजन सुमिरन करो तासों सब भलो होय। सो या भांति सूरदास उनसों बोले। तब मातापिता ने सूरदास सों कही जो-तू एसी घडी को सूर जनम्यो है,सो हमकों वाही दिन सों दुःख ही मे जनम बीतत है। जो हमकों काहू दिन सुख नाहीं भयो, और हमकों भर पेट अन्नहू नाही मिलत है। जो श्रीभगवान ने हमकों दोय मोहौर दीनी हती सोहू योंही गई। तब सूरदासजी बोले जो-तुम मोकों घरमें न राखो तो मैं अबही तिहारी मोहौर बताय देउं। परि पाछे मोकों घर मं राखियो मति, और तुम मेरे पीछे मति परियो। तब यह सुनि के मातापिता ने सूरदास सों कह्यो जो-और हमकों कहा चहियत

है ? जो तू हमकों मोहौर बताय देउ, और हमारी मोहौर पावे फेरि तेरे मन में आवे तहां तू जाइयो । हम तोकों बरजेंगे नांही । तब सूरदास बोले जो–छांति में भिल्लो है सो भिल्ले के मोहोडे पर धरी हैं । तब यह ब्राह्मण खोदि के मोहौर पाये ।

तब सूरदासजी घरतें चलन लागे । सो मातापिताकों मोह उत्पन्न भयो । जो देखो या सूरदास को सगुन बहोत आछो भयो । याके कहे प्रमान मोकों तुरत ही मोहौर मिली हैं । सो यह बिचारि के मातापिता ने सूरदासजी सों कह्यो–जो सूरदास ! अब तुम घरतें क्यों जात हो ? अब तो यह मोहौर पाय गई हैं, तातें जहां तांई यह मोहौरन को अनाज रहै तहां तांई तुमहू खावो, पाछें जहां जानो होय तहां तुम जैयो । तब सूरदास बोले जो–मोकों अब तुम घर में मति राखो, जो मोकों घर में राखोगे तो तिहारी मोहौर फेरि जायगी, और तुम दुःख पावोगे । यह सुनि के मातापिता कछु बोले नाहीं, और सूरदासजी तो हाथ में एक लाठि लेकें घर सों निकले । सो सीहीं तें चले, सो चार कोस ऊपर एक गाम हतो, तहां एक तलाब गाम बाहिर हतो । सो वहां एक पीपर के वृत्त नीचे सूरदासजी आय बैठे, और वा तलाब को जल पियो । तहां दोय चार घडी दिन पाछिलो रह्यो हतो, तब ता गाम को ब्राह्मण जमींदार तहां आयके सूरदासजी कों पहचानके कहन लाग्यो जो-मेरी१०गाय तीन दिनतें मिलत नांहीं,कोई बतावे तो दो गाय वाकों दऊं । तब सूरदासजी ने कही जो–मोकों तेरी गाय कहा करनी हैं ? परंतु तू पूछत है तब कहत हूं जो–यहां सों कोस ऊपर एक गाम है । सो वा गाम के जमींदार के मनुष्य रात्रि कों आयके तेरी १० गाय ले गये । वा जमींदार के घर के भीतर एक दूसरो घर है, सो तहां जमींदार के घोड़ा बंधे हैं, सो उन घोड़ान के पास तेरी गाय बंधी हैं । तब वे जमींदार दस आदमी संग ले जाइ देखे तो गाय सब बंधी हैं, सो ले आय के सूरदासजी सों कह्यो जो–सूरदास ! तिहारे कहे प्रमान मेरी दस गाय पाय गई हैं, सो ये दोय तुम राखो ।

तब सूरदासजी ने कही जो–मैं अपनों ही घर छोडि के श्री ठाकुरजी को आश्रय करिके बैठो हूं, सो मैं तेरी गाय काहे कों लेऊं ? तब वह जमींदार सूरदास कों बालक जानि कें सिक्षा की बात करन लाग्यो, जो अरे ! तू फलाने सारस्वत को बेटा है, और नेत्र तेरे हैं नाहीं, और कोऊ मनुष्य हू तेरे पास नाहीं है, सो तू अपने

घर कों छोडि के रूठि के यहाँ क्यों बैठ्यो है ? नेत्र हैं नाहीं, कैसे दिन कटेंगे ? तब सूरदास ने कह्यो जो–मैं तेरे ऊपर तो घर छोड्यो नाहीं। मैं तो नारायण के ऊपर घर छोड्यो है, सो वे सगरे जगत को पालन करत हैं सो मेरो हू करेंगे। और जो होनहार होयगी सो होयगी। तब जमींदार ने कही, मैं हू ब्राह्मण हौं, दारि रोटी मेरे घर भई हैं, कहे तो लाउं। तब सूरदास ने कही जो–मैं तो गैलकी चली रोटी नाहीं खात। तब वह जमींदार अपुने घर जाइ पूरी कराय और दूध ले जाइ, सूरदास कों जल भरि दे के कह्यो, जो–सूरदास ! तुम कोई बात को दुःख मति पाइयो। जो जहां तांई भगवान मोकों खायवे कों देयगो, तहांतांई यहां मैं तुमकों लाऊंगो। और सवेरे या तलाब पर तथा गाम में जहां कहोगे तहां छापरा डार दऊंगो। पाछे सवेरो भयो, तब यह जमींदार ने आय के कह्यो-जो तिहारो मन कहां रहेवो को हैं ? तब सूरदास ने कही–जो अब तो याही तलाब पर पीपरा नीचे कछुक दिन रहवे को मन है। तब वा जमींदार ने वहां एक झोंपडी छवाय दीनी और टहल करिवेकुं एक चाकर राखि दियो। ता पाछें वा जमींदार ने दसपांच जने के आगे बात करी–जो फलाने को बेटा सूरदास बडो ज्ञानी है। हमारी गाय खोय गई हती सो बताय दीनी। सो वह सगुन में आछो जाने है। सो मैं वाकों तलाब के ऊपर पीपर के नीचे झोंपरी छवाय, वाके पास एक चाकर राखि दियो है। और नित्य पूरी,दहीं,दूध, पठावत हूं। सो तासों काहू कों सगुन पूछनो होय तो वाकूं जाय के पूछि आइयो।

यह सुनि के सब लोग गाम के आवन लागे। सो जो कोइ पूछे तिनकों सगुन बतावे सो होई। तब सूरदास की बड़ी पूजा चली, भीर लगी रहे। खानपान भलीभांति सों आवन लाग्यो। सो तब कछुक दिन में सूरदास कों रहिवे के लिये एक बडो घर तलाव पर बनाय दियो, और वह झोंपरी हू दूरि कीनी। और वस्त्र, द्रव्य, बहौत वैभव भेलो भयो। सो सूरदास स्वामी कहवाये, बहोत मनुष्य इनके सेवक भये। जाके कंठी बांधनी होय सो सूरदासको सेवक होय। सो सूरदास विरह के पद सेवक कों सुनावते। सो सब गायवे के बाजे को सरंजाम सब भेलो होय गयो।

या प्रकार सूरदास तलाब पे पीपर के वृक्ष नीचे वरस अठारे के भये। सो एक दिन, रात्रि कों सोवत हते, ता समय सूरदास कों

वैराग्य आयो तब सूरदासजी अपने मन में विचारे जो-देखो, मैं श्री भगवान के मिलन अर्थ वैराग्य करि के घरसों निकस्यो हतो, सो यहां माया ने ग्रसि लियो। मोकूं अपनो जस काहे कों बढ़ावनो हतो ? जो मैं श्रीप्रभु को जस गढावतो तो आछो। और यामें मेरो बिगार भयो, तासों अब कब सवारो होय और मैं यहां सो कूंच करूं।

सो ऐसे करत सवारो भयो। तब एक सेवक कों पठाय माता-पिता कों बुलाय सब घर उनकों सोंपि दियो। पाछें सूरदास एक वस्त्र पहिर के लाठी ले के उहां ते कूंच किये। सो तब जो सेवक माया के जंजाल में हते, सो संसार मे लपटे और उहांई रहे। और कितनेक सेवक जो संसार सों रहित हते, सो सूरदास के संग ही चले। सो सूरदास मनमें विचारे जो-व्रज है सो श्रीभगवान को धाम है, सो उहां चलिये। तब सूरदास उहां तें चले, सो मथुराजी में आये। तहां विश्रांत घाट पै रहिके सूरदास ने विचार कियो, जो-मैं मथुराजी में रहूंगो सो यहां हू मेरो माहात्म्य बढ़ेगो और यह श्रीकृष्ण की पुरी है, सो यहां मोकों अपनो माहात्म्य प्रगट करनो नाहीं। और संसार में अनेक लोग सुख दुःख पावें हैं सो सब पूछिवे आवेंगे। और यहां मथुरिया चौबे हैं सो यहां माहात्म्य बढ़ेगो तो ये दुख पावेंगे। तासों यहां रहनो ठीक नाहीं।

सो यह विचारि के सूरदास मथुरा के और आगरे के बीचों बीच गऊघाट है तहां आयके श्रीयमुनाजी के तीर स्थल बनाय कें रहें।

सूरदास को कंठ बहोत सुन्दर हतो। सो गान विद्या में चतुर, और सगुन बतायवे में चतुर। सो उहां हू बहोत लोग सूरदासजी के पास आवते। उहां हूं सेवक बहोत भये। सो सूरदास जगत में प्रसिद्ध भये।

वार्ताप्रसंग १ – सो गऊघाट ऊपर सूरदास रहते, तब कितनेक दिन पाछें श्रीआचार्यजी महाप्रभु आपु अडेल तें व्रज कूँ पधारत हते। सो कछुक दिनमें श्रीआचार्यजी आप गऊघाट पधारे। ता समय श्रीआचार्यजी के संग सेवकन को वहोत समाज हतो। सो सब वैष्णव सहित श्रीआचार्यजी आपु श्रीयमुनाजी में स्नान किये। ता पाछें संध्यावंदन करि पाक करन कों पधारे। और सेवक हू सब अपनी अपनी रसोई करन लगे। ता समय एक सेवक सूरदास को तहाँ आयो। सो वाने जायके सूरदास कों खबरि करी, जो-सूरदासजी ! आज यहां श्रीवल्लभाचार्यजी पधारे हैं। जो जिनने कासी में तथा दक्षिण में मायावाद खंडन कियो है, और भक्तिमार्ग स्थापन कियो है।

सूरदास

जन्म सं० १५३५ ::: देहावसान सं० १६४०

★

तब यह सुनि के सूरदास ने अपने सेवक सों कह्यो जो-जब श्रीवल्लभाचार्यजी भोजन करिके निश्चितता सों गादी तकियान के ऊपर विराजें ता समय तू हमकों खबरि करियो। जो-मैं श्रीवल्लभाचार्यजी के दरसन कों चलूंगो। तब वह सेवक दूरि आय के बैठि रह्यो। सो जब श्रीआचार्यजी आपु भोजन करिके गादी तकियान पै विराजे, और सेवक हू सब आस पास आय बैठे, तब वा सेवक ने जाय के खबरि करी। तब सूरदास वाही समय अपने संग सगरे सेवकन कों लेके श्रीआचार्यजी के दरसन कों आये। सो तब आयके श्रीआचार्यजी कों साष्टांग दंडवत करी।

तब श्रीआचार्यजी श्रीमुख सों कहे, जो-सूर! कछू भगवत्-जस वर्णनन करो। तब सूरदास ने श्रीआचार्यजी कों दंडवत करि कह्यो, जो-महाराज! जो आज्ञा। ता पाछें सूरदास ने यह पद श्रीआचार्यजी आगे गायो। सो पदः—

राग धनाश्री—हौं हरि सब पतितन को नायक।

फेरि दूसरो पद गायो, सो पद—'प्रभु हौं सब पतितन को टीको।'

सो सुनिके श्रीआचार्यजी आपु सूरदास सों कहे,जो-सूर ह्वै कैं ऐसो घिघियात काहे कों है? सो तासों कछु भगवल्लीला वर्णनन करि।

भावप्रकाश—ताको आसय यह है, जो-जीव श्रीभगवान सों बिछुर्यो, सो तब पतित तो भयो। सो ताकों बहोत कहा कहनो. तासों भगवल्लीला गावो, जासों शुद्ध होय।

तब सूरदास ने श्रीआचार्यजी सों विनती कीनी, जो-महाराज! मैं कछू भगवल्लीला समुझत नाहीं हूँ। तब श्रीआचार्यजी श्रीमुख तें कहे, जो-सूर! श्रीयमुनाजी में स्नान करि आवो, जो हम तुमकों समुझाय देंगे। तब सूरदास प्रसन्न होय कें श्रीयमुनाजी में स्नान करि के अपरस ही में श्रीआचार्यजी पास आये। तब श्री-आचार्यजी ने कृपा करि कें सूरदास कों नाम सुनायो, ता पाछें समर्पन करवायो। पाछें आप दसम स्कंध की अनुक्रमणिका करी हती सो सूरदास कों सुनाये।

भावप्रकाश—अष्टाक्षर मंत्र सुनायो तासों सूरदास के सगरे जनम के दोष मिटाये, और सात भक्ति भई। पाछें ब्रह्मसंबंध करवायो, तासों सात भक्ति और नवधा भक्ति की सिद्धि भई। सो रही प्रेम-लक्षणा, सो दसम स्कन्ध की अनुक्रमणिका सुनाये। तब संपूरन पुरुषो-

त्तम की लीला सूरदास के हृदय में स्थापन भई, सो प्रेमलक्षणा भक्ति सिद्ध भई।

सो सगरी श्रीसुबोधिनीजी को ज्ञान श्रीआचार्यजी ने सूरदास के हृदय में स्थापन कियो। तब भगवल्लीला जस वर्णन करिवे को सामर्थ्य भयो। तब अनुक्रमणिका तें सगरी लीला हृदय में स्फुरी। सो कैसे जानिये? जो श्रीआचार्यजी आप दसम स्कन्ध की सुबोधिनीजी में मंगलाचरण की प्रथम कारिका किये हैं, सो कारिका कहत हैं। श्लोकः—

"नमामि हृदये शेषे लीलाक्षीराब्धि-शायिनं।
लक्ष्मीसहस्र-लीलाभिः सेव्यमानं कलानिधिम्॥"

सो या मंगलाचरण के अनुसार सूरदास ने श्रीआचार्यजी के आगे यह पद करिके गायो। सो पदः—

राग बिलावल-'चकईरी! चल चरणसरोवर जहां नहिं प्रेम वियोग।'

सो यह पद दसमस्कन्ध की कारिका के अनुसार किये हैं।

श्लोक—'लक्ष्मीसहस्रलीलाभिः सेव्यमानं कलानिधिं।'

जैसे श्लोक में कह्यो है, तैसेही सूरदास ने या पद में कही जो—

"जहां श्रीसहस्र सहित नित क्रीडत सोभित सूरजदास।"

सो यामें कहे। तामें जानि परी,जो-सूरदास कों सगरी लीला श्रीसुबोधिनीजी की स्फुरी।

सो सुनिके श्रीआचार्यजी बहोत प्रसन्न भये। और जाने,जो-अब लीला को अभ्यास भयो। सो तब श्रीआचार्यजी आप श्रीमुख तें सूरदास सों आज्ञा किये, जो—सूर! कछू नंदालय की लीला गावो। तब सूरदास नें नंद महोत्सव को कीर्तन वर्णन करिके गायो। पदः-

राग देवगंधार-'ब्रज भयो महरि के पूत जब यह बात सुनी।'

सो यह बड़ी बधाई गाई। सो श्रीनंदरायजी के घरको वर्णन किये, तहां तांई तो श्रीआचार्यजी आप सुने। ता पाछे गोपीजन के घर को वर्णन करन लागे तब श्रीआचार्यजी आपु श्रीमुख तें सूरदास सों कहे जो—

'सुन सूर सबन की यह गति जो हरि-चरन भजे।'

सो या भोग की तुक आपु कहि कें सूरदास कों चुप करि दिये।

भावप्रकाश—सो यातें जो-ब्रजभक्तन को आनंद है सो भगवदीयन के हृदयमें अनुभव-योग्य है। सो बाहिर प्रकास होय तासों सूरदासको थांभि

दिये। और सूरदासजी के हृदय में यह भी आयो हतो, जो मैंने सेवक किये हैं तिनकी कहा गति होयगी ? तब श्री आचार्यजी ने कही:–'सुन सूर ! सबन की यह गति जो हरिचरन भजे।

तब श्रीआचार्यजी आप प्रसन्न होय के कहे, जो–मानों सूर नंदालय की लीला में निकट ही ठाड़े हैं। सो ऐसो कीर्तन गायो।

ता पाछे श्रीआचार्यजी ने सूरदास कू 'पुरुषोत्तम सहस्रनाम' सुनायो। तब सगरे श्रीभागवत की लीला सूरदास के हृदय में स्फुरी। सो सूरदास ने प्रथम स्कंध श्रीभागवत सों द्वादस स्कंध पर्यंत कीर्तन वर्णन किये। तामें अनेक दानलीला, मानलीला आदि वर्णन किये हैं।

ता पाछें गऊघाट ऊपर श्रीआचार्यजी आप तीन दिन रहे। सो तब सूरदासने जितने सेवक किये हते, सो सबकों श्रीआचार्यजी के सेवक कराये। ता पाछें श्रीआचार्यजी आप व्रज में पधारे। तब सूरदास हू श्रीआचार्यजी के संग व्रज में आये।

सो प्रथम श्रीआचार्यजी महाप्रभु आप गोकुल पधारे। तब श्रीआचार्यजी ने श्रीमुख सों कह्यो जो–सूर ! श्रीगोकुल को दरसन करो। तब सूरदासजी ने श्रीगोकुल कों साष्टांग दंडवत किये। सो दंडवत करत ही श्रीगोकुल की लीला सूरदास के हृदय में स्फुरी।

तब सूरदासजी अपने मन में विचारे, जो–श्रीगोकुल की लीला मैं बरनन कैसैं करौं। सो काहे तें–जो श्रीआचार्यजी को मन श्रीनवनीतप्रियजी के स्वरूप के ऊपर आसक्त है. सो श्रीनवनीतप्रियजी को कीतन श्रीगोकुल की बालीला को वरनन, एसो पद सूरदासजी ने गायो। सो पद—

राग बिलावल–'सोभित कर नवनीत लिये।'

सो यह पद सुनिके श्रीआचार्यजी आप सूरदास के ऊपर बहोत प्रसन्न भये। सो तापाछें सूरदास ने और हू पद बाललीला के श्री आचार्यजी कों सुनाये। ता पाछें श्रीआचार्यजीने बिचारयो–जो श्रीगोवर्द्धननाथजी को मंदिर तो समरायो, और सेवा हू को मंडान भयो। तातें सूरदास कूं श्रीनाथजी के पास राखिये। तब समे समे के सगरे कीरतन को मंडान और भयो चाहिये। सो आगे वैष्णवजन सूरदास के पद गाय के कृतार्थ बहोत होंयगे।

तब यह विचारिके सूरदास कूं संग लेके श्रीआचार्यजी आप श्रीगोवर्द्धन पधारे, सो ऊपर पधारके श्रीनाथजी के दरसन किये।

तब श्रीआचार्यजी आप श्रीमुख सों सूरदास सों कहे जो-सूर! श्री गोवर्द्धननाथजी के दरसन करो और कीर्तन गावो।' तब सूरदासजी ने श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन किये। ता पाछें सूरदासजी ने प्रथम विज्ञप्ति को पद दैन्यता सहित गायो। सो पद—

राग धनाश्री—'अब हौं नाच्यो बहुत गोपाल।' × × ×

सूरदास की सबै अविद्या दूर करहु नंदलाल!

सो यह पद सूरदासजी ने श्रीनाथजी कों सुनायो। सो सुनि के श्रीआचार्यजी आप सूरदास सों कहे जो-सूरदास! अब तो तिहारे मन में कछू अविद्या रही नांही, जो तिहारी अविद्या तो प्रथम ही श्रीनाथजी ने दूरि कीनी है। तासों अब तुम भगवल्लीला गावो जामें माहात्म्य पूर्वक स्नेह होय।

भावप्रकाश—परंतु भगवदीय जितने हैं सो तिननेन की यही बोली है जो अपने कों हीन कहत हैं। सो यह भगवदीयन को लक्षण है। और जो कोई अपने को आछो कहे और आपुनी बडाई करे, सो भगवान तें सदा बहिर्मुख है।

तब श्रीआचार्यजी और श्रीगोवर्द्धननाथजी के आगे सूरदासजी ने माहात्म्य स्नेह युक्त कीर्तन किये। सो पद—

राग गौरी-'कौन सुकृत इन व्रजवासिन को वदत विरंचि शिव शेष'

सो यह पद सुनिकें श्रीआचार्यजी आप वहोत प्रसन्न भये।

भावप्रकाश—क्यों जो-जैसो श्रीआचार्यजी आपु पुष्टिमार्ग प्रगट किये, ताही अनुसार सूरदासजी ने यह कीर्तन गायो। सो श्री आचार्यजी के मारग को कहा स्वरूप है? जो माहात्म्य ज्ञान पूर्वक दृढ़ स्नेह सो सर्वोपरि है, सो ठाकुरजी कों बहोत प्रिय हैं। परन्तु जीव माहात्म्य राखे। सो काहेतें? जो माहात्म्य बिना अपराधको भय मिट जाय। तासों प्रथम दसा में महात्म्य युक्त स्नेह आवश्यक चाहिये। और व्रजभक्तन को स्नेह है सो सर्वोपरि है। तासों भक्तन के स्नेह के आगे श्रीठाकुरजी को माहात्म्य रहत नांही। सो ठाकुरजी स्नेह के बस होय भक्तन के पाछें २ डोलत हैं। सो जहां तांई एसो स्नेह नांही होय तहां तांई माहात्म्य राखनो। सो जब स्नेह को नाम ले के माहात्म्य छोडे और श्रीठाकुरजी के आगे बैठे, बात करे और पीठि देय तो भ्रष्ट होय जाय। तासों माहात्म्य बिचारे और अपराध सों डरपे, तो, कृपा होय। और जब (सर्वोपरि) स्नेह होयगो तब आपही तें। स्नेह एसो

पदार्थ है जो–माहात्म्य कूं छुडाय देयगो। सो दसम स्कंधमें वरनन है–

जो श्रीभगवान वारंवार माहात्म्य व्रजभक्तनकों और श्रीयसोदा जी कों दिखायो। सो पूतना वध करि. सकट, तृनावर्त करि, यमलार्जुन करि, वकासुर, धेनुक, कालीदमन करिकें लीला में माहात्म्य दिखायो। परंतु व्रजभक्तन को स्नेह परम अद्भुत अनिर्वचनीय है। तासों माहात्म्य तथा ईश्वरभाव न भयो। सो एसो स्नेह प्रभु कृपा करि दान करें ताकों आपही तें माहात्म्य छूटि जायगो। और जाको स्नेह पति, पुत्र, स्त्री, कुटुंब में तथा द्रव्य में है, और अपने देह सुख में है सो भगवान को महात्म्य छोडि लौकिक रीति करे तो श्रीभगवान को अपराधी होय। तासों वेद मर्यादा सहित श्रीठाकुरजी के भय सहित सेवा करे,और सावधान रहे। सो यह श्रीआचार्यजी महाप्रभु के मारग की रीति है। तासों माहात्म्य पूर्वक स्नेह करिये। और माहात्म्य पूर्वक स्नेह यह जो–समय समय ऋतु अनुसार सेवा में सावधान रहै, ताको नाम माहात्म्य पूर्वक स्नेह कहिये।

पाछे श्रीआचार्यजी आपु कहे जो–सूर ! तुमकों पुष्टिमारग को सिद्धांत फलित भयो है, तासों अब तुम श्रीगोवर्द्धनधर के यहां समय समय के कीर्तन करो। ता समय सेन भोग सरि चुक्यो हतो, सो तब मान के कीर्तन सूरदास ने गाये। सो पद –

राग बिहागरो– बोलत काहे न नागर बैना'। २ सुखद सेजमें पोढे रसिकवर'। ३ पोढ़े लाल राधिका उर लाय'।

सो पाछें याप्रकार सों कीर्तन सूरदासजी नें नित्य प्रातःकाल के जगायवे तें लेके सेन पर्यन्त के हजारन किये।

वार्ता प्रसंग २–और एक समय सूरदासजी पांच सात वैष्णवन के संग मारग में चले जात हते। सो तहां दस पांच जने चोपड खेलत हते। सो चोपड के खेल में एसे लीन भये हते सो मारग में गैल में काहू आवते जाते मनुष्य की कछू खबरि नांही।

सो या प्रकार उनकों मगन देखिकें सूरदासजी ने अपने संग के वैष्णवन के आगे एक पद गायो। और उन वैष्णवन सों सूरदास जी ने कह्यो जो-देखो, यह प्राणी मनुष्यजन्म वृथा खोवत है। जो श्रीभगवान ने मनुष्य–देह अपने भजन करिवे के लिये दीनी है। सो या देह सों यह प्राणी वृथा हाड कूटत है। सो यामें लौकिक में तो निंदा है जो-यह जुवारी है। और अलौकिक में भगवान सों बहि-

मुं खता है। तासों भगवानने तो एसी जिनकों मनुष्य-देह दीनी है, तिनकों एसी चोपड खेली चाहिये। सो ता समय सूरदासजी ने यह पद करि के संग के वैष्णव हते, तिनकों सुनायो। सो पद—

राग केदारो–मन ! तू समझ सोच विचार।
भक्ति बिना भगवान दुर्लभ कहत निगम पुकार॥
साधु संगत डार पासा फेरि रसना सार।
दाव अब के पर्यो पूरो, उतरि पहली पार॥
छांडि सत्रह सुन अठारे, पंच ही कों मार।
दूरि तें तज तीन काने चमक चोंक बिचार॥
काम क्रोध मद लोभ भूल्यो ठग्यो ठगिनी नार।
सूर हरि के पद भजन बिन चल्यो दोउ कर झार॥

सो सुनिके उन वैष्णवननें सूरदास सों कह्यो जो-सूरदास जी ! या पदमें समुझ नांही परी है। तासों हमकों अर्थ करिके समुझावो, सो तव समझ्यो जाय।

तब सूरदासजी उन बैष्णवन सों कहे। जो—

तीन वस्तु चोपड में चाहियें, समुझ सोच और विचार। सो ये तीन्यो वस्तु भगवान के भजन में हू चाहिये (क्यों ?) जो-जैसे पहले समुझै तव चोपड खेलेगो, सो तैसे ही भगवान कों जानेगो तो भजन करेगो। और चौपड में सोच होय जो-एसो फांसा परे तो मैं जीतूं। सो तैसे ही या जीव कों काल को सोच होय, तब यह जीव प्रभु की सरन जाय। और (तीसरी वस्तु जो) विचार, सो यह जो-विचार के गोट कों फांसा के दावकूं चले जो-यहां नांही मारी जायगी इत्यादि। सो तैसेही विचार वैष्णव कों होय, जो- यह कार्य मैं करत हूं सो आछो है, के बुरो है ? तब यह जीव बुरो काम छोडिकें भगवतधरम की चाल में चले। और चौपड में फांसा के दाव परें तब दोऊ ओर के मनुष्य पुकारत हैं। सो तेसे ही जगत में निगम जो वेद पुराण सो पुकारि के कहत हैं जो-भक्ति बिना भगवान दुर्लभ हैं, सो तासों कोटि साधन करो। और चोपड में दूसरो संग मिले तब चोपड खेली जाय, सो तैसे ही भगवान की भक्ति में भगवदीय वैष्णव की संगति होय तब भक्ति बढे। और चोपड खेलिवेवारे के मन में (जैसे) अपने दाव को सुमिरन रहत है जो-यह दाव परे तो मैं जीतूं, सो तैसे ही रसना सों यह जीव भगवद्वार्ता में मन लगायके सब रस को सार रूप (एसो

भगवन्नाम) कह्यो करे। और (जैसे) चोपड में सुंदर पूरो दाव परे तब गोट पार जाय, और तब उतरि के घर में आवे, और मरिवे को भय मिटे। सो तैसे ही मनुष्य देह संसार सों पार उतरिवेकों पूरो दाव बड़ी पुन्याई सों मिले है, सो तो या देह सों भगवदाश्रय करि संसारतें पार उतरि जाय। 'राखि सत्रे सुनि अठारे' चोपड में सत्रे अठारे बडे दाव हैं। सो तैसे ही जगत में सब पुराण हैं, सो तिनही कों राखि, सुनि अठारे जो-श्री भागवत सुनन कों (और) पुराण हू कों धरि राख। और पांचों जो इन्द्रिय; पंचपर्वा अविद्या है, सो इनकूं मार।

सो काहे तें? जो शास्त्र के वचन है जो

पतंग-मातंग-कुरंग-भृंग-मीना हताः पंचभिरेव पंच।
एकः प्रमादी स कथं न हन्यते यः सेवते पंच भिरेव पंच ॥१॥

१ पतंग-नेत्र विषय तें दीपक में परे। २ हाथी स्पर्श विषय करि मरे। ३ कुरंग-श्रवन विषय तें मरे। ४ भृंग-गंध नासिका विषय तें मरे, ५ मीन-जिभ्या विषय तें मरे। सो एक एक विषय तें मरि परैं, तो मनुष्य तो पांचन को सेवन करत है, सो निश्चय काल इनको भक्षन करे।

तासों नाद पांचो मारि। सो जैसे चोपड में गोट मारत हैं। और चोपड में सब तें छोटो दाव तीनि काने हैं, सो कोऊ नांही चाहत है। तैसे ही तू तीन-तामस, राजस, सात्त्विक यह माया के गुण हैं, सो सगरो संसार सोइ चोक है, सो यामें चतुराई सों डार। चतुराई यह, जो-इनकों डारि पाछे इनकी ओर देखे मति। सो जैसे चोपड़ में सब की सुध बुध भूलि जात हैं, सो सब ठग्यो गयो। सो तैसे काम क्रोधादि जंजाल है,और स्त्री रूप भगवद् माया है। सो यह सगरे जगत कों ठगेगी। सो जैसें चौपड़ खेलि के हारिकें सब दोऊ हाथ झारि के उठें, सो तैसे ही श्रीठाकुरजी के पदकमल के भजन बिना दोऊ हाथ झारिके या मनुष्य ने देह खोई। जो कछु भलो परोपकार संग नाहीं कियो।

सो या प्रकार वैष्णव सुनि के सूरदास के ऊपर बहोत प्रसन्न भये।

वार्ताप्रसंग ३—और सूरदास कों जब श्रीआचार्यजी देखते तब कहते, जो-आवो सूरसागर! सो ताको आसय यह है,जो-समुद्र में सगरो पदार्थ होत है। तैसे ही सूरदास ने सहस्रावधि पद किये हैं। तामें ज्ञान वैराग्य के न्यारे न्यारे भक्ति भेद, अनेक भगवद् अवतार. सो तिन सबन की लीला को बरनन कियो है।

पाछे उनके पद जहां तहां लोग सीखि के गावन लागे। सो तब (एक समय) तानसेन ने एक पद सूरदास को सीखि के अकबर बादशाह के आगे गायो। सो पद:—

राग नट—'यह सब जानो भक्त के लच्छन।'

यह सुनि देसाधिपति अकबर ने कह्यो, जो-ऐसे लच्छन वारे भक्तन सों मिलाप होय तो कहा कहिये? सो तानसेन ने कही, जो-जिननें यह कीर्तन कियो है सो व्रज में रहत हैं। और सूरदासजी उनको नाम है।

यह सुनि देसाधिपति के मनमें आई जो-कोई उपाय करि के सूरदास सों मिलिये। पाछें देसाधिपति दिल्ली तें आगरा आयो। तब अपने हलकारान सों कह्यो जो व्रज में सूरदासजी श्रीनाथजी के पद गावत हैं, सो तिनको ठीक पारिके मोकों श्रीमथुराजी में खबरि दीजियो, और (जो) यह बात सूरदास जानें नाहीं।

तब उन हलकारान ने श्रीनाथजीद्वार में आयके खबरि काढ़ी। तब सुनी जो-सूरदासजी तो मथुराजी गये हैं। सो तब वे हलकारा श्रीमथुरा में आयके सूरदास कों नजरि में राखे, जो या समय यहाँ बैठे हैं। तब उन हलकारान ने देसाधिपति कों खबरि करी, जो-अजी साहब! सूरदासजी तो मथुराजी में हैं।

तब सूरदास कूं अकबर बादशाह ने दस पांच मनुष्य बुलायबे कों पठाये। सो सूरदासजी देसाधिपति के पास आये। तब देसाधिपति ने उनको बहोत आदर सन्मान कियो। पाछे सूरदासजी सों देसाधिपति ने कह्यो जो-सूरदासजी! तुमने विष्णुपद बहोत किये हैं, सो तुम मोकों कछु सुनावो।

तब सूरदास नें अकबर बादशाह आगे यह पद गायो। सो पद-

राग बिलावल:—'मनारे तू कर माधो सों प्रीत।'

भावप्रकाश—सो यह पद कैसो है, जो या पद को सुमिरन रहै तब भगवत् अनुग्रह होय, और मनकूं बोध होय। और संसार सों वैराग्य होय, और श्रीभगवान के चरणारविंद में मन लगे। तब दुःसंग सों भय होय, सत्संग में मन लगे। सो देहादिक में ते स्नेह घटे, और लौकिक आसक्ति छूटे। जो भगवान को प्रेम है, सो अलौकिक है। सो ताके ऊपर प्रीति बढ़े।

यह सुनि देसाधिपति बहोत प्रसन्न भयो। पाछे देसाधिपति

के मनमें यह आई जो-सूरदासजी की परीक्षा देखूं। सो भगवान् को आश्रय होयगो, तो ये मेरो जस गावेगो नाहीं।

सो यह विचार के देसाधिपति नें सूरदास सों कही, जो-श्रीभगवान ने मोकों राज्य दियो है, सो सगरे गुनीजन मेरो जस गावत हैं, सो तिनकों मैं अनेक द्रव्यादिक देत हौं। तासों तुमहू गुनी हो, सो तुमहू मेरो कछू जस गावो। सो तिहारे मन में जो इच्छा होय सो माँगि लेहू।

सो यह देसाधिपति ने कह्यो। तव सूरदासजी नें यह पद गायो—
राग केदारो:—'नाहिन रह्यो मन में ठौर।'

सो यह पद सुनिके देसाधिपति ने अपने मनमें विचारयो,जो-ये मेरो जस काहे कों गावेंगे? जो इनकों कछू लेवे को लालच होय तो ये मेरो जस गावें। ये तो परमेश्वर के जन हैं. सो ये तो ईश्वर को जस गावेंगे।

सो सूरदासजी या कीर्तन में पिछले चरन में कहे हैं, जो—
'सूर! ऐसे दरस कों ये मरत लोचन प्यास।'

सो देसाधिपति ने सूरदास सों कह्यो, जो-सूरदास! तुम्हारे तो नेत्र हैं नाहीं, सो प्यासे कैसे मरत हैं? सो यह तुम कहा कहे? तव सूरदासजी ने कही, जो-या वात की तुमकों कहा खबरि है? जो ये लोचन तो सवके हैं, परन्तु भगवान के दरसन की प्यास काहूकों है? जो श्रीभगवान के दरसन के जे प्यासे नेत्र हैं, सो तो सदा भगवान के पास ही रहत हैं। सो स्वरूपानंद को रसपान छिन छिन में करत हैं, और सदा प्यासे मरत हैं।

यह सुनि अकवर बादशाह ने कही, जो-इनके नेत्र तो परमेश्वर के पास हैं, सो परमेश्वर कों देखत हैं, औरकों देखत नाहीं।

तव बादशाह ने सूरदास के समाधान की इच्छा कीनी। दोय चारि गाम तथा द्रव्य वहोत देन लाग्यो, सो सूरदास ने कछू नाहीं लियो। तव अकवर बादशाह सूरदासजी सों कहे,जो-बाबा साहिव! कछू तो मोकों आज्ञा करिये।

तव सूरदासजी ने कही,जो-आज पाछे हमकों कवहू फेरि मति बुलाइयो, और मोसों कबहू मिलियो मति।

भावप्रकाश—सो अकवर बादशाह विवेकी हतो। सो काहेतें? जो ये योगभ्रष्ट तें म्लेच्छ भयो है। सो पहले जन्म में ये बालमुकुन्द ब्रह्म-

चारी हतो सो एक दिन ये बिना छाने दूध पान कियो. तामें एक गाय को रोम पेट में गयो। सो ता अपराध तें यह म्लेच्छ भयो है।

सो सूरदास कों दंडवत करिके समाधान करिके विदा किये।

वार्ताप्रसंग ४—ता पाछे सूरदास श्रीनाथजीद्वार आये। पाछे देसाधिपति ने आगरे में आयके सूरदास के पदन की तलास कीनी। जो कोऊ सूरदासजी के पद लावे तिनकूं रुपैया और मोहौर देय। सो वे पद फारसी में लिखाय के बांचे। सो मोहौर के लालच सों पंडित कवीश्वर हू सूरदास के पद बनाय के लाये। तब अकबर पातसाह ने उनसों कह्यो जो-यह पद सूरदासजी को नांही। सो ये पैसा के लिये पद की चोरी करत हैं। तब पंडित कवीश्वरन ने कही, जो-तुम कैसे जाने जो यह सूरदास को पद नांही? जो यह तो सूरदास को ही पद है।

तब पातसाह ने अपने यास सों सूरदासको पद अपने कागद के ऊपर लिखायो। और वे पंडित कवीश्वर सूरदासको भोग (छाप) को बनाय के लाये सो दोऊ कागद जल में धरिके कह्यो जो-ईश्वर सांचे होय तो या बात को न्याव करि दीजो। सो यह कहि जल में डारि दिये। सो उन पंडित जोतसीन को पद बनायो हतो सो कागद जल में भीजि गयो; और सूरदास को पद हतो सो कागद जल में नांही भीज्यो।

भावप्रकाश—सो या भांति सों, जो-जिन भगवदीयन कों भगवान मिले हैं, उनके पद जो गायगो सो संसार सों तरेगो। और चतुराई करि लौकिक मनुष्य के काव्य के कीर्तन कवित्त जो गावेगो, सो या प्रकार सों संसार में डूबेगो।

तब सगरे पंडित कवीश्वर लज्जा पायके नीचो माथो करके अपने घरकों गये सो वे सूरदासजी श्रीआचार्यजी के एसे परम कृपापात्र भगवदीय हते।

वार्ताप्रसंग ५—सो इन सूरदासजी ने श्रीनाथजी के कीर्तन की सेवा बहोत दिन तांई करी। सो बीच बीच में जब कुंभनदासजी, परमानंददासजी के कीर्तन के ओसरा आवते, तब सूरदासजी श्रीगोकुल में श्रीनवनीतप्रियजी के दरसन कूं आवते। सो एक दिन सूरदासजी श्रीगोकुल आये हते, सो बाललीला के पद बहोत गाये। सो सुनिकें श्रीगुसांईजी आप बहोत प्रसन्न भये। तब श्रीगुसांईजी

आप एक पलना को कीर्तन करिकें संस्कृत में सूरदास कों सिखायो। सो ता समय श्रीनवनीतप्रियजी पालने में विराजे, तब सूरदास ने श्रीगुसांईजी कृत यह पलना गायो। सो पद—

राग रामकली:—'प्रेंख पर्यंक शयनं।'

सो यह पद सूरदास ने श्रीनवनीतप्रियजी के आगे गायो। पाछे या पदके अनुसार सूरदासजीने वहोत पद करिके गाये। सो पद—

१ 'प्रेंख पर्यंक गिरिधरन सोहे।'

सो यह पलना को कीर्तन सूरदासजी ने गायो। पाछे बाल-लीला के पद वहोत गाये। ता पाछे यह पद गाये। सो पद—

राग बिलावल:-१ 'देख सखी इक अद्भुत रूप।'

२ 'सोभा आज भली बनि आई।'

इत्यादिक पद सूरदासजीने श्रीनवनीतप्रियजी के आगे गाये। तव श्रीगुसांईजी और श्रीगिरधरजी आदि सब बालक कहन लागे जो-हम जा प्रकार श्रीनवनीतप्रियजी को सिंगार करत हैं, सो ताही प्रकार के कीर्तन सूरदासजी गावत हैं। तातें इन सूरदास के ऊपर बहोत ही कृपा है।

वार्ताप्रसंग ६—तापाछें श्रीगुसांईजी आप तो श्रीनाथजीद्वार पधारे। सो सूरदासजीने हू श्रीनाथजीद्वार जाइवेको विचार कियो। तब श्रीगिरधरजी आदि सब बालकनने कह्यो, जो सूरदासजी! दोय दिन श्रीनवनीतप्रियजी कों और हू कीर्तन सुनावो, पाछे तुम जाइ-यो। तव सूरदासजी श्रीगोकुल में रहे। सो तब श्रीगिरधरजी सों श्रीगोविंदरायजी, श्रीबालकृष्णजी और श्रीगोकुलनाथजी ये तीनों भाई कहें जो-ये सूरदासजी, जेसो सिंगार श्रीनवनीतप्रियजी को होत है,तेसेही वस्त्र आभूषण वरणन करत हैं। सो एक दिन अद्भुत अनोखो सिंगार करो, और सूरदासजी कों जनावो मति, सो देखें, ये कीर्तन कैसो करत हैं?

तव गिरधरजी ने कह्यो जो-ये सूरदासजी भगवदीय है, सो इनके हृदय में स्वरूपानंद को अनुभव है। तासों जेसो तुम सिंगार करोगे, सो तेसो ही पद सूरदासजी वरणन करिके गावेंगे। तासों भगवदीय की परीक्षा नांही करनी। तब उन तीनों बालकने श्रीगिर-धरजीसों कही जो हमारो मन है,सो यामें कछू बाधा नांही है। तब श्रीगिरधरजी कहे जो-सवारे श्रीनवनीतप्रियजी को सिंगार करेंगे

सो अद्भुत सिंगार करेंगे। ता पाछे सवारे श्रीगिरधरजी तीनों बालकन सहित श्रीनवनीतप्रियजी के मंदिर में पधारे. और सेवा में न्हाये। पाछें श्रीनवनीतप्रिय जी कों जगाये, ता पाछें भोग धर्यो। फेरि न्हवाय के सिंगार धरावन लागे। सो अषाढ के दिन हते तातें गरमी वहोत। सो श्रीनवनीप्रियजी कों कछु वस्त्र नांही धराए। सो मोतीन की दोय लर मस्तक पर,मोती के वाजू पोहोंची,कटि-किंकनी नूपुर,हार,सब मोतिनके.तिलक नकवेसर करनफूल और कछु नांही। सो सूरदासजी जगमोहन में बेठे हते,सो इनके हृदयमें अनुभव भयो। तव सूरदासजी अपने मन में विचारे जो-आजु तो श्रीनवनीतप्रियजी को अद्भुत सिंगार कियो है। एसो सिंगार तो मैंने कबहू देख्यो नांही, और सुन्योहू नांही, जो केवल मोती धराए हैं, और वस्त्र तो कछु धराए हैं नांही। तासों आज मौकों कीर्तन हू अद्भुत गायो चहिये।

सो जब सिंगार के दरसन खुले, तब श्रीगिरधरजी ने सूरदासजी कों बुलाये, और कह्यो जो-सूरदासजी! दरसन करो, और कीर्तन गाओ। तव सूरदासजी ने बिलावल में यह कीर्तन करिके श्रीनवनीत प्रियजी कों सुनायो। सो पद—

'देखेरी हरि नंगम नंगा'

सो सुनिके श्रीगिरिधरजी आदि सगरे वालक अपने मनमें बहोत प्रसन्न भये। और सूरदास सों कहन लागे जो-सूरदासजी! यह तुम कहा गाये? तव सूरदासजी ने बिनती कीनी, जो-महाराज! जेसो आपने अद्भुत सिंगार कियो,तेसो ही मैं अद्भुत कीर्तन गायो है। तब सगरे बालक यह सुनिके सूरदासजी के ऊपर वहोत प्रसन्न भये। सो ये सूरदासजी श्रीआचार्यजी महाप्रभु के एसे परम कृपा पात्र भगवदीय हते, सो इनकों श्रीठाकुरजी नित्य हृदय में अनुभव करावते। ता पाछे श्रीगिरधरजी आप सूरदासजी कों संग लेके श्रीनाथजीद्वार आये। तव श्रीगिरिधरजी ने सब समाचार श्रीगुसांईजी सों कहे जो-या प्रकार अद्भुत सिंगार श्रीनवनीतप्रियजी को सगरे वालकन के मनोरथ सों कियो। सो सूरदासजी ने एसो ही कीर्तन कियो। सो इनके हृदय में अनुभव है।

तब श्रीगुसांईजी आपु श्रीगिरिधरजीसों कहे-जो सूरदासजीकी कहा बात है? जो-ये पुष्टिमार्ग के जहाज है। सो भगवल्लीला को

अनुभव इनकों अष्ट प्रहर हैं। सो ये सूरदासजी श्रीआचार्यजीके ऐसे कृपापात्र भगवदीय हते।

वार्ताप्रसंग ७-और सूरदासजी के पास एक व्रजवासी को लरिका हतो. सो सब कामकाज सूरदासजी को करतो। ताको नाम गोपाल हतो। सो एकदिन सूरदासजी महाप्रसाद लेन कों बैठे, तब वा गोपालसों सूरदासजी कहे जो-मोकूं तू लोटी में जल भरि दीजो। तब गोपाल व्रजवासी ने कह्यो जो-तुम महाप्रसाद लेन कों बैठो जो मैं जल भरि देऊंगो। सो यह कहिके गोपाल तो गोबर लेनकों गयो। सो तहां दोय चारि वैष्णव हते सो तिनसों बात करन लाग्यो, तब सूरदास कों जल देनो भूलि गयो। और सूरदासजी तो महाप्रसाद लेन बैठे, सो गरे में कौर अटक्यो। तब बांये हाथ सों लोटा इत उत देखन लागे, सो पायो नांही। तब गरे में कौर अटक्यो सो बोल्यो न जाय। तब सूरदास व्याकुल भये। सो इतने में श्रीनाथजी सूरदासजी के पास आयके अपनी झारी धरि आए। तब सूरदासजीने झारी में ते जल पियो।

तब गोपाल व्रजवासी कों सुधि आई, जो-सूरदासजी कों मैं जल नांही भरि आयो हूं। सो दोरयो आयो। इतने में सूरदास महाप्रसाद लेकें आये। तब गोपाल व्रजवासीने आयके सूरदास सों कह्यो जो-सूरदासजी! तुम महाप्रसाद ले उठे, सो तुमने जल कहां ते पियो? जो मैं तो गोबर लेन गयो हतो, सो वैष्णव के संग बात करत में भूलि गयो। तासों अब मैं दोरयो आयो हूं। तब सूरदासने व्रजवासी सों कह्यो जो-तेंने गोपाल नाम काहे कों धरायो? जो गोपाल तो एक श्रीनाथजी हैं। सो तासों आज मेरी रक्षा करी। नातर गरे में ऐसो कौर अटक्यो हतो. सो जल बिना बोल निकसे नांही। तब मैं व्याकुल भयो, तब हाथ में जल की झारी आई, सो मैं जल पान कियो। तासों मैंने जान्यो जो तेंने धरयो होयगो। और अब तू कहत है जो मैं नांही हतो। सो तातें मंदिर वारो गोपाल होयगो। जो देखि तो झारी कैसी है।

तब गोपाल व्रजवासी जहां सूरदासजी महाप्रसाद लिये हते तहाँ आय के देखें तो सोने की झारी है। सो उठाय के गोपाल सूरदासजी के पास आय के कह्यो, जो-ये झारी तो मंदिर की है। सो तब सूरदास ने वा गोपाल व्रजवासी सों कह्यो, जो-तैनें बहोत

बुरो काम कियो, जो श्रीठाकुरजी कों इतनो श्रम करवायो। जो मेरे लिये झारी लेकें श्रीठाकुरजी कों आनो पर्यो। सो या प्रकार सूरदासजी ने गोपालदास सों कह्यो,जो-ये झारी तू जतन सों राखियो। और जब श्रीगुसांईजी आपु पोंढि के उठें तब उनकों सोंपि आइयो। तब गोपालदास ने झारी लेके श्रीगुसांईजी के पास आय, दंडवत करि आगे राखी। तब श्रीगुसांईजी आपु कहे ये झारी तेरे पास कैसे आई? जो ये झारी ते श्रीगोवर्द्धनधर की है। तब गोपालदास ने श्रीगुसांईजी सों बिनती कीनी, जो-महाराज! यह अपराध मोसों पर्यो है। पाछें सब बात कही।

तब यह बात सुनिके श्रीगुसांईजी आप तत्काल स्नान करिकें झारी कों मँजवाय,दूसरो वस्त्र लपेटिकें मंदिर में बेगि ही झारी लेके पधारे। पाछे श्रीगोवर्द्धनधर कूं जलपान कराइ के कहे, जो-आज तो सूरदास की बड़ी रक्षा कीनी। सो तुम बिन कौन वैष्णव की रक्षा करे? तब श्रीनाथजी ने कही, जो-सूरदास के गरे में कौर अटक्यो सो व्याकुल भये, तासों झारी धरि आयो।

भावप्रकाश—सो काहेते? जो सूरदास व्याकुल भये, सो मैं ही व्याकुल भयो। जो भगवदीय है सो मेरो स्वरूप है।

ता पाछें उत्थापन के किंवाड़ खोले। सो सूरदासजी आइ के उत्थापन के दरसन किये। सो उत्थापन समे को भोग श्रीगुसांईजी श्रीनाथजी कों धरि सूरदास के पास आइके कहे, जो आज गोपाल ने तिहारे ऊपर बड़ी कृपा करी है। तब सूरदासजी ने कह्यो, जो-महाराज! यह सब आपकी कृपा है। नाहिं तो श्रीनाथजी मो सरीखे पतितन कों कहा जानें? जो सब श्रीआचार्यजी की कानि तें अंगीकार करत हैं। तब श्रीगुसांईजी आपु कहे जो-तुम बड़े भगवदीय हो। जो भगवदीय बिना ऐसी दैन्यता कहां मिले? सो सूरदासजी श्रीआचार्यजी के ऐसे कृपापात्र भगवदीय हते।

वार्ता प्रसंग ८—श्रीनाथजी के मंदिर के नीचे गोपालपुर गाम है। सो तहां एक बनिया रहतो। सो ऐसे गृहकार्य में और लोभ में आसक्त हतो जो कबहुं श्रीनाथजी को दरसन नाहीं कियो। और श्रीगुसांईजी की सरन हू नाहीं आयो। सो गोपालपुर में परवत के नीचे वाकी दुकान हती। सो वह बनिया गोपालपुर में दुकान खोलतो सो पहले जो कोई वैष्णव श्रीनाथजी के दरसन करि

के परवत के ऊपर सों आवतो ताकों बुलाय के पहले पूछतो, जो-आज श्रीनाथजी को कहा सिंगार है? सो वह वैष्णव याकों बतावतो। सो ताही प्रकार वह बनिया सब वैष्णवन के आगे श्रीनाथजी के दरसन की बड़ाई करतो, जो-देखो, आज श्रीनाथजी को कैसो सिंगार भयो है! कैसो अलौकिक दरसन भयो है!

या भांति सों सबतें कहतो, आप दरसन कों कबहू नांही आवतो, और वैष्णवन कों दिखाइवे के लिये माला पहरि लेतो, और आछो तिलक, आछो छापा लगावतो। और वैष्णव आगे प्रेम की वार्ता करतो। सो वे वैष्णव प्रसन्न होय के वाकों वैष्णव जानिकें सीधो सामग्री लेते। सो या प्रकार पाखंड करि विश्वास दे देके सब वैष्णवन कों ठगे। सो द्रव्य हू बहोत भेलो कियो, परन्तु कोड़ी एक खरचे नाहीं। सो ऐसे करत साठ बरस को भयो। तब एक दिन सूरदास-जी सों वा बनिया ने कही, जो-सूरदासजी! आज तुम देखो, कैसो सुंदर सिंगार भयो है। और तुम तो कोई दिन मेरी हाट सों सीधो सामान लेत नाहीं हो, और कोई दिन मेरी हाट ऊपर तुम आवत नाहीं हो। सो तुम ऐसे वैष्णव गुनी हो सो मेरो अपराध कहा, जो मेरी हाट तें सोदा लेत नाहीं? और यह हाट तिहारी है। मैं तो तुम वैष्णवन को दास हूँ तासों मो पर कृपा करो।

या भांति बनिया के बचन सुनि सूरदास अपने मनमें विचारी जो देखो, बनिया कैसो सुंदर बोलत है, जो ऊपर सों लोभसों कपट करत है, तासों अब याको कपट छुड़ावनो। और बनियाने कोई दिन श्रीनाथजी के दरसन किये नाहीं सो याकों दरसन हू करावनो, और याकों वैष्णव हू कराय देनो। तब यह विचारि के सूरदास ने वा बनिया सों कही जो-तैं जनम भर में कोई दिन दरसन नाहीं कियो है, सो मैं तोकों जानत हों। और तू वैष्णव है नाहीं, सो तासों मैं तेरी हाट पर नाहीं आवत हों। तू सांची कहि दे, जो-तैंने जनम भर में कोई दिन श्रीनाथजी के दरसन किये हैं। तब यह वचन सुनिके बनिया अपने मन में बहोत ही खिस्यानो होय गयो, और वह बनिया सूर-दास सों बोल्यो, जो-सूरदासजी! तुम यह बात और काहू के आगे मति कहियो। जो मैं यातें दरसन कों नाहिं आवत हों, जो हाट छोड़ि दरसन कों जाऊं तो यहां वैष्णव सोदा कों फिरि जाय, जो और की हाट सों लेन लागें, तब मैं खाऊं कहां ते? और कोऊ मेरे

पास ऐसो मनुष्य नाहिं है, जो जा समय दरसन के किवाड़ खुलें ता समय मोकों आय के खबर करे, जातें मैं वेगि ही दौरिके दरसन करि आऊँ। तब वा वनिया तें सूरदास ने कही. जो-मैं जा समय आईकें खबरि करूं सो ता समय तू चलेगो? तब बनिया ने कही, जो-तुम आइके खबरि करियो, जो-मैं चलूंगो। जो मेरे मन में दरसन की वहोत है। तब सूरदासजी कहे, जो-मैं उत्थापन के समय आऊंगो। सो यह कहिके सूरदासजी तो गये। पाछे जब उत्थापन को समय भयो तब शंखनाद भये, तब सूरदासजी ने आइके वा बनियासों कही, जो-अब शंखनाद भये हैं तासों दरसन को समय है, सो अब चलो। तब वा बनिया ने सूरदासजी सों कह्यो जो-या समय गाँव के लोग सौदा लेन आवत हैं, सो भोग के किवाड़ खुलें ता समय तुम मोकों खबरि करियो।

तब सूरदासजी ने पर्वत ऊपर आइके श्रीनाथजी के दरसन किये, ओर कीर्तन किये। ता पाछे श्रीनाथजी के भोग के दरसन को समय भयो, तब सूरदासजी परवत सों नीचे उतरि के वा वनिया सों कहे, जो- दरसन को समय है, तासों अब तो दरसन कों चल। तब वा बनिया ने सूरदास सों कह्यो,जो-सूरदासजी! अब तो बनतें गाय आइवे को समय भयो है, तासों मंदिर में चलूं तो गाय आइके मेरो सगरो अनाज खाय जाँय। तासों अब तुम सेन आरती के समय जताइयो सो तहां तांई गाय सब अपने अपने घर जाँयगी।

तब सूरदासजी फेरि भोग के समय जायके दरसन किये। ता पाछें संध्या के दरसन किये। पाछें सेन आरती के दरसन को समय भयो तब सूरदासजी ने आइके वनिया कों खबरि कीनी, जो-चल अब सेन आरती के दरसन को समय है। तब वा बनिया ने सूरदास सों कही, जो-सूरदासजी! आज तुमकों वहोत श्रम भयो है। परन्तु अब दीया बारिवे को समय है, सो काहेतें. जो-अब या समय लक्ष्मी आवत है, तासों दीया न होय तौ लक्ष्मी पाछी फिरि जाय। और कोई मेरी हाटतें अन्न चुराय लेय तो मैं कहा करूं? तासों अब मैं सवारे प्रातःकाल दरसन करि ता पाछें हाट खोलूंगो। तासों मोकों मंगला के समय आइके खबरि करियो। आज मैंने तुमसों वहोत फेरा खवाये। तब सूरदासजी मंदिर में आइके श्रीनाथजी के दरसन किये। ता पाछें सेन समय कीर्तन गाये। पाछें प्रातःकाल भयो, तब न्हाय

के सूरदासजी ने आइके वा वनिया सों कही, जो-मंगला को समय है, सो अब तो चल। तब वा वनिया ने कही, जो-सूरदासजी! अब ही तो हाट बुहारि के मांडनी है। तासों बोहनी के समय कोई गाहक फिरि जाय तो सगरो दिन खाली जाय। तासों हाट लगाय के सिंगार के दरसन कों चलूंगो। तासों सिंगार के समय कहियो। तब सूरदासजी ने मंगला आरती के दरसन किये। पाछें सूरदासजी सिंगार के समय फेरि आये। तब वा वनिया ने कही, जो-अब ही मैं आछी काहू की बोहनी कीनी नाहीं हूँ, और गाय डोलत हैं। तासों अब राजभोग के दरसन अवश्य करूंगो। सो देखो तुम कालिह तें मेरे लिये वहोत फिरत हो, जो तुम बड़े भगवदीय हो। सो सूरदासजी फेरि श्रीनाथजी के दरसन कों परवत पर आये। तब श्रीनाथजी के सिंगार के दरसन किये कीर्तन किये। ता पाछें राजभोग आरती को समय भयो। तब सूरदासजी ने वा बनिया सों कह्यो, जो-अब चलोगे? तब वा वनिया ने कह्यो, जो-या समय मैं कैसे चलूं? जो अब वैष्णव राजभोग के दरसन करि के नीचे आवेंगे। सो सब या समय सीधा सामग्री लेत हैं। जो मैं बूढो, कब आऊँ परवत सों उतरि कें, कैसे वेगि आयो जाय? और याही बखत बिक्री को समय है। जो याही समय कछू मिले सो मिले। तासों उत्थापन के समय दरसन करूंगो। या प्रकार सूरदासजी वा वनिया के साथ तीन दिन तांई रहे। परंतु वह वनिया ऐसो लोभी सो दरसन कों नांहि गयो। ता पाछे चौथे दिन न्हाय के सूरदासजी प्रातःकाल मंगला के दरसन को चले। तब सूरदासजी अपने मन में विचारे–जो देखो या वनिया कों तीन दिन भये, परंतु दरसन कों नांही गयो। तासों आज जो यह न चले, तो याकों भय दिखावनो, और दरसन करावनो।

यह विचारिके सूरदासजी वा वनिया कों पास आय के कह्यो, जो-तीन दिन बीति चुके मोकों फिरते, परि तू दरसन कों नांही चल्यो। जो आज तो चल। तब वा वनियानें कह्यो, जो-कछू बोहनो करि सिंगार के दरसन करूंगो। तब सूरदासजी वा वनिया सों कही, जो-अब तो मैं तेरी बात सगरे वैष्णवन में प्रगट करूंगो। जो यह वनिया भूठो वहोत है, सो कबहू याने श्रीनाथजी को दरसन नांही कियो। और यह वैष्णव हू नांही है। अब तेरे पास कोई वैष्णव सोदा लेन आवेगो तो मैं तेरे दोहा, चौपाई, पद कुटिलता के करिके वैष्णवन

कों सुनाऊंगो। सो या भाँति कहिके भैरव राग में एक पद गायो।

राग भैरव—'आज काम कालि काम परसों काम करनो।'

सो यह पद सूरदासजी नें वा बनिया कों वाही समय करिके सुनायो, सो तब तो वा बनिया अपने मन में डरप्यो। पाछें सूरदास जी के पाँवन परि वा बनिया ने बिनती कीनी, जो तुम मेरे दोहा कवित्त कछू वरनन मति करो, और मेरी बात कोई सों प्रगट मति करो। जो मैं अबही तिहारे संग चलूंगो। पाछे वह बनिया सूरदासजी के संग आयो। तब मंगला के किंवाड़ खुले, तब सूरदासजी नें श्रीनाथजी सों कह्यो, जो–महाराज! यह बनिया दैवी जीव है, सो तासों अब याके मनको आकर्षन करिके याको उद्धार करो। सो काहेतें? जो यह तिहारी ध्वजा के नीचे रहत है। तब श्रीनाथजी कहें जो-मेरे पास रहत है, सो कहा मोकों जानत है? तुम सब भगवदीयन की कृपा होय सो तब ही मोकों पावे।

भावप्रकाश–सो काहेते? जो गंगा यमुना में अनेक जीव हैं सो कहा कृतार्थ हैं? जो माखी मच्छर चेंटी आदि श्रीप्रभु के बहोत जीव हैं, सो कहा कृतार्थ हैं? जो भगवदीयन को संग होय तब ही कृतार्थ होय। सो तब ही श्रीप्रभून कों पावे। भगवदीयन के संग सों दासभाव होय तब ही कृपा होय।

पाछे श्रीनाथजी ने वा बनिया कों ऐसो दरसन दियो, सो वाको मन हरि लीनो। सो जब मंगला के दरसन होय चुके तब वा बनिया ने सूरदासजी के चरन पकरि के विनती कीनी, जो-महाराज! मेरो जनम सगरो वृथा गयो, द्रव्य जोरवे में, मेरे पास द्रव्य बहोत हैं, सो अब तुम चाहो तहां या द्रव्य को खरच करो। और मोकों श्रीगुसांईजी को सेवक कराय के वैष्णव करो। तब सूरदासजी ने या बनिया सों कह्यो, जो–तू न्हाय के काहू कों छूइयो मति, यहां आय बैठियो। सो इतने में श्रीगुसांईजी आप सिंगार करि चुके, तब सूरदासजी नें श्रीगुसांईजी सों बिनती कीनी, जो–महाराज! या बनिया कों सरन लीजिये। तब श्रीगुसांईजी आप श्रीमुख सों सूरदासजी सों कहे, जो–सूरदासजी! तुमने भलो साठि बरस को बूढ़ो बेल नाथ्यो। तुम बिना या बनिया को सगरो जनम योंही जातो। पाछे श्रीगुसांईजी आप वा बनिया कों बुलाय कें श्रीनाथजी के सन्निधान बैठाय के नाम-ब्रह्मसंबंध करवायो। सो वा बनिया की

बुद्धि निरमल होय गई। सो तब सगरे दरसन नित्य नेमसों करन लाग्यो। और वा वनिया नें श्रीगुसांईजी कों वहोत भेट करी। और श्रीनाथजी के वागा वस्त्र सामग्री कराय आभूषण कराये, और अंगीकार कराये। ता पाछे एक दिन वा वनिया ने सूरदासजी सों कही, जो-सूरदासजी! तिहारी कृपातें मैं श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन पायो. और वैष्णव भयो। तासों अब ऐसी कृपा करो, जो-याही जनम में मेरो अंगीकार करैं, और मोकों संसार को दुःख सुख बाधा न करे। तब सूरदासजी ने एक पद करिके वा बनिया कों सिखायो।

राग बिलावल—'कृष्ण सुमिर तन पावन कीजे।'

तब वा वनिया कों दृढ़ भक्ति भई। लौकिक की वासना सब दूरि भई। सो ज्ञान वैराग्य सर्वोपरि भक्ति भई। सो श्रीनाथजी के चरण कमल में दृढ़ आसक्ति और स्वरूपानंद को अनुभव भयो। तब रस में मगन होय गयो। सो या प्रकार सूरदासजी के संगतें ऐसो लोभी वनिया हू कृतार्थ भयो। सो वे सूरदासजी ऐसे भगवदीय हते।

भावप्रकाश—सो काहे तें? जो-मूल में दैवी जीव है। सो श्रीललिताजी की सखी है। सो लीला में याको नाम 'विरजा' है। सो सूरदास को संग पायके लीला को अनुभव भयो। तातें भगदीयन को संग सर्वोपरि है।

वार्ताप्रसंग ६—और एक समय श्रीगोकुल तें परमानंद आदि सब वैष्णव दस पंद्रह सूरदासजी सों मिलवे कों और श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन कों आये। सो सेनआरती के दरसन करि सूरदासजी के पास आये। तब सूरदासजी ने सगरे वैष्णवन को वहोत आदर सन्मान कियो, और ताही समय कीर्तन गाये।

राग कान्हरो—१ 'हरिजन संग छिनक जो होई।'
२ 'प्रभु जन पर प्रसन्न जब होई।'
३ 'हरि के जन की अति ठकुराई।'
राग हमीर— ४ 'जा दिन संत पाहुने आवें।'

सो या प्रकार सूरदासजी ने अनेक पद वैष्णवन कों सुनाये। तब सब वैष्णव वहोत प्रसन्न भये। पाछे सूरदासजी ने उन वैष्णवन सों कह्यो, जो-कछू मो पर कृपा करिके आज्ञा करिये। तब सब वैष्णवन ने सूरदासजी सों कह्यो. जो-ज्ञान, योग, परम तत्व और

श्रीठाकुरजी को प्रेम, स्नेह को स्वरूप सुनाओ । तब सूरदासजी ने यह कीर्तन सुनायो । सो पद—

राग बिहागरो—'जोग सों कोउ नांही हरि पाये।'

सो या भांति अनेक कीर्तन करि वैष्णवन कों समुझाये । तब सगरे वैष्णव प्रसन्न होयकें कहे, जो-सूरदास जी के ऊपर बड़ी भगवत् कृपा है। ता पाछें सवारे भये सगरे वैष्णवन ने श्रीनाथजी के दरसन किये । ता पाछें सूरदासजी सों विदा होय के गोकुल आये । सो वे सूरदासजी श्रीआचार्यजीके एसे परम कृपापात्र भगवदीय हते ।

वार्ताप्रसंग १०—सो या प्रकार सूरदासजीने वहोत दिन तांई भगवत् सेवा कीनी । ता पाछें जानें जो-भगवद् इच्छा मोकों बुलायवे की है ।

भावप्रकाश—सो काहेत ? जो प्रभुन की यह रीति है, जो जब वैकुंठ सों भूमि पर प्रकट होयवे की इच्छा करत हैं, तब वैकुंठवासी जो भक्त हैं, सो पहले भूमि पर प्रकट करत हैं। ता पाछें आपु श्रीभगवान प्रकट होय भक्तन के संग लीला करत हैं । पाछें अपुने भक्तन को या जगत सों तिरोधान होय ता पाछें वैकुंठ में लीला करत हैं। सो जैसें नंद, जसोदा, गोपीजन, सखा, वसुदेव, देवकी, यादव, सब प्रकट पहलेही किये । ता पाछे आप प्रकट होयकें लीला भूमि पर करिके पाछें जादवनकूं मूसल द्वारा अंतर्धान करि लीला किये । सो श्रीनंदरायजी, श्रीजसोदाजी, गोपीजन कों अंतर्धान लौकिक लीला नांहि दिखाये । सो तैसेही श्रीआचार्यजी, श्रीगुसांईजी श्रीपूर्णपुरुषोत्तम को प्राकट्य है। सो लीला—संबंधी वैष्णव प्रकट किये । अब श्रीआचार्यजी आप अंतर्धान लीला किये। और श्रीगुसांईजी कों करनो है। सो पहले भगवदीयन कूं नित्यलीला में स्थापन करिके आपु पधारेंगे । सो भगवदीय को (अपनी) लौकिक अंतर्धानलीला दिखावत नांही । सो जैसें चाचा हरिवंशजी सों कहे जो-तुम गुजरात जावो । सो या प्रकार गुजरात पठाय के अंतर्धान लीला किये । सो सूरदासजी कूं नित्यलीलामें बुलायवेकी इच्छा श्रीगोवर्धनधर की है ।

सो तब सूरदासजी मन में विचारे जो-मैं तो अपने मन में सवा लाख कीर्तन प्रकट करिवे को संकल्प कियो है,सो तामेतें लाख कीर्तन तो प्रकट भये हैं । सो भगवद् इच्छा तें पचीस हजार कीर्तन और प्रकट करने । ता पाछे यह देह छोडिके अंतर्धान होय जानो।

सो या प्रकार सूरदासजी अपने मन में विचार करत हते। वाही समय श्रीगोवर्द्धननाथजी आपु प्रकट होयके दरसन दे के कह्यो जो-सूरदासजी ! तुमने जो सवा लाख कीर्तन को मन में मनोरथ कियो है, सो तो पूरन होय चुक्यो है, जो पचीस हजार कीर्तन मैंने पूरन करि दिये हैं। तासों तुम अपनो कीर्तन को चोपडा देखो। तब सूरदासजी ने एक वैष्णव सों कह्यो जो-तुम मेरे कीर्तनके चोपडा देखो। सो तब वह वैष्णव देखे तो सूरदासजी के कीर्तन के बीच बीच में 'सूरश्याम' को भोग (छाप) है। सो एसे कीर्तन सगरी लीला में हैं। सो पचीस हजार हैं। सो बात वा वैष्णव ने सूरदास सों कही जो-कालिह तक तो 'सूरश्याम' के कीर्तन हते नांही, और आज सगरी लीला की बीच में हैं।

तब सूरदासजी श्रीनाथजी कों दंडवत करिके कहे जो-अब मेरो मनोरथ आप की कृपा तें पूरन भयो। तासों अब आपु आज्ञा देउ सो करों। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कहे जो-अब तुम मेरी लीला में आयके लीलारस को अनुभव करो। सो यह आज्ञा करिके श्रीनाथजी अंतर्धान भये। तब सूरदासजी श्रीगोवर्द्धननाथजी कों दंडवत करिके मन में वहोत प्रसन्न भये। परंतु पास दोय वैष्णव साधारन हते, सो जाने नाहीं जो श्रीठाकुरजी आपु सूरदासजीके पास पधारे, और कहा आज्ञा दीनी। सो काहे तें जो-श्रीठाकुरजीके स्वरूप को अनुभव भगवदीय बिना और काहू कों नांहि।

वार्ताप्रसंग ११—सो तब सूरदासजी अपने मनमें यह विचार करिके परासोली आये। सो तहां अखंड रासलीला ब्रह्मरात्र करि भगवान ने रासपंचाध्याई की सगरी लीला उहां करी है। सो जहां उडुराज चंद्रमा प्रकट्यो है। सो तहां चंद्रसरोवर है, एसे अलौकिक स्थल में आये।

भावप्रकाश—जो ये अष्टसखा हैं। सो श्रीगिरिराजमें आठ द्वार हैं। सो तहां के ये अधिकारी हैं। तासों आठों सखा अपने अपने द्वार पर श्रीगिरिराज में ही देह छोड़ी है। और अलौकिक देह धरिके सदा सर्वदा लीला में विराजमान है। (१) सो गोविंदकुंड ऊपर एक द्वार है। ताके सन्मुख परासोली चंद्रसरोवर है, तहां सूरदासजी सेवा में मुखिया हैं। (२) अप्सराकुंड ऊपर एक द्वार है, तहां सेवा में छीतस्वामी मुखिया हैं। (३) सुरभीकुंड ऊपर द्वार है, तहां परमानंदास

सेवामें मुखिया हैं। (४) और गोविंदस्वामीकी कदमखंडी पास एक द्वार है, तहां गोविंदस्वामी मुखिया हैं। (५) और रुद्रकुंड के पास एक द्वार है तहां चतुर्भुजदास सेवामें मुखिया हैं। (६) बिलछू सन्मुख एक बारी है, सो जा मारग होयके रासलीला कों पधारत हैं सो तहां की सेवा के कृष्णदास अधिकारी मुखिया हैं। (७) और मानसी गंगा के पास एक द्वार है सो तहांकी सेवा में नंददास मुखिया हैं। (८) और आन्योर के सन्मुख एक द्वार है, सो तहां जमुनावतौ गाम है, सो ता द्वार के मुखिया कुंभनदास हैं।

या प्रकार श्रीगिरिराज में नित्य निकुंज-लीला है। सो ता निकुंजलीला के आठ द्वार हैं। तहांके आठ सखा, सखी रूप हैं,सो सेवा में सदा तत्पर हैं। तासों सूरदास को ठिकानो परासोली है।

सो श्रीगोवर्द्धननाथजी की ध्वजा कों साष्टांग दंडवत् करि के ध्वजा के सन्मुख मुख करिके सूरदासजी सोये, परंतु मन में यह आई जो-श्रीआचार्यजी और श्रीगुसांईजी आपु मेरे ऊपर बड़ी कृपा करी है। श्रीगोवर्द्धननाथजी की लीला को याही देह सों अनुभव कराये। परंतु या समय एक वार श्रीगुसांईजी आपु मेरे ऊपर कृपा करिके दरसन देंय,तो मेरे बड़े भाग्य हैं। श्रीगुसांईजीको नाम कृपासिंधु हैं, सो भक्तन को मनोरथ पूरन कर्ता हैं, सो पूरन करेंगे। सो या प्रकार सूरदासजी श्रीगुसांईजीके स्वरूप को चिंतवन करत हते, और यहां श्रीगुसांईजी आपु श्रीगोवर्द्धननाथजी को सिंगार करत हते। सो वा दिन श्रीगुसांईजी ने सूरदास कों जगमोहन में बैठे कीर्तन करत न देखे। सो ता समय श्रीगुसांईजी आपु सेवकन सों पूछे, जो—सूरदासजी कहां है?

तब एक वैष्णव नें बिनती कीनी जो—महाराज! सूरदासजी तो आज मंगला आरती के दरसन करिके परसोलीमें सगरे सेवकन सों भगवत्-स्मरन करिके गये हैं। तब श्रीगुसांईजी आप जाने जो-भगवद् इच्छा सूरदासजी कों बुलायवे की भई हैं, तासें आज सूरदासजी परासोली कों गये हैं। सो तब श्रीगुसांईजी आप श्रीमुख सों सगरे वैष्णवन सों यह आज्ञा किये जो-'पुष्टिमारग को जहाज' जात है सो जाकों कछू लेनो होय सो लेऊ, और उहां जायके सूरदासजी कों देखो। सो या भांति सों जो राजभोग आरती उपरांत रहत हैं तो मैं हू आवत हों। सो तब सगरे सूरदासजीके पास आये।

भावप्रकाश—सो यहां 'जहाज' कहिवे को आसय यह है जो-जैसे कोई जहाजमें काहू व्यौपारी ने व्यौपार अर्थ अनेक वस्तु जहाज में भरी है, सो तैसे ही सूरदासजी के हृदय में अलौकिक वस्तु नाना प्रकार की भरी हैं।

ता समय सूरदासजीने श्रीगुसांईजीके और श्रीगोवर्द्धननाथ-जी के स्वरूप में मन लगायके बोलिवो छोड़ि दियो। सो तव श्री-गुसांईजी ने पंद्रह व्रजवासी दोराये। जो घड़ी २ के हमसों सूरदास जी के समाचार आय कहियो। तब वे व्रजवासी आयके श्रीगुसांईजी सों कहे जो-महाराज! अब तो सूरदासजी काहू सों बोलत नांही हैं। सो एसे करत २ राजभोग आरती को समय भयो। सो राज-भोग आरती को समय भयो सो राजभोग आरती श्रीगोवर्द्धन-नाथजी की करिके, श्रीगुसांईजी आपु परासोली में जहां सूरदासजी हते तहां पधारे।

तब श्रीगुसांईजी के संग रामदास,कुंभनदास, गोविंदस्वामी, चतुर्भुजदास, आदि सगरे वैष्णव सूरदासजी के पास आये। तब देखे तो सूरदासजी अचेत होय रहे हैं, कछू देहको अनु-संधान नांही है। सो तब श्रीगुसांईजी आप सूरदासजी को हाथ पकरिके कहे जो-सूरदासजी! कैसे हो? तब सूरदासजी तत्काल उठिके दंडवत् करिके कहे जो-बाबा! आये? जो मैं आपु की बाट ही देखत हतो। या समय आपने बड़ी कृपा करिके दरसन दियो। जो महाराज! मैं आप के स्वरूप को ही चिंतन करत हतो। ताही समय सूरदासजी ने यह कीर्तन सारंग राग में गायो। सो पद —

'देखो देखो हरिजू को एक सुभाव।'

यह पद सूरदासने श्रीगुसांईजीके आगे गायो। तब श्रीगुसां-ईजी आपु अपने श्रीमुख सों कहे जो-या प्रकार श्रीठाकुरजी आपु अपने भगवदीयन कों दीनता को दान करत हैं, सो ताको पूरन कृपा जानिये। सो दैन्यतारस के पात्र यही हैं।

सो ता समय सगरे वैष्णव श्रीगुसांईजी के पास ठाढ़े हते। उनमें ते चतुर्भुजदास ने कह्यो जो-सूरदासजी परम भगवदीय हैं. और सूरदासजी ने श्रीठाकुरजी के लक्षावधि पद किये हैं। परंतु सूरदासजी नें श्री आचार्यजी महाप्रभुनको जस वरनन नांही कियो। यह सुनिके सूरदासजी कहे जो- मैं तो सगरो जस श्रीआचार्यजी

को ही वरनन कियो है, जो मैं कछु न्यारो देखतो तो न्यारो करतो। परि तैंने मोसों पूछी है, सो मैं तेरे पास कहत हों, सो या कीर्तन के अनुसार सगरे कीर्तन जानियो। सो पद—

राग विहागरो—'भरोसो दृढ़ इन चरनन केरो।'

भावप्रकाश-सो या कीर्तन में सूरदासजी ने अपने हृदय को भाव खोलि दियो। जो भरोसो, सो जीव को विश्वास, दृढ़ चरण के सरन को। सो मोकों (सूरदासकों) दृढ़ता श्रीआचायजी के सरन की है। सो श्रीआचार्यजी के नख जो दसों चरणारविंद के अलौकिक मणिरूप नख को प्रकास, सो ता बिना सगरे त्रिलोकीमे अंधारो दीखे है। सो तब भरोसो दृढ़ जानिये। सो या कलि में श्रीआचार्यजीके चरण के आश्रय बिना और उपाय फलसिद्धि को नांही है। तासों मैं न्यारो कहा वर्णन करों? जो श्री गोवर्द्धनधर में और श्रीआचार्यजीके स्वरूप में भिन्न, जो द्विविध तामें तो मैं अंध हों।

सो जैसे श्रीकृष्ण और श्रीस्वामिनीजी में न्यारो स्वरूप जाने सो अज्ञानी। सो तैसें श्रीगोवर्द्धनधर और श्रीआचार्यजी हैं। सो तिनको मैं बिना मोल को चेरो हों। सो विना मोल कहा? जो केवल भाव करि के। जैसें रासपंचाध्याई में ब्रजभक्त गोपिका गीत में कहे हैं, जो-'शुल्क दासिका' सो बिना मोल की दासी, अलौकिक, जाको मोल नांही। सो काहे ते? जो भक्ति करिके प्रभुन सों (अर्थ) चाहे, सो सगरे, मोल के दास कहिये। उनकी भक्ति श्रेष्ठ नांही। तासों निष्काम भक्ति सर्वोपरि है। सो ताकों अमोलिक दास कहिये। ता भाव के प्रभु बस होय। सो जैसें पंचाध्याई में श्रीभगवान कहे हैं, जो-तिहारो भजन एसो है, जो मोसों पलटो दियो न जाय। जो मैं सदा तिहारो रिनियाँ रहूंगो सो यह अमोलिक दासके लच्छन हैं। सो यह पद गायो। सो यह पद कैसो है? जो या कीर्तन के भाव तें, सवा लाख कीर्तन सूरदासजी ने किये हैं, सो सब को पाठ होय।

तब चतुर्भुजदास प्रसन्न भये। पाछें सगरे वैष्णव और श्री-गुसांईजी आपु कहे जो-सूरदास के हृदय को महा अलौकिक भाव है, तासों श्रीआचार्यजी आपु सूरदासजी सों 'सागर' कहते। जैसे समुद्र अगाध है, तैसे सूरदासजी को हृदय अगाध है। सो तब चतुर्भुजदास कहे जो-सूरदासजी! तुम विना अलौकिक भाव कौन दिखावे? जो अब थोरे में, श्रीआचार्यजी को यह पुष्टिभक्ति मारग है,

ताको स्वरूप सुनावो। सो कौन प्रकार सों पुष्टिमारग के रस को अनुभव करिये। तब वा समय सूरदासजीने यह पद गायो। सोपद-

रागसारंग—'भज सखी भाव भाविक देव'

सो पद सूरदासजी ने सगरे वैष्णवन कों सुनायो।

भावप्रकाश—सो या पद में यह जताये-जो गोपीजन के भाव सों जो प्रभु कों भजे। सो तिनके भाविक जो-श्रीगोवर्द्धनधर, सो तिन को गोपीन के भाव करि सखीभाव सों भजिये। कुंजलीला में सखीजन कों अधिकार है। तासों (यहां) सखी कहे। और कोटि साधन वेद के करो, परतु एक हू सेवा नांही मानत हैं। ताको दृष्टांत-जो सोलह हजार अग्निकुमारिका ऋचा हैं। 'धूम्र-केतु' एसी जो अग्नि ताके पुत्र जो सोलह हजार ऋषि, सो वे रामचंद्रजीके स्वरूप ऊपर मोहित होय दंडकारण्य में कहे जो-हमसों विहार करो। तब उनसों श्रीरामचंद्रजी यह आज्ञा किये जो-व्रज में तुम स्त्री होय प्रकटोगी तब तिहारो मनोरथ पूरन होयगो।

तासों स्त्री को वेद कर्म में अधिकार नांही है। और श्रीपूर्णपुरुषोत्तम की लीला में मुख्य स्त्रीभाव को अधिकार है। यह भक्तिमारग की वेद सों उलटी रीत हैं। जेसें रास पंचाध्याईमें व्रजभक्त उलटे आभूषन वस्त्र धारन करे, सो लोक में उनसों 'बावरो' कहें, सो स्नेहमें सर्वोपरि कहिये। जैसे जा छाप में उलटे अत्तर होय सो सरीरमें सूधे आछे अत्तर होंय, तैसे या जगत में अज्ञानी, प्रभु की लीलामें चतुर होय सो प्रपंच भूले, सो ताको प्रेम कहिये। मुख्य भक्तिरस में वेदविधि को नेम नांही है। तासों एसो जो प्रेम होय सो श्रीठाकुरजी को वस करे, जैसे गोपीजनन ने श्रीठाकुरजी बस किये। सो श्रीठाकुरजी कैसें हैं, जो सब ही कों मोहि डारें। और सूर है, सो काहूसों जीते जाय नांही। और वे ही चतुर सिरोमणि हैं, सो काहू के बस होय नांही, तोऊ प्रेम के वस हैं। सबकूं भूलि जाय। यह पुष्टिमारग की भक्ति और पुष्टिमारग को स्वरूप है। सो या भांति सों सूरदासजी कहे।

सो तब चतुर्भुजदास आदि सगरे वैष्णव सूरदासजीकों धन्य धन्य कहे जो-इनके ऊपर बड़ी भगवत् कृपा है,तब सूरदासजी चुप होय रहे। तब श्रीगुसांईजी आप सूरदासजीसों पूछ्यो जो-सूरदास जी! अब या समय चित्त की वृत्ति कहां है? तब वाही समय सूरदासजी ने एक पद गायो सो पद—

'बलि २ हौं कुंवरि राधिका नंदसुवन जासों रति मानी।'

पाछें दूसरो यह पद गायो—

राग बिहागरो—खंजन नैन रूप रस माते ।'

सो यह पद सूरदासजीने गायो। पाछे सूरदासजी जुगल स्वरूप को ध्यान करिके यह लौकिक सरीर छोड़ि लीला में आय प्राप्त भये। ता पाछे श्रीगुसांईजी आप तो गोपालपुर पधारे। तब सगरे वैष्णवन ने मिलिके सूरदासजीकी देहको अग्निसंस्कार कियो। ता पाछे सगरे वैष्णव श्रीगुसांईजी के पास आये।

भावप्रकाश—सो इन सूरदासजी के चारि नाम हैं। श्रीआचार्य जी आप तो 'सूर' कहते। जैसे सूर होय सो रण में सों पाछो पांव नांहि देय, जो सबसों आगे चले। तैसेई सूरदासजी की भक्ति दिन दिन चढ़ती दसा भई। तासों श्रीआचार्यजी आप 'सूर' कहते। और श्रीगुसांईजी आप 'सूरदास' कहते। सो दासभाव में कबहू घटे नांही। ज्यों ज्यों अनुभव अधिक भयो,त्यों त्यों सूरदासजीकों दीनता अधिक भई। सो सूरदासजीकों कबहू अहंकार मद नांही भयो। सो 'सूरदासजी'इन को नाम कहे।

और तीसरो, इनको नाम 'सूरजदास' है। जो श्रीस्वामिनीजी के ७ हजार पद सूरदासजी ने किये हैं, तामें अलौकिक भाव वर्णन किये है। तासों श्रीस्वामिनीजी कहते जो ये 'सूरज' हैं। जैसे सूरज सों जगत में प्रकास होय, सो या प्रकार स्वरूप को प्रकास कियो। सो जब श्रीस्वामिनीजी ने 'सूरजदास'नाम धरयो, तब सूरदासजीने बहोत कीर्तनन में 'सूरज' भोग धरे। और श्रीगोवर्द्धननाथजीने पचीस हजार कीर्तन आपु सूरदासजी कों करि दिये। तामें 'सूरश्याम' नाम धरे। सो या प्रकार सूरदासजी के चारि नाम प्रकट भये। सो सूरदासजी के कीर्तन में ये चारो 'भोग' कहे हैं।

या प्रकार सूरदासजी मानसी सेवामें सदा मगन रहते। तातें इनके माथे श्रीआचार्यजी ने भगवत् सेवा नांही पधराये। सो काहेतें ? जो सूरदासजी कों मानसी सेवा में फल रूप अनुभव है। सो ये सदा लीलारस में मगन रहत हैं।

सो सूरदासजी की वार्ता में यह सर्वोपरि सिद्धांत है, जो-दैन्यता समान और पदारथ कोई नांही है, और परोपकार समान दूसरो धर्म नांही है। जो वा बनियाके लिये सूरदासजी ने इतनो श्रम कियो। परि वाके अंगीकार करवाय वाको उद्धार करि दियो। ता-

श्रीआचार्यजी,श्रीगुसांईजी आपु और सगरे वैष्णव जीवमात्र,सूरदासजीके ऊपर बहोत प्रसन्न रहते। सो जो कोऊ सूरदासजी सों आयके पूछतो, तिनकों प्रीति सों मारग को सिद्धांत बतावते, और उनको मन प्रभुन में लगाय देते। तासों सूरदासजी सरीखे भगवदीय कोटिन में दुर्लभ हैं। सो वे सूरदासजी श्रीआचार्यजीमहाप्रभुनके ऐसे कृपापात्र हते। तातें इनकी वार्ताको पार नांहीं सो कहां तांई कहिए।

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक परमानंदस्वामी, कनौजिया ब्राह्मण कनौज में रहते, जिनके पद गाइयत हैं अष्टछाप में, तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं—

भावप्रकाश—

सो ये परमानंददासजी लीला में अष्टसखान में 'तोक' सखा को प्राकट्य हैं। सो तोक सखा को दूसरो स्वरूप निकुंज में सखीरूप है। ता स्वरूप को नाम 'चंद्रभागा' है। सो सुरभीकुंड के पास श्रीगिरिराज के एक द्वार है ताके मुखिया हैं।

सो ये कनौज में कनोजिया ब्राह्मण के यहां जन्मे। जा दिन परमानंददासजी जन्मे, वा दिन उनके पिता कों एक सेठ ने बहोत द्रव्य दान दियो। तब या ब्राह्मण ने बहोत प्रसन्न होय के कह्यो जो-श्रीठाकुरजी ने मोकों पुत्र दियो और धन हू बहोत दियो। तासों यह पुत्र बडो भाग्यवान है, जाके जनमत ही मोकों परम आनंद भयो है। सो मैं या पुत्र को नाम 'परमानंददास' ही धरूंगो। पाछे जब नाम करन लागे तब वा ब्राह्मण ने कही जो-नाम तो मैं पहले ही पुत्र को 'परमानंद' विचारि चुक्यो हों। तब सब ब्राह्मण बोले जो-तुमने विचारयो है सोइ नाम जन्मपत्रिका में आयो है। तब तो वह ब्राह्मण बहोत ही प्रसन्न भयो। पाछें वा ब्राह्मणने जातकर्म करि दान बहुत कियो। एसे करत परमानंददास बडे भये। तब पिताने बडो उत्सव कियो। और इनको यज्ञोपवीत कियो।

सो ये परमानंदास बडे कृपापात्र भगवदीय हैं, लीलामध्यपाती श्रीठाकुरजी के अत्यंत (अतरंग) सखा हैं। सो जब श्रीआचार्यजी आपु श्रीगोवर्धननाथजी की आज्ञातें दैवी जीवन के उद्धारार्थ भूतल पर प्रकट भये, तेसेही श्रीठाकुरजी सहित सगरो परिकर प्रकट भयो। सो दैवी जीव अनेक देशांतर में प्रकट भये। सो गोपालदासजी वल-

भाख्यान में गाये हैं जो–'अनेक जीवने कृपा करवा देशांतर प्रवेश'० सो कनौज में परमानंददासजी बहोत ही प्रसन्न बालपने तें रहते। पाछें ये वडे योग्य भये,और कवीश्वर हू भये। वे अनेक पद बनायके गावते। सो 'स्वामी' कहावते और सेवक हू करते। सो परमानंददास के साथ समाज बहोत, अनेक गुनीजन संग रहते। एक समय कनौज में अकाल परयो सो हाकिम की बुद्धि बिगरी। सो गाममें सों दंड लियो और परमानंददास के पिता को सब द्रव्य लूटि लियो। तब मातापिता वहोत दुःख पाय के परमानंददास सों कहे जो–हम तेरो ब्याह हू न करन पाये, और सब द्रव्य योंही गयो. तासों अब तू कमायवे को उपाय कर। सो काहतें? जो–तू गुनी और तेरे द्रव्य बहोत आवत है। सो तू वा द्रव्य कों इकठोरे करे तो हम तेरो ब्याह करें।

तब परमानंददासने मातापितासों कह्यो जो–मेरे तो ब्याह करनो नांहीं है,और तुमने इतनो द्रव्य भेलो करिके कहा पुरुषारथ कियो? सगरो द्रव्य योंही गयो। तासों द्रव्य आये को फल यही है जो–वैष्णव ब्राह्मण कों खवावनों। तासों मैं तो द्रव्य को संग्रह कबहू नांही करूंगो। और तुम खायवे लायक मोसों नित्य अन्न लेहू, और बेठे २ श्रीठाकुरजी को नाम लियो करो। जो अब निर्धन भये हो तासों अब तो धन को मोह छोडो। तब पिताने परमानंददास सों कह्यो जो-तू तो वेरागी भयो। तेरी संगति वेरागीन की है, तासों तेरी एसी बुद्धि भई। और हमतो गृहस्थी हैं। तासों हमारे धन जोरे बिना कैसे चले? जो कुटुंब में ज्ञाति में खरचें तब हमारी बडाई होय। पाछें पिता धन के लिये पूरब कों गयो। तहां जीविका न मिली तब दखिन कों गयो,और तहां द्रव्य मिल्यो सो तहां रह्यो।और परमानंददासने अपने घर कीर्तनको समाज कियो। सो गाम गाम में प्रसिद्ध भये। और परमानंददास गान–विद्या में परम चतुर हते।

वार्ताप्रसंग–१–सो एक समय परमानंददास कनौज तें मकर-स्नान कों प्रयाग में आये,सो तहां रहे। और कीर्तन को समाज नित्य करैं, सो वहोत लोग इनके कीर्तन सुनिवे कों आवते। सो पार अडेल में श्रीआचार्यजी बिराजत हते। अडेल तें लोग कछू कार्यार्थ गाममें आवते। सो परमानददास के कीर्तन सुनिके अडेल में जायके श्रीआ-चार्यजी सों कहते, जो–एक परमानंददास कनौज तें आयो है, सो कीर्तन बहोत आछो गावत है। तब श्रीआचार्यजी कहे जो–परमानं-

ददास दैवी जीव हे. जो इनको गुन होय सो उचित ही है। सो श्री-आचार्यजी को सेवक एक 'कपूर क्षत्री' जलघरिया हतो, वाकी राग ऊपर वहोत आसक्ति हती। सो यह बात सुनि के वाके मनमें आई जो-मैं श्रीआचार्यजी न जानें ऐसे परमानंद स्वामी को गान सुनूं। काहेतें जो-श्रीआचार्यजी आपु सुनंगे तो खीजेंगे,जो-तू सेवा छोडि-के क्यों गयो ? तासों प्रयाग न जाय सके। परंतु वा जलघरिया'क्षत्री 'कपूर' को मन परमानंदस्वामी के कीर्तन सुनिवे कों वहोत हतो।

भावप्रकाश-सो काहेतें ? जो इनको पूर्व को संबंध है। जो लीला में यह क्षत्री परमानंददास की सखी है,सो ये चंद्रभागा की सखी'सोन-जुही' याको नाम है। सो यह क्षत्री सुदामापुरी में एक क्षत्री के घर प्रकटे, इन को पिता महाविषयी हतो। सो जहां तहां परस्त्री को संग करतो। और द्रव्य बहोत हतो,सो सब विषय में खोयो। ता पाछें गाम के राजाने सगरो घर लूटि लियो। सो या क्षत्री के मातापिता पुत्र सहित बंदीखाने में दिये। तब याको पिता एक सिपाही कों कछू देकें रात्रिकों स्त्री पुरुष और या पुत्र सहित बंदीखानेमें सों भाजे। सो दिन दोय तीन तांई भाजे, सो तहां एक वन में जाय निकसे। तहां नाहरने याके माता-पिता कों मार्यो, और यह पुत्र वरस चोदह को बच्यो। सो वन में बेठ्यो रुदन करे, सो भूख्यो प्यासो चल्यो न जाय। सो भागिजोग तें पृथ्वीपरिक्रमा करत श्रीआचार्यजी गहवरवन (सघन वन) में आये। तब या क्षत्री सों पूछी जो-तू कौन है ? जो अकेलो वनमें रुदन करत है। तब इनने दंडवत करिके अपनो सब वृत्तांत कह्यो। तब श्रीआचा-र्यजी आपु कृष्णदास मेघन सों कहे-जो कछू महाप्रसाद होय तो याकों खवायके वेगि जलपान करावो, जो याके प्राण बचें। तब कृष्णदास मेघन के पास प्रसाद हतो, सो या क्षत्री कों न्हवायके खवायके जल पिवायो। तब या क्षत्री को मन ठिकाने आयो। तब या क्षत्रीनें श्रीआ-चार्यजी सों विनती कीनी जो-महाराज ! मोकों आप पास राखो। जो मैं जनम भरि आप को गुलाम रहूंगो। अब मेरे मातापिता भगवान आपु हो। तब श्रीआचार्यजी आपु श्रीमुख सों कहे जो-तू चिंता मति करे,और तू हमारे संग ही रहियो। तब यह क्षत्री श्रीआचार्यजी के संग ही रह्यो। ता पाछें दूसरे दिन श्रीआचार्यजी आपु वा क्षत्री को नाम-ब्रह्मसंबंध करवायो,और जल लायवे की सेवा याकों दिये। पाछे कछुक दिन में श्रीआचार्यजी आपु अडेल पधारे तब, वह क्षत्री श्रीनवनीत-

प्रियजी के दरसन करिके अपने मनमें बहोत प्रसन्न भयो। और कह्यो जो-मैं अनाथ हतो, सो श्रीआचार्यजी आपु मोकों कृपा करिके सरन लेके संग लाये,सो मोकों साक्षात् श्रीयशोदोत्संगलालित श्रीनवनीतप्रियजी के दरसन भये। तब वा क्षत्री कपूर जलघरिया को मन श्रीनवनीतप्रियजी के स्वरूपमें लगि गयो। सो तब या क्षत्रीने अपने मनमें बिचारी जो-अब मोकों श्रीनवनीतप्रियजी की सेवा कछू मिले,तब मैं सदा सेवा करूं और दरसन करूं। सो श्रीआचार्यजी आप तो साक्षात् पुरुषोत्तम हैं, सो या क्षत्री के मन की जानि याकों पास बुलाय के कह्यो जो-तेरे मन में सेवा की आई, सो तेरे बडे भाग्य हैं। तासों अब तू श्रीनवनीतप्रियजी के जलघरा की सेवा कियो कर।

तब वा क्षत्रीने प्रसन्न होयकें श्रीआचार्यजी कों दंडवत करिकें बिनती कीनी-जो महाराज ! मेरे हू मन में एसें हती,सो आपु तो परम कृपालु हो, तासों मेरो सर्व मनोरथ पूरन कियो। ता पाछें अति प्रीति सों वह क्षत्री वैष्णव प्रसन्न होयके खारो तथा मीठो जल भरन लाग्यो। सो कछुक दिन में श्रीनवनीतप्रियजी आपु सानुभावता जतावन लागे। परंतु सेवा में अवकास नांही, जो ये परमानंदस्वामी के कीर्तन सुनिवे कों जाय।

सो एक दिन एकादशी को दिन हतो। ता दिन प्रयाग सों एक वैष्णव श्रीआचार्यजीके दरसनकों अडेलमें आयो। तब वा क्षत्री जलघरियाने वा वैष्णव सों परमानंदस्वामी के समाचार पूछे। तब वा वैष्णवनें कह्यो जो-नित्य तो चारि घडी तथा पहर को समाज होत है रात्रि के समे, और आज तो एकादशी है,जो सगरी रात्रि परमानंदस्वामी के यहां जागरन होयगो।

सो ये बचन सुनिके वह क्षत्री वैष्णव अपने मन में बहोत प्रसन्न भयो, और विचार कियो जो आजु परमानंदस्वामी के कीर्तन सुनिवे को दाव लग्यो है। तासों जब श्रीआचार्यजी आपु रात्रि कों पोढ़ेंगे तब मैं रात्रि कों प्रयाग में जायके परमानंदस्वामी के कीर्तन सुनूंगो। ता पाछें रात्रि भई। तब वह क्षत्री कपूर जलघरिया अपनी सेवा सों पहोंचिके श्रीआचार्यजी के श्रीमुख तें कथा सुनिके रात्रि प्रहर डेढ़ गई, ताही समय अडेल सों प्रयाग कों चल्यो। तब अपने मन में बिचारयो जो—या समय घाट ऊपर तो नाव मिलनी नांही है, तासों पैरिके जाऊं।

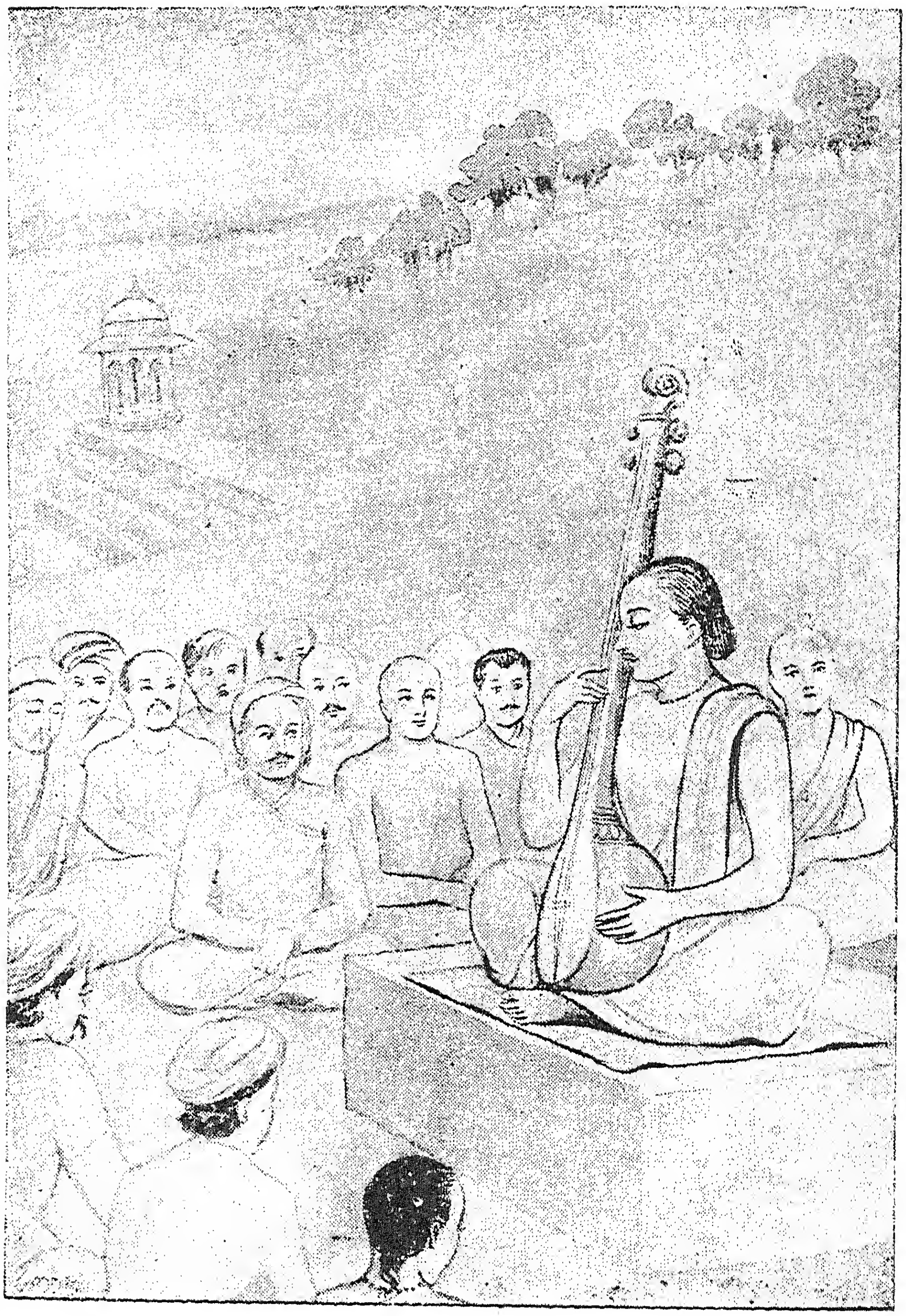

मकर संक्रांति पर प्रयाग में भजन-कीर्तन करते हुए—

परमानंददास

जन्म सं० १५५०] ★ [देहावसान सं० १६४१

सो वे पेरिवेमें बड़े निपुन हते। पाछे घाट ऊपर आय परदनी एक छोटीसी पहरिके, धोती उपरना माथे सों बांधे। सो उष्णकाल गरमी के दिन हते सो पैरिके परमानंदस्वामी कीर्तन करत हते तहां आये। सो इनको पहलें परमानंदस्वामी सों मिलाप तो कब हू भयो न हतो, तासों दूरि वैठि गये। उहां श्रीआचार्यजी के सेवक प्रयाग के वैष्णव वैठे हते सो इनको जानत हते। सो तहां अपने पास ही इन क्षत्री कपूर कों बेठारि लिये। सो वे जहां परमानंदस्वामी वैठे हते तिनके पास जाय वैठे। तब और ओर गुनीन के पदगाये पाछें परमानंदस्वामी ने गाइवे को आरंभ कियो। सो परमानंदस्वामी विरह के पद गावते।

भावप्रकाश—सो काहेतें? जो ऊपर इनको स्वरूप कहि आये हैं जो-ये परमानंददास लीलामें सों बिछुरे हैं,सो अबही श्रीआचार्यजी और श्रीगोवर्द्धननाथजीके दरसन भये नांहि हैं। सो जब श्रीआचार्यजी श्रीनाथजी को दरसन करावेगे। तब परमानंददास कों लीला को ज्ञान होयगो। श्रीआचार्यजी के मारग को यह सिद्धांत है जो—भगवदीय को संग होय तब श्रीठाकुरजी कृपा करें। ताके लिये श्रीआचार्यजी परमानंदस्वामी के ऊपर कृपा करन के अर्थ अपने कृपापात्र भगवदीय क्षत्री कपूर जलघरिया कों पठाये। सो क्षत्री कपूर जलघरिया कैसे हते जो—जिनकों श्रीठाकुरजी एक क्षण हू नांही छोड़त हैं, जो सदा वैष्णव के संग ही रहत हैं।

तासों सूरदासजी गाये हैं—'जो भक्तविरहकातर करुणामय डोलत पाछें लागे०' और ऊपर जगन्नाथजोसी की वार्ता में कहि आये हैं जो—जब वा रजपूत ने तरवार काढी तब श्रीठाकुरजी आपु पाछे तें आयके तरवार सहित हाथ ऊपर ही थांमि दियो, सो हाथ चलन न दियो। तासों श्रीभागवत में सब ठौर वरनन है जो-भगवदीय वैष्णवके संग ही श्रीठाकुरजी डोलत हैं। सो परमानंददास कों अब ही वियोग है। तांसों विरह के कीर्तन नित्य गावते।

राग बिहागरो—१ 'व्रज के विरही लोग विचारे।'
२ 'गोकुल सब गोपाल उपासी।'
राग कान्हरो— ३ 'कोन रसिक है इन बातन को।'
राग सोरठ—४ 'माइरी! को मिलिवे नंदकिसोरै।'
इत्यादि बहोत कीर्तन परमानंददासनें गाये सगरी रात्रि। ता

पाछें चार घड़ी रात्रि रही तब कीर्तन राखे। सो जो कोई जागरन में आये हते वे सब अपने अपने घर कों गये। पाछें यह जलघरिया क्षत्री कपूर परमानंदस्वामी सों भगवत्स्मरन करिके उठिके तहांते चल्यो। सो परमानंदस्वामी के कीर्तन सुनिके अपने मनमें वहोत प्रसन्न होयके कह्यो जो - जैसो परमानंदस्वामी को गुन सुनत हते सो तैसेई हैं।

सो या प्रकार परमानंदस्वामी की सराहना करत करत वह क्षत्री कपूर यमुनाजी के तट पर आइके वाही प्रकार सों पैरिकें पार आय, धोवती उपरना परदनी सहित न्हाय के अपरसही में आये। ताही समय श्रीआचार्यजी आपु पोंढिके उठे हते। सो श्रीआचार्यजी के दरसन करि, दंडवत करि अपने जलघरा की सेवा में तत्पर भये।

भावप्रकाश—सो या प्रकार ये क्षत्री कपूर परमानंदस्वामी के ऊपर कृपा करिवे के अर्थ परमानंदस्वामीके पास गये। नांही तो इनकों श्रीठाकुरजी आप सानुभाव हते, सो एसे भगवदीय काहेकों काहूके घर जांय? परंतु परमानंदस्वामी के ऊपर कृपा होनहार है, तासों श्रीनवनीतप्रियजी वा क्षत्री कपूर जलघरिया को मन प्रेरिकें याके संग आपुही पधारि, याही की गोद में बैठिके परमानंदस्वामी के कीर्तन सुने।

सो या प्रकार वह क्षत्री जलघरिया परमानंदस्वामी के कीर्तन सुनि जब प्रयाग सों अडेल कों चले, सो तब परमानंदस्वामी सगरी रात्रि के श्रमित हते, सो येहू सोये।

भावप्रकाश—सो तहां यह संदेह होय जो—परमानंदस्वामी सगरी रात्रि जागरन करिके चारि घड़ी पिछली रात्रि रही तब सोये। सो सोये तें जागरन को फल जात रहत है। जो परमानंदस्वामी तो सुज्ञान है, और चतुर हैं। तासों वे क्यों सोये? तहां कहत हैं जो—परमानंदस्वामी लीला संबंधी पुष्टिजीव हैं। सो एक श्रीठाकुरजी कों चाहत हैं और जागरन के फल को चाहत नांही हैं।

सो ये परमानंदस्वामी एकादसी के जागरन को मिस मात्र लेकें भगवन्नाम अधिक लियो जाय ताके लिये जागरन करत हते। सो इनकों विधि रीति सों कछू जागरन करिवे के फल को कारन नांही है। तासों परमानंददास चारि घड़ी रात्रि पिछली रही तब सोये। सो यातें जो—जागरन को फल जायगो, परंतु भगवन्नाम लियो, सो गुन तो कोई काल में जायगो नांही। तासों भगवन्नाम लेंयवे के अर्थ चारि

घड़ी रात्रि पाछिली कों सोये। सो काहेतें ? जो-सोवें नांही तो द्वादसी के दिन आलस सरीर में रहे। फेरि द्वादसी की रात्रि कों डेढ पहर रात्रि तांई कीरतन करने हैं। तासों जागरन को आश्रय छोड़िकें भगवन्नाम को आश्रय करिकें सोये।

सो नींद आवत ही परमानंदस्वामीकों स्वप्न आयो। सो स्वप्न में देखे तो श्रीआचार्यजी के सेवक क्षत्री जागरन में बैठे हैं। और इनकी गोद में श्रीनवनीतप्रियजी बैठे देखे। और श्रीनवनीतप्रियजी स्वप्न में मुसिक्याय के परमानंदस्वामी कों आज्ञा किये जो--आज मैंने तेरे कीर्तन सुने हैं। सो श्रीआचार्यजी के कृपापात्र सेवक कपूर क्षत्री जलघरिया तेरे यहां रात्रि कों जागरन में आये। तासों इनके साथ मैं हू आयो। सो इतने दिनन में आजु तेरे कीर्तन सुन्यो हों।

भावप्रकाश—सो यह कहे, तहां यह संदेह होय जो—श्रीठाकुरजी तो सदा सुनत हैं, और सब ठौर व्यापक हैं। सो कहे जो 'आज मैं सुन्यो' ताको कारन कहा ? तहां कहत हैं-जो इतने दिन सों अंगीकारमें ढील हती,सो अतर्यामी साक्षि रूप सों सुने। तासों अब अंगीकार करनों है और कृपा करनी है,सो बेगि कृपा करनको लक्षन बताये। तासों कहे जो-आजु मैं तेरे कीर्तन सुन्यो हों। सो आज मैं तोपर पूरन कृपा करी। तासों अब बेगि मोकों पावोगे। सो यह आसय जाननो।

तब परमानंदस्वामी की नींद खुली। सो नेत्रन में श्रीनवनीतप्रियजी को स्वरूप कोटिकंदर्प लावण्य, जो स्वप्न में दरसन भयो। तासों नेत्रन में हृदयमें ज्ञान भयो। तब परमानंदस्वामीके मनमें बड़ी चटपटी लगी, और आर्ति भई, जो—अब मैं कब श्रीनवनीतप्रियजी को दरसन करों ?

ता पाछें परमानंदस्वामी ने अपने मन में विचार कियो जो-मैं इतने दिन तें जागरन कियो और कीर्तन हू गाये, परंतु मोकों एसो दरसन कबहू न भयो। जो आज भयो है सो-श्रीआचार्यजीको सेवक जलघरिया क्षत्री कपूर आयो, तासों उनकी गोदमें भयो। सो क्षत्री कपूर बिना श्रीनवनीतप्रियजी को दरसन न होयगो, तासों उनके पास चलिये,और उनसों मिलिये तब अपनो कार्य सिद्ध होय।

सो यह विचार मनमें करिके परमानंदस्वामी तत्काल उठि के अड़ेलकों चले। इतने में प्रातःकाल भयो। सो श्रीयमुनाजी के तीर पे आये, सो प्रथम ही नाव पार चली,तामें बैठिके परमानंदस्वामी पार

आये। ता समय श्रीआचार्यजी श्रीयमुनाजी में स्नान करिके प्रातः-काल की संध्या करत हते। सो परमानंदस्वामी कों श्रीआचार्यजी के दरसन अत्यद्भुत अलौकिक साक्षात् श्रीकृष्ण के स्वरूप सों भये। सो जैसो श्रीगुसांईजी श्रीवल्लभाष्टक में वर्णन किये है जो-'वस्तुतः कृष्ण एव०'

एसो दरसन करिके परमानंदस्वामी चकित होय रहे। सो कछु बोल न निकस्यो। तब परमानंदस्वामीनें अपने मन में विचार कियो जो-श्रीआचार्यजी के सेवक कपूरक्षत्री की गोदमें बैठिके श्रीनवनीत-प्रियजी मेरे कीर्तन क्यों न सुनें? जिनके माथे श्रीआचार्यजी आपु एसे धनी विराजत हैं। तासों मैं हू इनको सेवक होऊंगो। परि मेरो सामर्थ्य नांही है, जो-मैं इनको सेवक होन की विनती करों। तासों वह क्षत्री फेर मिले तो उनसों सगरी बात कहिके सेवक होन की विनती करों। यह विचार परमानंदस्वामी अपने मनमें करत हते, इतने में श्रीआचार्यजी आपु श्रीमुखतें परमानंदस्वामी सों आज्ञा किये जो-परमानंददास! कछु भगवल्लीला गावो। तब परमानंददा-सजीने श्रीआचार्यजी कों साष्टांग दंडवत करिके ये पद गायेः-

राग सारंग-१ कौन बेर भई चलेरी! गोपालें०' ।२ जियकी साध जियही रही री०'। ३ 'वह बात कमलदलनैन की०'। ४ 'सुधि करत कमलदलनैन की०'।

या भांति सों परमानंददास ने विरह के पद श्रीआचार्यजी के आगे गाये। सो सुनिके श्रीआचार्यजी श्रीमुख सों कहे जो परमानं-ददास! कछु बाललीला के पद गावो। तब परमानंददास ने हाथ जोरिके श्रीआचार्यजी सों विनती कीनी जो-महाराज! मैं बाललीला में कछु समुझत नांही हों। तब श्रीआचार्यजी आपु श्रीमुख सों परमा-नंददास सों आज्ञा किये जो—तुम श्रीयमुनाजी में स्नान करि आवो; जो हम तुमकों समुझाय देयगें। पाछें परमानंददासने श्रीआचार्यजी सों विनती कीनी जो-महाराज! आपुको सेवक क्षत्री कपूर कहां है? सो तब श्रीआचार्यजी आप कहे जो-कछु सेवा टहल में होयगो। तब परमानंददास श्रीयमुनाजी में स्नान करनकों चले, और श्रीआ-चार्यजी तो सेवा को समय हतो सो वेगिही उहां ते मंदिरमें पधारे। और श्रीनवनीतप्रियजी कों जगाये। इतने ही में वह क्षत्री जलघरिया श्रीयमुनाजल भरिवे कों गागर लेके श्रीयमुनाजीके पार आयो। सो

उनकों देखि के परमानंदस्वामी परम आनंद सों दोऊ हाथ जोरिके भगवत् स्मरन करिके कह्यो, जो-रात्रि कों तुम कृपा करकें जागरन में पधारे हते,सो नवनीतप्रियजीने तिहारी गोदि में बैठिके मेरे कीर्तन सुने। सो मैं सोयो तब श्रीनवनीतप्रियजीने दरसन दियो,और कृपा करिके आज्ञा किये जो-आज मैं तेरे कीर्तन सुन्यो हूं। तासों तुमने मेरे ऊपर बड़ी कृपा करी। सो अब तिहारे दरसन कों आयो हों। तासों अब आप जा प्रकार श्रीआचार्यजी आपु मोकों सरन लेंय और श्रीठाकुरजी कृपा करिके मोकों नित्य दरसन देंय, सो प्रकार कृपा करिके बतावो। और मोकों श्रीआचार्यजी आपु कृपा करिके श्रीकृष्ण-जी के स्वरूपको दरसन दियो है, सो यह तिहारे सत्संग को प्रताप हैं। तब यह बात सुनिके क्षत्री कपूरने उनसों कह्यो जो-तिहारी ऊपर श्रीआचार्यजी की कृपा भई है। तासों तुमकों एसो दरसन भयो हैं। और तुमसों आपने आज्ञा करी है, सरन लेवे के लिये, सो जासों तुम वेगिही न्हायके अपरस ही में श्रीआचार्यजी के पास चलो। सो तुमकों प्रभु कृपा करिके सरन लेंयगे,तब तिहारो सब मनोरथ सिद्ध होयगो। और रात्रि कों मैं जागरन में तिहारे पास गयो, सो बात तुम श्रीआचार्यजीके आगें मति करियो। नांहि तो आपु मेरे ऊपर खीजेंगे जो-तू सेवा छोडिके क्यों गयो हतो ?

यह वचन परमानंदस्वामी सों कहिके वा क्षत्री वैष्णव ने तो श्रीयमुनाजलकी गागर भरी, और परमानंददास स्नान करिके अप-रसही में श्रीआचार्यजीके पास उन जलघरिया क्षत्री के पाछे आये। ता समय श्रीआचार्यजी श्रीनवनीतप्रियजी को सिंगार करिके श्री-गोपीवल्लभ भोग धरिकें बिराजे हते। ता समय परमानंददास न्हाय के आये। तब श्रीआचार्यजी आपु परमानंददास सों कहे जो-पर-मानंददास बेठो। तब परमानंददास श्रीआचार्यजी को साष्टांग दंड-वत करिके बेठे। पाछें श्रीआचार्यजी आपु भीतर पधारि भोग सराय के परमानंददास कों बुलायके श्रीनवनीतप्रियजी की सन्निधान कृपा करिके नाम सुनायो। ता पाछे ब्रह्मसंबंध करवायो। पाछे श्रीभागवत दशमस्कंध की अनुक्रमणिका सुनायो।

भावप्रकाश-सो ताको हेतु यह है जो-प्रथम परमानंददास सों श्रीआचार्यजीने कह्यो जो-कछु भगवद्लीला वर्णन करो।तब परमानंद-दासने बिरह के पद गाये। पाछें श्रीआचार्यजी आपु परमानंददास कों

कहे जो–बाललीला गावो। सो ताको हेतु यह है जो–बाललीला श्रीनंदरायजी के घर की लीला है,सो संयोग रस है। सो एकवार संयोग होय ता पाछे विरह फलरूप होय। सो काहेतें जो–रासपंचाध्यायी में व्रजभक्तन कों बुलायके लीला किये। ता पाछें अंतर्धान में विरह फलरूप भयो। तासों भगवान कहे–'यथाऽधनो लब्ध धने विनष्टे तच्चिन्तया०' जैसे धन पायके धन जाय, तब धन को चिंतन बहोत होय। सो पहले श्रीआचार्यजी आपु कहे जो–बाललीला गावो। क्यों? जो – अनुभव करिके विरह को गान वेगि फले। परि परमानंददासने विनती कीनी जो–महाराज! मैं कछू अनुभवत नांही हों।

ताको आसय यह है जो–संयोग रस अब ही है नांही। जो मूल लीला में हतो सो विस्मृत भयो है। परि लीला में तें बिछुरे हैं,और दैवी जीव हैं, तासों विरह जनम ही तें गाये। सो अब नाम समर्पन कराय के अज्ञान प्रतिबंध दूरि कियो,ता पाछें श्रीभागवत दशमस्कंध की अनुक्रमणिका सुनाये। सो तब साक्षात् श्रीनवनीतप्रियजी के स्वरूप को अनुभव भयो और दशम की सगरी लीला स्फुरी। परमानंददास को दशम की अनुक्रमणिका सुनाये ताको कारन यह है जो–सर्वोत्तम ग्रंथ श्रीगुसांईजी प्रकट किये हैं। तामें श्रीआचार्यजी को नाम कहे हैं जो—'श्रीभागवत पीयूषसमुद्र–मथन क्षमः'। सो श्रीभागवतको श्रीगुसांईजी अमृत को समुद्र करिके वर्णन किये, सो श्रीआचार्यजी आपु अनुक्रमणिका द्वारा श्रीभागवत रूपी समुद्र परमानंददास के हृदय में स्थापन कियो। सो तैसे ही प्रथम सूरदास के हृदय में अनुक्रमणिका द्वारा श्रीभागवत रूपी समुद्र स्थापन कियो हतो। तासों वैष्णव तो अनेक श्रीआचार्यजी के कृपापात्र हे, परंतु सूरदास और परमानंददास ये दोऊ 'सागर' भये। इन दोउन के कीर्तन की संख्या नांही, सो दोऊ सागर कहवाये। सो श्रीआचार्यजीने आज्ञा करी जो बाललीला गावो। अब संयोग रस को अनुभव भयो।

तब परमानंददासजी ने श्रीआचार्यजी के आगे बाललीला के पद गाये। सो पद—

राग आसावरी–१ 'माइरी! कमलनैन श्यामसुंदर झूलत हैं पलना।'

राग बिलावल—२ 'जसोदा तेरे भाग की कही न जाइ।'

३ मणिमय आंगन नंद के खेलत दोऊ भैया।'

राग कान्हो—४ 'प्यारे हरिको विमल जस गावत गोपांगना।

सामग्री सिद्ध करिके श्रीठाकुरजी कों भोग धरि भोग सराय आपु भोजन किये। ता पाछे परमानंददास आदि सब वैष्णवन कों महाप्रसाद देकें आपु गादी तकीयानके ऊपर विराजे। पाछे परमानंददास महाप्रसाद ले श्रीआचार्यजी के पास आय दंडवत करिके बैठे। तब आपु आज्ञा किये जो परमानंददास! कछू भगवद् जस गावो। तब परमानंददास अपने मनमें विचारे जो-या समय श्रीआचार्यजी को मन तो व्रजलीला में श्रीगोवर्द्धननाथजीके पास है। तासों विरहको पद गाऊं, जामें एक क्षण कल्प समान जाय। सो पद—

राग सोरठ—हरि तेरी लीला की सुधि आवे।'

यह पद परमानंददास ने गायो। सो यामें यह कहे जो-'हरि तेरी लीला की सुधि आवे।' सो ताही समय श्रीआचार्यजी आपु लीला में मग्न होय गये।

भावप्रकाश-सो तहां श्रीगुसांईजी श्रीआचार्यजी को स्वरूप श्रीवल्लभाष्टकमें वरनन कियो है जो -'श्रीमद्वृंदावनेंदु प्रकटित रसिकानन्द सन्दोहरूप-स्फूर्जद्रासादिलीलामृत ० एसे रस सों भरे हैं। और सर्वोत्तम में श्रीगुसांईजी श्रीआचार्यजी को नाम कहे- रासलीलैकतात्पर्याय नमः'। सो श्रीआचार्यजी को कार्य कहियत हैं, जो जो ग्रन्थ किये सो तामें रासलीला ही तात्पर्य है। और कछु काहू बात में आपु को तात्पर्य नांही है। सो तासों रासलीला में मगन होय गये।

सो ऊपर सरीर को-देह को-अनुसंधान हू रह्यो नांही। सो तीन दिनलों श्रीआचार्यजी कों मूर्छा रही। सो नेत्र मूंदि के गादी तकियान पें बिराजे हते, और दामोदरदास हरसानी आदि वैष्णव (जो) श्रीमहाप्रभुजी के स्वरूप कों जानत हते सो जाने। सो कोई वैष्णव बोले नांही, बैठे बैठे चुप होय के श्रीआचार्यजी को दरसन कियो करें।

भावप्रकाश—सो काहेतें? जो जैसे श्रीआचार्यजी आप पूरन पुरुषोत्तम हैं सो इनको सरीरधर्म बाधक नांही। जो मनुष्य देह धारन किये तासों मनुष्य की क्रिया जगत में दिखावत हैं, परि इनकों देह को धर्म बाधक नांही है। तासों सब सेवक तीन दिनलों बैठे रहे।

सो पाछें चौथे दिन सावधान होयकें श्रीआचार्यजी ने नेत्र खोले, तब सब वैष्णव प्रसन्न भये।

भावप्रकाश—सो तहां यह पूर्व पक्ष होय जो-रासादिक लीला

में मगन तीन दिन तांई क्यों रहे ? सो तहां कहत हैं जो-रासादिक लीला में तीन ही ठौर मुख्य हैं। जो श्रीगिरिराज, श्रीवृंदावन और श्री यमुनाजी। १ श्रीगिरिराज स्वरूप होय सगरी लीला की सामग्री सिद्ध करत हैं। २ श्रीवृंदावन की लीला रसात्मक कुंजविहार में। ३ और श्रीयमुनाजी सब रास को मूल।

या प्रकार जल स्थल की लीला हैं। सो एक दिन श्रीगिरिराज संबंधीलीला को अनुभव किये, जो कंदरा में नाना प्रकार के विलास, चतुर्भुजदासजी गाये हैं-'श्रीगोवर्द्धनगिरि सघन कंदरा।' आदि। दूसरे दिन वृंदावन लीला, और तीसरे दिन श्रीयमुनाजी की पुलिन (में) रास जलविहारादि। या प्रकार तीन दिनलों तीनों रसको अनुभव किये। ता पाछे भूमि पर भक्तिमारग प्रकट करिकें अनेक जीवन कों सरन लेकें लीलारस को अनुभव करवावनो है, सो चौथे दिन श्रीआचार्यजी आपु नेत्र खोलि के सावधान भये।

तब परमानंददासजी अपने मनमें डरपे, जो—ऐसे पद फेरि कबहूं नांही गाऊंगो।

भावप्रकाश—सो परमानंददासजी यासों डरपे जो-श्रीआचार्यजी आपु रसको अनुभव करिके कदाचित् लीलारस में मगन होइ जांय। सो भूमि पर पधारिबे को मन न करें तो यह दैवीजीवन को उद्धार कौन भांति सों होयगो ? तासों परमानंददास ने अपुने मन में विचार कियो जो-अब मैं फेरि विरह को पद श्रीआचार्यजी आगे नांही गाऊंगो।

सो काहेते ? जो-श्रीआचार्यजी आपु विरहात्मक स्वरूप हैं। सर्वोत्तममें श्रीगुसांईजी आपु श्रीआचार्यजीको नाम कहे हैं'जो विरहानुभवैकार्थ सर्वत्यागोपदेशकः' सो विरहरसके अनुभवके अर्थ सर्व लौकिक में त्याग किये, सो उपदेश करत हैं। यामें विरह को स्वरूप जताये। विरह दसा में लौकिक वैदिक की कछू सुधि न रहे. सो तब विरह भयो जानिये।

ता पाछें परमानंददास ने सूधे पद गाये। सो पद—

राग रामकली—'माइरी ! हौं आनंद मंगल गाऊं।'

ता पाछे श्रीआचार्यजी आपु भोजन करिके पोढे, तब सब वैष्णव महाप्रसाद लिये। ता पाछे परमानंददास महाप्रसाद ले के श्रीआचार्यजी आगे यह पद गायो--

राग गोरी—१ 'विमल जस वृंदावन के चंद को।'

ता पाछे परमानंददासने यह पद गायो। सो पद—

राग सारंग—'चल सखी! नंदगाम जाय बसिये।'

यह पद सुनिके श्रीआचार्यजी आपु कहे जो- अब व्रज को चलिये। पाछें परमानंददास ने जो सेवक किये हते, तिन सबन कों श्रीआचार्यजी के पास लाय विनती कीनी जो-महाराज! इन जीवन कों अंगीकार करिये। तब श्रीआचार्यजी आपु परमानंददास सों कहे जो-इनकों तुम नाम सुनाय के सेवक किये हैं, तातें अब हम पास तुम इनकों सेवक क्यों करावत हो? तब परमानंददास कहे जो—महाराज! यह तो पहली दसा में स्वामीपनो हतो, तासों सेवक किये हते। और अब तो मैं आप को दास हों। 'स्वामीपद' तो जो स्वामी हैं तिनही कों सोहत है। दास होय स्वामीपद चाहे सो मूरख है। तासों मैं अज्ञान दसा में सेवक किये, सो अब आप इन कों सरन लेके उद्धार करिये।

तब सबन कों श्रीआचार्यजीने नाम सुनाय सेवक किये। ता पाछे सब वैष्णवन कों संग ले कनौज सों व्रज में पधारे। कछुक दिन में श्रीगोकुल पधारे। सो गोविंदघाट ऊपर स्नान करिके छोंकर के नीचे श्रीआचार्यजी आपु अपनी वैठकमें आय बिराजे। सो एक भीतर वैठक श्रीद्वारकानाथजी के मंदिर के पास है, तहां रात्रि कों श्रीआचार्यजी के विश्राम करिवे की ठोर है। सो आपु जब श्रीगोकुल पधारते, तब आपु उहां उतरते। सो यह भीतर की वैठक है। सो श्रीआचार्यजी आपु श्रीनवनीतप्रियजी कों पालने झुलाय दधिकादो जन्माष्टमी को उत्सव किये हैं। सो ऊपर गज्जनधावन की वार्ता में वरनन करि आये हैं।

सो श्रीआचार्यजी आपु स्नान करि छोंकर के नीचे अपनी वैठक में बिराजे हते। तब सब वैष्णव परमानंददास सहित स्नान करि प्रभुनके (श्रीआचार्यजी के) पास बैठे हते। पाछें श्रीआचार्यजीने श्रीयमुनाष्टक को पाठ परमानंददासकों सिखाये। तब परमानंददास के हृदय में यमुनाजी को स्वरूप स्फुरयो। सो श्रीयमुनाजी को जस वरनन कियो। सो पद—

रामकली—२ 'श्रीयमुनाजी यह प्रसाद हौं पाओं०'। २ 'श्रीयमुनाजी दीन जान मोहि दीजे०'। ३ 'कालिंदी कलि कल्मष-हरनी०'।

एसे पद परमानंददासनें श्रीआचार्यजी के आगे श्रीयमुनाजी के तटपें गाये। तब श्री आचार्यजी आपु प्रसन्न होय के परमानंद दास कों श्रीगोकुल की बाललीला के दरसन करवाये। सो बाल-लीला विशिष्ट परमानंददास कों एसे दरसन भये जो-ब्रजभक्त श्रीयमुनाजल भरत हैं, और श्रीठाकुरजी आप ब्रजभक्तन सों नाना प्रकारकें ख्याल लीला करि सुख देत हैं। सो परमानंददास लीलाके दरसन करि एसे ही पद श्रीआचार्यजी के आगे गाये। सो पद—

राग बिलावल-१ 'श्रीयमुनाजल घट भरि ले चली श्रीचंद्रावलि नारी०'। राग सारङ्ग- 'लाल नेक टेको मेरी बहियाँ०'।

ता पाछे परमानंददासने श्रीगोकुल की बाललीला के पद वहोत किये। सो जामें श्रीगोकुल को स्वरूप जान्यो परे। सो पद-

राग कान्हरो—१ 'गावत गोपी मधु मृदुवानी०' २ 'रानी जसुमति गृह आवत गोपीजन०'। राग हमीर—३ 'गिरधर सब ही अंग को बांको०'।

या भांति परमानंददासने वहोत कीर्तन किये। सो श्रीगोकुल के दरसन करिके परमानंददास कों श्रीगोकुल पै वहोत आसक्ति भई। तब श्रीआचार्यजी के आगे एसे प्रार्थनाके पद गाये जो-मोकों श्रीगोकुल में आपके चरणारविंद के पास राखो. जासों नित्य श्रीठाकुरजी के दरसन करों, और सगरी लीला को अनुभव होय। सो पद-राग सारंग—१ 'यह मागौं जसोदानंदन०'।

राग कान्हरो—२ 'यह मागों संकर्षन वीर०'।

सो एसे कीर्तन परमानंददासने प्रार्थना के गाए सो सुनिके श्रीआचार्यजी आपु परमानंददास के ऊपर वहोत प्रसन्न भये।

वार्ताप्रसंग ३-पाछे श्रीआचार्यजी आपु परमानंददास सहित सब वैष्णव समाज लेके श्रीगोकुल तें गोबर्द्धन पधारे। सो उत्थापन के समय श्रीआचार्यजी आपु गिरिराज पधारे। तहां स्नान करि श्री आचार्यजी श्रीगिरिराज ऊपर श्रीगोवर्द्धननाथजी के मंदिर पधारे। तब परमानंददास न्हाय के श्रीगिरिराज कों साष्टांग दंडवत करिके पर्वतके ऊपर मंदिरमें आय, उत्थापनके दरसन किए। सो श्रीगोवर्द्धन नाथजी के दरसन करत ही परमानंददास आसक्त होय रहे। तब श्रीआचार्यजी आप श्रीमुखतें परमानंददास सों कहे जो-परमानंद दास! कछू भगवल्लीला के कीर्तन श्रीगोवर्द्धननाथजी कों सुनावो।

तब परमानंददास अपने मनमें विचार किये, जो–मैं कहा गाऊँ ? क्यों जो रसना तो एक है, और श्रीगोवर्द्धननाथजी को स्वरूप तो अपार है, और इनकी लीला हू अपार है। जो वस्तु स्मरन करों सो ताही में बुद्धि विक्षिप्त होय जात है। परंतु श्रीआचार्यजी की आज्ञा है, तासों कछू गावनो तो सही। सो एसो पद गाऊं जामें प्रथम तो अवतार-लीला, पाछें कुंज-लीला, पाछे चरणारविंद की वंदना, पाछें स्वरूप को वर्णन, ता पाछे माहात्म्य सहित श्रीठाकुरजी की लीला होय। सो एसो पद गायो। सो पद–

राग बिलावल–१ 'मोहन नंदरायकुमार०'। सो यह प्रार्थनाको पद गायके पाछे आसक्ति के पद गाये।

राग आसावरी–२ 'माई मेरो माधो सों मन मान्यो०'।

राग गौरी–२ 'मैं अपुनो मन हरिसों जोरयो०'।

राग कान्हरो–४ 'तिहारी बात मोही भावत लाल०'

ता पाछे श्रीआचार्यजी श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेनआरती किये। ता समय परमानंददासने यह पद गायो। सो पद–

राग केदारो–१ 'पोढें रंग महल गोविंद०'।

सो एसे पद परमानंददासजीने बहोत गाये.सो सुनिके श्रीआचार्यजी आपु बहोत प्रसन्न भये। ता पाछै श्रीआचार्यजी श्रीगोवर्द्धननाथजी को पोढायके अनोसर करि पर्वत नीचे पधारे। तब श्रीआचार्यजीने रामदास भीतरिया सों कह्यो जो–परमानंददास को प्रसादी दूध पठाय दीजो। तब रामदासने वह प्रसादी दूध पठायो जो परमानंददास प्रसादी-दूध लेन लागे, सो तातो लाग्यो। तब सीरो करिकें लियो।

पाछे परमानंददास श्रीआचार्यजी पास आय दंडवत करिके बैठे। तब श्रीआचार्यजी आप परमानंददास सों पूछें जो–परमानंददास! महाप्रसादी दूध लियो सो कैसो हतो ? तब परमानंददासनें श्रीआचार्यजी सों कह्यो जो-महाराज! दूध तो तातो हो। तब श्री आचार्यजीने सब भीतरियान सों बुलाय के पूछ्यो, जो-दूध तातो क्यों भोग धरत हो ? सो आछो सुहातो होय तब भोग धरनो। तब सगरे भीतरियानने कही जो-महाराज! अब ते सुहातो सीरो करिके भोग धरेंगे।

भावप्रकाश—सो परमानंददास कों श्रीआचार्यजी आपु प्रसादी

दूध यासों दिवायो, जो-श्रीठाकुरजी कों दूध बहोत प्रिय है। तासों सेवक कों दूध निकुंज-लीला संबंधी रसके दान करन कों, और सामग्री बिगरी सुधरी वैष्णवन द्वारा श्रीठाकुरजी कहत हैं। जो-सामग्री वैष्णव सराहें तब जानिये जो-श्रीठाकुरजी भली भांति सों अनुभव किये। सो या भावतें दूध पिये।

ता पाछें परमानंददास कों दूध अधरामृत पिये तें सगरी रात्रि लीला-रस को अनुभव भयो। तब रात्रि की लीला में मगन होय के ये पद गाये। सो पद-

राग कान्हरो—१ 'आनंदसिंधु बढयो हरि तन में०'।
२ 'पिय मुख देखत ही रहिये०'।
राग गोरी— ३ 'कौन रस गोपिन लीनो घूंट०'।
४ 'यातें माई! भवन छांड़ि बन जइये०'।
राग हमीर— ५ 'अमृत निचोइ कियो इकठोर०'।
राग बिहागरो — ६ 'यह तन नवलकुंवर पर वारों०'।

सो या भांति परमानंददासने सगरी रात्रि लीलाको अनुभव कियो, सो बहुत कीर्तन गाये। ता पाछें प्रातःकाल भयो, तब श्रीआचार्यजी आपु स्नान करिके पर्वत ऊपर पधारे, सो श्रीगोवर्द्धन नाथजी कों जगाये। तब परमानंददास ने यह पद गायो। सो पद-

रामकली-१ 'जागो गोपाललाल! देखों मुख तेरो०' २ 'लाल को मुख देखन कों आई०'। ३ 'ग्वालिन पिछवारे व्हे बोल सुनायो०'।

सो या प्रकार के पद परमानंददास ने बहोत गाये। ता पाछे श्रीआचार्यजी ने परमानंददास कों श्रीगोवर्द्धननाथजीके कीर्तन की सेवा दीनी। सो नित्य नये पद करिके परमानंददास श्रीनाथजी कों सुनावते।

वार्ताप्रसंग ४-एक दिन एक राजा अपनी रानी कों संग लेके ब्रज में यात्रा करिवे आयो। वह राजा श्रीआचार्यजी को सेवक हतो। सो श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन करिके डेरान में आइके वा राजानें अपनी रानी सों कह्यो जो-श्रीगोवर्द्धननाथजी को दरसन बहुत सुंदर है, सो तू श्रीगिरिराज पर जायके श्रीगोवर्द्धननाथजीके दरसन करि आव। तब रानीनें राजासों कह्यो जो-जैसे हमारी रीत है, तैसे परदान में दरसन होय तो मैं करूं। तब राजानें रानी सों कही जो-ये ब्रज के ठाकुर हैं सो श्रीठाकुरजी के दरसन में परदा

को कहा काम है ? सो ये ठाकुर व्रज के हैं सो काहू को परदा राखत नांही। या प्रकार राजा ने रानी कों वहोत समझाई, पर रानी ने राजा को कह्यो मान्यो नांही।

तब राजा ने श्रीआचार्यजी सों विनती कीनी, जो-महाराज ! मैंने रानी कों वहोत समुझायो, परन्तु वह मानत नांही, जो वह परदा में दरसन कियो चाहत है। तब श्रीआचार्यजी आपु कहे, जो-वाको परदा में ही ले आव, जो सवतें पहले दरसन करवाय दें। तब रानी परदान में आई और श्रीनाथजी के दरसन करन लागी। तब श्रीनाथजी (भक्तोद्धारक स्वरूप सों) सिंहासन सों उठिके सिंह-पौरि के किंवाड़ खोलि दिये, सो भीड वा रानी के ऊपर परी। सो वाके देह के सब वस्त्र निकसि गये। तब रानी बहोत लज्जित भई। जब राजा सों रानी ने डेरान में आयके सब समाचार कहे। तब राजा ने रानी सों कही, जो-मैं तोसों पहले ही कह्यो हतो, जो-ये श्रीनाथजी व्रज के ठाकुर हैं,सो इनने काहू को परदा राख्यो नाहीं है।

ता समय परमानंददास यह पद गावत हते, सो वाकी एक तुक कही हती। सो पदः –

'कौन यह खेलिवे की वानि।
मदन गोपाललाल काहू की राखत नांहिन कानि० ॥'

सो यह सुनिके श्रीआचार्यजी परमानंददास कों बरजे, जो-ऐसे न कहिये, यासों ऐसे कहो, जो-'भली यह खेलिवे की वानि।'

भावप्रकाश—सो काहेतें ? जो अब ही परमानंददास कों दास पदवी दिये हैं। सो दासभाव सों रहे, और बोले, तो प्रभु आगे कृपा करें। जब परम भाव दृढ़ होय, तब बराबरी सों वार्ता होय। तासों बिना अधिकार अधिक भाव नांही है। जो करे तो नीचे गिरे। सो जब श्रीठाकुरजी सरल भाव को दान करें, तब ही बने।

दूसरो आसय, श्रीआचार्यजी आपु अपनो स्नेह श्रीगोवर्द्धन-नाथजी में राखे सो सर्वोपरि दिखाये, जो-स्नेही सों ऐसे न बोले। जो कार्य सनेही प्रीति सों न करे सो तासों हू कहिये, जो-भलो कार्य किये। ऐसी सनेह की रीति है।

तासों श्रीआचार्यजी आपु परमानंददास कों बरजे-'कौन यह खेलिवे की वानि०।' या भाँति सों कबहू न कहिये। कहिवे, बरजिवे लायक तो व्रजभक्त हैं, सो तासों चाहे तैसें बोलें। तासों तुम ऐसे कहो जो-'भली यह खेलिवे की वानि।'

तब परमानंददास ने ऐसे ही पद गायो। सो पद—

राग सारंग—'भली यह खेलिबे की बानि०।'

सो यह पद सुनिकें श्रीआचार्यजी आपु बहोत प्रसन्न भये।

या प्रकार सहस्त्रावधि कीर्तन परमानंददास ने किये। तासों परमानंददास के पदन में बाललीला भाव, (और) रहस्य हू झलकत है। सो जा लीला को अनुभव परमानंददास कों भयो, ता ही लीला के पद परमानंददास गाये। परन्तु श्रीआचार्यजी आपु परमानंददास कों बाललीला रस को दान हृदय में कियो है, तासों बाललीला गूढ़ पदन में हू झलकत है।

वार्ताप्रसंग ५-और एक दिन सगरे भगवदीय सूरदासजी, कुंभनदासजी तथा रामदास आदि सब वैष्णव मिलिके जहां परमानंददास रहत हते तहाँ इनके घर आये। सो सब भगवदीय कों अपने घर आये देखिके परमानंददास अपने मन में बहोत प्रसन्न भये, जो-आज मेरो बड़ो भाग्य है। सो सब भगवदीय मेरे ऊपर कृपा करिके पधारे, ये भगवदीय कैसे हैं जो-साक्षात श्रीगोवर्द्धननाथजी को स्वरूप ही हैं। तासों आज मो ऊपर श्रीगोवर्द्धननाथजी नें बड़ी कृपा करी है।

भावप्रकाश—सो काहेतें? जो-अनेक रूप होयके श्रीठाकुरजी मेरे घर पधारे हैं। सो भगवदीय के हृदय में श्रीठाकुरजी आपु विराजत हैं. तासों मेरे बड़े भाग्य हैं। अब मैं कृतकृत्य होय गयो, जो सब भगवदीय कृपा किये हैं। सो प्रथम तो इन भगवदीयन की न्योछावरि करी चाहिये। सो ऐसी कहा वस्तु है? जासों सब भगवदीयन की न्योछावरि होय।

पाछे परमानंददास ने भगवदीय वैष्णवन सों मिलिकें ऊँचे आसन बैठारि के यह पद गायो। सो पद—

राग बिहागरो १—'आये मेरे नंदनंदन के प्यारे०।'

ता पाछें दूसरो पद गायो। सो पद—

राग बिहागरो २—'हरिजन-संग छिनक जो होई।'

सो ऐसे पद परमानंददास ने गाये। सो सुनिके सब भगवदीय परमानंददास के ऊपर बहोत प्रसन्न भये। तब परमानंददास ने सब वैष्णवन सों विनती कीनी, जो-आजु कृपा करिके मेरे घर पधारे सो कछू आज्ञा करिये। तब रामदासजी ने पूछी, जो-परमानंददास!

ब्रज में सगरो प्रेम ब्रजभक्तन को हैं, सो श्रीनंदरायजी, गोपीजन, ग्वाल, सखानको। तामें सब तें श्रेष्ठ प्रेम किन को है ?

भावप्रकाश—सो काहेतें ? जो-तिहारी बाललीला में लगन बहुत है। और तुम कृपापात्र भगवदीय हो, तासों यह संदेह है सो दूरि करो। सो या प्रकार रामदासजी ने परमानंददास सों यों पूछी, जो--श्रीआचार्यजी के अभिप्रायमें तो गोपीजनको प्रेम बहोत है। और परमानंददासने नंदालय की लीला और बाललीला बहोत वर्णन किये हैं, तासों श्रीआचार्यजी के हृदय के अभिप्रायकी खबरि परी के नांही ? तासों परमानंददासकी परीक्षा लेनी।

ता समय परमानंददास ने यह पद गायो। सो पद—

राग नायकी १–'गोपी प्रेमकी ध्वजा० ।'

राग कान्हरो २–'ब्रजजन सम धर पर कोउ नांही० ।'

सो यह पद परमानंददास ने गाये। तब सगरे वैष्णव कहे,जो-परमानंददास ! तुम धन्य हो।

या प्रकार सगरे वैष्णव प्रसन्न होयके परमानंददास की सराहना करत बिदा होय अपने घर आये। ता पाछे परमानंददास ने बहोत दिन तांई श्रीगोवर्द्धननाथजी के कीर्तन की सेवा कीनी।

वार्ताप्रसंग ६—ता पाछे एक दिन परमानंददास श्रीगुसांईजी के और श्रीनवनीतप्रियजी के दरसन कों गोपालपुर तें श्रीगोकुल आये, सो दरसन करिके रात्रि तहां रहे। पाछे प्रातःकाल श्रीगुसांईजी स्नान करिके श्रीनवनीतप्रियजी के मंदिर में पधारे तब परमानंददास कों बुलाये। तब परमानंददास आगे आय दंडवत किये। सो तब श्रीगुसांईजी आपु परमानन्ददास सों कहे, जो-श्रीठाकुरजी कों सगरी लीला ब्रज की बहोत प्रिय है। सो नित्य लीला ब्रज की श्रीठाकुरजी कों सुनावे, सो तो कोई काल में हू पार पावे नाहीं। सो काहेतें ? जो-एक लीला को पार पैये, तो सगरी लीला कौन गावे। परंतु मैं एक कीर्तन करि देत हों, तामें सगरी ब्रज की लीला को अनुभव है। सो तुम या समय नित्य गाईयो। तब परमानन्ददास कहे जो-महाराज ! वह पद कृपा करि के बताइये। सो श्रीगुसांईजी तो मारग के चलायवे वारे हैं सो भाषा के पद करे नांही। तासों संस्कृत में कीर्तन गायो। सो पद—

१—'मंगल मंगलं ब्रजभुवि मंगलम्० ।'

सो यह पद श्रीगुसांईजी आपु गायके परमानन्ददास कों गवाये। सो परमानन्ददास 'मंगल मंगल०' गाये। तब मंगल रूप परमानन्ददास ने और हू पद गाये। सो पद--

राग भैरव १-'मंगल माधो नाम उच्चार०।'

सो यह पद परमानन्ददास ने गायो, ता पाछें श्रीगुसांईजी आपु मंगल भोग सराय के मंगला आरती किये। ता समय परमानन्ददास ने यह पद गायो। सो पद—

राग भैरव-'मंगल आरती करि मन मोर०।'

सो या प्रकार श्रीगुसांईजी कृत 'मंगल मंगल०' के अनुसार परमानन्ददास ने बहोत कीर्तन किये, और श्रीगुसांईजी कृत मंगल मंगलं० पद नित्य गावते।

भावप्रकाश—यामें सगरी ब्रजलीला है, सो ठाकुरजीकों नित्य सुनावत हैं। और मंगल मंगलं० के पाठतें ब्रजलीलाको सब पाठ होय। सो तहां मंगला को पद परमानंददास ने कियो सो तामें कहे-' मंगल तन वसुदेवकुमार० '। सो तहां यह संदेह होय जो-परमानंददास तो नंदनंदन के उपासक हैं। सो वसुदेवकुमार ब्रजलीलामें कहे, ताको कारन कहा ?

तहां कहतहैं, जो-वेणुगीत और युगलगीत में 'देवकीसुत' गोपिकानने कहे, सो ये कुमारिकाके भावतें। सो काहेतें ? जो--कुमारिका श्रीयसोदाजी कों माता कहते, तासों श्रीठाकुरजी में पतिभाव है। याही सों वसुदेव—सुत कहि पतिभाव दृढ करत हैं। जो यसोदा सुत कहें, तो भाइ बहन को भाव होय।

पाछे परमानंददास श्रीगोवर्द्धनधर के दरसन कों श्रीगोकुलतें श्रीगिरिराज आये। सो तहां मंगला आरती पहलै ' मंगल मंगलं० ' पद परमानंददासने गायो। सो श्रीगोवर्द्धनधरके यहां 'मंगल मंगलं०' की रीत भई। सो वे परमानंददास एसे कृपापात्र भगवदीय हते।

वार्ताप्रसंग-७ और जब जन्माष्टमी आवती तब श्रीगुसांईजी आपु श्रीनवनीतप्रियजी कों पंचामृत स्नान करवायके सिंगार करि श्रीगिरिराज पर्वत ऊपर पधारिके श्रीगोवर्द्धननाथजीके सिंगार करते। ता पाछे राजभोग सों पहोंचिके फेरि श्रीगिरिराज तें श्रीगोकुल आवते। सो तहां श्रीनवनीतप्रियजी कों मध्यरात्रि कों जन्मकी रीति करिके पलना झुलाय श्रीनाथजीके यहां नंदमहोत्सव करते। सो जब

जन्माष्टमी आई, तब श्रीगुसांईजी आप परमानंददासजीकों संग लेय के श्रीगिरिराज सों श्रीगोकुल पधारे। सो जन्माष्टमी के दिन श्री गुसांईजी आपु श्रीनवनीतप्रियजी कों अभ्यंग कराये। ता समय परमानंददासने यह बधाई गाई। बधाई—

राग धनाश्री–१ 'मिलि मंगल गावो माई०'।

ता पाछे श्रीगुसांईजीने श्रीनवनीतप्रियजी के सिंगार करिके तिलक कियो ता समय परमानंददासने यह पद गायो। सो पद–

राग सारंग–१ 'आज बधाई को दिन नीको०'।

२ 'घरघर ग्वाल देत हैं हेरी०'।

या प्रकार परमानंददासने बहोत पद गाये। ता पाछें अर्द्ध रात्रिके समय श्रीगुसांईजी आपु जन्म करायके श्रीनवनीतप्रियजीकों पालने में पधराये, श्रीनंदरायजी श्रीयसोदाजी, गोपी ग्वाल को भेख धराये। ता समय परमानंददासने यह पद गायो। सो पद –

राग धनाश्री–१ 'सोवन फूलन फूली जसोदा०'।

भावप्रकाश-सो या पदमें परमानंददासजो यह कहे जो–'एते दसक होय जो औरे तो सब कोऊ सचु पावे'। सो भगवदीयनके वचन सत्य करिवेके लिये श्रीगुसांईजी के बालक सातों और श्रीगुसांईजी तथा श्रीआचार्यजी तथा श्रीगोवर्द्धननाथजी सो ये दस स्वरूप प्रकट होयके सबकों सुख दिये हैं। सो 'सब' माने सगरे दैवी पुष्टिमार्गीय। सो या प्रकार सों भाव सहित परमानंददासजीने कीर्तन गाये।

पाछें श्रीनंदरायजी और गोपी ग्वाल वैष्णवनके जूथ अपने लालजी सब (कों) लेके दधिकादो किये। तब परमानंददास को चित्त आनंद में विक्षिप्त होय गयो। वा समय परमानंददास नाचन लागे और यह पद गायो। सो वा प्रेम में परमानंददास रागको हू क्रम भूलि गये। सो रात्रिको तो समय और सारंग में गाये। सो पद–

राग सारंग—'आजु नंदराय के आनंद भयो०'।

यह पद गाये पाछे परमानंददास प्रेम में मूर्छा खाय भूमिमें गिरि पडे। तब श्रीगुसांईजी आपु अपने श्रीहस्तकमलसों परमानंददास कों उठायके अंजुलि में जल लेके वेदमंत्र पढिके आपु परमानंददास के ऊपर छिरके। सो तब उच्छलित प्रेम जो विकल करतो, सो हृदयमें स्थिर भयो। सो परमानंददास सगरी लीला को अनुभव किये, और गान किये।

या प्रकार परमानंददास के ऊपर श्रीगुसांईजीनें कृपा करी। ता पाछे यह पद पलना को परमानंददासने गायो। सो पद—

राग बिलावल–१ 'हालरो हुलरावत माता०'।

भावप्रकाश—सो या भांति सों 'अखिल भुवनपति गरुडागामी' एसे परमानंदजीने कह्यो। सो अखिल भुवन-पति यातें जो श्रीभगवान गरुड पैं बिराजमान सो (तो) सब जगत्के पति है। और नंदसुवन ठाकुर, सो परमानंददासने कही, जो–ये मेरे स्वामी हैं।

सो यह कीर्तन सुनिके श्रीगुसांईजी आपु परमानंददास को ऊपर वहोत प्रसन्न भये। ता पाछें परमानंददासने यह पद कान्हरो रागमें करिके गायो। सो प्रेम में राग को क्रम नांही, लीला को क्रम। सो जेसी लीला करी, सो स्फुरी। सो तैसे परमानंददास गाये। सो पद—

राग कान्हरो—१ 'रानी तिहारो घर सुबस बसो०'।

सो यह असीसको पद परमानंददासने गायो। तब श्रीगुसांई जी आपु अपने पुत्र श्रीगिरधरजीकों श्रीनवनीतप्रियजी के पास राखिके दधिकादौं किये। ता पाछे परमानंददास कों संग लेके श्रीगु-सांईजी आपु श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन किये। सो दधिकादौं देखिके परमानंददास लीलारस में मग्न होय गये। ता पाछें श्रीगु-सांईजी आपु श्रीगोवर्द्धननाथजी कों राजभोग धरिके वाहिर आये। तब श्रीगुसांईजी आपु परमानंददास की अलौकिक दसा देखके कहे जो–जैसे कुंभनदास को किसोर लीलामें निरोध भयो, सो तैसे बाल-लीला में परमानंददास को निरोध भयो है।

पाछे परमानंददास श्रीगुसांईजी कों दंडवत करि, पर्वततें नीचे उतरे सो श्रीगोवर्द्धननाथजी की ध्वजा कों दंडवत करि, सुरभी कुंड ऊपर आयके अपने ठिकाने कुटीमें आय बोलिवो छोडि दियो। सो नंदमहोत्सवके रसमें मग्न होयके परमानंददास अपनी देह छोडिवे को विचार करिके सुरभीकुंड ऊपर आयके सोये। और यहां श्री-गुसांईजी आपु श्रीनाथजी की राजभोग आरती करिके अनोसर करवाये।

पाछे श्रीगुसांईजी आपु सेवकनसों पूछें, जो–आज राजभोग आरती के समय परमानंददास कों नांही देखे, सो कहां गये? तब एक वैष्णवने श्रीगुसांईजी सों आय बिनती कीनी जो–महाराज!

परमानंददासजी तो आजु विकल से दीसत हैं, और काहू सों बोलत नांही, और सुरभीकुंड पे जायके सोये हैं। तब श्रीगुसांईजी आपु वा वैष्णव कों संग ले सुरभी कुंड ऊपर पधारिके परमानंददास के पास आये। परमानंददास के माथे पर श्रीहस्त फेरिके श्रीगुसांईजी आपु परमानंददास सों कहे जो परमानंददास ! हम तुम्हारे मन की जानत हैं। जो अब तिहारो दरसन दुर्लभ भयो। तब परमानंददास ने उठि के श्रीगुसांईजी कों साष्टांग दंडवत किये। ता समय यह पद परमानंददास ने गायो। सो पद --

राग सारंग—'प्रीत तो श्रीनंदनंदन सों कीजे०'

सो यह पद परमानंददास ने श्रीगुसांईजी कों सुनायो।

भावप्रकाश—सो परमानन्दजी ने या पद में श्रीगुसांईजी सों प्रार्थना कीनी, जो प्रीत हू तुमसों करनो सो सदा कृपा एकरस करो। सो परम कृपालु, अपने हस्त कमल की छाया तें जन कों राखत हैं। या समय हू मोकों दरसन देय मेरे मस्तक ऊपर श्रीहस्तकमल धरे। सो मेरे अंतःकरणमें जो मेरो मनोरथ हतो सो पूरन कियो। सो वेद पुरान सब ही कहत हैं जो सदा भक्तन को भायो करि आनंद दिये हैं। जैसे एक समें इन्द्रकी पदवी लायक जीव कोई न देखे तब भगवान ही इन्द्र होय के इन्द्र को कार्य चलाये। सो प्रसाद वैष्णव सुदामा भक्तकों दिये। तामें सुदामा को वैभव पाये हू मोह न भयो। सो तेसें आपु जो व्रज में लीला करत हैं सो परमानंदरूप सों कृपा करके मोकों दान दिये। सो आपके गुन मैं कहां तांई कहौं। एसी प्रार्थना परमानंददास जी श्री गुसांईजी सों किये।

यह पद सुनिके श्री गुसांई जी आप बहुत प्रसन्न भये। ता समय एक वैष्णव ने परमानंददास सों कह्यो, जो मोकों कछू साधन बतावो सो मैं करों। तातें श्रीठाकुरजी आपु मेरे ऊपर प्रसन्न होय के कृपा करें।

तब परमानंददास वा वैष्णव सों प्रसन्न होय के कहे जो तुम मन लगाय के सुनो। जो सुगम उपाय है सो मैं कहूँ। या बात कों मन लगाय के सुनोगे तो फल सिद्धि होयगी। सो या प्रकार प्रीत सों समाधान करि के परमानंदासने एक पद वा वैष्णव कों सुनायो। सो पद—

राग भैरव—'प्रात समय उठ करिये श्री लछमन सुत गान०'

सो या प्रकार यह कीर्तन परमानंददासने गायो। यह सुनि के श्री गुसांईजी और सगरे वैष्णव प्रसन्न भये।

ता पाछे श्रीगुसांईजी आपु परमानंददाससों पूछे जो-परमानंददास! अब तिहारो मन कहां है? तब परमानंददासने यह कीर्तन सारंग राग में गायो। सो पद—

राग सारंग—१ 'राधे बैठी तिलक संवारति०'।

सो या प्रकार जुगल स्वरूप की लीला में मन लगाय के परमानंददास देह छोड़ि के श्रीगोवर्द्धननाथजी की लीलामें जायके प्राप्त भये। पाछे श्रीगुसांईजी गोपालपुर में आयके स्नान करिके पर्वतके ऊपर श्रीगोवर्द्धननाथजी कों उत्थापन कराये। पाछे सेन पर्यंत सेवा सों पहोंचिकें अनोसर करवाय पर्वत तें उतरि अपनी बैठक में आय बिराजे। तब सब वैष्णवननें परमानंददास की देह को अग्निसंस्कार कियो और पाछे गोपालपुर में आय के श्रीगुसांईजी के आगे बहोत बड़ाई करन लागे।

सो ता समय श्रीगुसांईजी आपु उन वैष्णवन के आगे यह वचन श्रीमुख सों कहे, जो-ये पुष्टिमारग में दोइ 'सागर' भये। एक तो सूरदास और दूसरे परमानंददास। सो तिनको हृदय अगाधरस, भगवल्लीला रूप जहां रत्न भरे हैं। सो या प्रकार श्रीगुसांईजी आपु श्रीमुखसों परमानंददासकी सराहना किये। सो वे परमानंददासजी श्रीआचार्यजी के एसे कृपापात्र भगवदीय हते। जिनके ऊपर श्रीगोवर्द्धननाथजी सदा प्रसन्न रहते। तातें इनकी वार्ताको पार नांही। सो अनिर्वचनीय है, सो कहां तांई कहिये।

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक कुंभनदासजी गोरवा क्षत्री, जमुनावते रहते, जिनके पद अष्टछाप में गाइयत हैं तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं—

★

भावप्रकाश—

ये कुंभनदासजी लीलामें श्रीठाकुरजीके 'अर्जुन' सखा अंतरंग तिनको प्राकट्य हैं। सो दिवस की लीला में तो अर्जुन सखा हैं और रात्रि की लीला में विसाखा सखी हैं, सो श्रीस्वामिनीजी की। सो

तिनको (विसाखाजीको) दूसरो स्वरूप कृष्णदास सेवन, सदा पृथ्वी परिक्रमा में श्रीआचार्यजी के संग रहते, और कुंभनदासजी सदा श्री-गोवर्द्धननाथजी के संग रहते। सो या भावतें कुंभनदासजी सखाभाव में अर्जुन सखारूप, और सखी भाव में विसाखा रूप हैं। सो गिरि-राज में आठ द्वार हैं। तामें एक द्वार आन्योर पास है। सो तहां की सेवा के ये मुखिया हैं।

और गाम को नाम 'जमुनावता' यासों कहत हैं, जो-श्रीयमु-नाजी के प्रवाह, सारस्वत कल्प में दोय हते। एक तो जमुनावता होय कें आगरे के पास जात हतो,और एक चीरघाट होय श्रीगोकुल होयकें। आगें दोऊ धारा एक मिलि सारस्वत कल्प में बहती। और ता समय आगरा आदि गांम नांही हतो। दोऊ धारा एक मिलिके आगे को गई हती। सो चीरघाट तें धारा होयके गिरिराज आवती, तासों पंचाध्याई को रास 'परासोली' में चंद्रसरोवर ऊपर किये। सो व्रजभक्त, अंतर-धानके समय चंद्रसरोवर सों द्रुमलतान सों पूछत चली। सो गोविंन्द-कुंड के पास होयके अप्सराकुंड ऊपर आयके श्रीठाकुरजी के चरणा-रविंद के दरसन भये, तासों अप्सराकुंड ऊपर चरनचिन्ह हैं।

तहां ते आगे चलिके राधा सहचरी की बेनीगुही, सो सिंदूर, काजर सगरो सिंगार कियो तासो वहां सिंदूर,कजली और बाजनी सि-ला है। ता पाछे जब रुद्रकुंड ऊपर आयके राधा सहचरीकों मान भयो सो श्रीठाकुरजी सों कह्यो जो-मोसों तो चल्यो नांही जात है। तब श्री-ठाकुरजीके कांधे चढन के मिष वृक्ष तरे ही अंतर्धान भये। तब राधा सहचरी रुदन कियो, जो—

'हा नाथ रमणप्रेष्ठ क्वासि २ महाभुज !
दास्यास्ते कृपणाया मे सखे दर्शय सन्निधिम्'।

तासों वा कुंड को नाम 'रुद्रकुंड' है। सो अब तांई लोग वासों रुद्रकुंड कहत हैं। पाछें तहां सब गोपी आय मिली। पाछे आगे चलिके 'जान' 'अजान' वृक्ष सों पूछते पूंछते जमुनावता श्रीजमुनाजीकी पुलिन में गोपिका गीत ('जयति तेऽधिकं') गायके सब भक्तनने रुदन कियो। तब श्रीठाकुरजी आपु प्रकट होयके फेरि 'परासोली' चंद्रसरोवरपें रास किये, सो श्रम भयो। तब श्रीयमुनाजी के जलमें जलविहार किये। सो या प्रकार सारस्वतकल्प की पंचाध्याई को रास श्रीगिरिराज के पास है। और व्रजभक्त ढूंढत २ श्रीठाकुरजीके मिलनार्थ दूरि गई। सो अंधि-

यारो देखिके उहांते फिरे।'तमः प्रविष्टमालक्ष्य ततो निववृतुर्हरेः'। इति।

सो यह अंधियारो श्यामढाक के आगे 'सामई' गाम हैं। सो तहां श्यामवन है,सो महासघन। ताते वहां पंचाध्याईके अनुसार सगरे स्थल दरसन देत हैं। और कालीदह घाटतें हू श्रीवृंदावन कहत हैं। तहां हू बंसीबट है। तहां अनेक श्वेतवाराह कल्पमें पंचाध्याईको रास उहां ही किये हैं। और सारस्वतकल्प में शरद ऋतु किए, सो 'परासोली' श्रीगिरिराज ऊपर किये। पाछें वसंत चैत्र वैसाख को रास केसीघाट पास बंसीबट नीचे किये। सो या प्रकार रास दोऊ ठिकाने। परंतु मुख्य पंचाध्याई सारस्वत कल्प को रास गिरिराज को।

या प्रकार लीला के भेद हैं। तासों 'जमनावता' में एक धारा श्रीयमुनाजीकी सारस्वतकल्प में,बहती, तासों वा गामको नाम'जमुनावता' है। सो नंदगाम बरसाने के मध्य संकेत पास धारा होयके श्रीयमुनावता आई। तासों संकेत के पास श्रीयमुनाजी के पधारिवे को चिन्ह है। सो या प्रकार यातें कह्यो जो-अबके जीवको विश्वास दृढ होत नांही है। सो सब चिन्हनकों देखे, सुने तब विश्वास होय। और जब फल सिद्ध होय, तब भाव बढ़े, तासों खोलिके कहे।

वार्ताप्रसंग १—सो जमुनावता में कुंभनदास रहते। सो परासोली चंद्र सरोवर के ऊपर कुंभनदास के बापदादान के खेत हते। तहां कुंभनदास खेती करते। सो परासोली में कुंभनदास खेत अर्थ बहोत रहते हते। उन कुंभनदास कों बालपने तें गृहासक्ति नांही, और झूठ बोलते नांही, और पापादिक कर्म नांही करते। सूधे व्रजवासी की रीति सों रहते।

सो जब कुंभनदास बडे भये। तब 'जेत' (गांव) के पास बहुलावन है तहां कुंभनदास को व्याह भयो, सो स्त्री साधारन आई, लीला संबंधी तो नांही। परंतु कुंभनदासजी सरीखे वैष्णव भगवदीयन को संग निष्फल जाय नांही, सो उद्धार होगयो। परंतु अब ही श्रीगोवर्द्धननाथजी श्रीगिरिराज ऊपर प्रकटे नांही। जब श्रीगोवर्द्धननाथजी श्रीगिरिराज ऊपर प्रकट होयके श्रीआचार्यजीकों अपने पास बुलावेंगे, तब श्रीआचार्यजी आपु सरन लेयगें,और तब ये भगवदीय प्रसिद्ध होयगें। सो एक समय श्रीआचार्यजी आपु पृथ्वी-परिक्रमा करत दच्छिन में झारखंड में पधारे। सो तब श्रीगोवर्द्धननाथजी श्रीआचार्यजी सों कहे जो-हम श्रीगोवर्द्धन में प्रकटे हैं, सो आपु यहां

आयके हमको बाहिर पधरायके हमारी सेवा जगत में प्रगट करि प्रकाश करो। तब श्रीआचार्यजी आपु पृथ्वी परिक्रमा उहां झारखंडमे रात्रिके सूधे व्रज कों पधारे। तब दामोदरदास हरसानी, कृष्णदास मेघन, माधवभट्ट,नारायनदास और रामदास सिकंदरपुरवारे ये पांच सेवक श्रीआचार्यजी के संग हते। सो तब श्रीआचार्यजी श्रीगोवर्द्धन पर्वत के नीचे 'आन्योर' में सदूपांडे के द्वारपे एक चोतरा हतो तापे आय बिराजे। पाछें श्रीगोवर्द्धननाथजी के प्रागट्य को प्रकार श्री-आचार्यजी सदूपांडे, और उनके भाई माणिकचंद पांडे, नरो भवानी, ये सब सेवक भये हते तिनसों पूछ्यो। सो सब प्रकार ऊपर सदुपांडे की वार्ता में कहि आये हैं। पाछें रामदास चौहान पूछरी पास गुफा में रहते सो सेवक भये तिनकों श्रीआचार्यजी ने श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेवा सोंपी। सो रामदास व्रजवासी आदि औरहू सेवक भये। सो कुंभनदास 'जमुनावता' गाम में रहते। तहां ये समाचार सुने जो एक बडे महापुरुष 'आन्योर' में आये हैं। सो श्रीगोवर्द्धननाथजी श्रीठाकुरजी श्रीगोवर्द्धन पर्वत में सों प्रकट करे हैं, और सदूपांडे आदि व्रजवासी वहोत लोग सेवक भये है। तब कुंभनदास सुनिके अपनी स्त्री सों कहे जो-'आन्योर'में चलिके श्रीआचार्यजी के सेवक हूजिये, सो इनकी कृपातें श्रीठाकुरजी कृपा करेंगे। सो तब स्त्रीने कही, जो-मैंहू चलूंगी, जो मेरे कोई संतति बेटा नहीं है; सो वे महा-पुरुष देंय तो होय।

सो या प्रकार विचार करिके दोऊ जनें श्रीआचार्यजीके पास आयके दंडवत करी। सो तब श्रीआचार्यजी आपु पूछे जो-कुंभन-दास! आये? सो तब कुंभनदासने दंडवत करि विनती करी जो-महाराज! वहोत दिनतें भटकतो हतो; सो अब आपु मो ऊपर कृपा करो। सो कुंभनदास तो दैवीजीव हैं, सो श्रीआचार्यजी के दरसन करत ही श्रीआचार्यजी के स्वरूप को ज्ञान होय गयो। तब श्रीआ-चार्यजी आपु कुंभनदास सों कहे जो-तुम स्त्री पुरुष दोउ जने न्हाय आवो। तब दोऊ जने संकर्षणकुंड में न्हायके श्रीआचार्यजी के पास आये। तब श्रीआचार्यजी आपु कुंभनदास और उनकी स्त्री कों नाम सुनायो। तब वा स्त्री ने आचार्यजी सों बिनती करी जो-महा-राज! आपु बड़े महापुरुष हो, मेरे बेटा नांही है, तासों आपु कृपा करिके देऊ। तब श्रीआचार्यजी आपु कृपा करिके प्रसन्न होयके कहे

जो-तेरे सात बेटा होयगें, तू चिंता मति करे। सो तब वह स्त्री अपने मनमें बहोत प्रसन्न भई। तब कुंभनदास अपनी स्त्री सों कही जो-यह कहा तेनें श्रीआचार्यजी के पास मांग्यो। जो श्रीठाकुरजी मांगती तो श्रीठाकुरजी देते। तब वा स्त्रीने कही जो-मोकों चहियत हतो सो मैंने मांग्यो, और जो तुम कों चाहिये सो तुम मांगि लेहु। तब कुंभनदास चुप होय रहे। ता पाछें श्रीआचार्यजी आपु श्रीगोवर्द्धनधर को छोटो सो मंदिर बनवायके ता मंदिर में श्रीगोवर्द्धनधर कों पधरायके रामदास चौहान कों सेवा की आज्ञा दीनी। सो रामदास, सदूपांडे आदि व्रजवासी सब सीधो सामग्री ले आवते। सो श्रीगोवर्द्धनधर कों पधरायके रामदास चौहान कों सेवा की आज्ञा दीनी।

सो रामदास, सदूपांडे आदि व्रजवासी सब सीधो सामग्री ले आवते। सो दूध दही माखन श्रीगोवर्द्धननाथजी कों भोग धरिके ता महाप्रसाद सों रामदास निर्वाह करते। और व्रजवासी जो सेवक कुंभनदास आदि भक्त, तिनकों श्रीआचार्यजी ने आज्ञा दीनी जो-ये श्रीगोवर्द्धननाथजी हमारो सर्वस्व हैं, तासों इनकी सेवा में तुम तत्पर रहियो, और श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन किये बिना महाप्रसाद मति लीजियो। और श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेवा सावधानी सों करियो। सो कुंभनदास कीर्तन बहुत सुन्दर गावते। कंठहू इनको बहोत सुंदर हतो। तासों कुंभनदास सों श्रीआचार्यजी आपु कहे जो-तुम समय समय के कीर्तन नित्य श्रीगोवर्द्धनाथजी कों सुनाइयो। सो प्रातःकाल श्रीआचार्यजी श्रीगोवर्द्धननाथजी कों जगायके कुंभनदास कों कहे जो-कछु भगवल्लीला वरणन करो। तब कुंभनदास श्रीगोवर्द्धननाथजी कों दंडवत करिके पहले यह पद गायो। सो पद—

राग बिलावल। 'साँझ के सांचे बोल तिहारे०'

सो यह कीर्तन कुंभनदास के मुखतें सुनिके श्रीआचार्यजी आपु कहे जो-कुंभनदास! निकुंज-लीला संबंधी रस को अनुभव भयो? तब कुंभनदासने दंडवत कीनी और कह्यो जो-महाराज! आपु की कृपातें। तब श्रीआचार्यजी आपु कहे जो- तिहारे बड़े भाग्य हैं। जो प्रथम प्रभु तुमकों प्रमेय बलको अनुभव बताये, तासों तुम सदा हरिरस में मगन रहोगे। तब कुंभनदासने बिनती कीनी

जो–महाराज ! मोकों तो सर्वोपरि याही रस को अनुभव कृपा करिके दीजिये। सो कुंभनदास सगरे कीर्तन युगल स्वरूप संबंधी किये। सो वधाई, पलना, बाललीला गाई नांही। सो ऐसे कृपापात्र भगवदीय भये। या प्रकार कुंभनदासजी आदि वैष्णव ऊपर कृपा करि श्रीआचार्यजी दक्षिन के झारखंड में पृथ्वी–परिक्रमा छोडिके पधारे हते, सो फेरि जीवन की ऊपर कृपा करन के अर्थ परिक्रमा करन पधारे।

वार्ता प्रसंग–२ और यहां कुंभनदासजी नित्य सवारे 'जमुनावता' तें श्रीगिरिराज ऊपर श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन कों आवते सो समय२ के कीर्तन करते। श्रीगोवर्द्धननाथजी आपु कुंभनदास सों सानुभावता जनावते, सो संग खेलन लागे। और खेल की वार्ता करते। पाछे कछुक दिनमें एक म्लेच्छ को उपद्रव भयो,सो सगरे गाम कों लूटत मारत पश्चिमतें आयो। ताके डेरा श्रीगिरिराजतें पांच कोस आगे भये। तव सदूपांडे, माणिकचंद पांडे, रामदासजी, कुंभनदासजी ये चारि वैष्णवननें अपने मनमें विचार कियो जो–यह म्लेच्छ वुरो आयो है,जो–भगवद्धर्म को द्वेषी है। तासों कहा विचार करनो ? सो ये चारों वैष्णव श्रीनाथजी के अंतरंग हते, सो इन सों श्रीगोवर्द्धननाथजी वार्ता करते। तासों इन चारयों वैष्णवननें मंदिर में जायके श्रीनाथजी सों पूछी जो–महाराज ! अब कैसी करें ? जो धर्म को द्वेषी म्लेच्छ लूटत आवत है। तासों आपु कृपा करिके आज्ञा करो सो करें।

तव श्रीगोवर्द्धननाथजी यह आज्ञा किये जो–हमकों तुम टोंड के घने में पधराय के ले चलो। हमारो मन वहां पधारिवे को है। तब चारयों वैष्णव नें विनतीं कीनी जो-महाराज ! या समय असवारी कहा चहियें ? तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कहे, जो-सदूपांडे के घर भैंसा है, सोई ले आवो, तापे चढ़िके चलूंगो। पाछे सदूपांडे वा भैंसा को ले आये। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी वा भैंसा पे चढ़िके पधारे।

भावप्रकाश सो वह भैंसा दैवी जीव हतो। सो वह लीला में श्रीवृषभानजी के घर की मालिन है। सो नित्य फूलन की माला श्रीवृषभानजी के घर करिके ले आवती। सो लीला में 'वृन्दा' याको नाम है। एक दिन श्रीस्वामिनीजी बगीची में पधारी। ता समय वृन्दा के पास एक बेटी हती, सो ताको खवावती हती। सो याने उठिके न तो दंड-

वत कीनी और न समाधान कियो। तो भी श्रीस्वामिनीजी ने यासों कछु कह्यो नांही।

ता पाछे श्रीस्वामिनीजी ने वृंदा सों कही, जो-तू श्रीनंदरायजी के घर जायके श्रीठाकुरजीसों समस्या सों हमारे यहां पधारिवो कहियो। तब श्रीस्वामिनीजी के बचन सुनिके वृन्दा ने कही, जो-अभी मेरे माला करिके श्रीवृषभानजी कों पठावनी है, तासों मैं तो जात नांही। यह वचन सुनिके श्रीस्वामिनीजी ने यासों कही जो-मैं यहां आई तेने उठिके सन्मान हू न कियो, और एक कार्य कह्यो सोऊ तोसों नांही बन्यो। तासों तू या बगीची में रहिवे योग्य नांही है। और तू यहां सों गिरिके भैंसा को जन्म लेहु। सो यह शाप श्रीस्वामिनीजी नें वा मालिन कों दियो। तब तो यह मालिन श्रीस्वामिनीजी के चरणारविंद में जाय परी, और बहोत ही बिनती स्तुति करन लागी। और कही जो-अब एसी कृपा करो, जो फेरि मैं यहां आऊं। तब श्रीस्वामिनीजी ने यासों कही जो-जब तेरे ऊपर चढिके श्रीठाकुरजी बन में पधारेंगे,तब तेरो अंगोकार होयगो। सो भैंसा को देह छोडिकें सखी-देह धरिके फेरि या बाग की मालिन होयगी। सो या प्रकार वह मालिन सदूपांडे के घर में भैंसा भई।

सो वाही भैंसा के ऊपर श्रीनाथजी आपु चढ़िके 'टोंड' के घने में पधारे, सो तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कों एक ओर तो रामदास-जी पकड़े चले, और एक ओरतें सदूपांडे'पकड़े रहे। और कुंभनदास और मानिकचंद पांडे बीच में थांभे जाय। सो मारग में कांटा वहोत लागे,वस्त्र सब फाटि गये, वहोत दुःख पायो। मारग आछो न हतो। सो वा 'टोंड' के घना में बीच में एक निकुंज है। तहां नदी (?) है, सो कुंभनदास और मानिकचंद पांडे ये दोउ जने श्रीनाथजी के आगे मारग बतावें, लता कांटा टारत जांय। सो या प्रकार 'टोंड' के घने में भीतर एक चौंतरा है तहाँ छोटो सो सरोवर है, और एक गोल चौक मंडलाकार है। तहाँ रामदासजी और कुंभनदासजी श्री-नाथजी सों पूछे जो-आपु कहाँ विराजोगे? तब श्रीनाथजी आपु आज्ञा किये जो-याही चौंतरा पे बिराजेंगे। सो तब श्रीनाथजी के नीचे भैंसाके ऊपर गादी डारे हते सो वही गादी चौतरा ऊपर डारि बिछाई, तापें श्रीनाथजी कों पधराये। पाछे श्रीनाथजी रामदासजी सों आज्ञा किये जो-तुम कछू भोग धरिके न्यारे ठाडेहोउ। तब राम-दासजी तथा कुंभनदासजी मन में बिचारे जो-कोई व्रजभक्तन के

मनोरथ पूरन करिबे के लिये यहाँ लीला करी है। पाछें रामदासजी थोड़ी सामग्री भोग धरे। सो तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कहें जो-सब सामग्री धरि देउ। सो रामदासजी उतावली में दोय सेर चून को सीरा कर लाये हते, सो सगरो भोग धरे।

पाछे रामदासजी श्रीगोवर्द्धननाथजी तें कहे जो-सगरी सामग्री भोग धरी, परि यहां रहनो होय तब कहा करेंगे? तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कहे, जो-यहाँ रहनो नाँही है। जो इतनो ही काम हतो। पाछे कुंभनदास सहित सदूपांडे मानिकचंदपाँडे और रामदासजी ये चारों जन एक वृक्ष की ओट में जाय बैठे। सो तब निकुंज के भीतर श्रीस्वामिनीजी अपने हाथ सों मनोरथ की सामग्री करी हती सो लेके श्रीगोवर्द्धननाथजी के पास पधारी। पाछे मिलिके भोजन करनो विचार कियो। सो सामग्री करत रंचक श्रीस्वामिनीजी कों श्रम भयो। तासों श्रीगोवर्द्धननाथजी आपु श्रीमुखतें कुंभनदास से आज्ञा किये जो-कुंभनदास! तू कछू या समय कीर्तन गावे तो मन प्रसन्न होय। और मैं सामग्री अरोगत हौं, तासों तू कीर्तन गाउ। सो कुंभनदास अपने मन में विचारे, जो-प्रभुन को मन कछू हास्य प्रसंग सुनिवे को है। और कुंभनदास आदि चारयों वैष्णव भूखे हते और कांटाहू लगे हते, सो ता समय कुंभनदासने एक पद गायो। पद-

राग सारंग—'भावत है तोहि टोंड को घनो०'।

सो यह कीर्तन सुनिके श्रीगोवर्द्धननाथजी और श्रीस्वामिनीजी बहोत प्रसन्न भये। और सब वैष्णवहू प्रसन्न भये। ता पाछे माला के समय कुंभनदास ने यह पद गायो। सो पद—

राग मालकोस—१ 'बोलत स्याम मनोहर बैठे कमलखंड और कदम की छैया०'।

यह पद कुंभनदास ने गायो, सो सुनिके श्रीगोवर्द्धननाथजी आपु बहोत प्रसन्न भये। तब श्रीस्वामिनीजी नें श्रीगोवर्द्धनधर सों पूछी जो-तुम कौन प्रकार पधारे? तब श्रीगोवर्द्धननाथजी ने कही जो-सदूपांडे के घर भैंसा हतो सो वा उपर चढ़िके पधारे हैं। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी के वचन सुनिके श्रीस्वामिनीजी आपु वा भैंसा की ओर देखिके कृपा करिके कहे जो-यह तो मेरे बाग की मालिन है, सो मेरी अवज्ञा तें भैंसा भई परंतु आज याने भली सेवा करी, तासों अब याको अपराध निवृत्त भयो। सो या प्रकार कहि, नाना प्रकार

की केलि टौंड के घनेमें करिके श्रीस्वामिनीजी तो बरसाने में पधारे।

भावप्रकाश – सो तहां कांटा बहोत हते, सो श्रीस्वामिनीजी ऊहां कैसे पधारे ? यह शंका होय तहां कहत हैं। जो—ये ब्रज के वृक्ष परम स्वरूपात्मक हैं, सो जहां जैसी इच्छा होय सो तहां तैसो कुंजलता फल फूल होय जात हैं। सो कबहू सकल कांटा तो यह लौकिक लोगन कों दीसत हैं। सो तहां कुंजमें सब ब्रजभक्तन सहित श्रीठाकुरजी आप लीला करत हैं। सो तहां गोपन कों और मर्यादा वारेन कों यह कांटन की आड़ होत है, (नातर) सघन बन होत है। सो ब्रज के भक्त सदा सेवा में तत्पर रहत हैं, सो तासों यह संदेह नांही है।

और श्रीगोवर्द्धननाथजी भैंसा ऊपर चढ़िके टौंड के घना में पधारे। सो ता समय चार वैष्णव संग हते। सो मारग में ब्रजवासी लोग बहोत मिलते, सो श्रीगोवर्द्धननाथजी कों देखे नांही, जाने जो-भैंसा लिये चारि जन जात हैं। सो कांटा न होय तो सगरे ब्रजवासी तहां आवे। या प्रकार केवल ब्रजभक्तन कों सुख देनार्थ श्रीठाकुरजी की लीला रस है। सो लौकिक में डरिके छिपिके पधारनो; सो यह रस है। ईश्वरताको भाव नांही बिचारनो है। ईश्वरतामें कहे तो भजनो कहा ? डर, जहां माधुर्य रस में है सो प्रेम सों; ईश्वरता में डर नांही है। या प्रकार रसिक जन नेत्रन सों जो देखत हैं सो तिनकों आनंद उपजत है, सो ज्ञान नेत्रन—अलौकिक नेत्रन—सों लीलारसको अनुभव होत है।

सो जब श्रीस्वामिनीजी बरसाने पधारे, तब चारयों भगवदीयन कों श्रीगोवर्द्धननाथजी ने अपने पास बुलाये।

भावप्रकाश—सो तहां यह संदेह होय जो ये भगवदीय तो अंतरंग हैं। सो जब लीला को अनुभव है तो फेरि श्रीगोवर्द्धननाथजी इन कों न्यारे ओट में क्यों विदा किये ? तहाँ कहत हैं जो-ये भगवदीय जद्यपि सखी रूप सों लीला को दरसन करत हैं,तोऊ श्रीस्वामिनीजी कों अपने श्रीहस्त सों हास्यबिनोद करत आरोगावनो है, सो पास सखी होय तो लज्जा, संकोच रहे। सो ताही सों निकुंज में जब स्वरूप लीला करत हैं, तब सखी सब जालरंध्र व्हेके लतान की ओट लीला को सुख अवलोकन करत हैं। सो तासों श्रीगोवर्द्धननाथजी ने भगवदीयन कों नेक ओट में बैठाये हते, सो बुलाये।

सो जब चारयों वैष्णव आये,तब श्रीगोवर्द्धननाथजीने सदूपांडे सों कह्यो जो अब देखो उपद्रव मिटयो ? तब सदूपांडे टौंड के घने सों

बाहिर आये, सो इतने में श्रीगोवर्द्धन सों समाचार आये जो-वह म्लेच्छ की फौज आई हती सो पाछी गई हैं। तब सदूपांडेने आयके श्रीगोवर्द्धननाथजी सों कह्यो जो-वह फौज तो म्लेच्छकी भाजि गई। तब श्रीगोवर्द्धनधर कहे जो-अब तुम मोकों गिरिराज ऊपर मंदिर में पधरावो। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कों भैंसा ऊपर बैठाये। पाछे चारयों वैष्णवन ने श्रीनाथजी कों श्रीगिरिराज पर्वत ऊपर मंदिर में पधराये। तब भैंसा पर्वत सों उतरिके देह छोडिके फेरि लीला में प्राप्त भयो।

पाछे सगरे व्रजवासी श्रीगोवर्द्धननाथजीके दरसन करिके बहोत हरषित भये,और कहन लागे जो-धन्य है, देवदमन ! जो इनके प्रतापसों, एसो उपद्रव भयो हतो सो एक छणमें मिटि गये, सो कछु जान्यो हू न पर्यो। तब कुंभनदास ने श्रीनाथजी के आगे यह पद गायो। सो पद—

राग श्रीराग—१ 'जयति २ श्रीहरिदासवर्यधरने०'।

२ 'कृष्ण तरनि-तनया तीर रास मंडल रच्यो०'।

सो एसे कीर्तन कुंभनदास ने श्रीगोवर्द्धननाथजी कों बहोत सुनाये। सो सुनिके श्रीगोवर्द्धननाथजी कुंभनदास के ऊपर बहोत प्रसन्न भये। सो कुंभनदासजी के पद जगत में प्रसिद्ध भये।

वार्ताप्रसंग२—सो कुंभनदासने बहोत पद बनाये,सो जहां तहां लोग गावन लागे। ता पाछे एक कलावत ने एक पद कुंभनदासजी को सीख्यो, सो देसाधिपति के आगे गायो। सो सीकरी फतेपुर में देसाधिपति के डेरा हते सो तहां यह पद गायो। सो पद—

राग धनाश्री—'देखिरीं आवनि मदन गुपालकी०'।

सो यह कीर्तन सुनिके देसाधिपति को मन वा पद में गडि गयो, सो माथो धुन्यो और कह्यो, जो—एसे एसे महापुरुष भूमि पर होय गये, सो जिनकों एसे दरसन परमेश्वर के होते। तब वा कलावत ने देसाधिपति सों कही जो साहिब ! वे महापुरुष पद के करिवे वारे यहां ही हैं। सो तब यह देसाधिपति वा कलावतके ऊपर बहोत प्रसन्न होयके पूछ्यो, जो-वे महापुरुष कहां हैं ? तब कलावत ने कही जो-श्रीगोवर्द्धन के पास 'जमुनावतो' गाम है, सो तहां वे महापुरुष रहत हैं,और कुंभनदासजी उनको नाम है। तब देसाधिपतिने कही जो उनकों यहां ही बुलावो, जो-हम उन सों मिलेंगे।

पाछें देसाधिपतिने अपने मनुष्य और सब तरहकी असवारी कुंभनदास कों लेवे कों पठाई। सो जमुनावता गाममें भेजी। तब वे मनुष्य असवारी लिवाये जमुनावता गाम में आये। ता समय कुंभनदासजी तो जमुनावता में हते नांही, परासोली चंद्रसरोवरि में अपने खेत ऊपर बैठेहते। सो तब उन मनुष्यन ने जमुनावतामें आय के पूछी। पाछे खबरि पायके गाम में तें एक मनुष्य कों संग लेके वे लोग कुंभनदासजीके पास आये। तब देसाधिपतिके मनुष्यननेआयके कुंभनदाससों कह्यो जो-तुमकों देसाधिपतिने बुलाये हैं। तब कुंभनदास ने कही, जो—हम तो गरीब ब्रजवासी हैं, सो काहूके चाकर नांही हैं। तासों हमारो देसाधिपति सों कहा काम है? जो मैं चलूं। तब देसाधिपतिके मनुष्य ने कह्यो जो—बाबा साहिब! हम तो कछु समुझत नांही हैं। सो हमकों तो देसाधिपति को हुकम है-जो तुम कुंभनदासजी कों ले आवो, सो ये घोड़ा पालकी तिहारी असवारी के लिये आये हैं। सो तिनके ऊपर तुम असवार होयके चलिये। हम आये हैं जो देसाधिपति ने भेजे हैं,सो हम तुमकों लेके जांयगे। और जो हम न ले जांय तो देसाधिपति को हुकम टरें, तो देसाधिपति हमकों मरवाय डारे। तासों आपु चलिये, और उनसों मिलिके चले आईये।

तब कुंभनदास अपने मनमें बिचार कियो जो—यह आपदा जो आई है, तासों अब गये बिना चले नांही। तासों आपदा होय सोऊ भुगतनो। सो कुंभनदास कों देसाधिपति ने असवारी पठाई हती, सो तिनके संग मनुष्य आये हते सो उनने कह्यो जो—बाबा-साहिब! घोड़ा तथा पालकी पर चढिके बेगि चलिये। तब कुंभनदास ने उन मनुष्यन सों कह्यो जो-मैं तो कबहू असवारी में बैठ्यो नांही। हम सों तुम कछू बोलो मति, जो हम जोड़ा पहरि के पाँयन चलेंगे। तब उन मनुष्यन ने बहोत बिनती कीनी; परि कुंभनदास तो असवारी में बैठे नांही, सो जोड़ा पहरिके पाँयन चले। सो फतेपुर सीकरी में देसाधिपति के डेरान की पास गये। तब देसाधिपति कों खबरि करवाई, जो कुंभनदासजी महापुरुष आये हैं।

तब देसाधिपति ने कुंभनदास कों भीतर बुलवाये,तब भीतर गये। पाछे देसाधिपति ने कही जो-बाबा साहिब! आगे आवो। तब कुंभनदासजी तनिया पहरे,फटी मेली पाग, पिछोरा, टूटे जोड़ा

सहित देसाधिपति के आगे जाय ठाड़े भये। तब देसाधिपतिने कही जो बाबा साहिब! बैठो। सो तहां जड़ाउ रावटी ही, तामें मोतिन की झालरि लागि रही है, और सुगंध की लपट आवत है। परंतु कुंभनदासजी के मन में महादुःख, जो—जीवते मानो नरक में बैठ्यो हूं। (और बिचारे जो) यासों तो मेरे व्रज के रूख आछे हैं। जहां साक्षात् श्रीगोवर्द्धनधर खेलत हैं।

सो या प्रकार कुंभनदासजी अपने मन में विचार करत हते, इतनेमें देसाधिपति बोल्यो जो–बाबा साहिब! तुमने विष्णुपद वहोत किये हैं। तासों तिहारे मुखतें मैं कछू विष्णुपद सुनूंगो, तासों आप कोई विष्णु-पद गावो। तव देसाधिपति के बचन सुनिके एक तो कुंभनदास मन में कुढि रहे हते और दूसरे देसाधिपति ने गायवे की कही। तब कुंभनदास के मन में बहोत बुरी लगी। तब कुंभनदास अपने मन में विचार कियो जो–गाये विना छुटकारो होयगो नांही। और या म्लेच्छ के आगे तो श्रीठाकुरजी की लीला के पद गाये जाय नांही। सो तासों मैं कहा गाऊं? जो मेरी बानी के सुनिवे वारे तो श्रीगोवर्द्धननाथजी हैं, और या म्लेच्छ ने मोकों बुलायके श्रीगोवर्द्धननाथजी सों बिछोयो करायो है। तासों याकों कछू एसो सुनाऊं जो—यह बुरो माने तो आछो। और बुरो मानि के मेरो कहा करेगो?

तव कुंभनदासजी के मनमें यह बात आई–'जाकों मनमोहन अंगीकार करें, एको केस खसै नहीं सिरतें जो जग वैर परे।' सो यह विचारिके एक नयो पद करिके कुंभनदास ने देसाधिपति के आगे गायो। सो पद—

राग सारंग—'भक्त कों कहा सीकरी काम।
आवत जात पन्हैया टूटी बिसरि गयो हरिनाम०'॥

सो यह पद कुंभनदास ने गायो सो सुनिके देसाधिपति अपने मन में वहोत कुढ्यो। सो पाछे उनने अपने मन में बिचारी, जो–इनकों कछू लेवे को लालच होय तो ये मेरी खुसामद करें। जो इनकों तो अपने ईश्वर सों काम हैं।

यह बिचारिके अकवर पात्साह ने कुंभनदास सों कह्यो जो–बाबासाहिब! मोकों कछु आज्ञा फरमावो सो मैं करूं। तब कुंभनदासने कही जो–आज पाछे मोकों कबहूँ बुलाइयो मति। तब देसा-

फतहपुर सीकरी में अकबर के सन्मुख अनिच्छा पूर्वक गाते हुए—

कुंभनदास

जन्म सं० १५२५] ★ [देहावसान सं० १६४०

धिपतिने कुंभनदास कों विदा किये। सो तब कुंभनदास ऊहां ते चले, सो मारग में आवत कुंभनदास के मनमें श्रीगोवर्द्धननाथजी को बिरह कलेश (भयो) जो-अब मैं श्रीगोवर्द्धननाथजी को मुख कब देखौं? सो एसें विचार करत मारग में आवत कुंभनदास ने विरहको पद गायो। सो पद –

राग धनाश्री–'कब हौं देखि हौं इन नैनन०'

सो एसे पद मारग में गावत कुंभनदास श्रीगिरिराज ऊपर आय श्रीगोवर्द्धननाथजीके दरसन किये।सो दोय प्रहर बीते, सो कुंभनदास कों मानो दोय जुग बीते। ता पाछे श्रीगोवर्द्धननाथजी को श्रीमुख देखत ही सगरो दुःख बिसरि गयो। ता समय कुंभनदासने एक पद गायो। सो पद–

राग धनाश्री–१ 'नैन भरि देखौं नंदकुमार०'।
२ हिलगन कठिन है या मनकी०'

सो एसे पद कुंभनदासने बहोत ही गाये। सो सुनिके श्रीगोवर्द्धननाथजी आपु कहे जो–कुंभनदास! तू धन्य है। जो-मेरे बिना एक छिन तोकों कल नाहीं है। तासों मोहूकों तो बिना कछू सुहात नांही है। सो या प्रकार कुंभनदासजी और श्रीगोवर्द्धननाथजी की परस्पर प्रीति हती।

वार्ताप्रसंग ४–और एक समय मानसिंह देसदेस में दिग्विजय करिके जीतिके आगरे में देसाधिपति के पास आयो। तब देसाधिपति सों सीख मांगि के अपने देस कों चल्यो। तब राजा मानसिंहने अपने मन सों बिचार्यो जो–बहोत दिन में आयो हूं, सो श्रीमथुराजी में न्हायके अपने देस जाऊं तो आछो है। सो राजा मानसिंह यह बिचारिके श्रीमथुराजी में आयो। तहां विश्रांत घाट ऊपर न्हायो। तब चोबेनने मिलिके कह्यो जो--श्रीकेसोरायजी श्रीठाकुरजी के दरसन कों चलो। सो गरमी ज्येष्ठ मास के दिन और मथुरिया चोबेनने राजा कों आवत जानिके श्रीकेसोरायजी कों जरीकी ओढनी, वागा, पिछवाई, चंदोवा सब जरी के किये। सोने के आभूषण पहिराये। सो दरसन करिके राजा मानसिंह ने अपने मनमें कह्यो, जो-- इनने मेरे दिखायवे के लिये श्रीठाकुरजी कों इतनी जरी लपेटी है। पाछे भेट धरिके चले। पाछे उनने कही जो-वृंदावन में श्रीठाकुरजी के मंदिर हैं, सो तहां दरसन कों चलेंगे। पाछे राजा मानसिंह श्रीवृन्दावन में आयो। सो श्रीवृंदावन के संत महंतनने सुनिके मनमें

विचारी जो-यहां राजा मानसिंह दरसन कों आवेगो। यह जानि के अपने श्रीठाकुरजी के लिये भारी भारी जरी के चीरा,वागा, पटका, सूथन जरी की ओढनी भारी भारी उढाई, और सोने के आभूषन पहराये। पाछे राजा मानसिंह आयके दोय चार ठिकाने बडे-बडे मंदिर में दरसन करि भेट किये। गरमी वहोत लगी सो डेरान पें आयो और कह्यो जो-ये मोकों दिखायवे के लिये कियो है। ता पाछे राजा मानसिंह वृंदावन सों चल्यो, सो तीसरे प्रहर श्रीगोवर्द्धन में आयो। तव काहूने कही जो-श्रीगोवर्द्धननाथजीके दरसनकों चलोगे? तब राजा मानसिंहने कह्यो जो-श्रीगोवर्द्धननाथजीके दरसन तो अवश्य करने हैं। सो तव गोपालपुर में आयके दरसन को समय पूछ्यो, तब काहूने कही जो-उत्थापन के दरसन होय चुके है। और भोग के दरसन की तैयारी हैं। तब यह सुनिके राजा मानसिंह पर्वत की ऊपर चढ्यो, सो महा गरमी पडै। सो उघारे पांव राजा गरमी में व्याकुल होय ऊपर गयो। सो तव ही भोग के किंवाड खुले हते। सो श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन करत ही राजा मानसिंह के नेत्र सीरे होय गये। सो ऊन दिनन में श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेवा बडे वैभव सों होत ही। सो ऊष्णकाल के दिन हते, तातें गुलाव के जल सों छिरकाव भयो हतो,और अरगजा की लपट आवत है,और सुगंध आवत है,और दोहरो पंखा होत है। सुपेद पाग परदनी को सिंगार, श्रीकंठ में मोतीन की माला, और मोतीनके करनफूल और मोतीनके सूक्ष्म आभूषन। सो सुगंध सहित सीरी व्यारि लागी। सो राजा मानसिंह को रोम २ सीतल भयो। सेवा रीति देखि के राजा मानसिंहने कह्यो जो-सेवा तो यहां है। जो श्रीठाकुरजी सुख सों बिराजे हैं। सो साक्षात् श्रीकृष्ण प्रकट भये सुने हते श्रीभागवत में। सो श्रीगोवर्द्धननाथजी यही हैं। तासों आजु मेरे बडे भाग्य हैं। जो-नैनें एसो दरसन पायो है। ता समय श्रीगोवर्द्धननाथजी के आगे कुंभनदासजी पद गावत हते। सो जैसे श्रीगोवर्द्धनधर कोटि कंदर्प लावण्य स्वरूप मन हरन, और तैसे रसरूप कुंभनदासजीने पद गाये। सो पद—

राग नट-१'रूप देखि नेनां पलक लगे नांही'। २ 'पूतरी पोरिया इनके भये माई'। राग गोरी-३ 'आवत गिरिधर मनजू हर्षो हो।'

सो एसे पद कुंभनदासजीने गाये। ता पाछे भोग को समय

श्री मन्महाप्रभु के भाव-निधि, अष्टछाप के परम आराध्यदेव
शृंगार रसमोहरिः
श्रीगोवर्धननाथजी–श्रीनाथ जी
प्रादुर्भाव समय वि० सं० १५३५ वैशाख कृष्ण ११

होय चुक्यो तब डेरा आयो। पाछे राजा मानसिंह दंडवत करि के अपने डेरान में आयो। ता पाछे सेनआरती की समे कुंभनदासजी ने यह पद गायो। सो पद—

राग केदारो। लाल के वदन पर आरती वारों।'

सो या प्रकार सनेह के कीर्तन गाय अपनी सेवा सों पहोंचि के कुंभनदासजी अपने घर जमुनावता में आये। सो ऊहां राजा मानसिंह अपने डेरान में जाय के अपने मनुष्यन के आगे श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेवा सिंगार की वार्ता कहन लाग्यो। और कह्यो जो-श्रीगोवर्द्धननाथजी के आगे विष्णु पद गावत हते,सो कौन हतो? जो एसे पद गाये जो मनमें पैठि गये हैं। एसे पद आज तांई मैंने कबहू सुने नांही। तब एक ब्रजवासी ने कह्यो जो-ए गोरवा हैं और कुंभनदासजी ईनको नाम हैं। जो अपनी खेती में अन्न होय सो ताही सों निर्वाह करत हैं। जो तुमने सुने ही होयगें जो आगे देसाधिपति ने बुलाये हते, परंतु कुंभनदासजी कछू लिये नांही। जो ये महापुरुष हैं। सो तब राजा मानसिंहने कह्यो जो आज तो रात्रि भई हैं यातें काल सवारे हमहू इनसों मिलेंगे। सो तब प्रातःकाल राजा मानसिंह उठि के श्रीगिरिराजकी परिक्रमा करत परासोली में आयो। सो परासोली में चंद्रसरोवर हैं। तहां कुंभनदासजी न्हाय के खेत ऊपर बैठे हते सो इतने ही में श्रीगोवर्द्धननाथजी आपु कुंभनदास के पास पधारे। सो श्रीमुख देखत ही कुंभनदासजी श्रीनाथजी सों कहे, जो–बाबा! आगे आवो। तब श्रीनाथजी आपु कुंभनदासजी की गोद में बैठि के कहे जो–कुंभनदास! मैं तोसों एक बात कहन आयो हूं। सो या प्रकार कहत हते, इतने में राजा मानसिंह कुंभनदासके पास आयो। सो ताही समय श्रीगोवर्द्धननाथजी आपु भाजि के डरि के एक वृक्ष की ओट में जाय के ठाडे भये। सो ताही समय कुंभनदासजी की दृष्टि तो एक श्रीगोवर्द्धननाथजी के संग गई। सो जहां श्रीगोवर्द्धननाथजी ठाड़े हते सो ताही ओर कों देख्यो करें। तब राजा मानसिंह कुंभनदासकों प्रणाम करिके पास बैठयो, परंतु कुंभनदासजी तो राजा मानसिंह की ओर दृष्टि हू नांही किये। सो कुंभनदासजी की एक भतीजी हती। सो जमुनावते सों बेझरिको चूंन कठोटी में करि, लेके कुंभनदास कों रसोई करिवे के लिये लावत हती। सो या भतीजी सों एक ब्रजवासी

ने कह्यो जो–तू बेगि जा। जो कुंभनदासजी पास राजा गयो है सो वह कछू देवे तो तू लीजियो। क्यों, जो कुंभनदासजी तो छूवेंगे हू नांही। तब यह भतीजी बेगि ही कुंभनदासजी के पास आई। तब कुंभनदासजी की दृष्टि एक वृक्ष के ओर देखिके कहे जो–वावा! राजा वैठयो है। सो कछू इनको समाधान करो। तब कुंभनदासजी कहे जो–मैं कहा करूँ जो वैठयो है तो। जो कछू बात कहत हते सोऊ भाजि गये! सो अब बात कहेंगे के,नांहीं कहेंगे। तब गोवर्द्धन-नाथजी आपु सेनही में कुंभनदासजी सों कहे, जो–मैं तिहारे ऊपर वह्योत प्रसन्न हूं। जो मैं बात कहूंगो तू चिंता मति करे। तब कुंभ-नदासजीको चित्त ठिकाने आयो। सो कुंभनदासजी और श्रीगोव-र्द्धननाथजी की वार्ता राजा आदि काहू ने जानी नांही।

पाछे कुंभनदासजी ने भतीजी सों कह्यो जो–बेटी! आसन और आरसी लावे, तो मैं तिलक करि लेऊं। तव भतीजी ने कह्यो जो—वावा! आसन (घासको) पडिया (भेंसकी पाडी) खाय के आरसी (कठोटी को जल) पी गई। तब कुंभनदासजी ने कह्यो जो–आरसी करि ले आऊँ तो आछो। यह बात सुनिके राजा मान-सिंह ने अपने मनमें कह्यो जो–आसन खाय के आरसी पडिया पी गई! (सो कहा ?) सो इतने ही में भतीजी एक पूरा घासको और एक कठोटी में पानी भरि के ले आई। सो पूरा को आसन विछाय दियो सो ता पूरा पर कुंभनदासजी वैठि के कठोटी में पानी में मुख देखि के तिलक करन लागे।

तब राजा मानसिंहने अपने मनमें जान्यो जो–कुंभनदासजी के द्रव्य को बहोत संकोच हैं, जो आसन आरसी तिलक करवे को नांही है। सो कुंभनदासजी त्यागी सुनत हते सो देखे। तब राजा मानसिंह ने आरसी सोने की जड़ाऊ घर में जडी एसी मनुष्य सों मंगाई। और पाछे वह आरसी कुंभनदासजी के आगे धरिके कह्यो जो–बावा साहिब! या में मुख देखि के तिलक करिये। तब कुंभन-दासजी कहे, जो–अरे भैया! मैं याकों धरूंगो कहां? हमारे तो यह छानि के घर हैं। सो यह आरसी हमारे घर में होय तो याके पीछे कोई हमारो जीव लेय, तासों हमारे नांही चहियत है। तब रा-जा मानसिंह ने मनमे विचारी जो–ये आरसी लेके कहा करेंगे? जो कहा याकों बेचन जांयगे? यह तो इनके काम की नांही है। तासों

कछू एसो द्रव्य देऊं जो जनमादि भरिके खायो करें। तब हजार मोहोर की थेली कुंभनदासजी के आगे धरी।

तब कुंभनदासजी ने कही जो-यह हमारे काम की नांही है। हमारे तो खेती होत है, तामें जो धान उपजत हैं सो हम खात हैं। और कछू हमको चहियत नांही। तब राजा मानसिंह ने कह्यो जो-तिहारो गाम जमुनावता है, सो ताको मैं तुमको लिख्यो करि देऊं। तब कुंभनदासजी ने राजा मानसिंहसों कह्यो जो-मैं ब्राह्मण तो नांही जो-तेरो उदक लेऊं और जो-तेरे देनो होय तो और काहू ब्राह्मण को दीजियो, मोको तिहारो कछु नांही चहियत है।

तब राजा मानसिंह ने कह्यो जो-तुम मोको अपनो मोदी बतावो, सो ताके पास सों सीधो सामान लियो करो। तब कुंभनदासजीने कही जो-जैसे हम हैं सो तैसे ही हमारो मोदी है। तब राजा मानसिंह ने कह्यो जो-वतावो तो सही, जो मैं वाको देऊंगो। तब कुंभनदासजी ने एक करील को वृक्ष दिखायो, और एक बेर को वृक्ष दिखायके कह्यो जो - उष्णकालमें तो मोदी करील है; सो फूल और टेंटी देत है। और सीतकालको मोदी बेरको झाड़ है। सो बेर बहोन देत हैं। सो एसे काम चल्यो जात है। तब राजा मानसिंहने कही जो-धन्य है। जिनके वृक्ष मोदी हैं, जो मैंने आज तांई बड़े २ त्यागी वैरागी देखे, परंतु ये गृहस्थ सो एसे त्यागी हैं! सो एसे धरती पर नांही हैं। सो तब राजा मानसिंह कुंभनदासजी को प्रणाम करिके कही जो-बाबा साहिब! मोसों कछू तो आज्ञा करो। तब कुंभनदासजी कहे जो-हम कहेंगे सो करोगे? तब राजा मानसिंहने कही जो-तुम आज्ञा करो सोई मैं अपनो परम भाग्य मानिके करूंगो। तब कुंभनदासजी ने कही जो-आज पाछे तुम हमारे पास कबहू मति आइयो, और हम सों कछु कहियो मति। तब राजा मानसिंह ने दंडवत करिके कही जो—तुम धन्य हो, माया के भक्त तो मैं सगरी पृथ्वी में फिरयो, सो बहोत देखे, परंतु श्रीठाकुरजीके सांचे भक्त तो एक तुम ही देखे।

सो यह कहिके राजा मानसिंह चल्यो गयो। तब भतीजी ने पास आयके कुंभनदासजी सों कही जो--घरमें तो कछू हतो नांही, सो राजा देत हतो सो क्यों न लियो? तब कुंभनदासजी कहे जो-बैठि रांड! गोवर्द्धननाथजी सुनेंगे तो खीजेंगे, जो-कुंभनदास की

भतीजी बड़ी लोभिन है। तब भतीजी ने कह्यो जो-मैंने तो हँसिके कह्यो हतो,जो—मोकों तो कछु नांही चहियत है। तब कुंभनदासजी ने कह्यो जो बेटी! काहू सों लेवेकी वार्ता हांसीमें हू कबहू न कहिये। सो तब श्रीगोवर्द्धननाथजी आयके कुंभनदासजी की गोद में बैठि के कहे जो-तू एक छिन में एसो क्यों होय गयो? तेरे मन में कहा है? सो तू मोसों कहे? तब कुंभनदासजीने यह पद गायो। सो पद-

राग सारंग-१ 'परमभँवते जियके मोहन, नैनन तें मति टरो०'।

सो यह कीर्तन कुंभनदासजो को सुनिके श्रीगोवर्द्धननाथजी गरे सों लपटिके कहे जो—कुंभनदास! मैं तोसों एक बात कहन कों आयो हूं। तब कुंभनदासने कही, जो—कहिये। आपु वा समय बात कहत हते सो ता समय तो राजा अभागिया आय गयो, सो आपु भाजि गये। सो तब सों मेरो मन वा बातमें लागि रह्यो है, सो यह बात आपु कृपा करिके कहिये। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी आपु कुंभनदाससों कहे जो-कुंभनदास! आज सखानमें होड परी है,जो भोजन सबके घरको न्यारो न्यारो देखिये। तामें सुन्दर कौनके घरकोहै? सो तुमहू कछु मनोरथ करोगे? सो मैं यह बात तोसों कहिवे आयो हूं। तब कुंभनदासजी पूछे जो-आपकी रुचि काहे पे है?

तब गोवर्द्धननाथजी कहे-जो ज्वार की महेरी, दही, दूध, बेझरि की रोटी और टेंटी को साग संधानो। तब कुंभनदासजी कहे जो-यह तो घर में सिद्ध है। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कहे जो-बेगि मंगावो। सो तब कुंभनदासजी भतीजी सों कहे जो—घरतें बेझरि को चून, टेंटी को साग, संधानो, दही, दूध बेगि ले आउ। तब भतीजी ने कही जो—बेझरि को चून टेंटी को साग, संधानो,दही इतनो तो मैं ले आई हूं और दूध जमायवेके तांई तातो होत है, तब कुंभनदासजी कहे जो—आज दूध जमावे मति। दूध की हांडी और ज्वार घर तें दरिके ले आव, सो तहां तांई मैं रसोई करत हौं। सो न्हाय के तो कुंभनदासजी बैठे ही हते। तासों बेझरि की रोटी नोंन डारिके ठीकरा पे किये। इतने में भतीजी जमुनावता गाम में जायके ज्वारि दरिके दूधकी हांडी ले आई। तब कुंभनदासजी हांडीमें पानी डारिके ज्वारकी सामग्री सिद्ध किये। इतने में घरतें सखान की छाक आई, सो कुंभनदास की सामग्री श्रीगोवनाथजी पास राखे। पाछे घर के सखान कों चखाय आपु आरोगे।

भावप्रकाश- कुंभनदासजी की सामग्री विसाखाजीनेदूध में मिश्री डारि श्रीस्वामिनीजी कों आरोगाय अतिमधुर कर दीनी। सो काहेतें ? जो-विसाखाजी को प्रागट्य कुंभनदासजी हैं।

और जब श्रीठाकुरजी कों कुंभनदासजी की सामग्री बहोत स्वाद लगी, ता समय कुंभनदासजी ने कीर्तन गाये। सो पद—

राग सारंग १—'व्रजमें बडो मेवा एक टेंटी।' २—'घरतें आई है छाक।

सो यह कुंभनदासजी अति आनंद पायके गाये। और अपने मन में कहे जो-श्रीगोवर्द्धननाथजी ने भली एक बात कही, जो यामें या लीला को अनुभव भयो। या प्रकार श्रीगोवर्द्धननाथजी कुंभनदासजी की ऊपर कृपा करते। वा दिन कुंभनदासजी रस में मग्न होय गये। सो सांझ कों सरीर की सुधि नांही। तव परासोली तें दौरे, जो आज मैं श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन नांही पायो। विरह मनमें उठि आयो सो सेन भोग सरत हतो ता समय कुंभनदासजी मंदिर में आये। मनमें यह, जो कब दरसन पाऊं। इतने में सेन के किंवाड खुले। तब कुंभनदासजी श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन करि नेत्र इकटक लगायके यह कीर्तन गाये। सो पद—

राग बिहागरो १-'लोचन मिलि गये जब चारयों०।' २-'नंदनंदन की बलि-बलि जइये०।' राग केदारो ३-'छिनु छिनु बानिक और ही और०।'

सो या प्रकार रस के कीर्तन कुंभनदासने बहोत गाये। सो वे कुंभनदासजी एसे कृपापात्र भगवदीय हते।

वार्ताप्रसंग ५-और एक समय वृंदावन के संत महंत कुंभनदासजी सों मिलिवे कों श्रीगिरिराज पे आये। सो यासों आये जो-जाने जो इनसों श्रीठाकुरजी साक्षात् बोलत हैं। और कुंभनदासजी श्रीस्वामिनीजी की बधाई गाये हैं, तासों इनसों मिलिकें पूछें जो-श्रीस्वामिनीजी को वर्णन हमहू कियें हैं। और देखें जो-कुंभनदासजी कैसो वर्णन करत हैं ? सो यह विचारिके हरिवंश, हरिदास प्रभृति महंत, स्वामी आय कुंभनदासजी सों मिलिके पूछे जो-कुंभनदासजी तुमने जुगल स्वरूप के कीर्तन किये हैं,सो हमने तिहारे कीर्तन बहोत सुने, परि कोई श्रीस्वामिनीजी को कीर्तन नांही सुन्यो, तासों आपु कृपा करिके कोई पद श्रीस्वामिनीजीको सुनावो। तब कुंभनदासजी

ने श्रीस्वामिनीजी को एक पद करिके उनकों सुनायो। सो पद—

राग रामकली १—'कुंवरि राधिके ! तुव सकल सौभाग्य सींवा, या वदन पर कोटि शत चंद वारि डारों।'

यह पद कुंभनदासजी ने गायो सो सुनिकें श्रीवृंदावन के संत महंत वहोत प्रसन्न भये। और कहे जो-हमने श्रीस्वामिनीजी के पद वहोत किये हैं, तामें चंद्रमा आदि की उपमा बहोत दी हैं। परि कुंभनदासजी ! तुमने तो शतकोटि चंद्रमा वारि डारे हैं। तासों कुंभनदासजी कों श्रीस्वामिनीजी आगे जगत में कोऊ उपमा देवे योग्य नांही (दीसत), सो या प्रकार अद्भुत स्वरूपको वरणन किये हैं। ता पाछे कुंभनदासजी सों विदा होयके सिगरे वृंदावन में आये। सो ये कुंभनदासजी किशोर भावना,लीलारसमें मग्न रहते। सो एसे कृपापात्र भगवदीय हे।

वार्ताप्रसंग ६—और एक समय श्रीगुसांईजी आपु श्रीगोकुल में श्रीनवनीतप्रियजी सों विदा मांगिके श्रीद्वारिकाजी पधारिवे को विचार किये,सो परदेस में दैवी जीवन के उद्धारार्थ। सो श्रीगोकुलतें श्रीनाथजीद्वार आयके श्रीगोवर्द्धननाथजी के सेवा सिंगार किये। ता पाछे अनोसर करायके आपु भोजन करि के अपनी बैठक में गादी तकियान के ऊपर विराजे हते, सो तहां सिगरे वैष्णव आयके पास बैठे हते। सो वात चलन में कुंभनदासजी की बात चली। तब काहू वैष्णवनें श्रीगुसांईजी के आगे यह बात कही जो-महाराज ! कुंभनदासजी के घर आजकाल द्रव्य को वहोत संकोच है, सो काहेतें ? जो घरमें परिवार बहोत है, जो सात वेटा हैं, और सातों वेटान की बहू हैं। और आपु स्त्रीपुरुष और एक भतीजी। सो ताहू में आये गये वैष्णवन को समाधान करत हैं, और आमदनी तो थोरीसी है। जो परासोली में खेती है, तामें निर्वाह टेंटी फूलन सों करत हैं। यह बात सुनिकें श्रीगुसांईजी ने अपने मनमें राखी। ता पाछें (जब)कुंभनदासजी श्रीगुसांईजी के दरसन कूं आये, तव दंडवत करिके ठाडे होय रहे। तव श्रीगुसांईजी कहे जो-कुंभनदासजी ! बैठो। तब कुंभनदासजी बेठे। पाछे श्रीगुसांईजी सिगरे वैष्णवनकों बिदा करिके कुंभनदाससों कहे, जो-कुंभनदासजी ! हम श्रीद्वारिकाके मिस परदेसकों जात हैं, तहां अनेक वैष्णवनसों मिलाप होयगो। सो वैष्णवननें बहोत विनती पत्र लिखे हैं, तासों अवश्य जानो है। सो तुम

हमारे संग चलो। सो भगवदीयनकों विरहको कलेश बाधा न करे, और भगवदीयन को काल आछें व्यतीत होय। सो तिहारे संग तें कछू जान्यो न परे। और हमने सुन्यो है जो—तिहारे घर द्रव्यको संकोच है, सोऊ कार्य सिद्ध होयगो। तासों तुमकों सर्वथा चल्यो चहिये। तव कुंभनदासजीने श्रीगुसांईजीसों विनती कीनी जो-महाराज! आपु के साम्हे हमसों बहोत बोल्यो नांही जात है, जो-आपु आज्ञा करो सोई हमकों करनो। इतने में उत्थापन को समय भयो। तव श्रीगुसांईजी स्नान करिके,श्रीगोवर्द्धननाथजी कों उत्थापन करायकें, सेन पर्यंतकी सेवासों पहोंचिके आपु बैठक में पधारे। तव श्रीगुसांईजी आपु कुंभनदास सों कहे जो-अब तुम घर जाऊ, जो सवारे घर सों विदा होयके आइयो,राजभोग आरती पाछे परदेसकों चलेंगे। पाछे कुंभनदासजी श्रीगुसांईजीकों दंडवत करिके अपुने घर जमुनावतामें आये। ता पाछे सवारे घरतें श्रीगुसांईजी के पास आये। तब श्रीगुसांईजी आपु स्नान करिके परवत ऊपर पधारि के श्रीनाथजी कों जगाये। पाछें सेवासिंगार करि राजभोग धरि समयानुसार भोग सरायके, राजभोग आरती करि श्रीगोवर्द्धननाथजी सों बिदा होय परवत सों नीचे पधारे। सो अप्सराकुंड ऊपर डेरा अगाऊ भये हते। तव कुंभनदाससों कहें जो अब हम अप्सराकुंड ऊपर डेरान में जायकें सोवेंगे। सो तव सव वैष्णव तथा कुंभनदासजी अप्सराकुंड ऊपर आये। तव कुंभनदासजी अपने मनमें विचार करन लागे जो--हे मन! अब कहा करिये? 'कहिये कहा कहिवे की होय? प्राणनाथ बिछुरन की वेदन जानत नांहि न कोय ॥१॥'

या प्रकार विचार करत श्रीगोवर्द्धननाथजी को बिरह हृदय में बढि गयो। तब श्रीगुसांईजी आपु डेरान के भीतर जागे। सो जब उत्थापन को समय भयो, तब कुंभनदासजी कों श्रीनाथजी के दरसन की सुधि आई, नेत्रन में सों आंसुनकी धारा चली,सो सगरे सरीर में पुलकावली होंन लागी। पाछे कुंभनदासजी डेरान के पास ही एक वृक्ष तरें ठाड़े-ठाड़े धीरे-धीरे गावन लागे। सो पद—

राग सारंग—'किते दिन व्हे जु गये बिनु देखे०।'

यह कीर्तन कुंभनदासजीनें अत्यंत विरह क्लेश सों गायों। सो श्रीगुसांईजी आपु डेरान के भीतर वेठिके कुंभनदासजी को सगरो कीर्तन सुने। सो कुंभनदासजी को क्लेश श्रीगुसांईजी आपु

सही नांही सके। सो आपु डेरानतें बाहिर पधारिके कुंभनदासजी की यह दसा देखे, जो–नेत्रन सों जल बह्यो जात है, महाविरह करिके दुःखी होय रहे हैं। तब श्रीगुसांईजी आपु श्रीमुखतें कुंभनदास सों कहे, जो–कुंभनदास! तुम मंदिर में जायके श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन करो, जो तिहारो विदेश होय चुक्यो।

भावप्रकाश – सो काहेतें? जो जैसी तिहारी दसा यहां है, सो तैसी दसा उहां श्रीगोवर्द्धननाथजी की होयगी। सो कैसे जानिये? जो–जैसे 'गज्जनधावन' कों श्रीअक्काजी ने पान लेवे कों पठायो सो गज्जन कों तो श्रीनवनीतप्रियजी के विरह को एक छन सह्यो न जातो, सो पान लेवे कों द्वारसों बाहिर जात ही विरह ज्वर चढ्यो। सो द्वार पास ही दुकान मे परि रह्यो, मूर्च्छा खाइके। और यहाँ मंदिर में श्रीआचार्यजी श्रीनवनीतप्रियजी कों राजभोग धरे। तब श्रीनवनीतप्रियजी ने महाप्रभुन सों कही जो–मेरो गज्जन आवेगो तब मैं आरोगूंगो। तब श्रीआचार्यजी सबन सों पूछे जो–गज्जन कहाँ गयो है? तब श्रीअक्काजी कहे, जो–पान न हते तासों गज्जन कों पान लेवे पठायो है। तब श्रीआचार्यजी कहे, जो–तुम जानत नांही, जो–गज्जन बिना श्रीनवनीत प्रियजी एक छिन नांही रहत हैं? तासों गज्जन कों पान लेन कों क्यों पठायो? ता पाछे गज्जन कों बुलायेवे कों ब्रजवासी पठायो, सो गज्जन कों बुलाय के ले आयो। तब गज्जन ने श्रीनवनीतप्रियजी के पास आय के कह्यो, जो–बाबा! आरोगो। तब श्रीनवनीतप्रियजी आरोगे। सो गज्जन बिना आपु विरह करिकें बैठि रहे। सो यह श्रीआचार्यजी के मार्ग की मर्यादा है। जो–जैसो सेवक को एक चित्त सों स्वामी के ऊपर (अनन्य) भाव होय, तैसेही स्वामी को भाव दास विषे (विशेष) सेवक के ऊपर होय। सो श्रीभगवान अर्जुन प्रति कहे हैं जो—

'ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम।'

तासों श्रीगुसांईजी आपु कुंभनदासजी सों कहे, जो–जैसो तुम यहाँ श्रीगोवर्द्धननाथजी के लिये विरह दुःख करत हो, तैसे उहाँ श्रीगोवर्द्धननाथजी तिहारे लिये विरह दुःख करत हैं। तासों तुम बेगि जायकें श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन करो, तिहारो विदेश होय चुक्यो।

या प्रकार श्रीगुसांईजी ने कुंभनदास कों आज्ञा दीनी। तब कुंभनदास को रोम रोम सीतल होय गयो। तब मनमें प्रसन्न होय श्रीगुसांईजी कों दंडवत करि बेगि अप्सराकुंडतें दोरि के श्रीगोव-

द्धनाथजी के मंदिर में आये। ता समय उत्थापन के दरसनको समय हतो, सो किवाड खुले। तव कुंभनदासजी ने यह पद गायो। सो पद—राग नट-'जो पैं चोंप मिलन की होय०'।

यह पद सुनिके श्रीगोवर्द्धननाथजी प्रसन्न होयके कुंभनदास सों कहे जो—कुंभनदास! मैं तेरे मनकी बात जानत हूं। जो तू मेरे विना रहि नांहि सकत है। तैसें मैं हू तो विना रहि नांही सकत हों। तासों अब तू सदा मेरे पास ही रहेगो। तब कुंभनदासजीने बहोत प्रसन्न होयके साष्टांग दंडवत कीनी, और हाथ जोरिके कुंभनदासजी ने श्रीगोवर्द्धननाथजी सों विनती कीनी जो महाराज! मोकों यही चहियत हतो, और यही अभिलाषा हती, जो-तुमसों बिछुरथो न होय। सो कुंभनदासजी एसे कृपापात्र भगवदीय हते।

वार्ता प्रसंग७—और एक समय श्रीगुसांईजी के पास कुंभनदास बैठे हते,और सगरे वैष्णव हू बैठे हते। सो श्रीगुसांईजी आपु हँसिके कुंभनदासजीसों पूछे जो—कुंभनदास! तिहारे वेटा कितने हैं? तब कुंभनदासजी ने श्रीगुसांईजी सों कह्यो जो महाराज! बेटा तो मेरे डेढ़ हैं।

तव श्रीगुसांईजी कहे जो—हमने तों सात बेटा सुने हैं, और तुम डेढ़ वेटा कहे, ताको कारन कहा? तव कुंभनदासजी ने कह्यो जो—महाराज! यों तो सात बेटा हैं, तामें पांच तो लौकिकासक्त हैं, जो वे वेटा काहे के हैं? और पूरो एक बेटा तो चतुर्भुजदास है। और आधो बेटा कृष्णदास है। सो श्रीगोवर्द्धननाथजी की गायन की सेवा करत हैं।

भावप्रकास सो तहां संदेह होय—गायन की सेवा तो सर्वोपरि है। और गायन की सेवा किये तें बहोत वैष्णव श्रीठाकुरजी कों पाये है; और कुंभनदासजी कृष्णदास कों आधो बेटा क्यों कहे? तहां कहत हैं, जो-श्रीआचार्यजी आपु यह पुष्टिमार्ग प्रगट किये हैं। सो पुष्टिमार्ग व्रजजन को भावरूप मार्ग है। सो भगवदीय गाये हैं जो-'सेवा रीति प्रीति व्रजजन की जनहित जग प्रगटाई।' सो व्रजभक्तन की कहा रीति है? जो श्रीठाकुरजी के सन्निधान में तो सेवा करें, सो स्वरूपानंद को अनुभव करि संयोग रस में मग्न रहैं। और श्रीठाकुरजी गोचारन अर्थ व्रज में पधारें तब व्रजभक्त विरह रस को अनुभव करि गान करें। सो या प्रकार संयोग रस और विप्रयोग रस को अनुभव जाकों होय

सो पूरो वैष्णव होय। और (जामें) एक न होय सो आधो वैष्णव है। सो कृष्णदास तो गायन की सेवा करत है। और श्रीगोवर्द्धननाथजी को दरसनहू होत है। परंतु व्रजभक्तन की रहस्य लीलाको अनुभव नांही है। तासों ये आधो है। और चतुर्भुजदास संयोग और विप्रयोग दोऊ रस के अनुभवयुक्त सेवा करत हैं, सो लीलासंबंधी कीर्तन हू गान करत हैं। तासों कुंभनदासजी चतुर्भुजदास कों पूरो बेटा कहे।

यह कुंभनदासजी के वचन सुनिके श्रीगुसांइजी आपु प्रसन्न होयके कहे, जो-कुंभनदास! तुम सांची वात कही। जो भगवदीय है सोई बेटा है। और वहोत भये तो कौन काम के? सो चतुर्भुजदासजी की वार्ता तो श्रीगुसांईजी के सेवकन में लिखी है, और अब कृष्णदास की वार्ता कहत हैं—

वार्ताप्रसंग ८—सो ये कृष्णदास श्रीगोवर्द्धननाथजी के गायन की सेवा करते,सो गायनके ग्वाल हते। सो श्रीगुसांईजी आपु कृष्णदास कों गायनकी सेवा दीनी हती। सो सगरे खिरक की सेवा करि कें आछें झारि बुहारिके ता पाछे गायन के संग वन में जाते, सो सगरे दिन गाय चरावते। सो संध्या समय गायनकों घेरिके ले आवते। एक दिन कृष्णदास गाय चरायके घर आवत हते सो पूंछरी के पास आये। सो सगरी गाय तो खिरक में गई, और एक गाय बहुत बड़ी हती, ताको थन वहोत भारी हतो। सो दूध हू वहोत देती, और थन हू बडे हते। सो वह गाय हरुवे-हरुवे चलती। वा गायके पाछे कृष्णदास आवत हते सो पूंछरी के पास श्रीगिरिराज की कंदरामें ते एक नाहर निकस्यो। सो वे सगरी गाय तो भाजिके खिरक में आईं। और वह गाय धीरे चलती, सो वा गाय के ऊपर नाहर दोरयो। तब कृष्णदासने नाहर सों ललकारिके कह्यो जो-अरे अधर्मी! यह श्रीगोवर्द्धननाथजीकी गाय है,और तू भूख्यो होय तो मेरे ऊपर आव।

सो नाहरकी यह रीति है जो—ललकारे सो ताही पे आवे। तब नाहर निकट आयो। सो जब कृष्णदास ने वा गाय कों हांकी, सो वह डरपि के भाजी सो खिरक में आई, और कृष्णदास कों नाहर ने मारयो। और सब गाय भाजिके खिरकमें आई हती सो गायन कों गोपीनाथ आदि ग्वाल दुहन लागे।

सो गोपीनाथ ग्वाल बडे कृपापात्र भगवदीय हते। सो देखे तो-श्रीगोवर्द्धननाथजी वा बड़ी गाय कों दुहत हैं। और कृष्णदास वा

गाय को वछरा पकरें ठाड़े हैं, सो कुंभनदासजी हू ठाड़े हते। सो गाय वछरा कों चाटत है। सो कुंभनदासजी कों खिरक में एसो दरसन भयो। ता पाछे श्रीगोवर्द्धननाथजी वा वड़ी गाय कों दुहिके आपु तो मंदिरमें पधारे। तब श्रीगुसांईजी आपु श्रीगोवर्द्धननाथजी कों सेन भोग धरे। सो कुंभनदास हू खिरक में ते मंदिरमें चले, सो दंडोती सिलाके पास आये। इतने में सब समाचार आये, जो कृष्ण-दास ग्वाल कों नाहर ने मारयो।

तब कृष्णदास की बात काहूने कुंभनदास सों कही, जो—तिहारे बेटा कृष्णदास कों नाहरने मारयो है। यह बात सुनिके कुं-भनदासजी मूर्छा खाइके गिर पडे। सो एसे गिरे जो कछू देहानु-संधान न रह्यो। सो कुंभनदासकों व्रजवासी वैष्णव बहोतेरो बुलावें सो कुंभनदासजी बोले नांही। तब ये समाचार काहूने श्रीगुसांईजी सों जायके कहे, जो-महाराज! कुंभनदासको बेटा कृष्णदास ग्वाल नाहर ने मारयो है, और कृष्णदास ने गाय बचाई। आपु नाहर के आडे परि देह छोड़ी,सो कृष्णदास पूंछरी की ओर परे हैं। तब श्री-गुसांईजी कहे जो—एसे मति कहो। क्यों? जो गाय कृष्णदास कों कबहू छोडि आवे नांही।

भावप्रकाश—सो काहेतें जो-अंत समय गाय संकल्प करत है, सो ताकों गाय उत्तम लोक में ले जात है। और कृष्णदास ने तो श्रीगोवर्द्धननाथजी की गाय बचाई है, सो श्रीगोवर्द्धननाथजी की गाय कृष्णदास कों कबहू न छोड़ेगी।

तब श्रीगुसांईजी आपु पूछे जो-कुंभनदासजी कहां है? तब काहू वैष्णव ने विनती कीनी जो-महाराज! कुंभनदास कों तो पुत्र को सोक बहोत व्याप्यो है, सो दंडोती सिला के पास मूर्छा खायके गिर परे हैं। सो कितनेक लोग पुकारत हैं, परि कुंभनदासजी काहू सों बोलत नांही। जो अचेत परे हैं। तब श्रीगुसांईजी आपु श्रीना-थजी की सेवा सों पहोंचि के अनोसर कराय परवत तें नीचे पधारि दंडोती सिला के पास कुंभनदासजी परे हते तहां पधारे। ता समय वैष्णवन ने सब समाचार कहे। सो श्रीगुसांईजी आपु देखें तो कुं-भनदासजीके पास सब लोग ठाड़े हैं। ता समय लोगननें कही जो-महाराज! कुंभनदासजी बड़े भगवदीय हैं, परंतु पुत्र को सोक महा बुरो होत है, सो या पीड़ा सों कोई वच्यो नांही है।

तव श्रीगुसांईजी आपु कहे जो-इनकों पुत्र को सोक नांही है; जो इनकों और दुःख है। सो तुम कहा जानो ? इनकों यह दुःख है जो-सूतक में श्रीनाथजी के दरसन कैसें होयगे। सो या दुःख सों गिरे हैं। सो अब तुम्हारो संदेह दूर होयगो। तव श्रीगुसांईजी आपु भगवदीयन को स्वरूप प्रकट करिवे के लिये कुंभनदास कों पुकारि के कहे जो-कुंभनदास ! सवारे श्रीनाथजी के दरसन कों आइयो, जो तुमकों श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन करवावेंगे।

तव श्रीगुसांईजी के यह बचन सुनिके कुंभनदासजी ने तत्काल उठि के श्रीगुसांईजी कों साष्टांग दंडवत कीनी, और विनती कीनी। जो-महाराज ! आपु बिना मेरे अंतःकरन की कौन जाने ? तव श्रीगुसांईजी आपु कहे जो—हम जानत हैं,तुमकों संसार संबंधी दुःख लगे नांही। जो कोई वैष्णव तिहारो एक क्षण संग करे तो वाकों लौकिक दुःख न लागे। तो तुमकों कहा ? तासों जावो, जो कृष्णदास के सरीर को संस्कार करो। पाछे सवारे दरसन कों आइयो। तब कुंभनदासजी श्रीगुसांईजी कों दंडवत करिके जायके कृष्णदास के सरीर को क्रियाकर्म किये।

और श्रीगुसांईजी आप बैठक में जायके विराजे, तब सगरे वैष्णव बैठकमें आयके बैठे। सो इतनेमें गोपीनाथदास ग्वाल(नें)आयके कह्यो जो—महाराज ! कृष्णदास कों तो पूछरी पास नाहर ने मार्यो, और मैं खिरकमें गोदोहन करत हतो, सो ता समय श्रीगोवर्द्धननाथजी आपु वा बड़ी गाय कों दुहत हते और कृष्णदास वा गाय को बछुरा थांमे हते। सो गाय बछुरा कों चाटत हती। सो एसो दरसन खिरक में मोकों भयो। तब श्रीगुसांईजी श्रीमुख सों कहे जो—यामें आश्चर्य कहा ? ये कृष्णदास एसे भगवदीय हैं जो आपु नाहर के आडे परे और श्रीगोवर्द्धननाथजी की गाय कों बचाई। सो कृष्णदास के ऊपर श्रीगोवर्द्धननाथजी आपु प्रसन्न होय के अपनी लीला में कृष्णदास कों प्राप्त किये। सो तुम भगवदीय हो, तासों तुमकों दरसन भयो। और कों तो लीलाके दरसन दुर्लभ हैं।

यह बात सुनिके सगरे वैष्णव व्रजवासी बहोत प्रसन्न भये जो सेवा पदार्थ एसो है। ता पाछें प्रातःकाल कुंभनदासजी श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन कों आये। तब श्रीगुसांईजीने सेवकन सों आज्ञा कीनी, जो-सबतें पहले कुंभनदासजी कों दरसन करवाय देउ, ता

पाछे और सगरे लोग दरसन करेंगे। पाछें श्रीगुसांईजी ने सबतें पहले कुंभनदासजी कों दरसन करवाय दियो। सो या प्रकार कुंभनदासजी के ऊपर श्रीगुसांईजी आपु अनुग्रह किये।

भावप्रकाश-सो काहेतें? जो सूतकी कों भगवत्-मंदिर में कौन आयवे देतो? सो कुंभनदास कों सूतकमें दरसन कराये। सो यह रीति वा दिन तें राखी। जो सूतक जाकों होय सोहू दरसन पावे। सो या प्रकार कुंभनदासजी की कृपातें सूतकीन कों दरसन होंन लागे। सो यह रीति श्रीगुसांईजी आपु यासों किये जो-वैष्णव के हृदय में स्नेह है, सो आगे कोई जानेगो नांही। तासों आगे के वैष्णव कों दरसन की छुट्टी रहे। तब वैष्णव हू सुख पावें, और श्रीगोवर्द्धननाथजी हू सुख पावें। तासों आगे दरसन की छुट्टी राखे।

सो कुंभनदासजी भोग पर्यंत दरसन करि पाछे परासोली में जायके विरह के पद गावते। सो पद—

राग बिहागरो १–तिहारे मिलन बिनु दुखित गोपाल०।' २–'अब दिन रात पहार से भये।' राग केदारो ३–'औरन कों समीप बिछुरनो आयो एक मेरे ही हीसा।

सो या प्रकार विरह के पद गायके कुंभनदासजीनें सूतक के दिन व्यतीत किये। ता पाछे शुद्ध होयके कुंभनदासजी अपनी सेवा में आये. सो जैसे नित्य नेम सों सेवा करते ताही प्रकार सों करन लागे। सो या प्रकारको स्नेह कुंभनदासजीको श्रीगोवर्द्धननाथजीमें हतो।

वार्ताप्रसंग ६–और एक दिन श्रीगोकुलनाथजी और श्रीबालकृष्णजी ये दोऊ भाई मिलिके श्रीगुसांईजी सों कहे जो-कुंभनदासजी कबहू श्रीगोकुल नांही गये हैं। सो ये कोई प्रकार श्रीगोकुल तांई जाय तब श्रीनवनीतप्रियजी के दरसन कुंभनदासजी करें। तब श्रीगुसांईजी आपु कहे जो-कुंभनदासजी तो श्रीगोवर्द्धननाथजी की रहस्य लीला में मगन हैं, सो इनसों श्रीगोवर्द्धननाथजी हिलैं हैं। तब श्रीगोकुलनाथजी कहे जो-इनकों लै जायवे को उपाय तो करिये। पाछे न आवें तो भगवद् इच्छा। तब श्रीगुसांईजी आपु कहे जो-उपाय करो, परंतु कुंभनदासजी श्रीयमुनाजी पार कबहू न उतरेंगे। पाछे कछुक दिन में श्रीगुसांईजी आपु श्रीगोकुल पधारे हते, और श्रीबालकृष्णजी और श्रीगोकुलनाथजी श्रीनाथजीद्वार में हते। सो वैशाख सुदि ११ के दिन श्रीगोकुलनाथजी श्रीबालकृष्णजी सों कहे

जो- श्रीगोकुलमें श्रीगुसांइजी हैं और आपुन दोउ जने यहां है। तासों कुंभनदासजी कों श्रीगोकुल ले चलिये।

तब श्रीबालकृष्णजी ने कह्यो जो-कैसे ले चलोगे? जो कुंभनदासजी तो असवारी पर बैठत नांही हैं। सो तब श्रीगोकुलनाथजी ने कह्यो जो-कुंभनदासजी असवारी पें तो वैठेंगे नांही, और दिन में श्रीगोवर्द्धननाथजीके दरसन छोडिके कहूं जांयगे नांही। तासों रात्रि उजियारी है, सो हमहू पाँवन सों चलेंगे। सो या प्रकार सों चले चलेंगे सो देखें कहा कौतुक होत है? जो कुंभनदासजी सरीखे भगवदीय को संग तो या मिष तें होयगो,सो यही बडो लाभ होयगो। पाछे दोनो भाई श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेन आरती तांई सेवा सों पहोंचिके श्रीनाथजीकों पोंढाय अनोसर करवाय वाहिर आये। और कुंभनदासजी को हाथ जोडिके भगवद् वार्ता लीला को भाव कहन लागे। सो कुंभनदासजी लीलारस में मगन होय गये,सो कछू सुधि न रही जो हम कहां हैं? तब श्रीगोकुलनाथजी भगवद्वार्ता करत कुंभनदासजी को हाथ पकरिके अन्योर की ओर परवत सों उतरिकें श्रीगोकुल कों चले। सो रहस्य वार्ता में मगन हैं। और श्रीबालकृष्णजी दोय चारि वैष्णव संग चुपचाप होयके कुंभनदासजी की और श्रीगोकुलनाथजी की वार्ता सुनत श्रीगोकुल कोंचले। तब मारग में श्रीगोकुलनाथजी वार्ता करिके कुंभनदासजी सों पूछे। जो—श्रीस्वामिनीजी को सिंगार कबहू श्रीगोवर्द्धनधर हू करत हैं? तब कुंभनदासजी प्रेम में मगन होय के कहे जो-हां, हां, करत हैं। जो-"एक दिन आश्विन महिना में श्रीनाथजी और श्रीस्वामिनीजी ललितादिक सखी संग रात्रि कों बन में फूल बीने। ता पाछे समाज सहित रासमंडल के पास सिंगार को चौंतरा हैं सो ता ऊपर आपु विराजे। तब विसाखाजी सिंगार करन लागी। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कहे जो-आजु सिंगार मैं करूंगो।

'सो तब श्रीगोवर्द्धननाथजी श्रीस्वामिनीजी के पास ठाड़े भये। सो मुखादिक के दरसन बिना रह्यो न जाय दोउन सों। तब विसाखा जी परम चतुर दोउन के हृदय को अभिप्राय जानि श्रीस्वामिनीजी के आगे एक दर्पन धरयो। तब वा दर्पन में दोउन के श्रीमुख सन्मुख भये, सो अवलोकन लागे। सो श्रीठाकुरजी वडे लंबे बार श्याम सचिकन श्रीहस्त में कांकसी सों सम्हारि, एक एक बार में झीने

मोती परम चतुराई सों पिरोय के श्रीस्वामिनिजी के मुखचंद-शोभा दरपन में देखिके प्रसन्न होय गये, सो हाथ सों केस छूटि गये। तब सगरे मोती वार में सों निकसि सिंगार को चौंतरा है रतन खचित, तहां फेलि गये। तब बड़ो हास्य भयो। जो इतनी बारलों सिंगार किये सो एक छिन में बड़ो होय गयो। सो यह सखीन ने कही।'

'तब श्रीठाकुरजी ने विसाखाजी सों कह्यो,जो-तुम बेनी पकरे रहो, मैं मोती पिरोऊँ। तब श्रीविसाखाजी ने वेनी पकरी। सो तब फेरि बेनी मोतीन सों सिंगार करि मोतीन सों मांग सँवारी। पाछे फूलन के आभूषन सखीजन ने बनाय के श्रीठाकुरजी कों दिये। सो श्रीठाकुरजी पहरावत जाँय और छिन छिन में मुखचंद की शोभा देखिके रोम रोम आनंद पावें। सो या प्रकार सब सिंगार श्रीगोवर्द्धननाथजी करिके काजर बेंदी, तिलक और चरण में महावर किये। पाछे श्रीस्वामिनीजी श्रीगोवर्द्धनधर को सिंगार किये। ता पाछे रासविलास आदि अनेक लीला करी।'

सो या प्रकार वार्ता करत करत श्रीगोकुल साम्हे श्रीयमुनाजी के तीरलों कुंभनदासजी आये। पाछे पार श्रीगोकुल तें नाव पर चढ़िके श्रीगुसांईजी आपु या पार आये। सवारो हू भयो। सो कुंभनदासजी कों सरीर की सुधि नांही, लीला रस में मगन हते। तब कुंभनदासजी सावधान होयके देखे तो सवारो भयो है। सो इतने में श्रीगुसांईजी कों देखिके श्रीगोकुलनाथजी सों हाथहू छूटि गयो। सो कुंभनदासजी महा उतावल सों भाजे जो श्रीगोवर्द्धननाथजी के यहाँ कीर्तन कौन करेगो? जो-हाय हाय मेरी सेवा गई। सो या प्रकार मनमें कहत दौरे, सो अति वेगि दौरे। तब श्रीगोकुलनाथजी और श्रीबालकृष्णजी और सब वैष्णव कुंभनदासजी कों पकरिवे कों पीछे ते दौरे। सो कुंभनदास तो भाजे दौरेई गये। इन कोई कों पाये नांही। पाछे श्रीगुसांईजी के पास आये। तब श्रीगुसांईजी कहे जो-अब कहा कुंभनदास कों पावोगे? जो इनकों यहाँ काहेकों लें आये हो? जो ये श्रीजमुना के पार कबहू न उतरेंगे। सो हमने तुमसों पहले ही कह्यो हतो। तब श्रीगोकुलनाथजी श्रीगुसांईजी सों कहे, जो-पार न उतरे तो कहा भयो? 'परन्तु सगरी रात्रि भगवद्वार्ता के भाव में महा अलौकिक सिद्धि मिले तें भई। सो वह बड़ो लाभ भयो है, जो भगवदीयन को सत्संग एक छन हू दुर्लभ हैं। यह

सुनिके श्रीगुसांईजी आपु कहे जो-यह तो तुम ठीक कहे, परन्तु अब या समय तो कुंभनदास को दोरनो परयो। और जहां ताईं कुंभनदास श्रीगिरिराज ऊपर न जांयगे, तहां ताईं श्रीगोवर्द्धननाथजी जागेंगे नाहीं। जो कुंभनदास जगायवे के कीर्तन गावेंगे तब जागेंगे। सो ऐसे, भक्त के आधीन श्रीगोवर्द्धननाथजी हैं। तासों तुमकों भगवद्वार्ता सुननी होय तो परासोली में जमुनावता में जायके कुंभनदास सों पूछियो। सो तहाँ कुंभनदासजी तुमसों कहेंगे।

ता पाछे श्रीगोकुलनाथजी श्रीबालकृष्णजी सब वैष्णव सहित श्रीगोकुल पधारे। सो श्रीगुसांईजी को घोड़ा जीन सहित पार बंध्यो हतो, सो ता पर आप श्रीगुसांईजी वेगि ही असवार होयके घोड़ा दोराय के चले। और कुंभनदासजी तो दोरे जात हते, सो तहाँ आयके श्रीगुसांईजी कुंभनदासजी सों कहे. जो-तुमने कबहू यह मारग देख्यो नाहीं, सो तुम भूलि जाओगे। तासों घोड़ा के पीछे पीछे दौरे आवो। तब कुंभनदासजी श्रीगुसांईजी के पीछे दौरे चले जाँय। सो यहां रामदास भीतरिया आदि जो न्हाय के पर्वत ऊपर आवें सो (ये) छुय जांय। सो ऐसें करत चार घड़ी दिन चढ़यौ। तब श्रीगुसांईजी आपु गिरिराज पधारिके घोड़ा पर तें उतरि के तत्काल स्नान करि पर्वत ऊपर मंदिर में पधारे। तब देखे तो सगरे भीतरिया रामदास सहित न्हाय के मंदिर में आये हैं।

तब श्रीगुसांईजी आपु पूछे जो—रामदास! आज इतनी अबार क्यों भई है? तब रामदास ने विनती कीनी जो-महाराज! आज न जानिये कहा भयो है? जो चारि बेर न्हाये और चारयों वेर सगरे भीतरिया छुवाने। सो अब पांचमी वार न्हाय के आये हैं, सो कारन जान्यो न परयो। तब श्रीगुसांईजी आपु कहे, जो-यह कुंभनदासजी के लिये श्रीगोवर्द्धननाथजी कौतुक किये हैं। ता पाछे श्रीगुसांईजी आप शंखनाद करवाय के श्रीगोवर्द्धननाथजी कों जगाये। ता समय कुंभनदासजी ने जगायवे के पद गाये। सो श्रीगोवर्द्धननाथजी उठे। तब कुंभनदासजी ने अपने मन में बहोत हरष मान्यो। जो-मेरी कीर्तन की सेवा मिली। ता पाछे राजभोग पर्यंत श्रीगुसांईजी सेवा सों पहोंचे। सवारे नृसिंह चतुर्दशी हती। सो केसरी पिछोड़ा, कुलह सिद्ध कियो। ता पाछें सेन पर्यंत सेवा सों पहोंचे। सो या प्रकार कुंभनदासजी कबहू श्रीगोकुल कों न गये।

सो श्रीगोवर्द्धननाथजी की लीला रस में मगन रहते। सो वे कुंभनदासजी ऐसे परम कृपापात्र भगवदीय हते।

वार्ताप्रसंग १०—और एक समय परासोली में कुंभनदासजी खेत ऊपर बैठे हते, और श्रीगोवर्द्धननाथजी कुंभनदास के आगे खेत में खेलत हते। इतने में उत्थापन को समय भयो तब कुंभनदास जी उठिके श्रीगिरिराज चलिवे कों कियो। तब श्रीनाथजी ने कुंभनदासजी सों कही, जो-तू कहां जात है? सो तब इन (नें) कही, जो-उत्थापन को समय भयो है, सो गिरिराज ऊपर श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन कों जात हों। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कहे, जो-मैं तो तिहारे पास खेलत हों, तासों तू उहां क्यों जात है?

तब कुंभनदासजी ने कही, जो-महाराज! यहाँ तुम खेलत हो और दरसन देत हो सो तो अपनी ओर तें कृपा करिके, और अबही तुम भाजि जाव तो मेरी तुमसों कछू चले नांही। और मंदिर में तो श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के पधराये हो सो उहां सों कहूँ जावो नाहीं, और उहां सबकों दरसन देत हो। और मंदिर में दरसन की आसक्ति जो मोकों है, सो तासों तुम घर बैठेहू मोकों कृपा करि दरसन देत हो। या समय तुम कृपा करि दरसन दे अनुभव जतावत हो, सो मंदिर की सेवा दरसन के प्रताप सों। तासों उहां गये बिना न चले। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी हँसिके कहे, जो-कुंभनदास! तेरो भाव महा अलौकिक है, तासों मैं तोकों एक छिन नांही छोड़त हों।

ता पाछे श्रीनाथजी और कुंभनदासजी परासोली सों संग चले। सो गोविंदकुंड ऊपर आये तब शंखनाद भये। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी मंदिर में आये, और कुंभनदासजी आन्योर तांई संग आये। सो तहां तें पर्वत ऊपर आप चढि मंदिर में श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन किये। सो कुंभनदासजी एसे भगवदीय हते।

वार्ताप्रसंग ११—और एक दिन माली दोयसे आम बडे-बडे महा सुंदर टोकरा में लेके परासोली चंद्रसरोवर है तहां आयो, पाछें टोकरा उतारि के कुंड के पास सगरे आम भूमि में धरि कें कपड़ा तें पोंछि-पोंछि मेल छुडावन लाग्यो। ता समय कुंभनदासजी राजभोग आरती के दरसन करिके श्रीगिरिराज तें चले, सो चंद्रसरोवर ऊपर जल पीवन कों आये। सो आम बहुत सुंदर श्रीगोवर्द्धननाथजी के लायक देखिके कुंभनदास वा माली सों पूछे जो-ये आम तूं

कहां ले जायगो ? तब वा मालीने कह्यो जो–मथुरा ले जाऊंगो, वहां इनके दस रुपैया लेऊंगो। सो कुंभनदास के पास तो कछू पैसाहू न हते। सो कहा करें ? तब मनमें श्रीगोवर्द्धननाथजीको स्मरण करिकें कहे जो–महाराज ! यह सामग्री परम सुंदर है, और आपु लायक है, (क्यों ?) जो उत्तम वस्तु के भोक्ता आपुही हो। तासों ये आम आरोगो। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी सगरे आम आयकें आरोगे। सो वा माली कों खबरि नांहीं। सो यह माली टोकरा में आम भरि के मथुरा गयो। सो सांझ होय गई। सो एक रजपूत मांट गाम में ते मथुरा कछू कार्यार्थ आयो हतो, सो वाने आम देखिके कह्यो जो–कहा लेयगो ? तब माली ने कही जो–दस रुपैया तें घाट न लेउंगो। तब वह रजपूत दस रुपैया देके आम सगरे लेके श्रीयमुनाजी के तट पर आयो। सो वा रजपूत के संग एक सनोढ़िया ब्राह्मण हतो सो वाकों सौ आम दिये। सो दोऊ जनेन ने पचास-पचास आम घर के लिये धरिके पचास २ आम दोउनने श्रीयमुनाजी के किनारे बैठिके चूसे। ता पाछे श्रीमथुरा में एक हाट ऊपर दोऊ जने सोये। सो दोऊन कों स्वप्न में श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन भये। सो ये जागे तब वा रजपूत ने कही जो–ब्राह्मणदेव ! तुमने कछू देख्यो। तब वा ब्राह्मणने कह्यो जो–श्रीगोवर्द्धननाथजी ठाकुरको दरसन भयो है। तब वा रजपूतने वा ब्राह्मण सों पूछी जो–श्रीगोवर्द्धननाथजी आपु कहां बिराजत हैं ? तब वा ब्राह्मण नें कही जो–यहां ते सात कोस ऊपर श्रीगोवर्द्धन पर्वत है, तहां बिराजत हैं।

तब वा रजपूत ने ब्राह्मण सों कही, जो–तू महा मूरख है, जो-ऐसे स्वरूप को साक्षात दरसन करि पाछें और ठोर क्यों भटकत है ? सो मैंने स्वरूप के दरसन स्वप्न में पाये। सो मोसों रह्यो नांही जात है। जो सवारे तू सगरे आम ले और मैं तोकों रुपैया पांच देऊंगो, जो मोकों श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन कराय दे। तब वा ब्राह्मण ने कही, जो–आछो। ता पाछें सवेरो भयो। तब वा रजपूत ने पचास आम वा ब्राह्मण कों दीने। तब वह ब्राह्मण मथुराजी में अपने घर आयके अपने पास के हू आम सौ देके वा रजपूत के पास आयके दोउ जने चले। सो श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेन आरती के दरसन दोउ जनेन ने किये। सो श्रीनाथजीने वा रजपूत को मन हर लीनो। ता पाछे दरसन होय चुके। तब रजपूत ने अपने हथियार

कपड़ा, पांच रुपैया वा ब्राह्मण कों दिये और दस रुपया और हते सो पास राखे। तब वह ब्राह्मणने कही जो–मैं घर जाऊंगो। सो वह ब्राह्मण तो मथुरा अपने घर आयो। पाछे वह रजपूत एक धोवती पहरे दंडोती सिला के पास ठाड़ो होय रह्यो। सो इतने ही में श्रीगोवर्द्धननाथजी कों अनोसर करायके श्रीगुसांईजी आपु पर्वत तें नीचे पधारे। तब रजपूत नें दंडवत करिके कही जो-महाराज ! मैं बहोत दिनन तें भटकत हतो, सो मेरो अंगीकार करि मोकों अपने चरण पास राखिये। तब श्रीगुसांईजी कहे जो–तुम पर कुंभनदासजी की कृपा भई है, तासों तिहारी यह दसा है। जो तेरे बड़े भाग्य हैं। सो तब श्रीगुसांईजी आपु अपनी वेठकमें पधारि वा रजपूत कों नाम सुनायो। तब वा रजपूत ने दस रुपया श्रीगुसांईजी की भेट किये। तब श्रीगुसांईजी आपु कहे जो–तू अपने पास रहन दे। क्यों जो–तेरे पास खरची नांही हैं, (तैंने) सब वा ब्राह्मण कों दीनी। तब वा रजपूतने दंडवत् करिके विनती कीनी जो-महाराज ! अब मेरे रुपयान सों कहा काम है ? मैं तो अब आपुकी सरन हूं; जो टहल बतावोगे सो मैं करूंगो। पाछे वा रजपूतने विनती कीनी जो–महाराज! पूर्व जन्म को मैं कौन हूं, और कौन पुन्य तें मोकों आप को दरसन भयो है। तब श्रीगुसाँईजी आपु कृपा करि वासों कहे जो–तुम पहले व्रजमें गोप हते। सो तुम शस्त्र बाँधिके श्रीनंदरायजीकी गायनके संग जाते, सो एक दिन तुमने सर्प मार्यो, सो अपराध तें तुमने संसार में बहोत जन्म पाये। पाछे ये आम कुंभनदासजीने देखे सो मन करिके श्रीगोवर्द्धननाथजी कों समर्पन किये। सो वा माली के सगरे आम कुंभनदासजी ने श्रीनाथजी कों अंगीकार करवाये। ता पाछे वा माली के पासतें दस रुपया देके तुमने आम लिये, सो पचास तुमने राखे। तुमने वे महाप्रसादी आम लिये, और तुम दैवी जीव हते, सो तिहारो मन फेरिके श्रीनाथजी ने स्वप्न में दरसन दियो। और वह ब्राह्मण दैवी जीव न हतो, सो वाकों स्वप्न में श्रीनाथजीने दरसन दियो, परंतु तोहू वाकों ज्ञान न भयो। सो लीला में तेरो नाम 'नेना' हतो।

अब तुम श्रीनाथजी की गायन के संग शस्त्र बांधिके जायो करो। और श्रीनाथजी की रसोई में महाप्रसाद लेऊ। जो शस्त्र कपड़ा हम तुमकों देंयगे। और आज तुम व्रत करो,जो काल्हि तुमकों

समर्पन करवावेंगे। तब वा रजपूतने दंडवत कीनी। ता पाछे दूसरे दिन श्रीगुसांईजी आपु श्रीनाथजी को सिंगार करि वा रजपूत कों न्हवायके श्रीनाथजी के साम्हे ब्रह्मसंबंध करवाये। तब वा रजपूतकी बुद्धि निर्मल होय गई। ता पाछे वा रजपूत कों जूठनि की पातरि धरी। पाछे शस्त्र देके श्रीगुसांईजी आपु वाकों प्रसादी कपडा दिये, सो लेकें घोड़ा ऊपर चढिके गायन के संग गयो। सो वाको मन श्रीगोवर्द्धननाथजी के स्वरूप में लग्यो, सो कछुक दिन में श्रीनाथजी गायन में वा रजपूत कों दरसन देन लगे। ता पाछे वह रजपूत बड़ो कृपापात्र भगवदीय भयो।

भावप्रकाश–सो यामें यह जताये जो-कुंभनदासजी मानसी सेवामें भोग धरे। सो श्रीगोवर्द्धननाथजी आरोगे। सो महाप्रसादी आम लियेतें वा रजपूत के ऊपर भगवद्अनुग्रह भयो। तासों जो भगवदीय अपने हाथसों भोग धरत हैं, सो तो सर्वथा ही श्रीठाकुरजी प्रीति सों आरोगत हैं। सो महाप्रसाद अलौकिक होय तामें कहा कहनो ?

ता पाछे वा रजपूत के दोय बेटा हते, सो वा रजपूतके पास आये। तब वा रजपूतने अपने दोय बेटानसों कह्यो जो-बेटा ! आपुन तो सिपाई हैं। सो कहुं लराई मे वृथा प्रान जाते, तासों मो पर प्रभु कृपा करी है, तासों अब तुम यह जानियो जो मेरो पिता मरि गयो। तासों अब तुम जायके अपनो घर सम्हारो,हमारी बाट मति देखियो। हम तो नांही आवेंगे। पाछे वा रजपूतके दोऊ बेटा अपने घर आये, और सब समाचार कहे, जो-हमारो पिता बैरागी भयो है। तासों अब हमारो कहा काम है ? पाछे सब घरके मोह छाँडि के बैठि रहे।

भावप्रकाश–या प्रकार महाप्रसाद तथा भगवदीयन को दरसन (जो) दैवी जीवहोंय तिनकों फलित होय। सो यह सिद्धाँत जताये।

सो वे कुंभनदासजी एसे भगवदीय हे जो सहजमें आँबान द्वारा रजपूत ऊपर कृपा किये। तासों भगवदीय जो कृत्य करत हैं सो अलौकिक जानिये। क्यों ? जो श्रीगोवर्द्धननाथजी भगवदीय के बस हैं। और कुंभनदासजी की स्त्री और पांचों बेटा नाममात्र पाये। सो कुंभनदासजी के संग तें उद्धार भयो। और कुंभनदास की भतीजी; (जो) भाई की बेटी हती सो ब्याह होत ही विधवा भई। सो लौकिक संबंध यासों न भयो।

भावप्रकाश–क्यों ? जो मूलमें दैवी जीव है। सो श्रीविसाखा-

जी की सखी है। सो लीला में याको नाम 'सरोवरि' है। याके माता-पिता मरि गये यासों ये कुंभनदास के घर में रहती। लीला में विसा-खाजी की सखी है। सो यहां (हू) कुंभनदासजी (जैसे) भगवदीय को संग। तातें भतीजी कों हू श्रीगोवर्द्धननाथजी दरसन देते, और सानु-भाव जनावते।

वार्ताप्रसंग १२—और एक समय श्रीगुसांईजी को जन्म दिवस आयो। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी अपने मनमें विचारे, जो—मेरो जनम-दिवस श्रीगुसांईजी सब वैष्णवन सहित जगत में प्रगट किये। तासों मैं हू अब श्रीगुसांईजी को जनम दिवस प्रगट करूं। सो यह विचारि के जब पूस वदी ८ कूं रामदासजी श्रीनाथजी को सिंगार करत हते, ता समय कुंभनदासजी सिंगार के कीर्तन करत हते। और श्रीगु-सांईजी आपु श्रीगोकुल में हते। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी रामदासजी सों कहे, जो-मेरे जनम-दिवस कों श्रीगुसांईजी आपु वड़ो उत्साह करत हैं, तासों मोकों श्रीगुसांईजी को जनम-दिवस माननो है। सो तुम सगरे मिलिके श्रीगुसांईजी के जनम-दिन को मंडान करो, जो मोकों सामग्री आरोगावो। सो काल्हि जनम-दिन है। तब रामदास ने बिनती कीनी, जो—महाराज! कहा सामग्री करें? तब श्रीगोव-र्द्धननाथजी कहे, जो—जलेबी रसरूप करो। तब रामदास,कुंभनदास-जी ने कह्यो, जो—वहोत आछो।

पाछे रामदासजी सेवा सों पहोंचि के सगरे सेवकन कों भेले करिके कह्यो, जो—सवारे श्रीगुसांईजी को जनम-दिवस है, सो श्री-गोवर्द्धननाथजी कों सामग्री करनी। तब सदू पांडे ने कही, जो-घी चून चहिये इतनो मेरे घरसों लीजियो। पाछे कुंभनदासजी तत्काल घर आये। तब घरतो कछु हतो नाहीं, सो दोय पाडा और दोय पडिया एक व्रजवासी के पास वेचिके पांच रुपैया लायके कुंभन-दासजी ने रामदासजी कों दिये। और सब सेवकन ने एक रुपैया, कोई ने दोय रुपैया ऐसे दिये, सो ताकी खाँड मँगाये। और घी मेंदा सदू पांडे लाये। सो सगरी रात्रि जलेबी किये। ता पाछे प्रातःकाल भयो। तव रामदासजी अभ्यंग कराय के केसरी पाग, केसरी वस्त्र, वागा कुलह, श्रीगुसांईजी आपु श्रीगोकुल सों अपने श्रीहस्त सों सिद्ध करिके पठाये हते सो धराये। पाछे भोग धरे। तव श्रीगोव-र्द्धननाथजी कुंभनदासजी सों कहे, जो—तुम श्रीगुसांईजी की बधाई गावो। तव कुंभनदासजी बधाई गाये। सो पद—

राग देवगंधार १—'आजु बधाई श्रीवल्लभद्वार० ।'

राग सारंग २—'प्रगट भये श्रीवल्लभ आय० ।'

सो या भांति सों कुंभनदासजी ने बहोत वधाई गाई, सो सुनिके श्रीगोवर्द्धननाथजी बहोत प्रसन्न भये। और यहाँ श्रीगुसांईजी आपु श्रीनवनीतप्रियजी कों अभ्यंग कराय, केसरी बागा कुलह धराय, राजभोग धरिके श्रीनाथजीद्वार पधारे। तब रामदास कहे, जो-राजभोग आये हैं। तब श्रीगुसांईजी आपु स्नान करिके परवत के ऊपर मंदिर में पधारे। तब समय भये भोग सरायवे जायके देखे तो जलेबी के अनेक टोकरा धरे हैं। तब श्रीगुसांईजी आपु रामदासजी सों पूछे, जो-आज कहा उत्सव है, जो यह सामग्री इतनी अरोगाये हो? तब रामदासजी ने कही, जो-आज आपु को जनमदिन श्रीगोवर्द्धनधर माने हैं, और सब सेवकन सों सामग्री कराई है। तब श्रीगुसांईजी आपु भोग सराय आरती किये। ता पाछे अनोसर कराय के आपु अपनी बैठक में पधारे और विराजे। तहाँ रामदासजी सों बुलाय के श्रीगुसांईजी आपु पूछे, जो-सामग्री बहोत है, और सेवक (मंदिर के) तो थोरे हैं और निष्कंचन हैं, सो सामग्री कौन प्रकार सों भई है?

तब रामदासजी कहे, जो-महाराज! घी मैदा तो सदू पांडे दिये, और पांच रुपैया कुंभनदासजी दिये हैं। और ये वैष्णव कोई एक, कोई दोय, जो जासों बनि आयो सो दियो। सो ऐसे रुपैया २१) भये। ताकी खांड आई। सो श्रीप्रभुजी ने अङ्गीकार कीनी। इतने में कुंभनदासजी ने आयके श्रीगुसांईजी कों दंडवत कीनी। तब कुंभनदासजी सों श्रीगुसांईजी पूछे, जो-कुंभनदास! तुम पाँच रुपैया कहाँ सों लाये? जो-तिहारे घरकी बात तो हम सब जानत हैं। तब कुंभनदासजी कहे, जो-महाराज! मेरो घर कहाँ है? मेरो घर तो आपके चरणारविंद में है, जो-यह तो आपको है। दोय पाडा और दोय पडिया अधिक हती सो वेचि दीनी हैं। अपनो सरीर, प्राण, घर, स्त्री, पुत्र वेचिके आपके अर्थ लागे, तब वैष्णव धर्म सिद्ध होय। जो-महाराज! हम संसारी गृहस्थ हैं, सो हमसों वैष्णव धर्म कहा बने? यह तो आपकी कृपा, दीन जानके करत हो।

सो यह कुंभनदासजी के वचन सुनिके श्रीगुसांईजी को हृदो भरि आयो। तब आपु कहे जो-श्रीआचार्यजी आप जाकों कृपा

करिके ऐसी दैन्यता देय सो पावे। सो तव श्रीगोवर्द्धननाथजी सदा इनके वस रहें। सो या प्रकार श्रीगुसांईजी आपु कुंभनदासजी की वहोत सराहना करे। सो वे कुंभनदासजी ऐसे कृपापात्र हते।

वार्ताप्रसंग १३–और एक समय कुंभनदासजी ने श्रीआचार्यजी सों पुष्टिमारग को सिद्धान्त पूछ्यो। तव श्रीआचार्यजी आपु कृपा करिके चौरासी अपराध, राजसी, तामसी, सात्विकी भक्तन के लक्षण और प्रातःकालतें सेन पर्यंत की सेवा को प्रकार कहे, वाललीला किशोरलीला को भाव कहे। पाछे कहे जो-जापर श्रीगोवर्द्धननाथजी की कृपा होयगी सो या काल में पूछेंगे और करेंगे। जो तुम सरीखे भगवदीय पूछेंगे और करेंगे। आगे काल महाकठिन आवेगो, और न कोई पूछेंगो और न कोई कहेगो। सो या प्रकार सों श्रीआचार्यजी आपु कुंभनदासजी सों कहे।

भावप्रकाश - सो काहेतें ? जो सिंघिनी को दूध सोने के पात्र बिना रहे नांही। तैसे ही भगवद्लीला को भाव और भगवद्धर्म भगवदीय बिना और के हृदय में रहे नांही।

वार्ताप्रसंग १४ और एक दिन कुंभनदासजी ने श्रीगुसांईजी सों विनती कीनी जो-महाराज ! मेरे घर में स्त्री है और सात में तें पांच बेटा हैं, और सात बेटान की बहू हैं। परंतु भगवद्भाव काहू कों दृढ़ नांही है। और एक भतीजी है सो ताकों भगवद्भाव दृढ़, ताको कारन कहा ? तव श्रीगुसांईजी आपु सगरे वैष्णवन कों सुनाय के कुंभनदासजी सों कहे, जो कुंभनदास ! तुम मन लगायके सुनियो, जो सावधान होउ। मैं एक पुरान को इतिहास कहत हों। तव सगरे वैष्णव सावधान भये।

पाछे श्रीगुसांईजी कहे। जो–एक ब्राह्मण हतो ताके एक कन्या हती। सो जव वह कन्या ब्याह लायक भई तव ब्राह्मण ने एक और ब्राह्मण कों बुलायके कह्यो जो–मेरी कन्या को वर ठीक करिके आछो ठिकानो देखिके सगाई करि आवो। तव वह ब्राह्मण तो सगाई करिवे कों गयो। ता पाछे दूसरो ब्राह्मण आयो, सो वाहूसों ऐसेही कह्यो। तव दूसरो ब्राह्मण हू सगाई करिवे कों गयो। पाछे तीसरो ब्राह्मण आयो, सो वाहू सों ऐसे ही कह्यो। सो तीसरो हू ब्राह्मण सगाई करिवे गयो। पाछे चोथो ब्राह्मण आयो, सो वाहू सों ऐसे ही कह्यो। सो तव चारों ब्राह्मण चार दिसान में भगवद् इच्छातें गये। सो दोय दोय तीन २ कोस ऊपर एक गाम हतो, तहां न्यारे २ गाँवन में चारों

ब्राह्मण ने सगाई करी। सो एक महीना पीछे सगाई ठेराई। पाछे वरन कों तिलक करिके चारों ब्राह्मण या ब्राह्मण की आगे आयके कह्यो जो-सगाई करि तिलक करि आये हैं। सो एक महीना पीछे प्रातःकाल की लगन है। या प्रकार चारों ब्राह्मणन ने कही।

तब बेटी के पिता ने कह्यो जो-यह तुमने कहा कियो। जो बेटी तो मेरी एक है। सो तुम चारों जने चार बर करि आये सो कैसे बनेगी? तब उन चारों ब्राह्मणन ने कही जो-तेनें कह्यो तब हमने सगाई करी है। जो महीना पीछे बेटी को ब्याह न करेगो तो हम तेरे ऊपर जीव देंयगे। जो-हम तिलक करि सगाई करी, सो कबहू छूटे नाँही। तब वा ब्राह्मण नें कह्यो, जो-भलो, महीना है सो ता बखत की दीखेगी, जो कहा होनहार है। तब चारों ब्राह्मण ने कही जो-जब एक दिन ब्याह को रहेगो,सो तब हम ब्याह करावन आवेंगे। सो यह कहिके चारों ब्राह्मण अपने घर कों गये। पाछे या बेटी के पिता कों महा चिंता भई। जो-अब मैं कहाँ निकसि जाऊँ? जो प्रान छूटे तोऊ कन्या की खराबी है। तासों अब मैं कहा करूँ?

सो मारे चिंता के खानपान सब छूटि गयो, सो ऐसे चारि दिन भूखे गये। ता पाछे पाँचमे दिन नदी ऊपर यह ब्राह्मण संध्यावंदन करत हतो सो एक भगवदीय फिरत २ आय निकस्यो, सो नदी में न्हायो। इतने ही में यह ब्राह्मण महादुःख सों पुकारिके रोयो। सो भगवद् भक्त को हृदय कोमल, सो वा ब्राह्मण को दुःख सहि नाँही सके। तब उन भगवद्भक्त ने वा ब्राह्मण सों पूछी जो-ब्राह्मण! तुमको ऐसो कहा दुःख है? जो तेने पुकारिके रुदन कियो है। तब वा ब्राह्मण ने अपनी सब बात कही। यह सुनिके वा भगवद्भक्त ने कही, जो-मैं तो एक ठिकाने रहत नाँही हों, परंतु तेरे लिये या नदी पे बैठ्यो हूँ। जो मोकों प्रगट मति करियो। और जा दिन को ब्याह होय तासों एक दिन पहलें मोकों आयके कहियो, जो ठाकुरजी भली करेंगे। और अब तुम घर जायके खानपान करो। तब वा ब्राह्मण ने कह्यो जो-भलो। पाछें जब ब्याह को एक दिन रह्यो, सो प्रातःकाल को समय हतो। तब वा ब्राह्मण वा भगवद्भक्त के पास आयो, और विनती कीनी, जो-प्रातःकाल को ब्याह है, तातें अब कछू उपाय बतावो।तब ता वैष्णव ने कही, जो-संध्या कों आइयो। पाछे सांझकों ब्राह्मण वा भगवद्भक्त की पास गयो। तब वा भक्त ने कही, जो-

तिहारे आगे जो पशु पक्षी आवें सो तिनकों तुम पकरि लीजो। तब वह ब्राह्मण नदी के ऊपर बैठ्यो। सो बिलाइ आई सो पकरी। ता पाछे एक कुतिया आई सो पकरी। पाछे एक गदही आई,सो पकरी। सो तब वा भक्त ने कही, जो-इन तीन्योंन कों एक कोठा में मूंदि देऊ। सो कोठा में मूंदि दिये। तब वा भक्त ने कही, जो-तेरी बेटी सोय जाय तब वाहू कों यामें मूंदि दीजियो। ता पाछे बेटी सोई, तब वा बेटी कों खाट सहित कोठा में मूंदि के ताला लगाय के कहे, जो-ब्याह की तैयारी करो। सो तब प्रहर रात्रि गये चारों वर आये। पाछे सगाई करिवे वारे चारों ब्राह्मण ने समाधान करिके उनकों बैठाये। इतने में ब्याह को समय भयो तब ब्राह्मण ने भगवद्भक्त सों कही, जो-अब ब्याह को समय भयो है। तब भक्त ने कह्यो,जो-कोठरी खोलिके चारों वरन कों चारों कन्या देऊ, और ब्याह करि देउ।

पाछे वह ब्राह्मण तालो खोलिके देखे तो चारों कन्या एक रूप, एक वय,बरोबरी, पहिचानि न परे। सो चारों कन्या चारों वरन कों ब्याह, बिदा करि दीनी। पाछे चारों ब्राह्मण कों दक्षिणा दे बिदा किये। पाछे भगवद्भक्तने कही जो-हम चलेंगे। तब ब्राह्मणने पाँयन परि के कह्यो जो-तुमने मोकों जीवदान दियो है सो यह घर तिहारो है। तातें आपकों जो चहिये सो लेउ। तब भक्तने कही जो-हमकों कछू चहियत नांही है। तेरो दुःख श्रीठाकुरजी ने दूरि कियो है, सो यही बड़ी बात भई है। तब वा ब्राह्मण ने पूछी जो-चारों कन्या एक सरखी भई हैं, सो अब मोकों खबरि कैसे परे, जो-मेरी बेटी कौनसे वरकों ब्याही है? सो वा बेटी कों बुलावनी होय तो कैसे खबरि परेगी? तब वा भक्तने कही जो-तेरे चारों जमाई हैं सो उन ही सों बेटीन के लच्छन पूछि लीजियो। तब तोकों खबरि परेगी। जो मनुष्य के लच्छन होय सोई तेरी बेटी जानियो। सो यह कहिके भगवद्भक्त तो चले गये।

सो तब ब्राह्मण ने कछुक दिन पीछे चारों जमाईन कों घर बुलाये, और चारों जमाईन कों रसोई करवाई। सो एक जने को भोजन कों बैठायो तब भोजन करत में वासों पूछी, जो-मेरी बेटी अनुकूल है के नांही? वामें कैसे लच्छन हैं? तब उनने कही, जो-सब गुन हैं परि कुतिया की नांई भूसत है। जो जीभ ठिकाने नांही, और आचार क्रिया नांही है, सो तासों प्रिय नांही है।

ता पाछे दूसरे जमाई कों बुलायो। वासों पूछी, जो-कहो, मेरी वेटी के लच्छन कैसे हैं? तव वाने कही, जो-तिहारी बेटी में आछे लच्छन हैं परंतु चटोरी है, जो ठाकुर के लिये जो वस्तु आवे सोइ वह चोरिके खाय जाय। विलाई की दसा है, जो-पांच घरको खाये बिना चैन नांही परे। ता पाछे तीसरे जमाई कों बुलाइके पूछी जो-मेरी वेटी के लच्छन कैसे हैं? तब वाने कही जो-तिहारी वेटी में सब लच्छन आछे हैं, परंतु घर में आवे जाय, तव गदही की नांईं भूसे, सदा मलीन रहे और जाकों ताकों तथा मोहूकों गदहीकी नांईं दोउ पावन सों लात मारे है।

पाछे चौथे जमाई को बुलायके पूछी जो—मेरी वेटी के लच्छन कहो? तव उनने कही जो-तिहारी वेटी की कहा वात है? जो मानो लक्ष्मी है. कोऊ देवता है। जो सव कों प्रिय वचन, मीठो वोलनो, उत्तम क्रिया, आचार विचार, पति, गुरु,ठाकुर और वैष्णवमें प्रीति। सो तव ब्राह्मणनें जानी जो-यही मेरी वेटी है। ता पाछे वाही वेटी जमाई कों बुलावतो।

सो तासों कुंभनदास! जा मनुष्यमें वैष्णव के लच्छन हैं सोई मनुष्य है। और कहा भयो जो मनुष्य देह भई? जो—रावण, कुंभकरण खोटी क्रियातें राक्षस कहाये। यासों जाकी जैसी क्रिया, सो वाको तैसो ही रूप जाननो। जो भतीजी वड़ी भगवदीय है। तासों तिहारे संगतें कृतार्थ होयगी। सो या प्रकार श्रीगुसांईजी आपु कुंभनदासजी आदि सब वैष्णवनकों समुझाये। सो ये कुंभनदासजी श्रीआचार्यजी के एसे कृपापात्र भगवदीय हते।

वार्ताप्रसंग१५—पाछे कुंभनदासजीकी देह वहोत असक्त भई। सो तहां आन्योर की पास संकर्षणकुंड ऊपर कुंभनदासजी आयके बैठि रहे। तब चतुर्भुजदास ने कही जो-गोदिमें करिके तुमकों जमुनावता गाममें ले चलें? तब कुंभनदासजी कहे जो-अब तो दोय चार घड़ी में देह छूटेगी। तासों अब तो मैं इहांई रहूंगो। तब चतुर्भुजदासजी ने श्रीगोवर्द्धननाथजी के राज भोग आर्ति के दरसन किये। तब श्रीगुसांईजी आपु चतुर्भुजदास सों पूछे जो-कुंभनदास कैसे हैं? और कहां हैं? तब चतुर्भुजदास ने कही जो-संकर्षण कुंड ऊपर बैठे हैं। तब श्रीगुसांईजी आपु कुंभनदासजी के पास पधारे। पाछें श्रीगुसांईजी आपु पधारिके कुंभनदासजीसों कहे जो-कुंभन-

दास ! या समय कौन लीला में मन है ? सो कहो । ता समय कुंभनदासजी सों उठ्यो तो गयो नांही, सो माथो नँवाय मनसों दंडवत करि यह कीर्तन गाये । सो पद—

राग सारंग—१ 'बिसरि गयो लाल करत गो-दोहन ।'
२ 'लाल ! तेरी चितवन चितही चुरावति ।

सो ये पद कुंभनदासजी ने गाये । तब श्रीगुसांईजी आपु पूछे, जो-कुंभनदास ! यह लीला तुम सुनाये परि अंतःकरणको मन जहां है सो बतावो । तब कुंभनदासजीने श्रीगुसांईजी के आगे यह पद गायो । सो पद –

राग बिहागरो—१ 'तोय मिलन कों बहोत करत है मोहनलाल गोवर्द्धनधारी' । २ 'रसिकनी रस में रहत गड़ी' ।

यह पद गायके कुंभनदासजी देह छोडि निकुंज लीला में जायके प्राप्त भये । पाछें श्रीगुसांईजी आपु गोपालपुर पधारे । सो चतुर्भुजदासजी आदि सब बेटानने कुंभनदासजीको संस्कार कियो । सो कुंभनदासजी लीला में आन्योर के पास गाम है, तहां द्वार पर प्राप्त भये । पाछें श्रीगुसांईजी उत्थापन तें सेन पर्यंत की सेवा सों पोहोंचे । परंतु काहू वैष्णवसों बोले नांही, उदास रहे । तब रामदासजी ने श्रीगुसांईजी सों कह्यो जो-महाराज ! ऐसे क्यों हो ? तब श्रीगुसांईजी आपु श्रीमुख सों कहे जो—ऐसे भगवदीय अंतर्धान भये । अब भूमि में भक्तन को तिरोधान भयो । सो या प्रकार श्रीगुसांईजी अपने श्रीमुखसों कुंभनदासजी की सराहना किये । सो वे कुंभनदासजी श्रीआचार्यजी के ऐसे कृपापात्र भगवदीय हते, जिनके ऊपर श्रीगोवर्द्धननाथजी तथा श्रीगुसांईजी सदा प्रसन्न रहते । तातें इनकी वार्ता को पार नांही । इनकी वार्ता अनिर्वचनीय है, सो कहां तांई कहिए ।

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक कृष्णदास अधिकारी, सो ये अष्टछाप में हैं, जिनके पद गाईयत हैं । तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं—

★

भावप्रकाश—

सो ये कृष्णदासजी लीला में ऋषभसखा श्रीठाकुरजी के अंत-

रंग, तिनको यह प्राकट्य हैं। सो दिनकी लीलामें तो 'ऋषभ' सखा हैं, और रात्रि की लीला में श्री ललिताजी अंतरंग सखी हैं। सो ललिता हू चारि रूप, आपु तो मध्या, और श्रीगोवर्द्धननाथजी श्रीस्वामिनीजी की लीला निकुंज संबंधी अनुभव करें। और श्रीललिताजी को दूसरो स्वरूप ऋषभ सखा होयके बन में संग जाय, दिवस की लीलारस को अनुभव करें। और तीसरो स्वरूप दामोदरदास हरसानी होयके श्री-आचार्यजी के संग सदा रहते। तिनसों श्रीआचार्यजी आपु दमला कहते। सो तो दामोदरदासजी की वार्ता में भाव विस्तार करिके कह्यो है। और ललिताजी को चोथो स्वरूप कृष्णदास। सो श्रीगोवर्द्धनधरके पास रहिके अधिकार किये। सो श्रीगिरिराज के आठ द्वार हैं तामें 'बिलछू' बरसाने सन्मुख द्वार एक वारो है। सो ता मारग होयके श्री-गोवर्द्धननाथजी रास करन कों पधारते। सो ता द्वारके मुखिया हैं।

सो ये कृष्णदास गुजरात में एक 'चिलोतरा' गांव है। तहां एक कुनबी के घर जन्मे। सो वह कुनबी वा गाम को मुखी हतो। सो वा गाम में हाकिमी करतो। जा समय कृष्णदास या कुनबी पटेल के घर जन्मे, सो ता समय या कुनबी ने अनेक पंडित ब्राह्मण गाम गाम में तें बुलायके भेले करि उनसों पूछ्यो, जो-मेरे यह बेटा भयो है, सो याके सगरे लच्छन कहो। और या बेटा की आरबल कहो, सो मैं वाकों जनम भरि में जीवे तहां तांई खरची देऊं। तब सगरे ब्राह्मणन ने या कुनबी सों कह्यो जो–हमकों चाहे तू कछू देय, चाहे मति देय। जो यह तेरो बेटा तो श्रीभगवानको भक्त होयगो। जो कृष्णदास याको नाम होयगो और यह तिहारे घर में न रहेगो। यह सुनि के वह पटेल कुनबी बहोत उदास भयो। और दान पुन्य बहोत कियो और कृष्णदास नाम धर्यो।

पाछे कृष्णदास पांच बरस के भये तबही तें भगवद्वार्ता कथा में जान लागे। सो मातापिता न जान देंय तो रोवें, खानपान नांहीं करें। तब मातापिता ने कही जो–याकों जान देऊ। जो यह अबहीतें वैरागीनसों प्रीति करत है, सो यह वैरागी होयगो। जो मोसों ब्राह्मणन नें आगे कह्यो हतो। तासों या बेटामें प्रीति करि मोह मति लगावो। सो यह सबकों दुःख देयगो। पाछे कृष्णदास जहां तहां कथा सुनते।

एसे करत कृष्णदास बरस बारह तेरह के भये। तब एक बन जारा एक दिन गाम के बाहिर आयके उतर्यो, सो किनारो माल सब

'चितोतरा' गाम में बेचिके रुपैया चौदह हजार कियो। सो रात्रि कों चोर (ने) कृष्णदास के पिता के भेद में, बनजारा के सब चौदह हजार रुपया लूटे। सो चौदह हजार में ते तेरह हजार रुपैया कृष्णदासके पिता ने राखे। सो यह बात कृष्णदास ने जानी।

तब कृष्णदास ने अपने पिता सों कह्यो. जो-तुमने बुरो काम कियो है। क्यों? जो-तुमने रुपैया पराये बनजारा के लुटाय के लिये। सो तुम वाकों दे डारोगे तब तिहारो कल्याण होयगो। तब पिता ने कृष्णदास कों मारयो, और कह्यो, जो-तू काहू के आगे मति कहियो। जो-हम गाम के हाकिम हैं, सो हाकिम को यही काम है। तब कृष्णदास नें कह्यो, जो-अब तुम खराब होउगे। सो यह कहिके चुप होय रहे। जब सवारो भयो, तब वह बनजारा चौंतरा ऊपर रोवत आयो। सो आयके कृष्णदास के पिता सों कह्यो, जो-हमकों चोरन नें लूट्यो है। तब कृष्णदास के पिता ने कह्यो, जो-तू गाम में क्यों न रह्यो? जो अब हमसों कहा कहत है? सो ऐसे कहिके वा हाकिम नें अपने मनुष्यन सों कही, जो-या बनजारा कों गाम तें बाहिर काढ़ि देउ, जो सवारे ही रोवत आयो है।

तब मनुष्यन नें काढ़ि दियो। सगरी पूंजी गई, सो यह महाविलाप करे। सो कृष्णदास दूरितें दौरिके वाके पास आये। तब कृष्णदास कों दया आय गई। तब कृष्णदास मनमें बिचारे, जो-पिता को बुरो होय तो सुखेन होउ, परन्तु या बनजारा परदेसी को भलो करनो। पाछे कृष्णदास वा बनजारा के पास आयके कहे, जो-तू एकांत में चलिके बैठ, जो-मैं तोसों एक बात कहूँ। पाछे एकांत में बनजारा कों ले जायके कृष्णदास ने कह्यो, जो-तेरो माल रुपैया सब गयो,मेरे पिता यहाँ को हाकिम है, सो ताने चोरी कराई है। सो हजार रुपैया चोरन कों देके सगरो माल मेरे पिताने राख्यो है। तासों या गाम में तेरी न चलेगी। तासों तू जायके राजनगर (अहमदाबाद) राजा के यहाँ फरियाद करियो। सो मोकूं तू साक्षी में बुलाय लीजियो। परन्तु मेरे पिता के प्रान हू न जाय, और चोरन के हू प्रान न जाय, और तेरो भलो होय जाय, सो ऐसो तू करियो। सो या भाँति राजा पास मोकों बुलाइयो मैं सब बताय देउंगो। तासों तेरो माल रुपैया सब या भाँति सों मिलेंगे। पाछे वा बनजारा राजगनर में आइके राजा के पास सब बात कही। और कह्यो, जो-पिताने तो चोरी कराई और बेटानें बतायो।

परन्तु कोई के प्राण न जाय, और मेरी वस्तु मिले, ऐसो उपाय करो।

तब राजा ने कह्यो, धन्य वह बेटा, जो-पिता की चोरी बताई। सो वाकूं तो मैं राखूंगो। सो यह कहिके पचास मनुष्य और सिपाई बुलाय के कह्यो, जो-तुम 'चलोतरा' में जायके उहां के हाकिम कों बेटा सहित पकरि लावो। सो या भाँति सों जावो, जो-कोई जानें नाहीं। सो वे पचास मनुष्य आये, सो लगे रहे।

सो एक दिन संध्या समय वह हाकिम घर के द्वार पर ठाड़ो हतो और वाको बेटाहू ठाड़ो हतो। सो राजा के मनुष्य वा हाकिम कों पकरि के राजनगर में लाये। तब राजा नें यासों पूछी, जो-तू हाकिम होय परदेसी कों लूटत है? जो या बनजारे को माल रुपैया देउ। तब वा हाकिम ने कही, जो-तुमसों कोई ने झूठेही लगाई होयगी। मैं तो या बात में जानत ही नांही हूँ। तब वा राजा ने कह्यो, जो-तेरो बेटा सोंह खायके कहे सो सांचो। तब पिताने कही, जो-बेटा कहि देय तो सांच है। तब राजा ने कृष्णदास सों पूछी, जो-तू सांच बोलियो। तब कृष्णदास ने वा राजा सों कही, जो-जीव है, तासों चूक्यो तो सही। जो हजार रुपैया चोरन कों दिये और तेरह हजार रुपैया मेरे पिताने राखे हैं। तासों मैंने वाही समय पिता कों समुझायो, परन्तु मान्यो नांही, सो ताको फल पायो। परन्तु यासों माल रुपैया ले लेहु और यासों कछु कहो मति। तब कृष्णदास के पिता सों राजा ने कही, जो-अजहू चेत, नातर तेरे प्राण जांयगे।

तब कृष्णदास को पिता बोल्यो, जो-काम तो बुरो भयो है। परन्तु या बनजारा कों मेरे संग करि देउ। सो याकों सब रुपैया घरतें दै देउंगो। तब राजा ने दोइसे मनुष्य संग करिके बनजारा कों और कृष्णदास के पिता कों घर पठायो। और कृष्णदास सों वा राजा ने कह्यो, जो-तुम मेरे पास रहो, जो तुम सतवादी हो। तब कृष्णदास कहे, जो-मोकों राखिके तुम कहा करोगे? मैं सांच कहूँगो, सो सबकों बुरो लगूंगो। जो आजु को समय तो ऐसो है, तासों मैं तो वैरागी होउंगो। जो मैं पिता के काम को नांही रह्यो। सो या प्रकार वा राजा ने कृष्णदास के राखिवे को बहोत जतन कियो। परि कृष्णदास रहे नाहीं, पाछे पिता के संग घर आये। तब पिताने चोरन कों बुलाय के सब पुत्र के समाचार कहे, जो-या पुत्रने हमारी खराबी करी है, तासों हजार रुपैया लावो। नाँतर तिहारे और हमारे प्राण जांयगे। तब उन

चोरनने हजार रुपैया लाय दिये । सो तेरह हजार घर में सों लेके वा बनजारा कों चौदह हजार रुपैया दिये, और माल लूटि को देके वा बनजारा कों विदा कियो ।

ता पाछे वा राजा ने दूसरो हाकिम 'चिलोतरा' गाम में पठायो । तब कृष्णदास के पिता ने कह्यो, जो-पुत्र ! तेरो ऐसो बुरो कर्म भयो सो हाकिमी हू गई, और आयो करयो द्रव्यहू गयो । तब कृष्णदास ने पिता सों कही, जो-पिता ! तैनें ऐसो बुरो कर्म कियो हतो जो-येहू लोक जातो और परलोक हू बिगरतो, जो जीव तो बच्यो । सो हाकिमी छूटी सो तो आछो भयो । जो हाकिमी होती तो और पाप कमावते । तब पिता ने कह्यो, जो-तू वा जनम को फकीर है । तासों तैने हमकों हू फकीर कियो है । अब तेरे मन में कहा है ? तब कृष्णदास ने कही जो-अब तुम मोकों घर में राखोगे तो फकीर होउगे, यातें मोकों विदा ही करो । तब पिता ने कही, जो-तू कछू खरचि ले घर में ते कहूँ दूरि चल्यो जा । न तोकों देखेंगे न दुःख होयगो । तब कृष्णदास पिता कूं नमस्कार करि के उठि चले । पाछें मन में विचारे, जो-ब्रज होय सगरे तीरथ करनो । तब कछुक दिनमें कृष्णदास श्रीमथुराजी में आयके विश्रांत घाट न्हाय के ब्रज में निकसे, तब फिरते फिरते श्रीगोवर्द्धन आये । सो तहाँ सुनी, जो-देवदमन को मंदिर बन्यो है, जो-अब दोय चारि दिन में विराजेंगे तो ब्रजवासीन कों बड़ो आनंद होयगो । देवदमन जब तें बाहिर प्रकटे, जो श्रीगिरिराज श्रीगोवर्द्धन में ते, तब तें सबन कों सुख दियो हैं । और सबन के मनोरथ पूरन करत हैं ।

तब यह सुनिके कृष्णदासजी अपने मनमें विचारे, जो-मैं हू देव-दमन को दरसन करूं । सो तब आयके कृष्णदास ने देवदमन के दर-सन किये । सो श्रीआचार्यजी आपु राजभोग आरती किये । सो दरसन करत ही कृष्णदास को मन श्रीगोवर्द्धनधर ने हरि लियो । सो कृष्णदास की ओर श्रीगोवर्द्धनधर देखि रहे । पाछे श्रीगोवर्द्धननाथजी श्रीआचा-र्यजी महाप्रभुन सों कहे, जो-यह कृष्णदास आयो है । सो बहोत दिन को बिछुरयो है, सो मैं य कों देखत हों । तब कृष्णदास के पास आयके श्रीआचार्यजी कहे, जो-कृष्णदास ! तू आयो ! तब कृष्णदास ने दंडवत करिके बिनती कीनी, जो-महाराज ! आपु की कृपा तें आयो हूँ । तासों अब मोकों सरन राखो ।

तब श्रीआचायजी कहे, जो-जाव, बेगि न्हाय आवो जो तेरे

साम्हें श्रीगोवर्द्धननाथजी देखि रहे हैं। तासों बेगि आय जावो।

तब कृष्णदास दौरिके रुद्रकुंड में न्हाय आये। पाछे कृष्णदास श्रीआचार्यजी के पास मंदिर में आये। तब श्रीआचार्यजी आपु कृष्णदास कों श्रीगोवर्द्धननाथजीके सन्निधान बैठायके नाम समर्पन करायो। सो कृष्णदास दैवीजीव हैं, सो तत्काल सगरी लीला को अनुभय भयो। सो ताही समय कृष्णदास ने यह कीर्तन गायो। सो पद—

राग सारंग—'वल्लभपतित उद्धारन जानों०।'

सो यह पद कृष्णदास ने गायो, सो सुनिके श्रीआचार्यजी आपु बहोत प्रसन्न भये। ता पाछे श्रीआचार्यजी आपु श्रीगोवर्द्धननाथजी कों अनोसर करायो।

ता पाछे मंदिर सिद्ध भयो। सो तब सुन्दर अक्षयतृतीया को दिन देखिके श्रीगोवर्द्धननाथजीकों नये मंदिर में पाट बैठाये। तब पूरनमल के सब मनोरथ सिद्ध किये। तब श्रीआचार्यजी आपु सदूपांडे कों बुलायके कहे, जो-मंदिर तो बडो भयो, जो-श्रीगोवर्द्धननाथजी बिराजे। परंतु अब इनकी सेवा कों मनुष्य ठीक कर्यो चाहिये, तातें तुम सेवा करो। तब सदूपांडे ने विनती कीनी, जो-महाराज! हम तो ब्रजवासी हैं, जो-आचार विचार सेवाकी रीति कछू समुझत नांही हैं। और घर के अनेक काम हैं, तासों आपु आज्ञा देउ तो राधाकुंड ऊपर बंगाली रहत हैं, सो अष्ट प्रहर भजन करत हैं। तासों उनकों राखो तो बुलाय लाऊँ। तब श्रीआचार्यजी आपु कहे, जो-बुलाय लावो। सो सदूपांडे बंगाली बीस-पचीस बुलाय लाये। तब उनकों रुद्रकुंड ऊपर झोंपरी बनवाय दीनी, और श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेवा दीनी। और कृष्णदास कों भेटिया किये। जो-तुम परदेस तें भेट लायके बंगालीन कों दीजो। सो या भांति सों सेवा करोगे। या प्रकार सब बंगालीन कों रीति भांति बतायके सेवा सोंपी। और कृष्णदास परदेस तें भेट ले आवते सो बंगालीन कों देते। सो रामदास चौहान रजपूत जब नयो मंदिर बन्यो, तब देह छोडिके लीला में जायके प्राप्त भये। तब सगरी सेवा बंगाली करते।

वार्ताप्रसंग १—पाछे एक समय कृष्णदास श्रीद्वारिकाजी की ओर भेट लेन कों गये। सो श्रीद्वारिका श्रीरनछोडजी के दरसन करि के वैष्णवन सों भेट लेके आवत हते। सो एक वैष्णव कृष्णदास के संग हतो। सो मारगमें मीराबाईको गाम आयो,सो कृष्णदासजी

मीराबाई के घर गये। तहां संत, महंत अनेक स्वामी और मारग के बैठे हते। सो काहूकों आये दस दिन, काहू कों आये बीस दिन भये हते, परंतु काहूकी बिदा न भई हती। और भेट के लिये बैठे हते। और कृष्णदास तो आवत ही कह्यो जो-मैं तो चलूंगो। तब मीराबाईने कह्यो जो-कछुक दिन कृपा करिके रहो।

तब कृष्णदास ने कही जो-हमारे तो जहां हमारे वैष्णव श्रीआचार्यजी के सेवक होयगे सो तहां रहेंगे और अन्यमार्गीय के पास हम नांही रहत हैं। तब मीराबाई ११ मोहौर श्रीनाथजी की भेट देन लागी सो कृष्णदास नांही लिये। और कृष्णदासने मीराबाई सों कह्यो जो-तू श्रीआचार्यजी की सेवक नांही है,सो हम तेरी मोहौर हाथ तें न छुवेंगे। सो एसे कहिके उठि चले। तब संग के वैष्णवने कृष्णदास सों कही जो-तुमने श्रीगोवर्द्धननाथजी की भेट क्यों फेरि दीनी ? तब कृष्णदासने वा वैष्णव सों कही जो-भेट की कहा है ? जो बहोतेरी भेट वैष्णवन सों लेंयगे। श्रीगोवर्द्धननाथजी के यहां कोई बात को टोटा नांही है। परंतु सगरे मारग के स्वामी महंत इतने इकठोरे कहां मिलते ? तासों सबकी नाक नीची तो करी,जानेंगे जो-हम भेट के लिये इतने दिन सों बैठे हैं, और श्रीआचार्यजी को एक सेवक शूद्र इतनी मोहौर भेट न लीनी। सो जिनके सेवक एसे टेकी हैं,तिनके गुरुकी कहा बात होयगी ? सो ये सब या भांति सों जानेंगे। और आपुन अन्यमार्गीय की भेट काहे कों लेय ?

भावप्रकाश—तातें शिक्षापत्र में कह्यो है—'तदीयानां महद्दुःखं विजातीयेन संगमः' तदीय जो भगवदीय है, तिनकों और दुःख कछु नांही है। सो जेसो अन्यमारगीय विजातीय को संग को दुःख होय। तासों श्रीठाकुरजी तो निवाहें। जो विजातीय सों बोलनो नांही तब ही सुख है। और जो वार्ता करे तो रस को तिरोधान रसाभास निश्चय होय। तासों कृष्णदासजी मीराबाईके घर गये,इतनो कहनो परयो। तासों मुख्य सिद्धांत यह जतायो जो-स्वमार्गीय बिना काहू तें मिलनो नांही। और कदाचित् मिलनो परे तो अपने धर्म कों गोप्य राखे।

सो श्रीगुसांईजी आपु चतुःश्लोकी में कहे हैं—

'विजातीयजनात् कृष्णे निजधर्मस्य गोपनं।
देशे विधाय सततं स्थेयमित्येव मे मतिः' ॥१॥

सो एसे देश में जाय जहां कोई वैष्णव नांही होय, तहां अपने

धर्म कों प्रकट न करें, तब अपनो धर्म रहे। सो काहेतें ? जो-लौकिक हू में पनारो है। सो तासों, न्हायो होइ सो बचिके चले। तासों उत्तम जनकों सब प्रकारसों बचनो परे। जैसे उत्तम सामग्री है ताकों अनेक जतनसों बचावे, तब श्रीठाकुरजीके भोग जोग रहे। तैसे ही वैष्णव धर्म है। तासों या धर्म की रक्षा राखे तो रहै। यह सिद्धांत प्रकट कियो।

सो वे कृष्णदास एसे टेकी परम कृपापात्र भगवदीय हते।

वार्ताप्रसंग २—और श्रीगोवर्द्धननाथजी को सिंगार बंगाली करते। सो श्रीआचार्यजीने श्रीगोवर्द्धननाथजी कों मीना के सब आभरन संमराय दिये हते। और मोरपत्त को मुकुट, काछिनी बागा सब बनवाय दिये हते। बंगाली श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेवा करते। जो भेट श्रीगोवर्द्धननाथजी के आवती सो बंगाली जोरिके सब अपने गुरुन के यहां पठावन लागे। सो जब श्रीआचार्यजी ने श्रीगोवर्द्धननाथजी के मंदिर में कृष्णदास कों अधिकारी किये, तब कृष्णदास मथुरा आगरे तें सामग्री लाय देते।

भावप्रकाश–और एक अवधूतदास श्रीआचार्यजी के सेवक हते। सो व्रज में फिर्यो करते, सो वे बडे कृपापात्र भगवदीय हते, सो अडींग के वासी हते। सो अवधूतदासजी कुमारिका के जूथ में है। सो रासपंचाध्याई में जब श्रीठाकुरजी प्रकट भये, तब ये भक्त सगरे, स्वरूप को दरसन करिके नेत्र मूंदिके योगी की नांई मगन होय गये। सो ये भक्तको प्रागत्य अवधूतदासजी को है। सो लीला में इनको नाम 'केतिनी' है। सो अडींग में एक सनोढ़िया ब्राह्मण के घर जन्मे। जब व्रज में अकाल पर्यो, तब मा बाप बनिया कों बेटा देके आपु तो पूरब कों गये। पाछें अवधूतदास बरस पंद्रहके भये। तब वह बनियाको घर छोड़िके मथुरा में आयके श्रीआचार्यजी के दरसन करि बिनती कीनी। जो–महाराज! मोकों सरन लीजिये। तब श्रीआचार्यजी आपु कहे जो-हमारे संग श्रीगोवर्द्धन कों चलो जो–श्रीनाथजी के सान्निध्य सरन लेयंगे। तब अवधूतदास श्रीआचार्यजी के संग श्रीगिरिराज आये। पाछें श्रीआचार्यजी आपु अवधूतदास तें कहे, जो–तुम गोविंदकुंड न्हाय लेहु। तब अवधूतदास गोविंदकुंड में न्हाय आये। पाछे श्रीआचार्यजी आपु गोविंदकुंड में स्नान करिके मंदिर में पधारे। ता समय श्रीगोवर्द्धनधर कों राजभोग आयो हतो। तब समय भये भोग सराय, अवधूतदास कों बुलायकें श्रीगोवर्द्धनधरके सान्निध्य बैठाय नामनिवेदन करवायो। तब

अवधूतदासने श्रीआचार्यजी सों विनती कीनी जो-महाराज ! मेरे मन में तो यह है जो मैं श्रीगोवर्द्धननाथजी कों हृदयमें धरिके व्रज में फिरों। तब श्रीआचार्यजी आपु हाथमें जल लेके अवधूतदास के ऊपर छिरके। तब अवधूतदासजी की अलौकिक देह होय गई। सो भूख प्यास कछू देहाध्यास बाधा नांहीं करे, सो मानसी सेवा में मगन होय गये। पाछे श्रीआचार्यजी ने राजभोग आरती कीनी।

सो वे श्रीगोवर्द्धनधर को स्वरूप अपने हृदय में नख तें सिख पर्यंत धरिके व्रज में सदा फिरते। सो स्वरूपानंद में सदा मगन रहते।

सो एसे करत बहुत दिन बीते। तब एक दिन श्रीगोवर्द्धननाथजी ने अवधूतदास कों जताई जो-तुम कृष्णदास अधिकारी सों कहो जो-इन वंगालीन कों निकासो। जो मोकों अपनो वैभव बढ़ावनो है। और ये वंगाली मोकों भोग धरत हैं। सो इनकी चुटिया में एक देवी को स्वरूप है सो मेरे पास वैठावत हैं। तासों इन बंगालीन कों वेगि काढ़ो। तब अवधूतदास ने यह बात अपने मनमें राखी। सो एक दिन कृष्णदास श्रीगोवर्द्धन सों मथुरा कों जात हते, सो मारग में अवधूतदासनें कृष्णदास सों पूछी जो-तुम कहां जात हो ? तब कृष्णदास ने अवधूतदाससों कह्यो जो-मथुरा जात हों,जो कछू सामग्री चहियत है।

तब अवधूतदास ने पूछी जो-श्रीनाथजी की सेवा कौन करत है ? तब कृष्णदास ने कही जो-वंगाली सेवा करत हैं। तब अवधूतदासनें कृष्णदास सों कह्यो जो—श्रीगोवर्द्धननाथजीकी इच्छा बंगालीन को काढ़िवे की है। सो तुम वंगालीन कों काढ़ो। जो वंगालीन की चुटिया में एक देवी को स्वरूप है। सो जब बंगाली श्रीनाथजी कों भोग धरत हैं, तब चुटिया में ते निकासि के देवी कों पास वैठावत हैं। सो श्रीगोवर्द्धननाथजी कों सुहात नांही है। तासों बंगालीन कों वेगि काढ़ो। जो मोसों आपुने आज्ञा करी है। तव मैं तुमसों कह्यो है।

तब कृष्णदास ने कह्यो जो-ये बंगाली श्रीआचार्यजी ने राखे हैं। तातें श्रीगुसांईजी आज्ञा करें, तब काढ़े जांय। तब अवधूतदास कहें जो—तुम अड़ेल में जायके श्रीगुसांईजी की आज्ञा ले आवो। तासों जैसे बने तैसे इन बंगालीन कों काढ़ो।

तब कृष्णदास मथुरा जात हते सो अडींग तें फिरि के श्री-

गोवर्द्धन आये। सो आयके सगरे बंगालीन सों कही, जो-मैं अड़ेल में श्रीगुसांईजी के पास जात हौं,सो कछू काम है। पाछे सगरे सेवक, पोरिया, व्रजवासिन सों कहे, जो तुम सावधान रहियो। मैं श्री-गुसांईजी के पास अड़ेल जात हौं।

ता पाछें श्रीगोवर्द्धननाथजी सों बिदा होयके कृष्णदास अड़ेल कों चले। सो दिन पन्द्रह में कृष्णदास अड़ेल में श्रीगुसांईजी के पास आये। तब श्रीगुसांईजी कों दंडवत किये।

पाछें श्रीगुसांईजी पूछे जो-कृष्णदास ! तुम श्रीनाथजी की सेवा छोड़िके क्यों आये ? तब कृष्णदास ने कही, जो-श्रीगोवर्द्धन-नाथजी कों अपनो वैभव बढ़ावनो है, और बंगालीन की चुटिया में एक देवी है, सो राजभोग के समें बैठावत हैं। और जो भेट आवत है सो सब वृंदावन में अपने गुरून कों पठाय देत हैं। सो अबही तें काहू कों मानत नांही हैं। सो आगे बहोत दिन तांई बंगाली रहेंगे तो झगड़ो बढ़ेगो। तासों बंगालीन कों आपु काढ़िवे की आज्ञा दीजिये, सो मैं जाय के काढूंगो।

तब श्रीगुसांईजी आपु कृष्णदास सों कहे जो-श्रीगोपीनाथजी पहेलो परदेस पूरवको कियो हतो, सो एक लक्ष रुपया पूरब सों भेट आई हती। सो श्रीगोपीनाथजी प्रथम अड़ेल में आयके कहे। जो-यह पहले परदेस की भेटश्रीगोवर्द्धननाथजी की है। सो यह कहिके लक्ष रुपया लेके श्रीगोपीनाथजी श्रीजीद्वार पधारे, सो तहां रूपे सोने के थार, कटोरा श्रीनाथजी कों कराये। ता पाछे सेवा सिंगार करि श्रीगोपीनाथजी अड़ेलमें आये। तब बंगाली सब मिलिकें सगरे थार कटोरा द्रव्य वृंदावन में अपने गुरून के यहां पठाय दिये। सो सब समाचार हमारे पास आये परि हम कहा करें ? जो बंगालीन कों श्रीआचार्यजी ने राखे हैं। सो तासों बंगाली कैसे निकसेंगे। तब कृष्णदास नें कह्यो जो-महाराज ! श्रीगोवर्द्धननाथ जी की इच्छा एसी है जो-बंगालीन कों निकासिवे की। तासों आपु या बातमें बोलो मति। तासों मैं जैसे बनेगी वैसे बंगालीन कों काढूंगो। तब श्रीगु-सांईजी कहे, जो अवश्य, बंगालीन कों निकास्यो चहिये। जो-बहुत दिन रहेंगे तब झगरो करेंगे। तब कृष्णदास ने कही जो-महाराज ! मोकों दोय पत्र लिखि दीजिये। सो एक तो राजा टोडरमल्ल के नाम को, और एक राजा बीरबल के नाम को।

तब श्रीगुसांईजी आपु दोय पत्र लिखि दिये। जो कृष्णदास श्रीगोवर्द्धन में है सो ये तुमसों कहे, सो करि दीजो। जो हमकों बंगाली काढ़ने हैं, और सेवक राखने हैं। और कृष्णदास श्रीगोवर्द्धननाथजी के अधिकारी हैं, तासों ये करें सो हमकों प्रमाण है। सो यह लिखिके कृष्णदास कों दोऊ पत्र दिये। तब कृष्णदास श्रीगुसांईजी कों दंडवत करिके चले, सो कछुक दिन में आगरे में आये। तब राजा टोडरमल कों और बीरबल कों दोऊ पत्र श्रीगुसांईजी के हस्ताक्षरके दिखाये, तब उन कह्यो, जो–तुम कहो सो हम करें। तब कृष्णदास नें कही, जो–अब तो मैं श्रीनाथजीद्वार बंगालीन कों काढिवे कों जात हूँ। जो कदाचित् बंगालीन के गुरु श्रीवृन्दावन में हैं सो देसाधिपति के आगे पुकारें तब उनकी ठीक राखियो। तब उन दोऊ जनेन ने कही, जो–तुम जाउ। तुमकों श्रीगुसांईजी की आज्ञा होय सो करो। जो हम ठीक राखेंगे।

पाछे कृष्णदास आगरे तें चले सो मथुरा आये। पाछे मथुरा तें श्रीगोवर्द्धन आये। तहाँ मारग में अवधूतदास मिले। तब अवधूतदास ने कही, जो–कृष्णदास! ढील क्यों करि राखी है? जो–श्रीनाथजी कों अपनो वैभव बढ़ावनो है। तासों बंगालीन कों बेगि काढ़ो। जो श्रीगोवर्द्धनधर की इच्छा है। तब कृष्णदास ने कही, जो–मैं श्रीगुसांईजी की आज्ञा ले आयो हूँ। और अब जातही बंगालीन कों काढ़त हूँ। सो यह कहिके कृष्णदास चले, सो श्रीनाथजीद्वार आये। सो रुद्रकुंड ऊपर आय बंगालीन की झोंपरी में आँच लगवाय दीनी। तब सोर भयो। सो सगरे बंगाली श्रीनाथजी की सेवा छोड़ि के परवत तें नीचे उतरि के अपनी अपनी झोंपरी में आये, सो अग्नि बुझावन लागे। तब कृष्णदास ने श्रीगोवर्द्धननाथजी के मंदिर में सब ठौर अपने मनुष्य ब्रजवासी दोयसे राखे (हते) सो बैठारि दिये। और कह्यो, जो–कोई बंगाली पर्वत ऊपर चढ़ें ताकों तुम चढ़न मत दीजो। और ब्राह्मण सेवक भीतरियान सों कहे, जो–तुम श्रीनाथजी की सेवा में सावधान रहियो। तब यह कहिके कृष्णदास परवत तें नीचे हाथ में लकुटी लेके ठाड़े भये।

पाछे बंगाली अग्नि बुझाय के सगरे आये, सो पर्वत ऊपर मंदिर में चढ़न लागे। तब कृष्णदास ने उन बंगालीन सों कह्यो, जो–अब तिहारो काम सेवा में नाहीं है। जो हमने और चाकर राखे हैं,

सो सेवा करन कों गये हैं। तब बंगालीन ने लरिवे की तैयारी करी, और कह्यो, जो-हमारे ठाकुर हैं, जो हमकों श्रीआचार्यजी महाप्रभुनने राखे हैं। सो तब लराई भई। पाछे कृष्णदास ने बंगालीन कों भजाय दिये। तब सगरे बंगाली भाजे। तब मथुराजी में आय के रूपसनातन सों सगरी बात कही। जो-कृष्णदास जाति को शूद्र, सो सगरेन की झोंपरी जराय दीनी। और सबनकों मारि के सेवा में ते बाहिर काढ़ि दिये हैं। सो या प्रकार बात करत हते, इतने में कृष्णदास हू रथ पर चढ़िके पचास व्रजवासी हथियारबंध संग ले श्रीमथुराजी में आये, सो पहले रूपसनातन के पास आये। तब रूपसनातन ने कृष्णदास सों खीजि के कह्यो, जो-क्योंरे! शूद्र! तैने इन ब्राह्मणन कों क्यों मारयो है? जो-यह बात देसाधिपति सुनेगो, तब तू कहा जुवाब देयगो? तब कृष्णदास ने कह्यो, जो-हूँ तो शूद्र हौं। परि मैं ब्राह्मणन कों सेवक तो नांही करत हों। तुमहू तो अग्निहोत्री ब्राह्मण नांही हो। तुमहू तो कायस्थ हो, कायस्थ होयके इन ब्राह्मणन कों दंडवत कराय सेवक करत हो, सो तुमहू जवाब देत में बहोत दुःख पावोगे। जो-तुमसों जुवाब न बनेगो। और मैं तो जुवाब दे लेउंगो, जो-तिहारो मन होय तो चलो। देखो तो सही, जो तुमसों जुवाब होत है? जो कैसे करत हो?

सो यह कृष्णदास के वचन सुनिके रूपसनातन ने कही, जो-तुम जानो और ये जाने। जो हमतो कछू जानत नांही हैं। सो या प्रकार रूपसनातन सगरे बंगालीन के गुरु हते, सो तिनने यह बात कही। तब सगरे बंगाली निरास होय के मथुरा के हाकिम के पास जायके यह बात कही। जो-कृष्णदास ने हमकों श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेवा में ते काढ़ि दिये हैं। तासों तुम कोई प्रकार सों हमकों रखाय देउ। यह बात करत हते, इतने ही में कृष्णदास हाकिम के पास आये। सो कृष्णदास को तेज देखत ही वह हाकिम उठि के कृष्णदास कों पूछि, पास बैठाय के कही, जो-तुम बड़े हो, और श्री-गोवर्द्धननाथजी के अधिकारी हो। तासों तुम इन बंगालीन को गुन्हा माफ करो। अब भई सो तो भई। परि अब इनकों फेरि राखो, जो-सेवा करें। तब कृष्णदास ने कही, जो-अब तो हम इनकों नांही राखेंगे, अब ये हमारे चाकर नांही। ये चाकर होय लरिवे कों तैयार भये। इनकी झोंपरी जरि गई, तो हम इनकी झोंपरी और बनवाय

देते। परन्तु ये सगरे श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेवा छांड़ि पर्वत तें नीचे क्यों उतरि आये ? तासों अब इनको सेवा में काम नांही है। और आपु कहत हो, जो-इनकों राखो। सो अब हम या बात को पत्र श्रीगुसांईजी कों लिखेंगे। सो वे कहेंगे, तैसो करेंगे। तब वा हाकिम ने कही, जो-आछी वात है, जो तुम श्रीगुसांईजी कों लिखो, तब कृष्णदास श्रीनाथजीद्वार आये। ता पाछे वे बंगाली वृंदाबन में रहे। सो ता पाछे फेरि एक दिन सगरे बंगाली भेले होय देसाधिपति के पास आगरे में आयके कृष्णदास की चुगली करी। तब देसाधिपति अकबर पात्साह ने कही, जो-कृष्णदास कौन है ? जो-इन ब्राह्मणन कों पूजा में ते काढ़े। सो उनकों बुलावो।

तब राजा टोडरमल ने और बीरबल ने अकबर पात्साह सों कह्यो, जो-श्रीगोवर्द्धननाथजी ठाकुर श्रीविट्ठलनाथजी श्रीगुसांईजी के हैं। सो पहले ये बंगाली सेवा में राखे हते सो इनकों खरची देते। जो अब इनकों काढ़ि दिये हैं। तब देसाधिपति ने कहीं, जो-बंगाली झूठि चुगली करत हैं। जो चाकर को कहा है ? तासों कृष्णदास कों बुलाय के कहो, जो-उनको मन होय तो राखो। तब देसाधिपति के मनुष्य कृष्णदास कों लेवे कों श्रीगिरिराज आये। सो कृष्णदास ने तो पहले ही सुनी हती, सो रथ ऊपर चढ़िके दस बीस आदमी लेके देसाधिपति के मनुष्यन के संग आगरे में आये। तब कृष्णदास राजा टोडरमल और बीरवल सों मिले। तब राजा टोडरमल और बीरबल ने कह्यो, जो-बंगालीन ने चुगली करी हती, सो हमने कहि दीनी है। और फेरि हू आज कहि देंगे, जो-आजु को दिन तुम यहां रहो। तब कृष्णदास उहां रहे। तब राजा टोडरमल और बीरबल दरबार के समय देसाधिपति के पास आय अकबर सों कहे, जो-कृष्णदास श्रीगोवर्द्धननाथजी के अधिकारी आये हैं, और उनको मन बंगालीन कों राखिवे को नांही है। जो और चाकर राखे हैं, और ये तो काढ़े हैं। तब देसाधिपति ने कही, जो-आछो, उनको मन होय सो ताकों चाकर राखें। यामें झूठो झगरो कहा है। तासों बंगालीन कों काढ़ि देउ। तब राजा टोडरमल और बीरबल ने आयके बंगालीन सों कही जो-देसाधिपति को हुकम तुमकों काढ़ि देवे को भयो है, तासों तुम चुप होयके चले जाउ। जो-झगरो करोगे तो दुःख पावोगे। तासों हमने तुमकों समुझाय दियो है।

तब सगरे बंगाली निरास होयके चले आये। सो श्रीवृन्दावन में रहे। और कृष्णदास राजा टोडरमल और बीरबल सों विदा होयके चले आये, सो श्रीगिरिराज ऊपर आये। ता पाछे दोय कासिद बुलाय के श्रीगुसांईजी कों विनती पत्र लिख्यो, तामें यह लिख्यो, जो-बंगालीन कों आप की आज्ञा तें काढ़े, ताको देसाधिपति सों जुवाब होय चुक्यो है, जो अब झगरो मिटि गयो है। और बंगाली झूठे राजद्वार तें परि चुके हैं। तासों अब आपु कृपा करिके पधारिये। सो दोय जोड़ी कासिद की श्रीगुसांईजी के पास गई। तब श्रीगुसांईजी आपु पत्र बांचि अड़ेल तें वेगि ही पधारे, सो श्रीनाथजीद्वार आयके कृष्णदास कों बुलाय श्रीगोवर्द्धननाथजी के सन्मुख अधिकारी को दुसालो उढ़ायो। और श्रीगुसांईजी आप श्रीमुखतें कहे, जो-कृष्णदास! तुमने बड़ी सेवा करी है, जो-यह काम तुमही तें बने जो बंगालीन कों काढ़े। तासों अब सगरो अधिकार श्रीगोवर्द्धननाथजी को तुमही करो। हमहू चूकें तो कहियो, जो-कोई बात को संकोच मति राखियो। जो सगरे सेवक टहलुवान के ऊपर तिहारो हुकुम, और की कहा है? जो ऐसी सेवा तुम ही करी, जो तुम श्रीगोवर्द्धननाथजी सों कहोगे सोई करेंगे। तुम श्रीआचार्यजी के कृपापात्र हो, सो तिहारी आज्ञा में (जो) चलेंगे तिन सबन को भलो होयगो। तासों अब तुम श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेवा भली भांति सों करियो। सो सावधान रहियो।

पाछे कृष्णदास श्रीगुसांईजी (और) श्रीगोवर्द्धननाथजी कों साष्टांग दंडवत करिके अधिकार की सगरी सेवा करन लागे। ता दिनतें श्रीनाथजी के अधिकार की गादी बिछवे लगी। श्रीगुसांईजी की आज्ञा तें कृष्णदास गादी ऊपर बैठते। ता पाछे बंगालीन ने सुनी जो-श्रीगुसांईजी श्रीगोवर्द्धन पधारे हैं, और सिंगार करत हैं। सो सगरे बंगाली मिलके श्रीगुसांईजी के पास आये। पाछे बिनती करिके कहे, जो-हमकों श्रीआचार्यजी ने श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेवा में राखे हते, सो कृष्णदास नें काढ़े हैं, तासों आपु फेरि हमकों सेवा में राखो। तब श्रीगुसांईजी कहे, जो-तुम सगरे श्रीनाथजी की सेवा छोड़िके परवततें नीचे उतरि आये, सो दोष तिहारो है। और अब श्रीगोवर्द्धननाथजी की इच्छा तुमकों राखिवे की नाहीं है, तासों अब तुमकों राखे न जाय।

पाछे सगरे बंगाली बहोत विनती करन लागे,जो-तुम हमसों सेवा मति करावो, परन्तु अब हम जाँय कहा ? जो-श्रीनाथजी की सेवा पीछे हमारो खानपान को सब सुख हतो, तासों हमकों कछू और सेवा टहल बतावो। तथा कोई और श्रीठाकुरजी बतावो,जासों हमारो निर्वाह चल्यो जाय। तब श्रीगुसांईजी आपु श्रीगोपीनाथजी के सेव्य श्रीमदनमोहनजी कों देके कहे, जो-इनकी सेवा तुम करो। सो तब बंगाली श्रीमदनमोहनजी कों लेके श्रीवृन्दावन में आयके सेवा करन लागे।

भावप्रकाश—सो काहेतें ? जो-बलदेवजी मर्यादारूप। सो तिन के सेव्य ठाकुर हू मर्यादारूप। सो बंगालीन कों मर्यादा की पूजा है, तासों दिये। और श्रीगुसांईजी ने झगरो हू मिटाय दियो।

ता पाछे श्रीगुसांईजी ने सांचोरा गुजराती ब्राह्मण भीतरिया सेवा में राखे। सो मुखिया भीतरीया रामदास कों किये।

भावप्रकाश—सो रामदास ब्राह्मण सांचोरा गुजरात में रहते। ये लीला में श्रीचन्द्रावलीजी की सखी हैं। सो लीला में इनको नाम 'मनोरमा' है। सो सात्विक भाव। श्रीचन्द्रावलीजी की आज्ञाकारी। जैसे श्रीस्वामिनीजी श्रीठाकुरजी की लीला में ललिता मध्याजी परम चतुर। सो श्रीगोवर्द्धननाथजी के कृपापात्र ललितारूप कृष्णदास सब ठौर हुकम करें, तैसे मनोरमा रूपसों रामदास मुखिया भीतरिया श्रीगुसांईजी के आगे सब टहल करें। सो (मनोरमा) रामदास गुजरात में एक सांचोरा ब्राह्मण के यहाँ जनमे। सो बरस बीस के भये। तब माता पिताने देह छोड़ी।

ता पाछें रामदासजी श्रीरणछोड़जी के दरसन कों गये। सो श्रीआचार्यजी के दरसन भये, ता समय श्रीआचार्यजी कथा कहत हते। सो कथा श्रीआचार्यजी के श्रीमुखतें सुनिके रामदास कों ज्ञान भयो, जो-श्रीआचार्यजी आपु साक्षात ईश्वर हैं, इनकी सरन रहिये तो कृतारथ होय। सो यह मनसें निश्चय कियो। ता पाछे श्रीआचार्यजी आपु कथा कहि चुके। तब रामदास ने दंडवत करिके विनती कीनी, जो-महाराज ! मोकों सरन लीजे। तब श्रीआचार्यजी आपु कहे, जो-जाओ न्हाय आवो। तब रामदास न्हाय आये। तब श्रीआचार्यजी ने रामदास कों नाम निवेदन करवायो। ता पाछे रामदास सों कहे, जो-अब तुम भगवत् सेवा करो। तब रामदास ने कही, जो-मेरे पिता के

ठाकुर मेरे पास हैं, सो आपु आज्ञा देउ तैसे मैं सेवा करूं । तब श्री-आचार्यजी आपु रामदास के श्रीठाकुरजी कों पंचामृत स्नान कराय, दिये। ता पाछे रामदास कछुक दिन श्रीआचार्यजी के पास रहे, सो सेवा की रीति भांति सीखे । ता पाछे रामदास ने श्रीआचार्यजी सों बिनती कीनी, जो-महाराज ! शास्त्र तो मैं कछु पढ्यो नांही हो, परन्तु आपके ग्रन्थ पढ़िवे की इच्छा अभिलाषा है । तब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन नें रामदास कों अपने ग्रन्थ पढ़ाये। तब रामदासजी के हृदय में ब्रज की लीला स्फुरी, सो रामदास ने यह कीर्तन श्रीआचार्य के आगे गायो । सो पद—

राग गौरी – चलि सखी चलि अहो ब्रज पैंठ लगी है, जहां बिकात हरिरस प्रेम ।'

या प्रकार के रसरूप पद रामदास ने बहोत गाये, सो सुनिके श्रीआचार्यजी आपु बहोत प्रसन्न भये । तब रामदास श्रीआचार्यजी सों बिदा होयकें दंडवत करि गुजरात में अपने घर आयके बहोत दिन तांई सेवा कीनी । ता पाछे एक दिन एक वैष्णव रामदास के घर आयो । तब रामदास ने प्रीतिसों वैष्णव कों अपने घरमें राख्यो । पाछे रामदास ने कही, जो–वैष्णव को संग दुर्लभ है । सो तुमने बड़ी कृपा करी, जो–तुम मेरे घर पधारे । सो तब वैष्णव ने कही, जो-संग करिवे लायक तो पद्मनाभदासजी हैं, जो एक क्षण हू संग होय तो भगवत् कृपा होय । सो सुनत ही रामदासजी के मन में यह आई,जो पद्मनाभदास को संग करूं । ता पाछे चारि दिन रहिके वह वैष्णव तो गयो । तब रामदासजी श्रीठाकुरजी कों पधराय के पद्मनाभदास के घर कनौज में आये । सो पद्मनाभदास प्रीति सों रामदास कों महीना एक राखे, सो भगवद्वार्ता में मगन होय गये ।

तब रामदासजी ने कही, जो–जैसी तिहारी बड़ाई सुनी हती, तैसेही तिहारे संग तें सुख पायो । सो अब मैं श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन करि आऊं। तासों मेरे ठाकुर कों तुम राखो । तब पद्मनाभदास-जी ने रामदास के ठाकुर, श्रीमथुरेशजी के सय्याजी के पास बैठारे । और इहां श्रीगुसांईजी आपु प्रसन्न होयके रामदास कों मुखिया किये, सो जनमभरि श्रीनाथजी की सेवा रामदास ने मन लगाय के कीनी । सो या प्रकार रामदासजी रहे । ता पाछे (जब) पद्मनाभदासजी की देह छूटी तब श्रीगोवर्द्धननाथजी के पास श्रीठाकुरजी कों बैठारे । सो सदा श्रीनाथजी के पास रहे ।

ता पाछे श्रीगुसांईजी ने श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेवा को विस्तार बढ़ायो। सो राजसेवा करन लागे, जो-भोग सामग्री को नेग कियो, सेवक बहोत राखे, सो दरजी, सुनार, खाती सगरेन को नेग करि दियो। और भंडारी (अधिकारी) राखे सो भंडारी कों गादी तकिया। या प्रकार श्रीगोवर्द्धननाथजी की ईश्वरता बढ़ाये। और सगरे सेवकन की ऊपर कृष्णदास अधिकारी कों मुखिया किये. सो जो काम होय सो पूछनो। सो श्रीगुसांईजी तो सेवा सिंगार करि जांय, और काहूसों कछु कहें नाहीं। कोई बात कोई सेवक श्रीगुसांईजी सों पूछे तब श्रीगुसांईजी आप कहें जो-कृष्णदास अधिकारी के पास जावो। जो हम जाने नाहीं। सो या प्रकार मर्यादा राखी।

या भांति सों कृष्णदास को वैभव भारी और हुकम भारी। सो जहां चलें तहां रथ, घोड़ा, बैल, ऊंट, गाड़ी, सौ पचास मनुष्य संग। सो कृष्णदास अधिकारी सब देसन में प्रसिद्ध भये। सो कृष्णदास नित्य नये पद करिके श्रीगोवर्द्धनधर कों सुनावते। सो ऐसे कृपापात्र भगवदीय हते।

वार्ताप्रसंग ३—और एक दिन श्रीगोवर्द्धननाथजी ने कृष्णदास कों आज्ञा दीनी, जो-स्यामकुम्हार कों मृदंग समेत संग लेके परासोली सेन आरती पीछे जैयो, तहां रासलीला करेंगे। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कों दंडवत करिके कृष्णदास परवत तें नीचे आये। ता पाछे श्रीगोवर्द्धननाथजी स्यामकुम्हार सों कहे, जो-तुमको जहां कृष्णदास कहें,तहां मृदंग लेके जैयो। सो या प्रकार स्यामकुम्हार कों श्रीनाथजी आपु आज्ञा किये।

भावप्रकाश-सो या प्रकार स्यामकुम्हार कों श्रीनाथजी आपु आज्ञा किये सो यातें, जो लीलामें स्यामकुम्हार विसाखाजी की सखी है। तहां लीला में इनको नाम 'रसतरंगिनी' है। सो इनकी मृदंग की सेवा है। सो एक समय रसतरंगिनी सेन किये हते, सो विसाखाजी को मन गान करिवे को भयो। तब रसतरंगिनीकों जगायके कहे जो-तू मृदंग बजाव, सो तब मृदंग बजायो। तब विसाखाजी गान करन लागी। सो अलसातें रसतरंगिनी चूकि जाय। तब विसाखाजी क्रोध करके कहे, जो-आज कैसें बजावत है? तब रसतरंगिनी ने कह्यो जो-मोकों नींद आवत है। और तिहारो मन तो गान करिवे को है, सो कैसे बने? तब विसाखाजी मृदंग आपुही लिये और क्रोध

करिके विसाखाजी ने रसतरंगिनी सों कह्यो जो-तू मेरी सखी नांही है। सो जायके तू भूमिमें जनम लेउ। अहंकार करिके बोली सो ताकों यही दंड है। तब ये महावन में एक कुम्हार के घर जन्मे। सो स्यामकुम्हार नाम पर्यो। सो सगरे समाज में चतुर हते। श्रीगुसांईजी आपु इनकों बुलायके श्रीनवनीतप्रियजी के पास राखे। तब इन स्याम-कुम्हार कों नामनिवेदन करवायो। जब श्रीगोवर्द्धननाथजी को वैभव बढ्यो तब कृष्णदास के मनमें आई जो मृदंगी चहिये। तब श्रीगोवर्द्धनधर कहे जो-श्रीगोकुल में स्यामकुम्हार है,सो मृदंग आछो बजावत है। ताकों श्रीगुसांईजी कों कहिके यहां राखो। तब कृष्णदासने श्रीगुसांईजीसों कह्यो जो-स्यामकुम्हार कों श्रीगोवर्द्धनधरकी सेवामें राखों? जो-यह इच्छा प्रभुन की है। तब श्रीगुसांईजी आपु स्यामकुमार कों श्रीगोकुल तें बुलायके श्रीनाथजी की सेवामें राखे। सो ता दिन तें स्यामकुम्हार श्रीनाथजी के आगे मृदंग बजावतो। सो या प्रकार स्याम-कुम्हार श्रीगिरिराज रह्यो।

तब कृष्णदास ने स्यामकुम्हार कों बुलायके कह्यो, जो श्रीगोवर्द्धननाथजी की इच्छा आजु परासोली में रास करिवे की है, सो मृदंग ले आवो, सेन आरती पीछे चलेंगे। तब स्यामकुम्हारने कह्यो जो-मोहूकों आज्ञा दीनी है,तासों मृदंग लेके तिहारे पास आयो हूं। सो जब सेन आरती श्रीगोवर्द्धननाथजीकी होय चुकी,तब कृष्णदास स्यामकुम्हार को लेके परासोली में चंद्रसरोवर है,तहां आये। तहां देखे तो श्रीगोवर्द्धनधर और श्रीस्वामिनीजी सगरी सखीन सहित विराजे हैं। तब श्रीगोवर्द्धनधरने स्यामकुम्हार सों कही जो-तू तो मृदंग बजाव,और कृष्णदास सों कह्यो जो-तू कीर्तन गाव। सो चैत्र सुद १५ पून्यो के दिन रात्रि प्रहर डेढ़ गई, उजियारी फैल गई सो अलौकिक रात्रि भई। तब स्यामकुम्हारने, मृदंग बजायो। सो वसंत ऋतु के सुंदर फूल लतानसों फूलि रहे हैं। सो श्रीगोवर्द्धनधर श्रीस्वामिनीजी सहित नृत्य करन लागे। ता समय कृष्णदासने यह पद गायो। सो पद—

राग केदारो १-'श्रीवृषभाननंदनी नाचत लाल गिरिधरन संग, लाग डाट उरप-तिरप रास रंग राच्यो।'

सो यह पद सुनिके श्रीगोवर्द्धनधर प्रसन्न होयके अपने श्रीकंठ की प्रसादी कुंद कुसुमन की माला दीनी। सो कृष्णदास अपने

परम भाग्य माने-जो रोमरोम में आनंद भरि गयो। सो तब रस में मगन होयके यह पद गायो। सो पद—

राग मालव १-'अलाग लागिन उरप तिरप गति नट वन व्रजललना रास में। अपने कंठ की श्रमजल दलमलि माला देत कृष्णदासें।' २-'तताथेई रास मंडल में।' -'चंद गोविंद गोपी तारागन।' ४-'सिखवत पिय कों मुरली बजावत।'

सो या प्रकार वहोत कीर्तन कृष्णदासजी गाये। तब स्याम-कुम्हार मृदंग बहोत सुंदर बजायो। सो श्रीगोवर्द्धनधर, श्रीस्वामिनीजी सगरे व्रजभक्तन सहित रास अद्भुत नृत्य किये। सो श्रीआचार्यजी महाप्रभुन कीं कानि तें कृष्णदास पर श्रीगोवर्द्धनधर एसी कृपा करते। ता पाछे श्रीगोवर्द्धनधर श्रीस्वामिनीजी सहित सगरे व्रजभक्त अंतर्धान भये। तब कृष्णदास और स्यामकुम्हार मृदंग लेके गोपालपुर आये, सो कृष्णदास ने समे २ के कीर्तन बहुत किये।

वार्ताप्रसंग ४-और एक दिन सूरदासजीनें कृष्णदाससों कही जो-कृष्णदास! तुमने जितने कीर्तन किये तामें मेरी छाया आवत है। तब कृष्णदासने कही, जो-अबके एसो पद करूं सो तामें तिहारी छाया न आवे। पाछे कृष्णदास एकांत में बेठिके विचार किये एकाग्र मन करिके, जो-सूरदास जो वस्तु न गाये होंय सो गावनो, यह विचार किये। सो जा लीला को विचार कियो ताही लीला के पद सूरदासजी (नें) गाये हैं। सो दान, मान, और गायन को वर्णन सब लीला के पद सूरदासजीने गाये हते। सो कृष्णदासजी विचार करत हारे। मनमें महाचिंता भई। सो कृष्णदासजी कों प्रहर एक गयो, सो हारिके उठि वैठे। जो कागज लेखनी द्वारा कलम धरिके महाप्रसाद लेन गये। तब श्रीगोवर्द्धनधर आयके पद पूरो करि गये। सो पद—

राग गोरी १-'आवत बने कान्ह गोप बालक संग नेचुकी-खुर-रेनु छुरित अलकावली।'

यह पद लिखिके आपु तो पधारे। सो 'नेचुकी' गायन को वर्णन सूरदासजीने नांही कियो हतो। जो 'नेचुकी' गाय, सो कहिये जो-पहले व्यांत होय, ताको स्नेह बछुरा ऊपर बहोत होय। सो एसी नेचुकी गाय काहू सखा ग्वाल सों थिरत नांही हैं, सो वारंबार अपने बछुरा के तांई घर कों ही भाजत है। जो एसी नेचुकी के जूथ मेंश्री-

ठाकुरजी आपु पधारे हैं। तब नेचुकी गायकी खुर रेनु मुख पर अलकन पर लगी हैं। सो यह श्रीठाकुरजी आपु एक तुक करि कागज के ऊपर लिखिके पधारे। ता पाछे कृष्णदास महाप्रसाद आनंद सों लेके आये सो कीर्तन पूरो किये। सो पद

राग गोरी १–'आवत बने०।'

सो या प्रकार कीर्तन पूरो करिके कृष्णदासजी प्रसन्न होयके सूरदासजी के पास आये, हसत-हसत। तब सूरदासजी ने पूछी जो आज बहोत प्रसन्न हसत आवत हो, सो कहा नौतन पद किये? तब कृष्णदास नें कह्यो जो–आजु एसो पद कियो है, तामें तिहारे पदन की छाया नांही है। जो वस्तु तुमने गाई नहीं है। तब सूरदासजी कहे जो–तुम मोकों बांचिके सुनावो तो सुनों। तब कृष्णदास (ने) पहली ही तुक कही जो–ताही कों सुनिके कृष्णदास सों सूरदासजी बोले जो–कृष्णदास! मेरे तिहारे वाद है। कछू तिहारे बापसों विवाद नांही है। सो यामें तिहारो कहा है? जो मैंने नेचुकी नांही गाई सो प्रभु कहि दिये। और तो श्रीअंगके वरनन के मेरे हजारन पद हैं, सोई तुमने गायके पूरन किये हैं। यह सूरदासजी के बचन सुनिके कृष्णदासजी चुप होय रहे।

भावप्रकाश–सो तहां यह संदेह होय जो-कृष्णदासजी तो ललिताजी को स्वरूप हैं, और श्रीगोवर्द्धननाथजी कृष्णदास की पक्ष किये, सो पद बनाये। तोहू सूरदासजी सों न जीते। ताको कारन कहा है?

तहां कहत हैं, जो-कृष्णदासजी ललितारूप हैं। सो तैसेही सूरदासजी चंपकलतारूप हैं। परंतु अपनो अधिकार–भेद है। सो लीलाहू में श्रीललिताजी की सेवा श्रेष्ठ है। तैसेही यहां 'सेवा की भांत तें' कृष्णदास श्रेष्ठ। सो सगरे सेवकन की सेवा में चोकसी, सगरी वस्तु समारनी, सेवा को मंडान विस्तार करनो। यामें कृष्णदास परम चतुर। जैसे सुनार सों दरजी की सेवा न होय और दरजी सों सुनार के आभूषन को काम न होय। सो सब अपनी अपनी सेवा में चतुर हैं। और श्रीस्वामिनीजी की सखी दोऊ प्रिय हैं। तासों श्रीगोवर्द्धननाथजी की प्रीति तो दोउन के ऊपर है। परन्तु कृष्णदास के मन में रंचक अहंकार आयो, जो–मैं हू कीर्तन बहोत किये हैं।

सो वे कृष्णदास श्रीआचार्यजी के ऐसे कृपापात्र भगवदीय हते।

वार्ताप्रसंग ५–और एक समय श्रीगोवर्द्धननाथजी के मंदिरमें

सामग्री चहियत हती, सो तब कृष्णदास गाड़ा लिवाय आपु रथपर असवार होयके श्रीगोवर्द्धन सों, आगरे आये। सो जब आगरे के बजार में गये, तहां एक वेस्या अपनी छोरीकों नृत्य सिखावत हती। सो वह छोरी परम सुंदर वरस वारह की हती, कंठहू परम सुंदर हतो। सो गाननृत्य में चतुर वहोत हती। सो वह वेस्या ताल टप्पा गावत हती। सो वह छोरी को गान कृष्णदास के कानपें पर्यो हतो सो कृष्णदास के मनमें वैठि गयो, सो प्रसन्न होय गये। तव कृष्णदास ने तहां अपनो रथ ठाढ़ो कियो। सो भीड़ सरकायके वा छोरी को रूप देखे, सो तहां गान सुनिके मोहित होय गये।

भावप्रकाश—तहां यह संदेह होय जो-कृष्णदास श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के कृपापात्र सेवक वेस्या के गान पर मोहित क्यों भये ? जो ये तो श्रीठाकुरजी के ऊपर मोहित हैं। सो उनकों अप्सरा देवांगना तुच्छ दीसत हैं। और श्रीआचार्यजी आपु जलभेद ग्रथमें कहे हैं, जो-

'वेश्यादिसहिता मत्ता गायका गर्त्तसंज्ञिताः।
जलार्थमेव गर्तास्तु नीचा गानोपजीविनः॥

वेश्यादि सहित गायक भाट, डोम, नीच को गान सूकरके गड़ेला के जलवत है। सो वामें न्हाय, पीवे, सो जैसें नीच को गानरस पीवे। या प्रकार के दोष श्रीआचार्यजी कहे हैं।

सो कृष्णदास परमज्ञानवान मर्यादा के रक्षक। सो ये वेस्याके गानपें रीझे ? सो इनकी देखादेखी करे सो बहिर्मुख होय। ये तो सब कों सिक्षा देवे कों उद्धार करन कों प्रगटे हैं, तासों ये कृष्णदास वेस्या के ऊपर क्यों रीझे?यह संदेह होयतहां कहत हैं,जो-यहांकारन और है। जो-यह वेस्या की छोरी लीला संबंधी दैवी जीव ललिताजीकी सखी हैं, सो लीला में इनको नाम 'बहुभाषिनी' है। सो एक दिन ललिताजी श्री ठाकुरजी के लिये सामग्री करत हती, तब ललिताजी ने बहुभाषिनी सों कही, जो-तू मिश्री पीसिके ले आउ। सो बहुभाषिनी मिश्री को डबरा भरिके ले चली। सो दूसरी सखी सों बात करते करते छांटा उड्यो, सो मिश्री में पर्यो। सो बहुभाषिनी कों खबरि नांही। पाछे मिश्री को डबरा लेके ललिताजी के पास आई, तब ललिताजी परम चतुर हती,सो जानि गई। पाछे बहुभाषिनी सों कही जो-यह सामग्री छुइ गई। जो-तेरे मुख तें छांटा पर्यो है। सो भगवद् इच्छा होनहार। तब बहुभाषिनी ने कही जो-तुम झूठ कहत हों, छींटा तो नांही पर्यो। और श्री-

ठाकुरजी सखामंडली में सब की जूठनि हू लेत हैं।

सो तब ललिताजी ने कह्यो जो-प्रभुनकी लीला तू कहा जाने? प्रभु प्रसन्न होय चाहे सो करें सोई छाजे। जो अपने मन तें कछू हीन क्रिया करे सोई भ्रष्ट। तासों तू हीन ठिकाने जनमेगी। तब बहुभाषिनी ने कही जो-तुमहू शूद्र के घर जनम लेके मेरो उद्धार करो। जो तुमकों छोड़िके मैं कहां जाउँ? सो या प्रकार परस्पर शाप भयो। तब कृष्णदास शूद्र के घर जन्मे, और बहुभाषिनी को जनम वेस्या के घर मात्र भयो, सो लौकिक पुरुष को मुह नांही देख्यो। सो कृष्णदास कों श्रीगोवर्द्धनधर प्रेरिके आगरे में वा वेस्या के अंगीकार के लिये पठाये। तासों कृष्णदास के हृदय में वेस्या को गान प्रिय लग्यो।

सो ठाड़े होयके गान नृत्य सुनिके मनमें विचारे जो-यह सामग्री तो अति उत्तम है, और दैवी जीव है, सो श्रीगोवर्द्धननाथजी के लायक है। तासों श्रीगोवर्द्धननाथजी आपु वाको अंगीकार करें तो आछो है। सो यह कृष्णदासजी अपने मन में विचार करिके दस रुपैया वा वेस्याकों देके कहे जो-हमारे डेरान पर रात्रिकों आइयो। यह कहिके कृष्णदासजी जहां हवेली में हमेस उतरते ताहीं हवेली में उतरे, और सामग्री जो लेनी हती सो गाड़ा लदाय दिये।

ता पाछे रात्रि प्रहर एक गई, तब वह वेस्या समाज सहित आई, सो तब नृत्य गान कियो। सो कृष्णदास बहोत प्रसन्न भये। तब वा वेस्या कों रुपैया १००) सौ दिये। और वा वेस्या सों कहे जो-तेरो रूप, गान, नृत्य सब आछे हैं। तासों-सवारे हम श्रीगोवर्द्धन जायगें, और हमारो सेठ तो उहां हैं जो-तेरो मन होय तो तू चलियो। तब वा वेस्या ने कही जो-हमकों तो यही चहिये। पाछे वह वेस्या अपने मनमें बहोत प्रसन्न भई, जो-ये इतने रुपैया दिये तो सेठ न जाने कहा देयगो?

सो तब वेस्या ने घर आयके अपनी गाड़ी सिद्ध कराई, सो गायवे को साज सब आछे बनाय गाड़ी ऊपर धरि राख्यो। तब सवारे भये कृष्णदास के पास आई। पाछे कृष्णदास वा वेस्या कों लिवायके ले चले, सो मथुरा आय रहे। तब दूसरे दिन मथुरातें चले सो मध्यान्ह समय गोपालपुर में आये। पाछे वा वेस्या कों न्हवाय के नवीन वस्त्र पहेरवेकों दियो, सो वाने पहर्यो। तब कृष्णदास अपने मन में विचारे जो-यह ख्याल टप्पा गायगी सो श्रीगोवर्द्धनधर

सुनेंगे। तासों मैं याको एक पद सिखाऊँ। तब कृष्णदास ने वा वेश्या कों एक पद सिखायो। और कह्यो जो-ये पद तू पूरवी राग में गाइयो। सो पद—

राग पूरवी—मेरो मन गिरधर छबि पर अटक्यो०'।

यह पद कृष्णदासने वा वेश्या कों सिखायो। ता पाछे उत्थापन के दरसन होय चुके, तब भोग के दरसन के समय वा वेश्या कों समाज सहित कृष्णदास परवत के ऊपर ले गये।

भावप्रकाश—सो भोग के समय यातें ले गये, जो-उत्थापन के समय निकुंज में जागिके (श्रीठाकुरजी) उठत हैं। तातें उत्थापन भोग बेगि आयो चहिये। और भोग के दरसन-व्रज के मारग में पधारत हैं, सो अनेक भक्तन कों अंगीकार करत हैं। तासों याहू को अंगीकार करनो है। तासों भोगके समय कृष्णदास वेश्या कों परवत ऊपर ले गये।

पाछे भोगके किवाड़ खुले। तब वह वेश्या ने पहले नृत्य कियो, ता पाछे गान करन लागी। सो कृष्णदास ने पद करिके सिखायो हतो सो गायो। सो गावत २ जब छेली तुक आई जो-'कृष्णदास कियो प्रान न्योछावरि यह तन जग सिर पटक्यो' या पद को गान करत ही वा वेश्या की देह छूटि गई, सो दिव्य देह होय लीला में प्राप्त भई।

सो तब सगरे समाजी तथा वा वेश्या की माता रोवन लागी। जो-हम यासों कमाय खाते, अब हम कहा करेंगे? तब कृष्णदासने उनकों नीचे ले जायके कह्यो जो—अब तो भई सो भई, जो याकी इतनी आरबल हती। सो-या बात को कोऊ कहा करे? अब तुम कहो सो तुमकों देऊँ। तब उन कही जो—हजार रुपैया देऊ जो—कछुक दिन खांय। पाछे जो-होनहार होयगी सो सही। तब कृष्णदास नें हजार रुपैया देके उन सबन कों विदा किये। सो या प्रकार वा वेश्या की छोरी कों श्रीगोवर्द्धननाथजी कृष्णदास की कानि तें आपु अंगीकार किये।

भावप्रकाश—तहां यह संदेह होय, जो श्रीआचार्यजी के संबंध बिना लीला की प्राप्ति कैसे भई? तहां कहत है, जो कृष्णदास के हृदय में श्रीआचार्यजी बिराजत हैं। सो कृष्णदास ने पद वेश्या की छोरी कों सिखायो, सो देखिबे मात्र है। या पद द्वारा श्रीआचार्यजी को संबंध कराये। तासों यह पहिली तुक में कहे जो-'मेरो मन गिरधर-

छबि पर अटक्यो' सो सगरो धरम, मन लगायवे की रीति करी है। जीव अपनी सत्ता मानि स्त्री, पुत्र, देह में मन लगायो (है) तासों समर्पन करावत हैं।

तहां कोऊ कहे, जो-जीव सब दे चुक्यो है, जो अपनी सत्ता छोडिके प्रभुनकी सत्ता सब है। तासों मोकों तो एक श्रीकृष्ण ही गति हैं। तासों या पद में कहे जो-मेरो मन श्रीगोवर्द्धनधर की छबि पर अटक्यो, सो सब छोडिके। या प्रकार कृष्णदास द्वारा श्रीआचार्यजी आपु संबंध कराये, यह जाननो। तोहू संदेह होय जो-गुरु बिना लीला में कैसे प्राप्ति भई? सो अलीखान कों प्रभु दरसन दिये। पाछे अलीखान कों और अलीखान की बेटी कों सेवक होयवे की कही,सो सेवक कराये। यहां नांही कराये, यह संदेह होय। सो काहेते? जो ब्रह्मसंबंध में श्रीगोवर्द्धनधर की हू यही आज्ञा है जो-जाकों तुम ब्रह्मसंबंध करवावोगे, ताकूं मैं अंगीकार करूंगो। तासों इनकों श्रीआचार्यजी महाप्रभु, श्रीगुसांईजी द्वारा ब्रह्मसंबंध न भयो और लीला की प्राप्ति कैसे भई? उद्धार होय, परंतु लीला की प्राप्ति अत्यंत दुर्लभ। सो ब्रह्मसंबंध को दान करिवे के लिये श्रीआचार्यजी के कुल को विस्तार भयो। सो काहे तें? जो-सेवकन कों श्रीआचार्यजी आपु नाम सुनायवे की आज्ञा दीनी, परि ब्रह्मसंबंध की नांही। तासों ब्रह्मसंबंध को दान वल्लभकुलही तें होय। सो औरतें फलित नांही है। यह संदेह होय, तहां कहत हैं,जो-वेश्याकी छोरी देह तजिके लीला में गई। तहां लीला में ललिता, श्रीगुसांईजी सदा बिराजत हैं। सो कृष्णदासजी लीला में ललिता रूप होय जगत तें काढिके लीला में पठाये, सो लीला में श्रीललिताजी ने श्रीस्वामिनीजी द्वारा ब्रह्मसंबंध कराय अपनी सेवा में राखे। सो काहेतें? जो-ललिताजी की सखी है। या प्रकार ब्रह्मसंबंध भयो। सो जैसे मथुरा में नागर की बेटी कों लीला में ब्रह्मसंबंध श्रीगुसांईजी कराये,यह भाव जाननो।

सो वे कृष्णदास एसे भगवदीय हते। जो वेस्या कों अंगीकार करायो।

वार्ताप्रसंग ६-और एक समय सगरे वैष्णव मिलिके कुंभनदासजी के पास आये। सो उनकों प्रीति सों बैठारिके पूछे जो-आजु बड़ी कृपा करी, जो-कुछ आज्ञा करिये। तब वैष्णवनने कही जो-

तुमसों कछु मारग की रीति सुनिवे कों आये हैं। तब कुंभनदासजी कह्यो जो-मारग की रीति में तो कृष्णदास अधिकारी निपुण हैं, सो उनसों पूछो। तब उन वैष्णवनने कही जो-हमारी सामर्थ्य नांही है, जो-कृष्णदास सों पूछि सकें। तब कुंभनदासजी ने कह्यो जो-तुम मेरे संग चलो, जो तिहारी ओरतें हम पूछेंगे। तब सगरे वैष्णव कुंभनदासजी के संग गये।

भावप्रकाश-सो कुंभनदासजी यातें नांहीं कहे,जो-कुंभनदासजी को मन रहस्य लीला में मगन है। सो कहा जानिये जो प्रेम में कहा वस्तु निकसि पडे ? और कीर्तन में गूढ रीति सों लीला वरनन करत हैं। तासों जाको जैसो अधिकार है, ताकों तैसो कीर्तन में भासत है। और वैष्णवन सों कहनो परे सो खोलिके समुझावनो परे। तासों कुंभनदासजी कृष्णदास के पास सारे वैष्णवन कों संग लेके आये।

सो तब सब वैष्णवन कों देखिके कृष्णदास बहोत प्रसन्न भये, और सबन कों आदर करिके बैठारे। ता समय कृष्णदासनें यह कीर्तन गायो। सो पद—

राग सारंग १-'गिरधर जब अपुनो करि जानें०।'

यह पद कृष्णदासने कह्यो। पाछे कृष्णदासनें पूछी, जो आज मो पर सगरे भगवदीय कृपा करे, सो-मेरे पास पधारे। तासों अब जो प्रसन्न होयके आज्ञा करो सो मैं करूं। तब कुंभनदासजीने कह्यो जो-सगरे वैष्णवन को मन पुष्टिमारग की रीति सुनिवे को है। सो कहा कहिये ? कहा सुमिरन करिये,जातें एसे पुष्टिमारगको अनुभव होय, सो कृपा करिके सुनावो। तब कृष्णदासने कह्यो जो-कुंभनदासजी ! तुम सगरे प्रकार करिके योग्य हो, जो-श्रीआचार्यजी के कृपापात्र भगवदीय हो, सो उचित है। तुम वड़े हो, जो तिहारे आगे मैं कहा कहूं ? तुमसों कछू छानी नांही है। तब कुंभनदासजी कृष्णदाससों कहे जो-तुम कहो, हमारी आज्ञा है। जो-सगरे सेवकन में तुम मुख्य हो। सेवकन को कार्य तिहारे हाथ है, जो-यह पुष्टिमारग के अधिकारी तुम हो, तातें तुम कहो। तब कृष्णदासने पहले अष्टाक्षर को भाव कीर्तन में कह्यो, सो पद—

राग सारंग-'कृष्ण श्रीकृष्णः शरणं मम उच्चरे०।'

सो यह अष्टाक्षरको भाव कहिके अब पंचाक्षरको भाव कीर्तन में गाये। सो पद—

राग सारंग–'कृष्ण ये कृष्ण मन मांह गति जानिये०।'

सो ये दोय कीर्तन कृष्णदासने गाय सुनाये। तब सगरे वैष्णव प्रसन्न होयके कहे जो-कृष्णदास! तुम धन्य हो, जो-दोय कीर्तन में संदेह दूरि कियो। और मारग को सब सिद्धांत बतायो। ता पाछे कृष्णदाससों विदा होयके सगरे वैष्णव अपने घर कों गये। सो वे कृष्णदास श्रीआचार्यजी के एसे कृपापात्र भगवदीय हते।

वार्ताप्रसंग ७-और कृष्णदासको गंगाबाइ क्षत्रानीसों बहोत स्नेह हतो।

भावप्रकाश–सो काहेतें? जो लीला में गंगाबाई श्रुतिरूपा के जूथ में तामसी भक्त हैं। सो मथुरा के एक क्षत्री के घर जन्मी। पाछे वरस ११की भई। तब गंगाबाई को मथुरा में एक क्षत्री के बेटा सों ब्याह भयो। पाछे गंगाबाई क्षत्राणी के जो बेटा होय सो मरि जाय, सो नौ बेटा भये। ता पाछे एक बेटी भई। सो बेटी को विवाह गंगाबाई क्षत्राणीने कियो। सो गंगाबाई की बेटीके गहनो बहोत हतो। सो वह बेटी मरी। सो बेटी को गहनो लाख रुपया को दाबि राख्यो, सो कछू मथुरा के हाकिम कों देके गहनो सब राख्यो। ता पाछे वरस ५५ की भई तब झगडा के लिये श्रीनाथजीद्वार आयके रही। सो कृष्णदास सों मिलिके श्रीआचार्यजी सों सेवक होयवे की कही। तब कृष्णदासने श्रीआचार्यजी सों विनती कीनी, जो महाराज! गंगाबाई क्षत्राणी कों सरन लीजिये। तब श्रीआचार्यजी आपु कहे जो-जीव तो दैवी है, परंतु अभी मन श्रीठाकुरजी में नांही है। तब कृष्णदास ने बिनती कीनी जो-महाराज! आपकी कृपा तें श्रीगोवर्द्धननाथजी कृपा करेंगे। पाछे श्रीआचार्यजी आपु कृष्णदास के आग्रह सों गंगाबाई कों नामनिवेदन करवायो। सो कृष्णदास पहले श्रीगोवर्द्धननाथजी के भेटिया होय के परदेस कों जाते,तब गंगाबाई क्षत्राणी मथुराकों आवती। पाछे कृष्णदास श्रीनाथजीद्वार आवते तब गंगा क्षत्राणी हू मथुरा सों सगरी वस्तु ले श्रीजीद्वार आवती। सो कृष्णदास गंगाबाई को मन भगवद्धर्म में लगायवे के तांई दोऊ समे को महाप्रसाद श्रीनाथजी को वाके घर पठावते। क्यों? जो गंगाबाई की खानपानमें प्रीति बहोत हती। सो कृष्णदास बहोत सुंदर सामग्री श्रीनाथजी कों आरोगावते, और गंगाबाई कों भगवद्धर्म समुझावते। पाछे कृष्णदास गंगाबाई कों श्रीनाथजी के सगरे दरसन हू करावते। सो कृष्णदास के संग तें गंगाक्षत्राणी को मन अलौकिक भयो।

सो एक दिन श्रीगुसांईजी आपु श्रीगोवर्द्धननाथजी कों राजभोग समर्पत हते, सो सामग्री के ऊपर गंगाबाई की दृष्टि परी। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी आपु राजभोग आरोगे नांही। ता पाछे श्रीगुसांईजी आपु भोग सरायो। पाछे राजभोग आरती करि अनोसर करि आपु परवत तें नीचे पधारे। सो सेवक भीतरिया महाप्रसाद लिये। और श्रीगुसांई जी आपहू महाप्रसाद लेके पोंढे।

ता पाछे श्रीगोवर्द्धननाथजी आय रामदास भीतरियाकों लात मारिके जगाये। तब रामदासजी जागे। सो देखे तो श्रीगोवर्द्धननाथजी हैं। सो रामदासजी दंडवत् करिके हाथ जोड़िके ठाड़े भये। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी आपु रामदाससों कहे, जो-मैं तो भूख्यो हूं। पाछे रामदासजी ने श्रीगोवर्द्धननाथजी सों विनती कीनी जो-महाराज ! श्रीगुसांईजी ने राजभोग समर्प्यो हतो, और तुम भूखे क्यों रहे ? तब श्रीगोवर्द्धननाथजी ने कही जो-राजभोग में तो सामग्री ऊपर गंगाबाई की दृष्टि परी, तासों मैं नांही आरोग्यो हूं।

तब रामदासजीभीतरिया श्री गुसांईजी के पास जाय चरणारविंद दाविके जगाये, और बिनती कीनी जो-महाराज ! श्रीगोवर्द्धननाथजी आपु भूखे हैं। सो राजभोग में गंगाबाई की दृष्टि परी है, तासों श्रीगोवर्द्धननाथजी आपु राजभोग नांही आरोगे हैं।

सो यह सुनत ही श्रीगुसांईजी आपु तत्काल उठिके स्नान करिके श्रीगोवर्द्धननाथजीके मंदिरमें पधारे। पाछे रामदासजी न्हाय के आये, इतने में सब भीतरिया हू स्नान करिके आये। तब श्रीगुसांईजी आपु सीतकाल देखिके भीतरियान सों कहे, जो-बड़ी और भात करो। सो बेगि सिद्ध होय जायगो, तातें तैयार करो। तब भीतरिया ने बड़ी और भात कियो। सो श्रीगुसांईजी आपु श्रीगोवर्द्धननाथजी कों भोग धरे। ता पाछे राजभोग की सगरी सामग्री सिद्ध भई, और सेन भोगकी हू सगरी सामग्री सिद्ध भई। सो राजभोग, सेनभोग दोउ भोग संग ही गुसांईजी ने धरे।

पाछे समय भये भोग सरायो। ता पाछे श्रीगोवर्द्धननाथजी कों पोढ़ायके अनोसर करवायके बाहिर पधारे। सो एक डबरा में बड़ीभात श्रीगुसांईजी आपुने श्रीहस्त में लेके परवत तें नीचे पधारे। पाछे सगरे सेवकन कों बड़ीभात अपने हाथ सों रंच-रंच दियो, और रंचक श्रीगुसांईजी आपु आरोगे। बड़ी भात महाप्रसाद बहुत स्वाद

भयो,सो श्रीगुसांईजी आपु श्रीमुख सों बहोत सरहायो। पाछे रामदास आदि सब सेवकनने श्रीगुसांईजी सों कह्यो जो-महाराज ! यह सामग्री तो सीतकाल में कितनीक बार करी है, परंतु आजु बहोत स्वाद भयो। तब श्रीगुसांईजी आपु कहे जो-श्रीगोवर्द्धननाथजी आपु भूखे हते सो प्रीति सों आरोगे, तासों स्वाद अद्भुत भयो।

ता समय कृष्णदास पास ठाड़े हते। सो कृष्णदास ने कही जो महाराज ! आपुही करनहारे और आपुही आरोगनहारे, सो स्वाद क्यों न होय ? तब श्रीगुसांईजी आपु वा समय श्रीमुखसों कहे, जो-ये तिहारे ही किये भोग भोगत हैं।

भावप्रकाश-तहां यह संदेह होय जो-श्रीगोवर्द्धननाथजी आरोगे नांही। सो श्रीगुसांईजी आपु भोग सराये, आचमन मुख वस्त्र करायो पाछे श्रीगोवर्द्धनधर कों बीरी आरोगाये। सो भूखे श्रीगुसांईजीने न जानें ? और बीरी आरोगत श्रीगोवर्द्धनधर श्रीगुसांईजी सों न कहे, जो-मैं राजभोग नांही आरोग्यो ? ताको कारन कहा ? जो रामदास भीतरिया सों क्यों कहे ? सो यह संदेह होय तहां कहत हैं, जो श्रीगोवर्द्धननाथजी वा दिना श्रीगोकुल में श्रीनवनीतप्रियजी के यहां श्रीगिरधरजी ने बड़ीभात करायो हतो, श्रीसोभाबेटीजी किये। सो तब श्रीगिरधरजी और श्रीसोभाबेटीजी के मन में आई, जो-श्रीगोवर्द्धनधर आपु पधारें और नौतन सामग्री आरोगें। तासों उहां वह दूसरो स्वरूप (भक्तोद्धारक) श्रीगिरिराजतें पधारिके श्रीगोवर्द्धनधर बड़ीभात आरोगे। और श्रीगिरिधरजी, श्रीसोभाबेटीजी को तो मनोरथ, सो भक्तन कों अनुभव करावतहैं। सो स्वरूप तो आरोगि पाछें श्रीगिरिराज पर्वत के ऊपर पधारे। सो उहां (गिरिराजपें) सगरे सेवक महाप्रसाद ले चुके। और श्रीगुसांईजी आपु पोंढ़े। ता समय मंदिर में श्रीस्वामिनीजी ने पूछो जो-कहो, कहां होय आये हो ? तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कहे, जो-बड़ीभात श्रीगोकुल में श्रीगिरिधरजी श्रीसोभाबेटीजी को मनोरथ (हतो) सो आरोगके आयो हूं। यह सुनिके श्रीस्वामिनीजी हू बड़ीभात आरोगवे को मनोरथ कियो, जो-बड़ी भात आरोगें तो आछो सो यहाँ (तो) (राजभोग) होय चुके।

तब स्वामिनीजी ने श्रीनाथजी सों कह्यो, जो-जायके रामदास सों कहो जो-सामग्री पे गंगाबाई क्षत्राणी की दृष्टि परी है। सो काहेते ? जो-लीलासृष्टि के बचन हू सिद्ध करने हैं। सो-श्रीगुसांईजी

कों छै महिना को विप्रयोगहै। सोयातें, जो-लीलामें एक समय श्रीठाकुरजी ललिताजी सों कहे जो-मैं तेरी निकुंज में पधारूंगो। यह बात श्रीचंद्रावली ने सुनी। सो श्रीचंद्रावलीजी ने श्रीठाकुरजी कों विविध चतुराई करि सेवा द्वारा ललिताजीके यहां छै मास तक पधारवेसों बरजे। सो ललिताजी विरह करि महा कृष होय गई। पाछें यह बात श्रीस्वामिनीजी ने जानी, सो श्रीस्वामिनीजी ललिताजी कों संग लेके श्रीठाकुरजी के पास वाही समय आई। और श्रीठाकुरजी सों कह्यो जो-तुम (नें) छै महिना लों मेरी सखीकों विरह दियो, अब तुम छै महिना लों ललितासखी के बस में रहोगे। और जाने मेरी सखी कों दुःख दियो हैं, सो छै महिना लों दुःख पावो, और वाकों तिहारो दरसन हू न होय। सो यह बात सुनिके श्रीठाकुरजी आपु चुप होय रहे।

यह वात एक सखी ने श्रीचंद्रावलीजी सों कही। सो सुनि के श्रीचंद्रावलीजी कहे जो-श्रीस्वामिनीजी श्रीठाकुरजी तो बड़े हैं। तासों इनसों तो कछू कही जाय नांही। परंतु ललिता सखी होय एसो खोटो कियो, जो श्रीस्वामिनीजी की सखी, सो मेरी सखी बराबरि है। सो इन (नें) मोकों शाप दिवायो जो छै महिना लों मोकों प्रभुनको दरसन हू नांही? सो ललिता ने स्वामिनी-द्रोह कियो। सो काहेतें? जो श्रीठाकुरजीतें श्रीस्वामिनीजी प्रगटी हैं। और स्वामिनीजी के मुख चंद्रतें श्रीचंद्रावली प्रगटी। श्रीचंद्रावलीजीतें सगरी स्वामिनी सखी प्रगटी हैं। तासों श्रीठाकुरजी के दक्षिण भाग श्रीचंद्रावलीजी बिराजत हैं। यातें, जो-सगरी सखीन के स्वामिनीरूप, श्रीचंद्रावलीजी (सो सब में) श्रेष्ठ हैं। तासों श्रीचंद्रावलीजी ने कही जो ललिता ने स्वामिनी-द्रोह कियो है। तासों ललिताकी अकाल मृत्यु होऊ,और प्रेतयोनिकूं पावो। सो श्रीठाकुरजी हू, श्रीस्वामिनीजीहू रक्षा न करि सके। और काहूतें प्रेतयोनि निवृत्त न होय। जो मोकों शाप दिवायो ताको यह फल भोगो। यह बात काहू सखीने ललितासों कही। सो सुनत ही ललिता महा कंपायमान होयके तत्काल दोरिकें श्रीस्वामिनीजीके चरननमें आयके गिरि परी! पाछें अपनी सब बात ललिता ने कही।

तब श्रीस्वामिनीजीनें श्रीठाकुरजी कों बुलायके कह्यो जो-ललिताजी अपने हाथ सों गई तासों अब कछू उपाय करो। पाछें श्रीठाकुरजी श्रीस्वामिनीजी कों संग ले ललितादि समाज सहित श्रीचंद्रावलीजी के यहाँ पधारे। सो श्रीचंद्रावलीजी तत्काल उठिके श्रीठाकुरजी

को श्रीस्वामिनीजी कों नमस्कार करिके ऊंचे आसन पधराये। पाछे परम प्रीति सों दोउ स्वरूपनकी पूजा करिकें सुन्दर सामग्री आरोगाये। ता पाछे बीरी आरोगाय श्रीचंद्रावलीजी हाथ जोरि के ठाड़ी भई। सो तब दोऊ स्वरूपने प्रसन्न होयके श्रीचंद्रावलीजी को हाथ पकरिके पास बैठारी। तापाछे श्रीस्वामिनीजी कहे जो-सुनो श्रीचंद्रावलीजी! तिहारी प्रीति तो महा अलौकिक है, और हमारे तिहारे में कछू भेद नांही है। और यह ललिता अपनी सखी है, सो यह तिहारी है। तासों अब याको शाप भयो है, सो ताको छुटकारो करो।

तब श्रीचंद्रावलीजी कहेजो-ललिता अपनो है। तासों यह जो कछू भयो है सो यह जगत पर लीला करन अर्थ भयो है। सो यह ललिता प्रेत होयगी ताको मैं ही उद्धार करूंगी। जो यह मेरो निश्चय बचन है। तब ललिता श्रीचंद्रावलीजी के चरनन में गिरिके कह्यो, जो-मैं तिहारो अपराध कियो सो पायो है। तब श्रीस्वामिनीजीने कही, जो-यह सगरो परिकर, कलियुग में श्रीगिरिराज ऊपर लीला करनी है, तहां सब प्रगट होयगो। सो श्रीस्वामिनीजी के यह बचन सुनिके श्रीठाकुरजी श्रीचंद्रावलीजी ललिता आदि सब प्रसन्न भये।

सो लीलासृष्टि में अलौकिक स्नेह है, और अलौकिक शाप है, और अलौकिक ही ईर्षा है, जो मायाकृत तहां नांही है। सो उहां ही करिके है। सो भूमि पर जस प्रगट के अर्थ ईर्षा शाप को मिष मात्र। भूमि के जीव लीलागान करि प्रभुन कों पावें, सो यही अलौकिक करनो। सो लौकिक ईर्षा शाप जाने ताको बुरो होय, और अपराधी होय सो लीला सृष्टि में सब अलौकिक क्रिया है। यह जाननो।

या प्रकार श्रीठाकुरजी श्रीस्वामिनीजी की इच्छातें श्रीगोवर्द्धन गिरिराज में प्रगट भये, और श्रीस्वामिनीजी रूप श्रीआचार्यजी महाप्रभु श्रीगोवर्द्धनधर कों प्रगट किये। सो लीला में श्रीस्वामिनीजीतें चंद्रावलीजो को प्रागट्य। ताही भांति सों यहां श्रीआचार्यजी सों श्रीगुसांईजी को प्रागट्य, और ललिता सो कृष्णदास अधिकारी भये। और श्रीगोवर्द्धनधर के अनेक स्वरूप हैं, परन्तु दोय रूप सदा रहत हैं। सो एक तो श्रीआचार्यजी महाप्रभुन ने उहां पधराये सो तहां बिराजमान हैं, और एक स्वरूप (भक्तोद्धारक) सों सगरे भक्तन कों सुख देत हैं। जो कुंभनदास, गोविंदस्वामी, के संग खेलते। सो जहां जहां भगवदीय हैं, तिनकों अनुभव करावत हैं।

तातें जा समय श्रीगुसांईजी आपु भोग समर्पते हते और गंगाबाई क्षत्राणी की दृष्टि परी, ता समय श्रीगुसांईजी राजभोग धरे हैं सो आरोगे (क्यों) जो श्रीगोवर्द्धनधर आरोगे नांही, तो असमर्पित खाय के सगरे सेवक भ्रष्ट होय जाय ? तातें श्रीआचार्यजी के मंदिर में पधराये सो स्वरूप ने आरोग्यो। यातें श्रीस्वामिनीजी ने श्रीगोवर्द्धनधर सों कह्यो जो-श्रीगुसांईजी कों छै महीना को वियोग है, तासों गंगाबाई को नाम लीजियो। सो कृष्णदास की और गंगाबाई की प्रीति है सो गंगाबाई सों श्रीगुसांईजी कहेंगे। और कृष्णदास कों बोली मारेंगे। तब कृष्णदास कों बुरी लगेगी।

सो काहेते ? जो यह कार्य करनो जो-कृष्णदास के मन में बुरी लागे, तब श्रीगुसांईजी कों वियोग होय। तासों तुम जाय के कहो जो मैं भूख्यो हूं। सो तब श्रीनाथजी ने रामदास सों जाय कही। परि रामदास यह भेद जाने नांही। सो रामदास ने श्रीगुसांईजी सों जाय कह्यो, तब श्रीगुसांईजी मनमें जाने जो सामग्री ऊपर गंगाबाई की दृष्टि परी। अब हमसों और कृष्णदास सों लीलामें बात भई हती सो पूरन करिवे की श्रीनाथजी की इच्छा है सो निश्चय होयगो, यह जानि परत है। सो तासों अब जो सेवा बने, सो प्रीति सों करनी। क्यों ? जो-सेवा अब दुर्लभ है।

यह बिचारिके तत्काल न्हाय बड़ीभात यहां नांही भयो हतो और श्रीगोकुल तें आरोगिके आये, तासों गिरिराज के ठाकुर कों हू धरनो, सो बेगि सिद्ध करि धरे। ता पाछे सेनभोग की संग राजभोग धरे। ता पाछे सेन आरती करि अनोसर कराय के मन में बिचारे जो—अब श्रीगोवर्द्धननाथजी को दरसन महाप्रसाद सबही दुर्लभ भयो। सो बड़ी भात को डबरा उठाय मृतिका के पात्र ही में ठलायके परवततें उतरि रंचकरंचक सबनकों दिये,सो आपही लिये,बहोत सराहे तब कृष्णदास ने भगवद् इच्छातें बोली मारी (व्यंग) जो आपही करन हारे, और आपही आरोगन हारे। सो क्यों न स्वाद होय ? सो यामें यह जताये जो—हमसों न पूछे, जो तुम ही जाय सामग्री, किये और तुमही जायके आरोगे। ऐसो सौभाग्य तिहारो ही है। यह बोली कृष्णदास मारे।

तब श्रीगुसांईजी आपु कहे जो-यह तिहारो ही कियो भोग भोगत हैं। सो यह कहिके दोऊ बात जताये, जो—गंगाबाई क्षत्राणी सों प्रीति करि वाकों बैठारि राखे, सो वाकी राजभोग की सामग्री पे दृष्टि

परी। सो यहू तिहारो कार्य है। नांही तो गंगाबाई ऊहां कैसे जाय ? और तुमने लीलामें श्रीस्वामिनीजी सों शाप दिवायो,सोहू तिहारो कार्य है। सो तिहारे ही किये भोग भोगत हैं। यामें यह जताये, जो-हमकों खबरि परि गई जो-अब तिहारो भाग्य खुल्यो, सो तुम करो सो भोगोगे। जो मनमें तो आय चुकी है। अब ऊपरतें करनो है, सो करोगे।

सो यह बात सुनिके कृष्णदास के मन में बहोत बुरी लगी। तब कृष्णदास मनमें विचारे, जो-श्रीगुसांईजी के दरसन बंद करने। सो या बात को कौन प्रकार सों उपाय करनो। तब श्रीगोपीनाथजी श्रीगुसांईजी के बड़े भाई तिनके पुत्र श्रीपुरुषोत्तमजी हते। सो तिनसों कृष्णदास मिलिके कहे, जो-तुम श्रीआचार्यजी के बड़े पुत्र श्रीगोपीनाथजी हैं, तिनके पुत्र हो। सो तुम क्यों चुप वैठि रहे हो ? जो-श्रीगोवर्द्धननाथजी को सेवा सिंगार सब करो। जो-श्रीगुसांईजी ने अपनो सब हुकम करि राख्यो है। टीकेत तो तुम हो।

तब श्रीपुरुषोत्तमजी ने कही. जो-हमारी सामर्थ्य नांही है, जो-श्रीगुसांईजी सों बिगारें। तब कृष्णदास नें कह्यो जो-हमारे संग न्हाय के चलो, जो-परवत के ऊपर मंदिर में जायके श्रीनाथजी को सेवा सिंगार करो, जो-हम सब करि लेंइगे। पाछे श्रीपुरुषोत्तमजी उत्थापन तें दोय घड़ी पहले न्हाये,सो कृष्णदास के संग परवत ऊपर जायके मंदिर में बैठि रहे। और कृष्णदास दंडोती सिला पै जायके वैठि रहे। इतने में श्रीगुसांईजी आपु स्नान करिकें दंडोती सिला के पास आये। तब कृष्णदास ने श्रीगुसांईजी सों कही, जो-श्रीपुरुषोत्तजी न्हाय के मंदिर में पधारे हैं। टीकेत तो वे हैं, तासों जब वे आप कों बुलावेंगे, तब आपु परवत ऊपर आइयो। तासों अब आपु परवत ऊपर मति चढ़ो, जो-श्रीगोवर्द्धनधर के दरसन न होंयगे।

तब श्रीगुसांईजी श्रीनाथजी की ध्वजा कों दंडवत करि लीला की बात सुमरन करिके परासोली कूं पधारे, तहाँ रहे। सो तहां विप्रयोग को अनुभव करन लागे।

भावप्रकाश—सो श्रीगोकुल हू श्रीनवनीतप्रियजी के यहां याते नहिं पधारे, जो-श्रीस्वामिनीजी के वचन हैं। जो हमहूं कों और श्रीठाकुरजी कों हू विप्रयोग होयगो। तासों श्रीगोकुल जायेंगे तो कहा जानिये कैसी होय ? तासों अब छै महिना लों मिलाप श्रीठाकुरजी सों दुर्लभ हैं, तासों परासोली में बैठि रहें।

और श्रीगोवर्द्धननाथजी के मंदिर में परासोली की ओर एक बारी हती, सो जा पर श्रीगोवर्द्धननाथजी आयके श्रीगुसाँईजी कों दरसन देते। सो श्रीगुसाँईजी आपु सगरे दिन परासोलीतें बारी कों देखते। कृष्णदास मंदिर में ते नीचे जाँय तब श्रीगोवर्द्धननाथजी बारी पर आय बैठते। सो कृष्णदास एक दिन आन्योर में आये, तब बारी पर श्रीगोवर्द्धननाथजी कों बैठे देखे। तब कृष्णदास प्रातःकाल मंदिर में आयके बारी चिनवाय के श्रीगोवर्द्धननाथजी सों कह्यो जो-मैंनो श्रीगुसांईजी के दरसनकी मने कियो हूं, सो तुम बारी पर क्यों बैठे? और अब उतकी ओर मति जैयो। सो कृष्णदास परासोली की ओर श्रीनाथजी कों खेलिवे कों हू न जान देते।

सो श्रीगोवर्द्धनधरकों श्रीगुसांईजी बैठि बैठिके विज्ञप्ति करते। सो रामदास मुखिया भीतरिया जब श्रीगुसांईजी के पास राजभोग आरती सों पहोंचि के जाते, सो आपु कों श्रीनाथजी को चरणोदक देते। तब श्रीगुसांईजी आपु फूल की माला करि राखते, सो माला के भीतर विज्ञप्ति को श्लोक लिखि देते। सो रामदासजी ले जाते। सो श्रीगोवर्द्धननाथजी कों माला पहिरावते,तब माला में ते विज्ञप्ति को कागज निकासिके श्रीनाथजी बांचते। पाछे वाको प्रति उत्तर श्रीनाथजी बीड़ा के पान कों ऊपर अपनी पीक सों साँकतें लिखि देते। सो रामदास कों देते। सो रामदास दूसरे दिन राजभोग सों पहोंचिके जाते,तब श्रीनाथजी को लिख्यो पत्र श्रीगुसांईजी कों देते। सो श्रीगुसांईजी आपु बांचिके पाछे जलमें घोरिके पान करते। यातें श्रीनाथजीके किये श्लोक जगत में प्रकट न भये। श्रीगुसांईजी आपु विज्ञप्ति किये सो श्रीनाथजी आपु बांचिके रामदासजीकों देते, तासों विज्ञप्ति प्रकटी है। सो एक दिन श्रीगुसांईजीकों बहोत विरह भयो,सो यह लिखे। श्लोक-'त्वद्दर्शन विहीनस्य०

सो यह श्लोक लिखिके पठाये, जो-तिहारे भक्त हैं सो तिहारे विना जीवत हैं सो वृथा ही जीवत हैं। सो दुर्भगावत्। सो यह श्रीगोवर्द्धननाथजी बांचिके यह लिखे जो-मेघको लक्षण यह है, जो समय होय वर्षा को, तब आयके वर्षे। सो सबरो जगत जानत है। सो एसे अबही कृष्णदास को समय होय चुकेगो तब मिलाप होयगो। सो यह तुमहू जानत हो, और हमहू जानत हैं। तासों धीरज धरि समय होन देउ, जो इतनो विरह क्यों

करत हो ? सो यह पत्र रामदासजी लेके आये। तब श्रीगुसांईजी आपु वांचिके यह लिखे जो-

'अंबुदस्य स्वभावोयं समये वारि मुञ्चति,
तथापि चातकः खिन्नं रटत्येव न संशयः।'

सो मेघ को यह स्वभाव है जो समय होयगो, तब ही बरसेगो (मिलाप होयगो) परंतु चातकने मेघ सों प्रीति करी है। सो एसे भक्त हैं सो तो तिनकों (मेघरूप श्रीकृष्ण कों) रटत है. सो चेन नाँही है। सो (आप) चाहो तव समय होय। तुम बिना धीरज हमकों नांही है। सो भक्तन को यही धर्म है, जो-चातक की नांई सदा तिहारी चाह करिवो करें। सो यह लिखि पठाये। या प्रकार रामदासजी नित्य आवते,सो श्रीगुसाँईजीके पास सव सेवक आवते, सो कृष्णदासजी जानते। परंतु सेवकन सों कछू चलती नाँही। रामदासजी कों बरजे हू सही, जो-तुम श्रीगुसांईजी के पास पत्र ले जात हो, और पत्र ले आवत हो, सो यह बात ठीक नांही है। तव रामदासजी कहे,जो-हम तो नित्य श्रीगुसांईजी के दरसनकों जांयगे, चाहे हमकों सेवामें राखो चाहे मति राखो। तब कृष्णदास चुप होय रहे। सो काहेतें ? जो-एसो सेवक फेरि कहाँ मिले ? तासों कृष्णदास कछू बोले नांही। सो पौष सुदी ६ तें आषाढ़ सुदी ५ तांई श्रीगुसांईजी ने विप्रयोग कियो। पाछे आषाढ़ सुदी ५ आई, ता दिन राजा बीरबल श्रीगोकुल आयो। सो श्रीगुसाँईजी तो परासोली हते, और श्रीगिरधरजी घर हते। तब बीरबल श्रीगिरधरजी के पास आयके दंडवत करि के पूछे जो-श्रीगुसाँईजी कहाँ है ? हमकों दरसन किये बहोत दिन भये। हमने उनके दरसन पाये नाँही। तव श्रीगिरधरजी वीरबल सों कहे, जो-श्रीगुसाँईजी तो परासोली में बैठि रहे हैं, जो-कृष्णदास अधिकारीने श्रीगुसाँईजी के दरसन बंद किये हैं। सो श्रीगुसांईजी छै महिना तें बड़ो खेद करत हैं।

तब वीरवल ने कह्यो जो-अबही मैं जायके कृष्णदास कों निकासत हों। सो यह कहिके वीरबल श्रीमथुराजी आयो। सो मथुरा की फौजदारी वीरबल की हती, सो मथुरातें पांचसे मनुष्य बीरबल ने पठाये और बीरबलने उनसों कह्यो जो-श्रीगोवर्द्धनमें जायके कृष्णदास कों पकरि लावो। तब मनुष्य गये, सो सांझ के समय श्रीगोवर्द्धन में आये। पाछे कृष्णदास कों पकरिके वे मनुष्य मथुरा ले आये।

तब वीरवलने अर्द्धरात्रि ही कों मनुष्य श्रीगोकुल पठायके कह्यो जो-कृष्णदास कों पकरिके वंदीखाने में दिये हैं, जो-तुम श्रीगुसांईजीकों लेके श्रीगोवर्द्धननाथजीके मंदिर में जावो। तब ये समाचार मनुष्य-ननें श्रीगिरधरजी सों कहे। सो रात्रिही कों श्रीगिरधरजी घोड़ा ऊपर असवार होयके परासोली कूं पधारे,सो प्रातः-काल ही आषाढ़ सुदी ६ आई। सो श्रीगिरधरजीने जायके श्रीगुसांईजी कों नमस्कार करिके कही जो-आपु श्रीगोवर्द्धनधर के मंदिर में पधारो,और सेवा सिंगार करो। तब श्रीगुसांईजी आपु श्रीगिरधरजी सों कहे जो-कृष्णदास की आज्ञा होय तो चलें। तब श्रीगुसांईजी सों श्रीगिरधर-जीने कही जो-कृष्णदास कूं तो मथुरा में वंदीखाने में दियो है। यह सुनिकें श्रीगुसाँईजी आपु कहे जो-हाय हाय! श्रीआचार्यजी महा-प्रभुन के कृपापात्र सेवक भगवदीय कृष्णदास कों इतनो दुःख, और इतनो कष्ट। सो श्रीगुसाँईजीनेश्रीगिरधरजी सों कही जो-तुमने बीर-वल सों कह्यो होयगो। तब श्रीगिरधरजीने कही जो-हम तो सहज ही वीरवल सों कह्यो हतो, जो-श्रीगुसाँईजी के दरसन कृष्णदास ने वंद किये हैं, इतनो कह्यो हतो। और तो कछू नाँही कह्यो। तब श्री-गुसाँईजी आपु कहे जो-कृष्णदास आवेगो, तब ही भोजन करूंगो। सो इतनो सुनतही श्रीगिरधरजी तत्काल घोड़ा ऊपर असवार होय-कें श्रीमथुराजी आये। तब वीरवल तें जायके श्रीगिरधरजी ने कह्यो जो-काकाजी तो भोजन तब करेंगे जब कृष्णदास वहाँ जायेंगे। तासों कृष्णदास कों छोडिदेउ। तब वीरवलने कृष्णदासकों वंदीखाने में तें बुलायके कह्यो जो-देखि श्रीगुसाँईजी की कृपा, जो-तेरे बिना भोजन नाँही करत हैं और तैनें उनसों एसी करी। तासों अब तोकूं छोडत हूँ, और आजु पाछे जो तू श्रीगुसाँईजी सों बिगारेगो, तब मैं तोकों फेरि कवहू नाँही छोडूंगो। सो प्रकार वीरवल ने कहिके कृष्णदास कों श्रीगिरधरजी के हवाले करि दिये।

तब श्रीगिरधरजी कृष्णदास कों लेके परासोली में पधारे। तब श्रीगुसांईजी आपु कृष्णदास कों देखिके श्रीगोवर्द्धननाथजी को अधिकारी जानिके उठि ठाड़े भये। तब कृष्णदास दीन होयके श्री-गुसांईजी कों दंडवत करि चरन परस करिके यह पद गायो। सो पद-राग सारंग-'ताही कों सिर नाइये जो श्रीवल्लभसुत पद रज रति होय।
× × कृष्णदास सुर तें असुर भये, असुर तें सुर भये चरणन छोय॥'

यह पद सुनिके श्रीगुसांईजी आपु वहोत प्रसन्न भये। तब कृष्णदास ने बिनती कीनी,जो-महाराज! मेरो अपराध क्षमा करिये, और अब आप श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेवा में पधारिये। तब श्रीगुसांईजी आपु कहे, जो-तिहारी आज्ञा भई है, सो अब चलेंगे। तब कृष्णदास कों संग लेके श्रीगुसांईजी आपु श्रीगोवर्द्धननाथजी के मंदिर में पधारे। और श्रीगोवर्द्धनधर कों दंडोत करी। पाछें सिंगार को समय हतो और आषाढ़ सुदी ६ को दिन हतो सो कसूँमल कुलह पिछोडा धराये। तब राजभोग सों पहोंचे। पाछे उत्थापन तें सेन पर्यन्त की सेवा सों पहोंचि के सेन आरती करि श्रीगुसांईजी आपु श्रीनाथजी के सन्मुख कृष्णदास कों दुसाला उढ़ाये। और कहे जो-श्रीगोवर्द्धनधर को अधिकार करो। तुम धन्य हो। तब वा समय कृष्णदास ने यह पद गायो। सो पद—

राग कान्हरो—"परम कृपाल श्रीवल्लभनंदन करत कृपा निज हाथ दे माथे०।"

सो यह पद कृष्णदास ने गायो, और विनती कीनी जो-महाराज! मेरो अपराध क्षमा करिये। तब श्रीगुसांईजी आपु श्रीमुखसों कहे, जो-तिहारो अपराध श्रीनाथजी क्षमा करेंगे। ता पाछें श्रीगुसांईजी अनोसर कराय के सवन को समाधान कियो, तब सगरे वैष्णव सेवक प्रसन्न भये। पाछें जैसें नित्य सेवा सिंगार आप श्रीगोवर्द्धनधर को करते, वैसेही करन लागे। और कृष्णदास श्रीगुसांईजी की आज्ञा तें अधिकार की सेवा करन लागे।

सो वे कृष्णदास ऐसे कृपापात्र भगवदीय हते।

वार्ताप्रसंग ८—और एक समय श्रीगुसांईजी आपु श्रीगोकुल में हते; सो कृष्णदास श्रीगोवर्द्धन तें श्रीगोकुल आये। तब श्रीगुसांईजी उठिके श्रीगोवर्द्धननाथजी को अधिकारी जानि कृष्णदास को बहोत प्रसन्नता पूर्वक समाधान कियो, और अपने पास बैठाये। पाछे श्रीगोवर्द्धनधर के कुशल समाचार पूछे और कृष्णदास कों अपने श्रीहस्तसों श्रीनवनीतप्रियजी को महाप्रसाद धरे। ता पाछे सेनभोग को महाप्रसाद लिवाय के रात्रिकों सुंदर सेज पर सेन करायो। सो जब प्रातःकाल भयो तब कृष्णदास चलन लागे। ता समय कृष्णदास ने श्रीगुसांईजीसों विनती कीनी, जो-महाराज! मेरो मन वृन्दावन देखिवे को बहोत है। तब श्रीगुसांईजी आपु कहे, जो-आछो, जावो, परन्तु दुःख पावोगे।

तब कृष्णदास श्रीयमुनाजी पार गये, जो श्रीगुसांईजी ने मने किये तोऊ मन न मान्यो, श्रीवृंदावन कों चले। सो मध्यान्ह समय वृन्दावन आये। तब वृन्दावन के संत महंत कृष्णदास सों मिलन आये, सो कृष्णदास कों वा समय ज्वर चढ्यो, सो प्यास लागी। तब कंठ सूखन लाग्यो। सो कृष्णदास नें कही, जो-प्यास बहोत लगी है, सो कंठ सूख्यो जात है। तब संत महंतन ने कही, जो-वेगि जल लावे। सो कृष्णदास अकेलेही रथ पर बैठिके गये हते। सोकृष्णदास नें कही, जो-श्रीगोकुल को वल्लभी वैष्णव होय सो वासों कहो, जो-वह जल लावे तो मैं पीऊं। तब सगरे संतमहंतन ने कृष्णदास सों तर्क करिके कह्यो, जो-यहाँ तो कोई वैष्णव नांही है. जो श्रीगोकुल को भंगी यहां व्याहो है, सो वह यहां आयो है, सो वाकों तुम कहो तो बुलावें।

तब कृष्णदास ने कही, जो-वह श्रीगोकुल को भंगी सबतें श्रेष्ठ हैं। सो वासों कहियो, जो-कुम्हार के घर तें कोरो बासन लेके श्रीयमुनाजी में न्हाय के जल भरि लावे। सो तब उनने जायके वा भंगी सों कह्यो, जो-कृष्णदास कों ज्वर चढ्यो है, वह प्यासे हैं। सो कहत हैं सो तू उनकों जल ले जा। तब वह भंगी उहां सो दोर्यो। सो श्रीगुसांईजी आप श्रीनवनीतप्रियाजी की राजभोग आरती करि श्रीनाथजीद्वार पधारिवे कूं घाट ऊपर आये हते। सो इतने ही में वा भंगी ने कपड़ा की आड़ करिकें मुख तें कह्यो, जो-महाराज! कृष्णदास श्रीवृन्दावन में हैं। तहाँ उनकों ज्वर चढ्यो है, सो प्यासे हैं। जल मोसों मांग्यो है,सो मैं वृन्दावन तें यहां दोर्यो आयो हूं। तब श्रीगुसांईजी खवास सों झारी जल की लेके, घोड़ा ऊपर असवार होयके वेगिही आपु वृन्दावन पधारे। सो तब कृष्णदास कों रथ ऊपर तें उठाय के जल प्याये। पाछे कृष्णदास सावधान भये। सो ज्वरहू उतरि गयो। तब कृष्णदास श्रीगुसांईजी कों दंडवत करिके यह पद गाये। सो पद—

राग कान्हरो '—'श्रीविट्ठलजू के चरणन की बलि।
हमसे पतित उधारन कारन परम कृपाल आपु आये चलि॥'

सो यह पद गायके कृष्णदास ने श्रीगुसांईजी सों विनती कीनी जो-महाराज! मैंने आपको कह्यो न मान्यो तासों इतनो दुःख पायो। ता पाछे श्रीगुसांईजी के संग कृष्णदास श्रीगोवर्द्धन आये, तब सेन

आरती को समो भयो, तब श्रीगुसांईजी न्हाय के सेन आरती किये। तब कृष्णदास ने यह पद गायो। सो पद—

राग कान्हरो—'आजु को दिन धनि धनि री माई नैनन भरि देखे नंदनंदन०।'

पाछें श्रीगुसांईजी अनोसर कराय के परवत तें नीचे पधारे। सो या प्रकार कृष्णदास ने बहोत दिन लों श्रीगोवर्द्धननाथजी को अधिकार कियो।

वार्ताप्रसंग ६—पाछे एक दिन एक वैष्णव ने आयके कृष्णदास सों कही, जो-मोकूं यहां एक कुँआ बनवावनो है, और मोकों अपुने देस जानो है, सो मैं तो अपने देश कों जाउंगो, तासों तुम या द्रव्य कों राखो। सो ऐसे कहिके वह वैष्णव तीनसे रुपैया देके अपुने देश कों गयो। तव कृष्णदास वा वैष्णव के रुपैयान में ते एक सौ रुपैया एक कुल्हरा में धरिके बाग में एक आँव के वृक्ष नीचे गाड़ि राखे। ता पाछे आछो महूरत देखिके पूछरीके पास बागमें कुँआ को आरंभ कियो। तब कितनेक दिन पाछे कुँआ बनिके तैयार भयो,और दोयसे रुपैया लगे। पाछे कुँआ को मोहड़ो बनवावनो रह्यो, सो कृष्णदासजी मनमें बिचारे, जो-सौ रुपैया में मोहोड़ो आछो बनेगो।

ता पाछे श्रीगोवर्द्धनधर के उत्थापन के दरसन करिके कृष्णदास वा कुँआ कों देखवे कूं गये, सो वा कुँआ कों देखन लागे। सो कृष्णदास के हाथ में आसा (लकड़ी) हतो, सो आसा टेक के कृष्णदास वा कुँआ पर ठाड़े भये। इतने में आसा सरक्यो, सो कृष्णदास आसा सहित वा कुँआ में जाय परे। तव सगरे मनुष्य पास ठाड़े हते, सो तिनने सोर कियो। जो कृष्णदास कुँआ में गिरे। पाछे कितेक मनुष्य दौरे, सो रस्सा टोकरा लाये,और दोय मनुष्य कुँआ के भीतर उतरे। सो बहोत ढूंढ़े परि कृष्णदास को सरीर हू न पायो। तव वे मनुष्य पाछे फिरि आये।

ता समय श्रीगुसांईजी श्रीगोवर्द्धनधर कों सेनभोग धरिके बाहिर बिराजे हते, सो रामदास भीतरिया श्रीगुसांईजी के पास बैठे हते। ता समय मनुष्यन ने जायके कही। जो-महाराज! कृष्णदास कुँआ कों देखत हते, सो आसा सरक्यो। सो कुँआ में गिरे। पाछे मनुष्य कुँआ में ढूढिवे कों उतरे। सो कृष्णदास को सरीर हू पायो नाँही है। ता समय रामदासजी उहाँ ठाड़े हते, सो कहे 'तामसाना

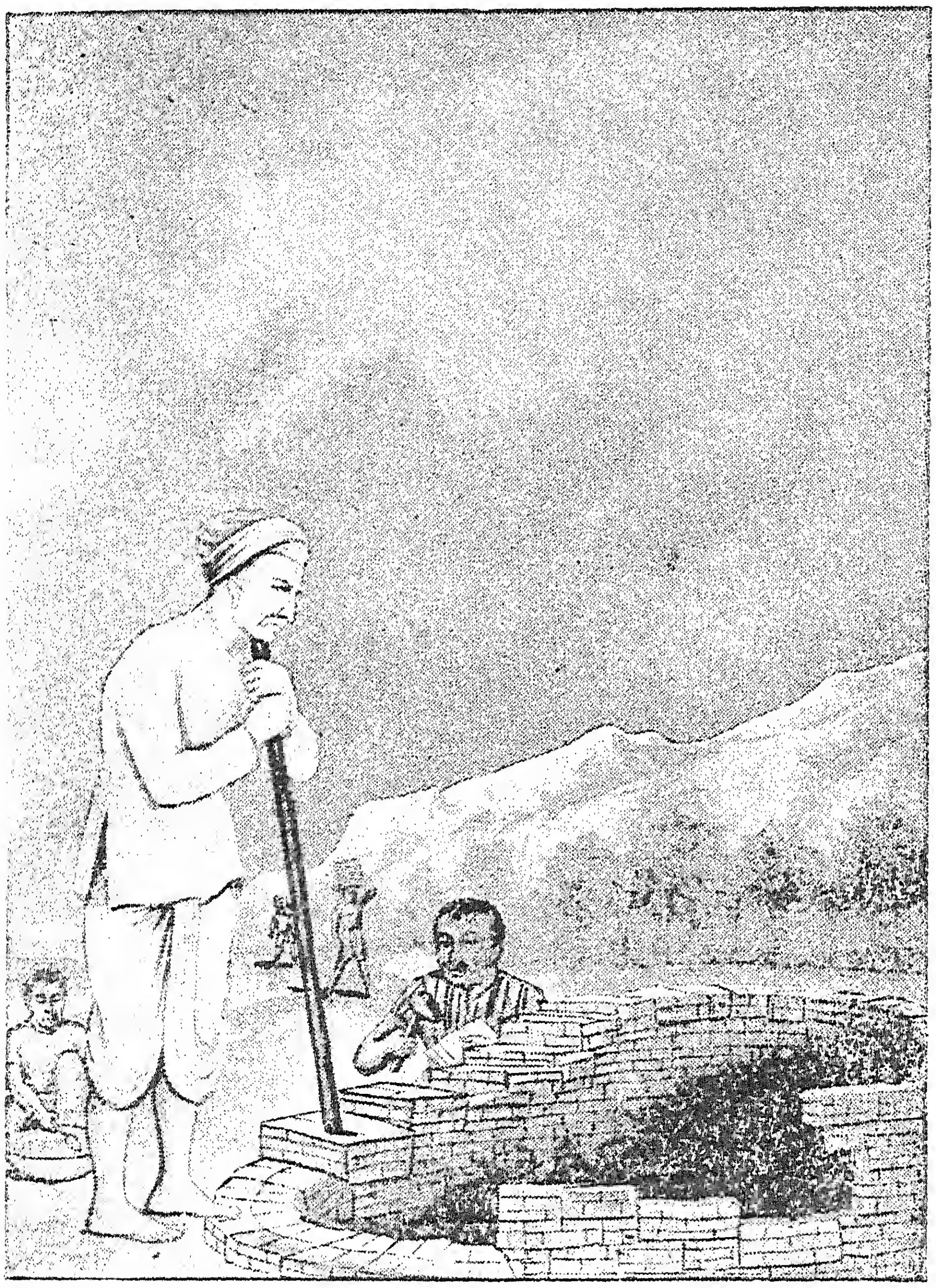

अपने बनवाए हुए अधूरे कूए का निरीक्षण करते हुए—

कृष्णदास.

जन्म सं० १५५३] [देहावसान सं० १६३६

★

मधो गतिः'–तब यह सुनिके श्रीगुसाँईजी आपु कहे,जो–रामदासजी एसे न कहिये। जो कृष्णदास तो श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के कृपापात्र वैष्णव हते, जो यह लीला है। कूप में गिरे तो कहा भयो? कहा जानिये कहा है?

भावप्रकाश—सो याको कारन श्रीगुसांईजी आपु तो जानत हते, जो प्रेतयोनि को शाप है। तासों आपु प्रगट न किये। सो कृष्णदास या देह सुद्धां प्रेत भये। सो पूछरी के पास एक पीपर को वृक्ष है। ताके ऊपर जायके बैठे।

वार्ताप्रसंग १०–और श्रीगुसाँईजी आपु श्रीमुख सों कहे जो–कृष्णदास श्रीगोवर्द्धनधर को अधिकार भलो ही किये और अब एसे सेवक कहाँ मिले? और अधिकारी बिना काम चलेगो नांही सो विचार करनो। सो या भांति कहे। तब रामदासजीने विनती कीनी जो–महाराज! जाकों तुम आज्ञा करोगे, सोई करेगो। जो श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेवा भाग्य सों मिलत है। तब श्रीगुसांईजी आपु कहे जो–हम कौनसे जीव कों कहें, जो कौनसे जीव को बिगार करें। सुधारनो तो बहोत कठिन है। और बिगारवो तो तत्काल है।

भावप्रकाश—सो याही सों श्रीआचार्यजी श्रीसुबोधिनीजी में कहे हैं। जो–श्रीभागवत नारायण ने ब्रह्मा सो कह्यो है, परि ब्रह्मा सृष्टि करन को अधिकारी है। तासों श्रीभागवत फलित न भयो। पाछे ब्रह्मा नारदजी सों कही, सो नारद को सगरे देसन में फिरवे को अधिकार है तासों फलित न भयो। तब नारदने वेदव्यासजी सों कह्योसोवेदव्यासजी सास्त्रकरनके अधिकारी हैं,तासों व्यासजाकों हू फलित न भयो। पाछे व्यासजी ने श्रीशुकदेवजी सों कह्यो। सो शुकदेवजी सर्वत्याग कियो है। सो यही त्याग में लगे। पाछे परीक्षित को सर्वत्याग भयो। तब अधिकारी श्रीभागवत के भये। (जब) श्रीशुकदेवजी रात दिन तांई कथा कहे। तब सातमें दिन भगवत् प्राप्ति भई। सो तैसे ही यह श्रीभागवत रूप पुष्टिमारग है। सो याके अधिकारी निरपेक्ष होय,ताही के माथे यह मारग होय। और जाकों अधिकार पाये अहकार बढ़े, सो ताको कछू फल सिद्ध न होय।

तासों श्रीगोवर्द्धनधर को अधिकार हम कौन कों देय? कौन को बिगार करें। तब रामदासजी सुनिके चुप होय रहे। इतने में सेनभोग को समय भयो, सो सेनभोग श्रीगुसांईजी सरायें।

सो सेन आरती करे पाछे श्रीगुसांईजी आपु गोवर्द्धनधर सों पूछे, जो–महाराज ! कृष्णदास की तो देह छूटी और अधिकारी बिना चलेगी नाँही, सो हम कौनकों अधिकार देके बिगार करें ? तासों आपु कहो ताकों अधिकारी करें। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कहे जो–हमहू कौन जीवको बिगार करें ? जो–कोई अधिकार लेयगो ताको बिगार होयगो। तासों तुम एक काम करो, जो–अधिकार को दुसाला लेके सबके आगे कहो, जाकों अधिकार करनो होय सो दुसाला ओढ़ो। तब जो आयके कहे ताकों देऊ। सो जाकों गिरनो होयगो सो आपुही आवेगो।

ता पाछे श्रीगुसांईजी आपु प्रसन्न होयके श्रीगोवर्द्धननाथजी कों सेन कराये। पाछे दूसरे दिन राजभोग आरती के समय सगरे व्रजवासी वैष्णव भेले करिके श्रीगुसांईजी आपु दुसाला हाथ में लियो। पाछे सबनकों सुनायके कह्यो जो-जाकों श्रीनाथजी के घर को अधिकार करनो होय सो या दुसाला कों ओढो। यह सुनिके कितनेकने कही जो–हम करेंगे। सो पहले एक क्षत्री बोल्यो हतो, सो ताकों दुसाला उढ़ायो। ता पाछे श्रीगोवर्द्धननाथजी की आरती करि अनोसर कराय श्रीगुसांईजी आपु श्रीगोकुल पधारे।

पाछे कछुक दिन बीते तब एक समय श्रीगोवर्द्धननाथजी की भैंस खोय गई, सो बरहे में निकसि गई। तब भैंस ढूंढिवे के लिये गोपीनाथदास ग्वाल और पांच सात ग्वाल पूछरी की ओर गये। वे सब परम कृपापात्र भगवदीयहते। सो तब देखे तो श्रीगोवर्द्धननाथ- जी सखानसहित पूछरी पास एक पीपरके नीचे खेलतहैं। और पी- पर के नीचे कृष्णदास अधिकारी प्रेत होयके बैठे हैं। तब कृष्णदा- स अधिकारी ने गोपीनाथदास ग्वाल सों जैश्रीकृष्ण कियो और कह्यो जो—अरे भैया ! गोपीनाथदास ग्वाल ! तू मेरी विनती श्री- गुसांईजी सों करियो, और कहियो जो–आपके अपराधतें मेरी यह अवस्था भई है। और श्रीगोवर्द्धनधर दरसन देत हैं सो आपकी कृपा ले देत हैं।

भावप्रकाश—सो जब श्रीगोवर्द्धननाथजी के आगे अधिकार को दुसाला श्रीगुसांईजी ने कृष्णदास कों (दुवारा) उढ़ायो। तब कृष्णदास ने यह पद गायो—

'परम कृपाल श्रीवल्लभनंदन करत कृपा निज हाथ दे माथे।'

सो यह पद गायके कृष्णदास ने श्रीगुसांईजी सों कही, जो-महाराज ! मैं छः महिना लों आपकों विप्रयोग करायो, सो आपु मेरो अपराध क्षमा करिये। तब श्रीगुसांईजी आपु कहे जो-तिहारो अपराध श्रीनाथजी क्षमा करेंगे। सो यह श्रीगुसांईजी आपु कहे, तासों श्रीगोवर्द्धनधर दरसन देत हैं, और बोलत हैं बातें करत हैं। परंतु श्रीगुसांईजी आपु अपराध क्षमा नांही किये हैं,तासों प्रेतयोनि छूटत नांही है। और कृष्णदास श्रीगोवर्द्धनधर सों हू कहते जो महाराज ! मोकों दरसन देत हो, सो प्रेतयोनि क्यों नांही छुड़ावत हो ? तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कहे, जो-यह हमारे हाथ है नांही, उद्धार तो तेरो श्रीगुसांईजी के हाथ है। सो काहेतें ? जो लीला में श्रीचंद्रावलीजी को शाप है जो-प्रेतयोनि होय। सो कौन छुड़ावे ? तासों यद्यपि श्रीस्वामिनीजीकी सखी ललिता रूप (कृष्णदास) हैं। परंतु आगे को वचन बिचारि नहीं छुडावत हैं। तासों कृष्णदास ने गोपीनाथदास ग्वाल सों कह्यो जो-तू मेरी बिनती श्रीगुसांईजी सों करियो,जो-श्रीगुसांईजीकी कृपा बिना मेरी गति नांही है।

और बिलछू की ओर बाग में आमके वृक्ष के नीचे रुपया सौ एक कुलरा में भरिके गाड़े हैं, सो निकासिके कूप के ऊपर को मोहड़ो बनवाय दीजियो। यह श्रीगुसांईजी सों कहियो। और श्रीनाथजी की भैंस तुम ढूंढिवे को आये हो सो उह घना में चरत है। पाछे गोपीनाथदास ग्वाल घना में तें भैंस लेके गोपालपुर आये। सो भैंस बांधि गोदोहन गाय भैंस को किये। ता पाछे श्रीगुसांईजी आपु श्रीनाथजी की सेन आरती करिके अनोसर कराय परवत तें उतरे और अपनी बैठक में आयके बिराजे। तब गोपीनाथदास ग्वाल ने श्रीगुसांईजी कों दंडवत करिके कह्यो जो-महाराज ! आज श्रीनाथजी की भैंस खोय गई हती सो ढूंढन कों पूछरी की ओर गये हते। तहां कृष्णदास अधिकारी प्रेत भये देखे हैं। सो कृष्णदास पीपर के वृक्ष के ऊपर बैठे हैं। कृष्णदास ने मोकों भगवत् स्मरण कियो हतो। और कृष्णदास ने आपसों यह बिनती करी हैं जो-मैं प्रेत हूं, मैंने आपको अपराध कियो है, तासों मोकों प्रेतयोनि प्राप्त भई है ! आपु के हाथ मेरो उद्धार है। और बाग में आम के वृक्ष के नीचे कुलरा में रुपया सौ गड़े हैं। सो निकासिके कुँआ को मोहड़ो बनवायवे को कह्यो है। और भैंस हू कृष्णदासने बताय दीनी है,सो हम ले आये हैं।

तब श्रीगुसांईजी आपु अपने मन में विचारे जो-कृष्णदास कों

बड़ो दु.ख है। सो अब याकों प्र तयोनि में सों छुड़ावनो, यह कहिके तत्काल उठिके बाग में पधारे। तब रुपया १००) निकासिके नयो अधिकारी कियो हतो, सो वाकों देके कह्यो जो–ये रुपयानसों कृष्णदास वारे कूँआ को मोहड़ो बनवाइयो। ता पाछें श्रीगुसांईजी आपु वाही रात्रि कों असवार होयके मथुराजी पधारे। पाछे प्रातः-काल भये श्रीगुसांईजी आपु अपने श्रीहस्तसों कृष्णदास को क्रिया-कर्म करि, ध्रुवघाट ऊपर श्राद्ध कियो, और कृष्णदास की प्रेतयोनि छुटाय के दिव्य सरीर करिके लीला में प्राप्त किये। सो बिलछू साम्हे गिरिराज में बारी, ता द्वार के मुखिया कृष्णदास हैं, सो तहां जायके बिराजे। सो या प्रकार कृष्णदास की लीला-प्राप्ति श्रीगुसांईजी आपु किये।

भावप्रकाश—तहां यह संदेह होय जो–श्रीगुसांईजी की कृपा तें उद्धार न भयो? सो आपु मथुराजी पधारे और ध्रुवघाट ऊपर श्राद्ध किये? सो कृपातें (कहा) श्राद्ध अधिक है? तहां कहत हैं जो–गोपीनाथदास ग्वाल कृष्णदास कों प्रेत भये देखिके आये। सगरे सेवक ब्रजवासीन के आगे गोपीनाथदास ग्वालनें श्रीगुसांईजीतें कह्यो, जो–कृष्णदास प्रेत भये हैं। सो आपु सों बिनती करी है, जो–आप मोकों प्रेतयोनि सों छुड़ावो। जो श्रीगुसांईजी चाहें तो रंचक मन में विचारे तें छुटकारो होय। परंतु पाछे जो सेवक ब्रजवासी कोई प्रेत होय सो श्रीगुसांईजी सों कहे, जो–आपु छुड़ावो। सो तब न छुड़ावें तो दोष-बुद्धि होय, तब जीव को बिगार होय। तासों श्रीगुसांईजी आपु श्रीमथुराजी में पधारिके ध्रुवघाट ऊपर श्राद्ध कियो, सो या मिष तें छुड़ाये। सो सबनने जानी जो–ध्रुवघाट को श्राद्ध एसो ही है, सो यह महिमा बढ़ाये। सो अपुनो माहात्म्य काल–कठिनता जानि छिपाये। सो याको कारन यह है। और दूसरो कारन यह है जो कृष्णदास एसे भगवदीय हते जो इनके कोटानकोटि पुरुषान को उद्धार होय, सो काहेतें? जो श्रीभागवत में नृसिंहजी तें प्रह्लादनें कह्यो है जो-महाराज! मेरे पिता को उद्धार होय, तब श्रीनृसिंहजी कहे-जो जा कुलमें भगवद्भक्त होइ सो वाके इक्कीस पुरुषा तरें। तासों तुम संदेह क्यों करत हो? सो प्रह्लादजी तो मर्यादाभक्त भये, और कृष्णदासजी पुष्टिमार्गीय भगवदीय भये। सो इनके तों कोटानकोटि पुरुषान को उद्धार है। परंतु श्रीआचार्यजी महाप्रभुनके संबंध बिना लीला में प्रवेस न होय। तासों कृष्ण-

दास के मिष करि सृष्टि में मुक्त किये। सो काहे तें? जो कृष्णदासजी, श्रीगुसांईजी, सगरो श्रीगोवर्द्धनधर को परिकर अलौकिक है। सो यहां ईर्षा नांही है। सो भूमि पर हू भगवद्लीला जानि कहनों, सुननों।

सो या प्रकार कृष्णदास की वार्ता महा अलौकिक है। तासों श्रीगुसांईजी कहे जो-कृष्णदास रासादिक कीर्तन एसे अद्भुत किये सो कोई दूसरे सों न होय। और श्रीआचार्यजीके सेवक होयके सेवा हू एसी करी, जो दूसरे सों न बनेगी और श्रीनाथजी को अधिकार हू एसो कियो जो दूसरे सों न होयगो। सो या प्रकार श्रीगुसांईजी आपु श्रीमुखसों कृष्णदास की सराहना किये। सो वे कृष्णदास अधिकारी श्रीआचार्यजी के एसे कृपापात्र भगवदीय हते। जिनके ऊपर श्रीगोवर्द्धनधर सदा प्रसन्न रहते। तातें इनकी वार्ता को पार नांही। तातें इनकी वार्ता अनिर्वचनीय है सो कहां तांई कहिए।

अब श्रीगुसांईजी के सेवक छीतस्वामी मथुरिया चौबे, अष्टछाप में जिनके पद गाइयत हैं, तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं—

भावप्रकाश—

ये छीतस्वामी लीला में श्रीठाकुरजी के 'सुबल' सखा, तिनको प्रागट्य हैं। सो दिवस की लीला में तो ये 'सुबल' सखा हैं, और रात्रि की लीला में 'पद्मा' हैं। सो पद्मा की श्रीचंद्रावलीजी ऊपर बहुत ही आसक्ति है, सो इहां हू छीतस्वामी को श्रीगुसांईजी पैं बहुत ही भरभाव है।

वार्ताप्रसंग १—सो वे छीतस्वामी मथुरिया चौबे हते। तिनसों सब कोउ 'छीतू' कहते। सो सब मथुरामें पाँच चौबे सिरनाम हते। सो पाँचनहू में छीतू बड़े सिरनाम हे। सो वे ब्रिन कों देखते, उनसों मसखरी करते। सो एक दिन पाँचों चौबेननें मिलिकें विचार कियो, जो-भाई! गोकुलके गुसांई टोना बहुत करत हैं। जो कोउ उनके पास जात है, सो उनके बस होय जात हैं। सो चलो, जो—उनकों देखिये, जो वे कैसे टोना करत हैं? सो वे पांचो आपुस में मित्र हते, परि वे गुंडा हते। तब उन पांचोंननें मिलिकें एक खोटो रुपया लि-

यो, और एक थोथो नारियल लियो, तामें राख भरी। और यह बिचार कियो, जो-भाई! गोकुल जायकैं श्रीगुसांईजी सों आपुन कुटिल विद्या करिये। तब उन चारोंन सों छीतू ने कही, जो-सगरेन के पहिले मैं जायके अपनी कुटिल विद्या करि आऊँ, ता पाछे तुम जइयो। तब विन चौबेननें कही, जो-आछी बात है। तब छीतू ने कुटिल विद्या को ठाठ ठठ्यो। सो वा थोथे नारियल कों गांठि में बांधिके और वह खोटौ रुपया लेके पांचो जनें मथुरा तें चले, सो नाव में बैठिके श्रीगोकुल में आये। तब छीतस्वामी कहे जो-तुम तो सब बाहिर रहो, बैठो। और मैं भीतर जात हों, सो जायके उनके टोंना टमना देखों, पाछें तुम भीतर आइयो।

सो छीतू तो थोथो नारियल लेकैं अरु खोटो रुपया लेके भीतर गये और साथके चौबे बाहिर रहे। सो उत्थापन के समें पहिले श्रीगुसांईजी पोंढिके उठे हते सो गादी ऊपर बिराजे हते, हाथ में पुस्तक हतो सो देखत हते। सो ता समें छीतस्वामी आये। सो श्रीगुसांईजी कों देखे तो श्रीगिरधारीजी होयकें बैठे हैं। तब तो ये मन में पश्चात्ताप करन लागे। (क्यों जो) मैं तो इनसों मसखरी करन आयो हो। सो ए साक्षात् पूरण पुरुषोत्तम हैं। मोकों धिक्कार है, जो—मैं ईश्वर सों कुटिल विद्या करन आयो। या भांति सों सोच करत रहे। ता पाछें छीतस्वामी वह नारियल लाये हते सो दुबकाय के श्रीगुसांईजी सों दंडवत करी। सो इतने छीतस्वामी सों श्रीगुसांईजी बोले—छीतस्वामी! तुम नीके हो? आवो, तुम तो बहोत दिनन में दीखे हो। तब छीतस्वामी ने हाथ जोड़िके बिनती कीनी, जो—महाराज! हम आपके हैं। एसे कहिके साष्टांग दंडवत् करी। और श्रीगुसांईजी सों फेरि बिनती कीनी, जो—महाराज! मोकों आपकी सरनि लीजे, अब तो आप मेरो अंगीकार करोगे। तब श्रीगुसांईजी नें छीतस्वामी सों कह्यो, जो—तुम तो चौबे हो, हमारे पूजनीक हो। तुमकों तौं सब आपहीतें सिद्ध है। तुम हमकों दंडवत् काहेकों करत हो? और ए ने कहा कहत हो?

तब छीतस्वामी फेरि हाथ जोरिके बिनती करी, जो-महाराज! मेरो अपराध क्षमा करो। और मोकों सरनि लीजे। हम नांहि जानत जो—कौन अपराधतें स्वामी भये हैं। हमारे अब भाग्य खुले हैं जो-आप के दरसन पाये। अब एसी कृपा करो, जो—स्वामित्व छूटे।

जो आपके दास कहायवे की इच्छा है। और मन की कुटिलता तो बहोत हुती, परि आपके दरसन करत ही सब कुटिलता दूरि भाजि गई। तातें अब हौं, आप के हाथ बिकानो हों, तातें अब तो आप जो चाहो सोई करो। आप तो दाता हो, प्रभु हो, दीनानाथ हो, दया सिंधु हो। या जीव की ओर प्रभुन को कहा देखनो? तातें महाराज! अब मोकों आपको ही करि जानिये, आपुनो सेवक करिये। तब छीतस्वामी को शुद्ध भाव जानिके श्रीगुसांईजी तो परम दयालु हैं, सो आप कृपा करिके कहे, जो—छीतस्वामी! आगे आवो। तब ये दंडवत करिके आगे आय बैठे। ताही समे श्री गुसांईजी ने छीतस्वामी कों नाम सुनायो। ता समें छीतस्वामी ने यह पद गायो—

'भई अब गिरधर सों पहिचान-
कपटरूप धरि छलिवे आयो, पुरुषोत्तम नहिं जान ॥ १ ॥
छोटो बड़ो कछू नहिं जान्यो, छाय रह्यो अज्ञान।
'छीतस्वामी' देखत अपनायो, श्रीविट्ठल कृपानिधान ॥ २ ॥

तब तो और वे चारों जने, जो बाहिर ठाड़े हते, वे आपुस में विचार करन लागे जो—भाई! छीतू कों तो टोना लग्यो,जो अब आपुन रहेंगे तो आपुनहू कों टोना लगेगो, तातें अब इहां ते भाजो। सो वे चारों जनें उहां तें भाजे सो मथुराजी में आये। ता पाछे श्रीगुसांईजी ने छीतस्वामी सों कह्यो जो—तुम हमारी भेट लाये हो सो लावो। तब छीतस्वामी अपने मनमें विचारे, जो—नारियल रुपया तो खोटो है, सो भेट कैसे धरों? पाछें विचारे, जो—भंडार में पर्यो रहेगो कहा मालुम होयगो, जो कहांते आयो है?

और फेरि आपु कहे श्रीमुख तें जो—छीतस्वामी! भेट को नारियल लाये हो, सो तुम काहे कों दुबकाये हो? तब तो छीत-स्वामी को मुख सुकाय गयो, और यह बिचार्यो जो-यह तो प्रभु हैं। मैं नारियल लायो, सो जानि गये तो नारियल की क्रिया क्यों न जाने होंयगे?

तब श्रीगुसांईजी सों छीतस्वामी नें बिनती करी, जो—महाराज! आप तो सब मेरो कृत्य जानत हो! सो वह बात तो मेरी अब छानी राखो। तब श्रीगुसांईजी नें कही जो -छीतस्वामी!

तुमारो जस तो जगत में विख्यात है। तुम कछू अपने मन में संदेह मति करो, तुम तो अब हमारे हो। तातें डरपत क्यों हो? वह नारियल ले आवो। तब छीतस्वामी तो सोच करत रहे। और श्रीगुसांईजीने हरिदास खवास सों आज्ञा करी जो-हरिदास! इनकी गांठिमें सों वह नारियल है सो खोलि लाऊ। सो श्रीगुसांईजी की आज्ञा मानि के हरिदासने वह नारियल और खोटो रुपैया छीतस्वामी की गांठि में ते लेकें श्रीगुसांईजी के आगे धरयो। ता पाछे श्रीगुसांईजीने हरिदास खवास सों कह्यो जो-आधो नारियल तो इन छीतस्वामी कों देउ। तब हरिदास खवासने वा नारीयल की गरी की दोय फाड़ करी, सो एक फाड़ तो छीतस्वामीकों दीनी, और एक फाड़ में तें रंचक २ सबन कों बाँट दीनी।

इतने में श्रीगुसांईजी ने छीतस्वामी कों आज्ञा दीनी जो-छीतस्वामी! तुमारे साथ के जो चारों जने हैं तिनकों यामें तें थोरी थोरी बांटि दीजो। तब छीतस्वामीनें दंडवत् करिके वह गठरी में बांधि राखी। सो ऐसी कृपा श्री गुसाँई जी की देखिके छीतस्वामी मन में विचारे-जो-मैं-संसार-समुद्र में बह्यो जात हतो, सो मोकों बाँह पकरिके काढ़े। और मेरे मन में खोटे नारियल को और खोटे रुपया को पश्चात्ताप हतो सोउ ताप मेरो दूरि करयो। जो मो पर तो श्रीगुसांईजीने बड़ो कृपा करी। पाछे छीतस्वामीने प्रसन्न होयके एक नयो पद ता समे बनायो। सो पद—

'हौं चरणातपत्र की छैयां।
कृपासिंधु श्रीवल्लभनंदन बह्यो जात राख्यो गहि बहियां॥
नव नख शरद् चन्द्रमा मंडल त्रिविध ताप मेटत छिन महियां।
'छीतस्वामी' गिरिधरन श्रीविट्ठल सुजस बखान सकत श्रुति नहियां॥'

यह कीर्तन वाही समे श्रीगुसांईजी के आगे छीतस्वामीने गायो, सो सुनिके श्रीगुसांईजी बहोत प्रसन्न भये।

तब छीतस्वामी ने दंडवत् करिके कही जो-महाराज! आप तो प्रभु हो। आप को श्रुति जो वेद है सोउ पार पावत नांही, तो और की कहा सामर्थ्य है? जो आपको जस गान करे।

ता पाछे संध्यार्ति को समय भयो तब श्रीगुसांईजी छीतस्वामी सों कहे जो-जाओ दरसन करो। तब छीतस्वामी मंदिर में जायके तिवारी में तें श्रीनवनीतप्रियजी के दरसन किये। तब देखे तो मंदिर

में श्रीगुसांईसी ठाड़े हैं। तब छीतस्वामी मनमें कहे,जो-श्रीगुसांईजी कों तो मैं बेठक में छोड़ि आयो हतो और ये मंदिर में कहांते ठाड़े हैं बहुरि मन में कहे जो-भीतर और राह होयगी, ता राह पाँव धारे होयगे. ता पाछे सेन आरतीके दरसन करिके छीतस्वामी वाहर आये, तहां देखे—तो गुसांई जी गादी ऊपर विराजे हैं। तब तो छीतस्वामी कों बड़ो आश्चर्य भयो, परि ठीक न परी। ता पाछे सेन आरती भई। तब छीतस्वामी कों महाप्रसाद लिवाये। पाछे श्रीगुसांई जी ने आज्ञा करी जो—सवारे ही तुम श्रीगिरिराज जायके श्रीगोवर्द्धननाथ जी के दरसन करि आवो।

तब छीतस्वामी रात में सोय रहे। प्रातः काल होत ही सातों स्वरूपन के मंगला के दरसन करिकें श्रीगुसांईजी के दरसन किये, पाछे श्रीयमुना उतरि के सूधे ही श्रीगिरिराज कों चले, सो राजभोग के समय जाय पहोंचे,श्रीगोवर्द्धननाथ जी के राजभोग आरतीके दरसन किये। तब देखे—तो उहां श्रीगुसांईजी ठाड़े हैं, सो श्रीगोवर्द्धननाथ जी के पास ही देखे। तब छीतस्वामी मन में विचारे जो—श्री गुसांईजी कब पधारे हैं?

ता पाछे छीतस्वामी श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन करि के नीचे उतरे। तब उहां लोगन तें पूछे जो-श्रीगुसांईजी इहां कब पधारे हैं? तब उन सेवकनने कही जो-श्रीगुसांईजी तो श्री गोकुल में हैं इहां तो नांही पधारे हैं। तब छीतस्वामी मन में विचारे जो-मैं तो श्रीगुसांई जी कों श्रीगोवर्द्धननाथजी के पास ही देखे हैं, और काल्हि हू श्री-नवनीतप्रियजी के पास ही ठाड़े देखे हे। और बेठक हू में बिराजे देखे सो सब ठौर येही दरसन देत हैं, तातें ये ईश्वर हैं।

यह विचारिके छीतस्वामी श्रीगोकुल की सुरति बांधि चले, सो उत्थापन भोग के समय श्रीगोकुल आय पहुँचे। सो श्रीगुसांईजी अपनी बेठक में गादी ऊपर बिराजे हे तब छीतस्वामीने आयके दंडवत कीनी। तब श्रीगुसांईजीने पूछी जो-छीतस्वामी! तुम श्रीगोवर्द्धननाथजीके दरसन करि आये? तब छीतस्वामीने कही जो-महाराज! श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन किये, और उनके पास ठाड़े आपहू के दरसन किये। तब श्रीगुसांईजी मुसिकाये।

तब छीतस्वामीने अपने मनमें विचारि यह निश्चय कियो जो-

श्रीगोवर्द्धननाथ जीको और श्रीगुसांईजी को स्वरूप एक है। यह जानि के ताही समें छीतस्वामीने यह पद करिके गायो। सो पद-राग सारंग।

'जे वसुदेव किये पूरन तप सो फल फलित श्रीवल्लभ देव।
जे गोपाल हुते गोकुल में सोई अब आनि बसे निज गेह ॥
जे वे गोपबधू ब्रज में सो अब वेद ऋचा भई येह।
'छीतस्वामी' गिरिधरन श्रीबिट्ठल तेई एई एई तेई कछु न संदेह ॥'

यह कीर्तन सुनिके श्रीगुसांईजी बहोत ही प्रसन्न भये।

श्रीगुसांईजी ने सेन आरती उपरांत वाहू दिन छीतस्वामी कों अपने यहां महाप्रसाद लिवायो।

ता पाछे तीसरे दिन छीतस्वामी देहकृत्य करि श्रीजमुनाजी में स्नान करिके अपरसही में आय श्रीगुसांईजी के आगे हाथ जोरि के ठाड़े भये। और श्रीगुसांईजी सों बिनती करी, जो-महाराज! मोकों कृपा करिके समर्पन करावो।

तब श्रीगुसांईजीने श्रीनवनीतप्रियजी के आगे समर्पन करवायो। ता पाछे छीतस्वामीने विनती कीनी, जो-महाराज! आज्ञा होय तो मैं अपने घर जाऊं। तब श्रीगुसांईजी आपु आज्ञा किये जो-राजभोग आरती के दरसन करिके पाछे तुमकों बिदा करेंगे।

ता पाछे राजभोग आरती भई। पाछे श्रीगुसांईजी अपनी वेठक में अपरस ही में बिराजे, तब छीतस्वामीने आयके दंडवत करी। पाछे बिनती करी, जो-महाराज! आज्ञा होय तो मैं अपने घर जाऊं। तब श्रीगुसांईजी कहे जो-महाप्रसाद लेके अपने घर जइयो।

ता पाछें श्रीगुसांईजी बालकन सहित आपु भोजन कों पधारे। सो छीतस्वामी कों अपने श्रीहस्त सों पातर धरी। ता पाछे आपु भोजन कों पधारे। पाछे सब भोजन करिके आचमन लेके श्रीगुसांई जी अपनी वेठक में बिराजे। तब छीतस्वामी हू आचमन करिके श्रीगुसांईजी के पास आये। तब श्रीगुसांईजीने छीतस्वामी कों महाप्रसादी बीड़ा दिये। और कह्यो, जो-छीतस्वामी अपने घर जाओ।

तब श्रीगुसांईजी कों छीतस्वामी दंडवत करके चले, सो मथुरा आये। तब वे चारों कुटिल हते, सो छीतस्वामी सों मिले। तब उन (ने) छीतस्वामी सों पूछी, जो-तुमने उहां कहा कियो? और हम तो सब ही जान्यो, जो-तुमकों टोना लग्यो। तब छीतस्वामीनें कह्यो जो

राजा बीरबल से वार्तालाप में रुष्ट होकर जाते हुए—

छीतस्वामी

जन्म सं० १५७२] [देहावसान सं० १६४२

अब तो मैं श्रीगुसांईजी को सेवक भयो, तातें अबतो मैं तुमारे काम तें गयो। यह बात छीतस्वामी की उन चारों जनेन ने सुनी। ता पाछे वे चुप होय रहे।

तातें श्रीगुसांईजी को एसो प्रताप है। सो वे श्रीगुसांईजी की कृपा तें बड़े कवीश्वर भये,सो बहुत कीर्तन किये। सो वे छीतस्वामी एसे कृपापात्र भगवदीय भये।

वार्ता-प्रसंग २—और एक समें छीतस्वामी बीरबल के घर गये। छीतस्वामी बीरबल के प्रोहित हते। सो अपनी बरसोंड लेवे कों गये हते। सो बीरबल ने अपने घर में रहवे को स्थल दियो,सो छीत-स्वामी तहांरहे। सो पिछली घड़ी एक रात्रि रही, तब छीतस्वामी उठिके प्रभुन को नाम लेके एक पद गायो। सो पद—

राग देवगंधार—जै जै श्री वल्लभराजकुमार।

परमानंद कपट खंडन करि सकल वेद उद्धार० ॥ × ×

छीतस्वामी गिरिधरन श्रीविट्ठल प्रगट कृष्ण अवतार ॥

यह छीतस्वामी ने गायो, सो बीरबल ने सुन्यो। सो बीरबल कों आछी न लगी। (और) मनमें कह्यो जो देखो इन (ने) कहा बरनन कियो है? परि बीरबल ने छीतस्वामी सों कछू कह्यो नांही। जो यह बात मनमें धरि राखी।

ता पाछे छीतस्वामी उठि देहकृत्य करि श्रीयमुना जी में स्नान करि, श्रीठाकुरजी कों भोग समर्प्यो, ता पाछे भोगसराय के आप प्रसाद लिये।

पाछे बेठे बेठे छीतस्वामी कीर्तन गावत हते-'जे वसुदेव किये पूरण तप०'। तामें छेलीकड़ी में कह्यो जो—छीतस्वामी गिरिधरन श्रीविट्ठल येई तेई तेई येई कछु न संदेह'।

यह पद छीतस्वाती ने गायो सो सुनि के बीरबल कों बहोत बुरी लगी। तब तो बीरबल ने छीतस्वामी सों कह्यो जो—छीतस्वामी! तुम (ने) अब तो यह पद गाये 'येई तेई तेई येई कुछ न संदेह' और सवारे गाये जो 'प्रगट कृष्ण अवतार' सो यह तुमने गायो सो देशाधिपति म्लेच्छ है,जो—यह सुन पावेगो तो तुम कहा जुवाब दोगे?

तब बीरबलसों छीतस्वामी ने कही जो—मोसों देशाधिपति पूछेगो तब मैं जुवाब दऊंगो। परि अब तो मेरे भाये तुई म्लेच्छ

है। (क्यों) जो—तेरे मनमें यह दुर्बुद्धि उपजी। तातें मैं तो आज तें तेरो मुंह न देखूंगो। एसे बीरबल को तिरस्कार करिके उहां तें छीतस्वामी श्रीगोकुल में श्रीगुसांई जी के पास आये।

सो यह बात देसाधिपति सों जाय के हलकारे ने कही जो—साहिब! बीरबल का प्रोहित मथुरा से आयो हतो, सो किसी बात के ऊपर बीरबल से रूठ कर गयो है।

एसे सब समाचर विस्तार सों देसाधिपति के आगे हलकारे ने कहे। ता पाछे जब बीरबल दरबार में आयो तब देसाधिपति ने कह्यो जो—"बीरबल! तेरा प्रोहित तुझ से क्यों रूठ गया है।" तब बीरबल ने देसाधिपति सों कही जो—साहिब! ब्राह्मण एसे ही होते हैं। जो सहज की बात ऊपर रूठ जाते हैं।

तब देशाधिपति ने बीरबल सों कह्यो जो—बात तो कहो क्या थी? तब बीरबल कही जो—"साहिब उन्होंने दो पद दीक्षित जी के गाये थे। सो मैंने इतना कहा कि—जब देशाधिपति सुन पावेंगे तब क्या जबाब दोगे? इस पर वे रूठ गये।"

तब देशाधिपति ने बीरबल सों कही जो—बीरबल! तेरे प्रोहित ने झूठ क्या कहा? तुझे उस बात की सुधी आती है, जो मैं नावड़े में बैठा जाता था, सो नावड़ा गोकुल के नीचे जा निकला, उस समय दीक्षित जी वहाँ घाट के ऊपर बैठे थे। तब दीक्षित जी ने मुझे आसीरबाद दिया। मेरे पास मणि थी जिससे पांच तोला सोना नित्य होता था, वह मणि मैंने दीक्षित जी को दी। सो दीक्षित जी ने वह मणि हाथ में ले कर मुझ से पूछा जो—तुमने मणि हमको दी? एसे तीन बार पूछा, तब मैंने तीन बार कहा, जो—मणि दी। तब दीक्षित जी ने वह मणि लेकर जमना में डाल दी। तब मैं फिर बैठा (और कहा) जो—मेरी मणि मुझे पीछे दो। तब दीक्षित जी ने यमुना में हाथ डाल के दोनों हाथ की अंजलि भर कर मणि लाकर मुझे दी। और कहा जो—इन में तुम्हारी मणि होय सो काढ़ लो। जब मैंने न ली, तब फिर मुझे तीन बेर पूछा जो—अब तो फेर न लोगे? तब मैंने तीन बार नांही की। तब तो दीक्षित जी ने अंजलि भरी की भरी मणि फिर यमुना में डाल दी। जो बीरबल! यह बात तो तू भूल गया। सो यह बात ईश्वर की कृपा बिना नहीं होती।

इससे तुमको ऐसा संदेह न करना चाहिये। जो तुमने अपने प्रोहित से एसा कहा, सो श्रीजिन जी तो साक्षात् ईश्वर हैं। इसमें कुछ संदेह नहीं।

या भांति सों देसाधिपति ने बीरबल सों कह्यो, सो सुन के बीरबल चुप होय रह्यो, सो—कहा उत्तर देय ?

भावप्रकाश—तातें गुसांई जी को एसो प्रताप है। जो देसाधिपति म्लेच्छ है श्रीहरिराय जी कृत सोऊ जानत है, जो—श्री गुसांई जी तो साक्षात् ईश्वर हैं। और बीरबल तो बहिर्मुख है। तातें श्री गुसांई जी के स्वरूप को ज्ञान नांही है। श्री गुसांई जी कबहुँ कबहुँ कहते जो—बीरबल तो बहिर्मुख है।

सो वे छीतस्वामी गुसांई जी के एसे कृपापात्र भगवदीय हते।

वार्ता प्रसंग ३—और जब बीरबल को तिरस्कार करि के छीतस्वामी श्री गोकुल आये, ता दिन श्रीगुसांई जी, श्री गिरधरजी श्रीनाथजी द्वारा हते। सो जब छीतस्वामी आये सो बात श्री गुसांई जी ने सुनी, जो—छीतस्वामी या प्रकार अपनी वृत्ति छोड़ि के श्री गोकुल आये हैं, बैठे है। और यह हू बात श्रीगुसांई जी ने पहले ही सुनी (हती) जो—छीतस्वामी बीरबल के पास बरसोंड़ लेवे कों गये हते, सो अब या तरह सों बीरबल को तिरस्कार करि के छोड़ि आये हैं।

सो तहां श्रीनाथजीद्वार में श्रीगोवर्द्धननाथजी के तथा श्रीगुसांई के दरशन कों दूर के वैष्णव जो आये हे, तिनसों श्रीगुसांई ने कह्यो जो तुमारे पास में छीतस्वामी कों पठावत हों, सो तुम इनकी भली भांति सेवा कीजो।

ता पाछे वैष्णव तो गुसांई जी सों बिदा होय के अपने देस कों चले।

ता पाछे बीरबल सों रिसाय के छीतस्वामी श्रीगोकुल आये हते, सो उहां श्रीगुसांईजी के दरसन श्रीगोकुल में न पाये, तब दोय चार दिन तांई रहि के फेरि छीतस्वामी नरहटी में आये, श्रीगोवर्द्धननाथ जी के दरशन किये। सो अपने मन में बहोत आनंद पाये।

ता पाछे श्रीगुसांईजी श्रीगोवर्द्धननाथजी को अनोसर करवाय के पर्वत तें नीचे उतरे, सो अपनी बैठक में विराजे। तब श्रीगुसांई

जी की आगे आयके छीतस्वामी ने सब समाचार विस्तार पूर्वक बीरबल के कहे। तब श्रीगुसांई जी छीतस्वामी के वचन सुनि के बहोत प्रसन्न भये।

ता पाछे श्रीगुसांई जी ने लाहोर के जो वैष्णव आये हते, तिन कों एक पत्र लिख्यो अपने श्रीहस्त सों, 'जो—ए छीतस्वामी (को) हमने तुमारे पास पठाये हैं सो इनकी टहल तुम आछी भांति सों कीजो'।

सो वह पत्र श्रीगुसांई जी ने छीतस्वामी कों दियो, और कह्यो जो—छीतस्वामी ! तुम लाहोर जावो। तब छीतस्वामी ने कही जो महाराज ! मैं लाहोर जाय के कहा करूंगा ? तब श्रीगुसांई जी ने छीतस्वामी सों कह्यो, जो मैंने उन सब वैष्णवन सों कही है, सो वैष्णव तुमारी बिदा आछी तरह सों करेंगे।

तब श्रीगुसांई जो के वचन सुनि के छीतस्वामी ने यह पद गायो। सो पद—

राग नट—हम तो श्री विट्ठलनाथ उपासी।
सदा सेवों श्रीवल्लभ-नंदन कहा करों जाय कासी॥
छांडि नाथ जो और रुचि उपजत सो कहियत असुरासी।
छीतस्वामी गिरिधरन श्रीविट्ठल बानी निगम प्रकासी॥

जो यह पद छीतस्वामी ने गायो। सो सुनि के श्रीगुसांईजी (ने) छीतस्वामी के हृदय की जानी जो-एता कहूँ जानहार नांही हैं।

तब छीतस्वामी ने श्रीगुसांईजी सों कह्यो जो—महाराज ! मैं वैष्णव भयो सो कछु वैष्णव के पास तें भीख मांगन कों नांही भयो। और बीरबल पें तो मेरी बरसोंड हती सो मैं वाको मुंह तोड़ि के लेतो। परि महाराज ! वाने तो म्लेच्छ बुद्धि को जुबाव दियो, तातें मैं यहाँ उठि आयो। जो महाराज ! मेरे तो राज के चरण कमल छांड़ि के कछू काम नांही, और कहूं न जाऊंगो। और अब कहा एसे कर्म करुंगो, जो वैष्णव होय के कहा भीख मागूंगो ?

सो छीतस्वामी के बचन सुनि के श्रीगुसांई जी बहोत ही प्रसन्न भये, और कह्यो जो—वैष्णव को यही धर्म है,जो—एसे ही चाहिये।

ता पाछें श्रीगुसांईजी ने वह पत्र लाहोर के वैष्णवन कों लिख पठायो जो—छीतस्वामी तो इहां ते आय सकत नांही है, तासों यह ब्राह्मण गरीब है। जो तुमतें याकी टहल बनि आवे तो इहां

ही मनुष्य के हाथ हुंडी कराय पठाय दीजो। सो वह पत्र श्रीगुसांई जी को एक मनुष्य लाहोर ले जायके इन वैष्णवन कों दियो। तब उन वैष्णवन ने वह पत्र बांचि के रूपिया १००) की हुंडी करायके पठाई। और उन वैष्णवननें श्रीगुसांई जी को यह पत्र बीनती को लिख्यो, जो—महाराज! इतनी हुंडी तो हम वर्ष पर्यंत पठावेंगे, आपकी हुंडी के साथ इनकी हुंडी पठावेंगे सदा।

सो पत्र श्रीगुसांईजी के पास आयो, तब बांचि के श्रीगुसांईजी नें वा पत्र के समाचार सब छीतस्वामी सों कहे। तब छीतस्वामी अपने मन में बहोत प्रसन्न भये, और श्रीगुसांई जी हू उन वैष्णवन पर बहोत प्रसन्न भये।

भावप्रकाश—तातें छीतस्वामी उन बीरबल को त्याग करि के श्री गुसांई जी को जस बढ़ायो। तो आपुने हू बीरबल की बरसोंड़ जितनो छीतस्वामी को कराय दीनो। तातें वैष्णवन कों तो दृढ़ विश्वास राखनो श्री गोवर्द्धननाथ जी की ऊपर। जो विश्वास राखे तो प्रभु वाकी क्यों न खबर राखें? तातें वैष्णव कों तो एसी अनन्यता राखी चाहिए। और छीतस्वामी जो गुसांई जी की आज्ञा मानि के लाहोर जाते, तो एक ही बार द्रव्य लावते।। परि आगे कहा करते? सो उन छीतस्वामी ने जो विश्वास राख्यो, तो जनम भरि के द्रव्य और ठौर जाचनो न पड्यो।

तातें या जीव कों एसो एक प्रभुन को आश्रय राखनो। एक आश्रय श्रीवल्लभाधीश को करनो जातें सब फल की प्राप्ति होय—

पाछे वे लाहोर के वैष्णव छीतस्वामी कों प्रति वर्ष श्रीगुसांई जी की हुंडी के साथ न्यारी हुंडी पठावते, सो वे वैष्णव हू श्री गुसांई जी के एसे कृपापात्र भगवदीय भये। सो उनकी वार्ता कहां तांई लिखिये।

अथ श्री आचार्यजी महाप्रभुन के सेवक गोविंदस्वामी सनोढ़िया ब्राह्मण, महावन में रहते, अष्टछाप में जिनके पद गाइयत हैं तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं—

★

भावप्रकाश—

ये गोविंदस्वामी लीला में श्रीठाकुरजी के 'श्रीदामा सखा तिनकों

प्राकट्य हैं। सो दिवस की लीला में तो ये श्रीदामा सखा हैं,और रात्रि की लीला में ये भामा सखी है,श्रीचंद्रावली की। तातें यहां हू ये श्रीगुसांई के स्वरूप में आसक्त है।

वार्ता प्रसंग १ – सो वे प्रथम आंतरी गाम में रहते। तहां वे स्वामी कहावते, सो वे सेवन करते। परि गोविंदस्वामी परम भगवदीय हते। सो व गोविन्दस्वामी आंतरी में ते व्रज आये। तव महावन में रहे. जो—यह व्रजधाम है। यहां श्रीभगवान के चरणविंद प्राप्ति कैसे न होइगी ?

सो गोविंदस्वामी कवीश्वर हते, सो आप पद करते। जो कोई इनके पद सीखि के गुसांई जी के आगे गावतो, ताकों श्रीगुसांई जी प्रसाद दिवावते, और बहोत प्रसन्न होते। सो वे गावनहारे गोविंदस्वामी के आगे जाय के कहते, जो—तुमारे किये पद हम श्रीगोकुल के गुसांई जी के आगे गावत हैं, सो वे बहुत प्रसन्न होत हैं, और हमकों प्रसाद दिवावत हैं। तातें तुम अपने किये पद हमकों और सिखावो।

सो यह सुनि के गोविन्दस्वामी अपने मन में कहते जो—जो कछु है, सो श्रीगोकुल है, और श्री गोकुल के गुसांई जी है। परि मिलनो बनत नांहिं।

सो एसे करत कितनेक दिन भये तब एक समे कोऊ एक श्री गुसांई जी को सेवक कछु कार्यार्थ श्री वृन्दावन में जाय निकस्यो। सो भगवद्इच्छा सों गोविन्दस्वामी को मिलाप भयो। गोविंदस्वामी और वह वैष्णव एकांत ठौर में बैठे हते, तहां कोई वार्ता के प्रसंग में गोविंदस्वामी ने कह्यो जो—श्रीठाकुरजी की साक्षात् लीला कैसे जानि परे ?

तब वा वैष्णव नें कह्यो जो—पाछे कहूंगो। तब गोविंदस्वामी ने वा वैष्णवसों कह्यो जो—मोकों बहुत दिनन तै या बात की आतुरता है, और तुम कहत हो जो—काल कहूंगो। जो याहूतें फेर एकांत कहां मिलेगी। तातें तेरे ऊपर कृपा करि के अब ही कहो।

तब वा वैष्णवनें गोविंदस्वामी की बहुत आतुरता देखि के इनतें कह्यो जो—आज के समे तो श्रीठाकुरजी कों श्री गुसांईजी श्री विट्ठलनाथजी नें वस करि राखे हैं। तातें श्रीठाकुरजी के चरणारविंद की प्रीति पाईये तो इनही तें पाइये,और को आश्रय करनो वृथा है।

सो यह बात सुनिके गोविंदस्वामीकों अत्यंत आतुरता भई, और अति उत्साह भयो। तब तो गोविंदस्वामी ने उन वैष्णव सों कह्यो जो—तुम मेरे साथ चलो। तब रात्रि तो उहांई सोय रहे। पाछे प्रातःकाल भयो। तब तहांतें दोऊ जने चले सो श्रीगोकुल आये। ता समें श्रीगुसांईजी श्रीठाकुरजी को राजभोग धरि के श्रीयमुनाजी पे संध्यावदंन करत हे। सो ताही समय ये आय पहुँचे।

तब वा वैष्णवन कही जो—श्रीगुसांई जी यही हैं। तब देखि के गोविंदस्वामी के मन में आई जो—ये कोई बड़े कर्मष्ट हैं। कर्म-कांड करत हैं, इनकों श्रीठाकुरजी क्यों कर मिलत होंयगे। एसे चित्त में सोच विचार करन लागें।

इतने में श्रीगुसांजी संध्यावंदन तर्पण करि चुके। तब श्रीगुसांई जी नें कह्यो—जो गोविंददास! कब आये? तब इन (ने) कही जो प्रभु! अब ही आयो हों।

ता पाछे श्रीगुसांईजी उहांतें मंदिर मे पधारे, सो साथ गोविंद-स्वामी हू चले। पर गोविंदस्वामी अपने मन में विचार करत हुते, जो इन (ने) मोकों कबहू देख्यो नांही, जो इन (नें) मोकों केसें पहिचान्यो। तातें कछुक कारण दीसत है।

ता पाछे श्रीगुसांईजी तो जाइके मन्दिर में भोग सराये। ता पाछे दरशन के किवाड खुले। तब गोविंदस्वामी ने राजभोग आरती के दरशन किये। सो साक्षात् वाललीला रसमय रसात्मक स्वरूप को दरसन कराये। ता समें श्रीगुसांईजी ने गोविंददास को यह दान किये।

ता पाछें श्रीगुसांई जी वाहिर आये। तब गोविंद स्वामी ने श्रीगुसांईजी सों बिनती कीनी, जो—महाराज! आप तो कपट रूप दिखावत हो। और आप के यहां तो साक्षात् प्रभु बिराजत हैं। (और) वाहिर तो वेदोक्त कर्म करत हो।

तब श्रीगुसांईजी ने गोविंदस्वामी सों कह्यो, जो—भक्ति-मार्ग है, सो तो फूलरूपी है, और कर्ममार्ग कांटारूपी है।

भावप्रकाश—सो फूल तो रक्षा विना फूले न रहे। तातें वेदोक्त कर्ममार्ग है सो भक्तिरूपी फूलन को काँटने की बाड़ है। तातें कर्ममार्ग की बाड़ विना भक्तिरूपी फूल को जतन न होय, तब जतन विना फूल

हु न रहें। तातें यह वस्तु है सो गोप्य है। तातें प्रकट प्रमाण त्यौंही है।

तब ये वचन सुनिके गोविंदस्वामी बहोत प्रसन्न भये। तब गोविंदस्वामी ने श्रीगुसांई जी सों फेरि बिनती कीनी जो--महाराज! कृपा करिये।

तब श्रीगुसांई जी ने कह्यो जो—तू स्नान करि आव। तब गोविंदस्वामी तत्काल स्नान करिके अपरस ही में आये। तब श्रीगुसांई जी ने इन ऊपर कृपा करि के नाम सुनायो, ता पाछे समर्पन करवायो। पाछें अनोसर कराय। श्रीगुसांई जी तो भोजन कों पधारे। तब गोविन्दस्वामी कोहू महाप्रसाद की पातर श्री गुसांजी ने अपने श्रीहस्तसों धरी। पाछे प्रसाद लेके गोविंदस्वामी ने आचमन करके श्रीगुसांई जी कों दंडवत करी।

ता पाछे गोविंदस्वामी श्रीगोकुल ही में आय रहे। सो वे गोविंदस्वामी पे श्रीगुसांई जी सदा प्रसन्न रहते। इन ऊपर बहुत कृपा करते। सो गोविंदस्वामी एसे कृपापात्र भगवदीय हते।

वार्ता प्रसंग २—सो पहिले गोविन्दस्वामी आंतरी में सेवक करते.सो,उहां गोविंदस्वामी कहावते। आंतरी में इनके सेवक बहोत हते। एक समे आंतरी के लोग श्रीगोकुल में आये। सो गोविंद-स्वामी जसोदा घाट के ऊपर बैठे हते। सो उन सुनी ही जो—गोविंदस्वामी श्रीगोकुल में रहे हैं। सो सुनि के नाम पायवे के लिए आये हे। तब उन लोगन ने पूछी जो—गोविंदस्वामी कहां रहत है?

तब वे लोग पूछत पूछत गोविंदस्वामी के घर आये, तब गोविंद-स्वामी की बहिन कान्हबाई ने कही जो—गोविंददास तो स्नान करन कों गये हैं। तब वे लोग जसोदाघाट पे आये, गोविंददास सों पूछी जो--गोविंदस्वामी कहां है? तब गोविंददास ने कही जो - वे तो मरे बहोत दिन भये। तब वे लोग फेर घर आये। इतने में गोविंददास हू घर आये। तब लोगनने उनकों पहिचाने, जो इन तो हम सों एसे कही जो-बे ता मरे। सो एतो आप ही हैं।

तब उन लोगन सों कही जो—स्वामी! तुम हमसों यह क्यों कहे जो—वे तो मरे। तब उन गोविंददास ने कही जो—मरे नांही तो अब मरेंगे।

भावप्रकाश—जो या भांति सों गोविंददासजी ने कहीं, ताको कारन कहा ? (क्यों) जो भगवदीय को मिथ्या न बोलनो। ताको हेतु यह जो—उन लोगन ने तो इनसों पूंछयो सो—गोविंदस्वामी कहि कें पूछयो। तासों इन (ने) कही जो—वे स्वामी तो मरे (क्यों) जो अब तो हम 'दास' हैं।

पाछे गोविन्ददासने कही जो—तुम अब श्रीगुसांईजी के पास नाम पावो। तब उनने कही जो—हमकों श्रीगुसांईजी को पास ले चलो तब उन लोगन कों गोविंददास अपने साथ ले जायके श्रीगुसांईजी की पास नाम दिवायो। तब वे लोग दिन चार श्रीगोकुल रहिके पाछे आंतरी कों गये। सो वे गोविंददासजी श्रीगुसांईजी के एसे कृपापात्र भगवदीय भये।

वार्ता-प्रसंग—२ और गोविंददास श्रीजमुनाजी में कबहूं न्हाते नांहीं, पांव हू श्रीयमुनाजी में बुड़ावते नांही, कूप के जलसों स्नान करते, श्रीजमुनाजी की रेती में लोटते, अंजुली भरि जल लेते सो पी जाते, और आचमन हू न करते। जो—उनको श्री-जमुनाजी पर एसो भाव हतो। श्रीजमुनाजी कों साक्षात् स्वामिनी को स्वरूप जानते। और यह कहते जो—यह अप्रयोजक सरीर यामें मैं कैसे करि डारों। एसे श्रीयमुनाजी को स्वरूप अगाध भाव संयुक्त है, ताको विचार करते। सो वे गोविंददास एसे भावसंपन्न हते।

सो एक दिन श्रीबालकृष्णजी और श्रीगोकुलनाथजी ए दोऊ भाई श्रीयमुनाजी में स्नान करत हते। ता समे श्रीजमनाजी के तीर गोविंददास ठाढ़े हते। तब श्रीबालकृष्णजी और श्रीगोकुल-नाथजी दोऊ भाई आपुस में विचार करन लागे, जो—आज तो गोविंददास कों जमुना में स्नान कराइये। सो इन दोऊ भाई गोविंददास कों पकरिके श्रीजमुनाजी में ले जान लागे। तब गोविंददास ने कह्यो जो—महाराज ! मोकों श्रीयमुनाजी में मति डारो, मोकों श्रीयमुनाजी में डारोगे तो मेरो दोष नांही है, आप जानो। ये श्रीयमुनाजी हैं, साक्षात् श्रीस्वामिनीजी हैं। ये लीलात्मक स्वरूप है। तातें यह मेरो अप्रयोजक सरीर मैं यामें कैसें डारों।

सो गोविंददास ने जब ऐसें कह्यो, तब इनने उन कों छोड़ि देये। तब इन दोउ भाईन कों श्रीजमुनाजी के लीलात्मक स्वरूप को ता समय दरसन भयो। तब गोविंददास ने कह्यो जो-महाराज! इहां तो उत्तम ते उत्तम सामग्री होय सो समर्पिये। सो निज स्वरूप जानिके कह्यो। सो वे गोविंददास श्रीगुसांईजी के ऐसे कृपापात्र भगवदीय हते।

वार्ताप्रसंग ४—और एक समय रात्रि कों श्रीभागवत दसम-स्कंध के अष्टादस अध्याय वेणुगीत के अंत के श्लोक को व्याख्यान श्रीगुसांईजी करत हते। सो श्लोक—

गा गोपकैरनुवनं नयतोरुदार-
वेणुस्वनैः कलपदैस्तनुभृत्सु सख्यः।
अस्पन्दनं गतिमतां पुलकस्तरूणां
निर्योगपाशकृतलक्षणयो र्विचित्रम्॥

सो या श्लोक को व्याख्यान गोविंददास के आगे श्रीगुसांई जी करत हते। सो करत २ अर्द्धरात्रि गई। ता पाछें श्रीगुसांईजी तो आप पोंढ़िवे कों उठे। तब गोविंददास कों आज्ञा दीनी जो—अब तुमहू जायके सोय रहो।

तब गोविंददास श्रीगुसांईजी को दंडवत करिके उठि चले। सो अपनी बैठक में श्रीबालकृष्णजी और श्रीगोकुलनाथजी और श्रीगोविंदरायजी बेठे हते, सो आपुस में खेलत हसत हते। और हू वैष्णव पास बेठे हते, सो तहां गोविंददास हू आये।

तब गोविंददास तें श्रीगोकुलनाथजी ने पूछी जो—कहो गोविंददास! या बिरियां कहां ते आये हो? तब गोविंददास ने कही जो-महाराज! श्रीगुसांईजी के पास हो, तहां ते आयो हूं। तब गोविंददास तें श्रीगोकुलनाथजी ने कही, उहां कहा प्रसंग होत हतो? तब गोविंददास ने कह्यो जो-महाराज! वेणुगीत के अंत के श्लोक को व्याख्यान भयो। तब श्रीगोकुलनाथजी ने गोविंददास तें कह्यो जो-जो-कहा व्याख्यान भयो हो? तब गोविंददास ने कह्यो जो महाराज! अपनी बात आपु कहे, ताको कहा कहिये, ताकी

पटतर कहा दीजिये ? तब गोकुलनाथजी ने कह्यो जो-श्रीगुसांईजी को स्वरूप गोविंददास ने नीके जान्यो है। ता पाछे गोविंददास तो अपने घर कों आये। सो वे गोविंददास एसे भगवदीय भये।

वार्ताप्रसंग ४--और एक दिवस श्रीनाथजी और गोविंददास दोउ अप्सराकुंड के ऊपर साथ ही खेलत हते। सो तहां ते गोविंददास तो श्रीगिरिराज परवत पर आये, तब उहां देखे तो राजभोग आरती होय चुकी है। तब गोविंददास ने कही जो-इहां राजभोग कोन ने आरोग्यो है। श्रीनाथजी तो अबही आवत हैं एसें कह्यो। तब श्रीगुसांईजी ने फेरि सामग्री कराइ, और फेर राजभोग धर्यो। फेर आरती भई पाछें अनोसर भयो।

भावप्रकाश--यहां यह संदेह होय जो—श्रीनाथजी तहां हते नांही तो सेवा कोन की भई ? तहां कहत हैं जो—श्रीआचार्यजी के पुष्टिमार्ग में श्रीठाकुरजी मर्यादा पुष्टि रीति सों बिराजत हैं। (तोभी) सगरे (सब स्थल में) पुष्टि पुरुषोत्तम के भाव सों सगरी वस्तु वस्त्र आभूषन को अंगीकार करत हैं। और दर्शन देवे में मर्यादा रीति सों विराजत हैं, बोलत नांहि। सो भगवत्स्वरूप में दोय प्रकार को स्वरूप है। एक भक्तोद्धारक, भक्तोद्धारक स्वरूप के विषे सबकों दर्शन नांही। जो जहां तांई वैष्णव को प्रेम न होय तहां तांई मर्यादा-पुष्टि-रीति सों अंगीकार (और) दर्शन है। भक्तोद्धारक स्वरूप, सर्वोद्धारक मर्यादा पुष्टिरूप सों सिंहासन पे विराजिके सब को दर्शन देत हैं सो स्वरूप में ते बाहर प्रकट होय। सो जहां तरुन, वृद्ध, गाय आदि, जैसो कार्य करनो होय ता प्रकार को रूप करि उह भक्त सों बोलें, अनुभव करावें। तथा मर्यादा--पुष्टि स्वरूप है, उनहीं के मुख सों बोलें, अनुभव जतावें।

सो यहाँ भक्तोद्धारक स्वरूप को अनुभव गोविंदस्वामी कों है। और श्रीगुसांईजी ने जो राजभोग धर्यो सो श्रीआचार्यजी की मर्यादा अनुसार श्रीनाथजी नेसर्वोद्धारक रूप सों आरोग्यो। तोहू गोविंदस्वामी जैसे भक्त के विशेष अनुभव सों श्रीगुसांई जी ने फेरि राजभोग धर्यो एसे जाननो।

प्रत्यक्ष अथवा वैष्णव द्वारा विशेष आज्ञा होवे तो भगवत्कृपा भई जाननी। सो याते श्रीगुसांईजी हू भगवद् इच्छा समझ करि फेरि राजभोग धर्‍यो।

और गोविंदस्वामी, कुंभनदासजी और गोपीनाथदास ग्वाल ये तीनों जने श्रीनाथजी के एकांत के सखा हैं। श्रीगुसांईजी इनको सब बात दिखाई ही। सो एकांतके समे श्रीनाथजी गोविंददास पूछरी की ओर खेलते हैं। सो गोविंददास सदैव श्रीनाथजी के साथ रहते।

सो एक दिन राजभोग को समो हतो ताते श्रीनाथजी राजभोग आरोगवे को पधारे। सो पूछरी की ओर तें आवत हते, गोविंददास साथ हे। सो गोपालदास भीतरिया अप्सरा कुंडते स्नान करिके आवत हते गिरिराज ऊपर, सो उनने देखे।

तब गोपालदास ने श्रीगुसांईजी सों कह्यो जो–महाराज! गोविंददास और श्रीगोवर्द्धननाथजी पूछरी की ओर तें आये सो तो मैंने देखे। तब श्रीगुसांईजी सुनिके चुप करि रहे। ता पाछे राजभोग समर्प्यो।

सो वे गोविंददास श्रीनाथजी के एकांत के एसे सखा हैं। सो वे श्रीगुसांईजी के एसे कृपापात्र भगवदीय भये।

वार्ता प्रसंग-६ और एक समे श्रीगुसांईजी श्रीनाथजीद्वार में अपनी बेठक में बिराजे हते। ता समय श्रीनाथजी के उत्थापन को समय भयो। सो गोविंददास तो ऊपर दर्शन कों गये। सो जायके देखे तो श्रीनाथजी के पाग के पेच खूट रहे हैं। सो वा समे श्रीनाथजी ने पाग सांधिकर बांधी है।

सो हे गोविंददास पाग आछी बांधत हुते। तब गोविंददास ने श्रीनाथजी सों पूछी जो–महाराज! पाग के पेच क्यों खुलि रहे हैं? तब श्रीनाथजीने गोविंददास सों कह्यो जो–तू पाग के पेच संवार दे।

तब गोविंददास भीतर जायके पाग के पेच सवारे। श्रीगोवर्द्धननाथजी की पाग ढीली, सो संवार दी। इतने में श्रीगुसांईजी ऊपर पधारे। तब भीतरिया ने श्रीगुसांईजी तें कही जो–महाराज! गोविंददास श्रीनाथजी कों छुये हैं। (जो) मंदिर के भीतर जाय के श्रीनाथजी के पाग के पेच संवारे हैं।

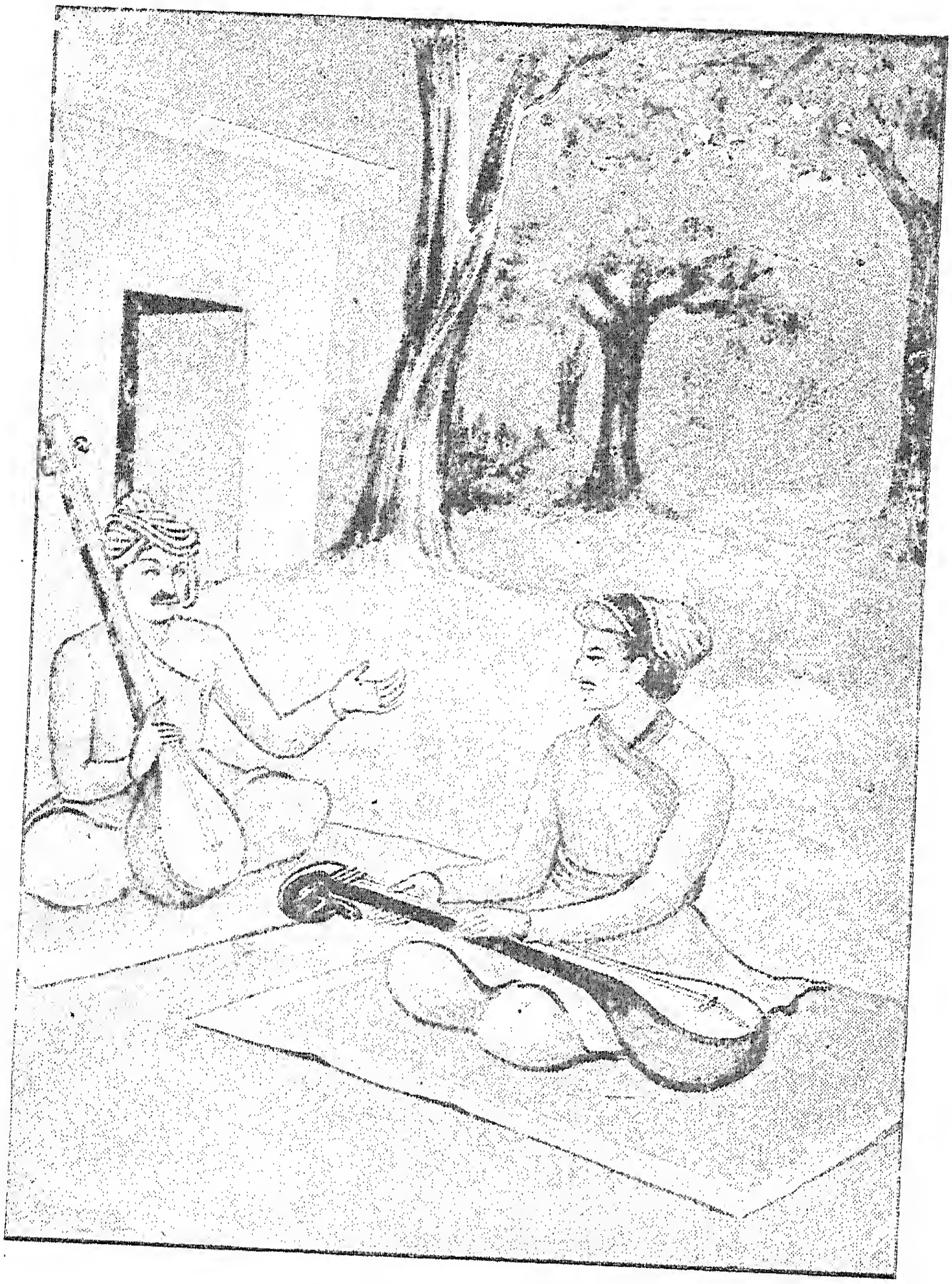

कदमखंडी में तानसेन के साथ संगीत संबंधी वार्तालाप करते हुए—

गोविंदस्वामी

जन्म सं० १५६२] [देहावसान सं० १६४२

तब श्रीगुसांईजी सुनि कैं चुप होय रहे, कछु बोले नांही। तब तो भीतरिया ने फेरि कही, जो—महाराज! अपरस छुइ गई। तब श्रीगुसांईजी ने कही—गोविंददास के छुये तें श्रीनाथजी छुये न जांय, तातें संध्याभोग धरो। या भांति सों श्रीगुसांई जी ने आज्ञा दीनी।

भावप्रकाश—ताको हेतु कहा? जो—अनोसर में श्रीनाथजी गोविंददास जी सों खेलत हैं, लिपटत हैं, ऊपर चढ़त हैं। यातें उन के छुये तें अपरस छुई जाय नांहि। और वैसे हू ब्राह्मण हैं, तातें वेद मर्यादा हू में हानि आवत नांही।

सो गोविंददास एसे कृपापात्र भगवदीय हते।

वार्ता प्रसङ्ग ७—और एक समय गोविंददास जगमोहन में ठाड़े ठाड़े कीर्तन करत हते। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी ने गोविंददास की पीठ में कांकरी की मारी। सो एक बेर दीनी, दोय बेर दीनी। तब गोविंददास ने एक बेर अंगुरीनतें फेर कैं दीनी। तब तो श्रीनाथ-जी चौंकि उठे। तब श्रीगुसांईजी फिरिकैं देखे, तो गोविंददास जगमोहन में ठाड़े है, और दूसरो कोऊ नांही है। तब श्रीगुसांईजी ने कह्यो, जो—गोविंददास! यह तुमने कहा कियो? तब गोबिंददास ने कही, जो—महाराज! "आपनो सो पूत, परायो ढढींगर" मोकों इननें जबतें तीन कांकरी मारी हैं। आप मेरी पीठ तो देखो। पाछे गोविंददास ने अपनी पीठ दिखाई। और कह्यो जो—"खेलत में को काको गुसैयां" तब श्रीगुसांई जी सुनिकैं चुप होय रहे।

ता पाछे श्रीसांईजी श्रीनाथजी को शृङ्गार करन लागे। तब गोबिंददास कीर्तन करन लागे।

या भांति गोविन्ददास सदैव श्रीगोवर्द्धननाथजी के साथ खेलते, सो वे गोविन्ददास श्रीनाथजी के एसे कृपापात्र भगवदीय हते।

वार्ता प्रसंग ८—और एक समे वसंत के दिन हते। सो श्रीगुसांई-जी श्रीनाथजी कों सेनभोग सराय कैं बीड़ी आरोगावत हते। और गोविंददास ठाड़े ठाड़े मणिकोठा में कीर्तन करत धमार गावत हते। सो एक नई धमार करिकैं गावन लागे। सो धमार। राग रायसो—श्रीगोवर्द्धनराय लाला, × × × × ×

सो याकी तीन तुक करकैं चुप होय रहे। गोविंददास तें आगे

कही न गई। तब श्रीगुसांईजी ने कह्यो, जो—गोविंददास! धमार क्यों नांही गावत हो? तब गोविंददास ने कही जो—महाराज! धमार तो भाजि गई अरु मन उरझाय गयो। 'अचका अचका आय कैं भाजि गिरिधर गाल लगाय'। सो वह तो भाजि गये, तातें ख्याल उतनो ही रह्यो। जो—महाराज! भाजि गये तो आगे खेल कहांतें होय?

तब श्रीगुसांईजी सुनि कैं बहुत प्रसन्न भये। ता पाछे सेन आरती करिकैं श्रीनाथजी कों पोढ़ाय कैं श्रीगुसांईजी आपु तो नीचे उतरे। ता पाछे धमारि की एक तुक रही हती सो, श्रीगुसांईजी ने पूरी करी। सो तुक—

"इहि बिधि होरी खेलिकैं ब्रजवासिन सङ्ग लगाय, लाला।
श्रीगोवर्द्धनधर रूप पर जन गोविंद बलि बलि जाय लाला।"

सो वे गोविंददास ऐसे कृपापात्र भगवदीय हते—

वार्ता प्रसंग ६—बहुरि सीतकाल में श्रीगुसांईजी श्रीनाथजी-द्वार पधारे हते। तब एक समे श्रीगोवर्द्धननाथजी और गोविंददास पूछरी की ओर श्यामढांक है, तहां ढांक की नीचे श्रीनाथजी और ग्वाल बाल सब मिल कैं खेलत हे। सो कबहूँ वा ढांक पर चढ़ि के मुरली बजावते, सब ग्वाल बालन कों बुलावतें। तहां श्यामढांक तें थोरी सी दूर एक चोंतरा है, तहां गोविंददास बैठे २ कीर्तन करत हते। सो श्रीठाकुरजी श्यामढांक के ऊपर बैठे हतें। गाय सब आसपास गदेला घास चरतं हती, बन में।

ता समैं श्रीगुसांईजी स्नान करिकें उत्थापन करिवे कों ऊपर पधारे। तब श्रीनाथजी ने गोबिंददासतें कही, जो—मैंतो अब अपने मन्दिर में जात हों। तहां उत्थापन को समयो भयो है। श्रीगुसांईजी मोकों मन्दिर में न देखेंगे तो मोंसों कहा कहेंगे, जो—तुम कहां गये हे? तातें मैं तो जात हों।

ऐसे गोविन्ददास सों कहिकैं श्रीनाथ जी वा ढांकपे तें उतावले ही कूदे, सो कवाय को दांवन तहां ढांक में अरुझो। सो दांवन को टूक तहां ही फटि के रहि गयो। सो श्रीनाथजी ने न जानी। सो गोविंददास ने दूर सों देख्यो, जो श्रीनाथजी की कवाय को दांवन फटि के अरुझि रह्यो है।

पाछे श्रीनाथजी तो जाय कैं अपने मन्दिर में सिंहासन पर

विराजे, और श्रीगुसांई जी ने जाय कैं श्रीनाथ जी के मन्दिर के किवाड़ खोले, उत्थापन किये। सो जब झारी भरन लागे ता समैं श्रीगुसांईजी देख तो श्रीनाथजी को दांवन फटि रह्यो है, तब श्रीगुसांईजी झारी भरि के उत्थापन भोग धरिके बाहिर आये। तब रूपा पोरिया कों बुलाय कैं श्रीगुसांईजी ने पूंछी, जो—रूपा! इहां कोउ आयो तो नांही? तब रूपा पोरियाने कही, जो—महाराज! इहां तो कोउ आयो नांही-तब श्रीगुसांईजी चुप करि रहे।

पाछे श्रीनाथजी के उत्थापन भोग सराय के श्रीगुसांईजी श्री गिरिराज तें नीचे उतरे, सो अपनी बेठक में आये। और भीतरियान कों आज्ञा दीनी, जो—तुम आरती करियो। और सब सेवा तें पहुँचियो, तुम मेरो पेंडा मति देखियो। इतनो कहिकैं आपतो नीचे आय अपनी बेठक में विराजे। तब सब वैष्णव दर्शन कों आये। सो आप काहू सों बोले नांही।

इतने में ही गोविंददास आये। तब गोविंददास ने श्रीगुसांईजी सों कही, जो—महाराज! आपु अनमने क्यों बेठे हो?

तब श्रीगुसांईजीने कही जो—कछु नांही। तब गोविंददास ने कही, जो—महाराज! कछु तो मनमें भ्रम है। तातें यह बात तो कही चाहिये। तब श्रीगुसांईजी ने गोविंददास सों कही, जो—श्रीनाथजी को कवाय को दांवन फट्यो है। जो न जानिये कौन अपराध पड्यो है?

तब गोविंददास ने हँसि कैं कह्यो, जो—महाराज! या बात के लिये तो राज भले अनमने होत हो! (क्यों जो) तुम कहा लरिका को सुभाव जानत नांही हो? तुम्हारो लरिका ढांक के ऊपर बेठ्यो हतो। सो तुम जब न्हाय के गिरिराज ऊपर पधारे तब लरिका वा ढांक ऊपर तें कूद्यो। सो वा ढांक में वा दांवन को टूक फटिके अरुझि रह्यो है, जो—महाराज! आपु पधारो तो मैं दिखाऊं।

तब तो श्रीगुसांईजी गोविंददास की बाँह पकरिकैं पूछरी की ओर चले। परि काहु सेवक कों संग न लीने। सो जब ढांक के नीचे आये तब श्रीगुसांईजी देखे तो वा कवाय की लीर लटकत है। तब श्रीगुसांईजी ने अपने श्रीहस्त सों उतारि लीनी। ता पाछे

आप उहांतें अपसरा कुण्ड ऊपर आये, सो स्नान करिकैं अपरस ही में गिरिराज ऊपर पधारे। तब वह और श्रीगुसांईजी श्रीनाथजी की कवाय के ऊपर धरिकैं देखे तो कवाय वह साजी होय गई। तब श्रीगुसांईजी गोविंददास के ऊपर बहुत ही प्रसन्न भये। पाछे श्रीगुसांईजी श्रीनाथजी की साम्हें देखि के मुसिकाये। तब श्रीनाथजी हू मुसिकाए।

ता पाछे श्रीगुसांईजी सेन आरती करिके सेवा तें पहौंचि के आपु नीचे पधारे, सो अपुनी बैठक में बिराजे। तब और वैष्णव हू श्रीगुसांईजी की पास आयके बैठे। तब गोविंददास हू श्रीगुसांईजी के पास आये। तब श्रीगुसांईजी ने उन वैष्णवन सों कही जो—अब कछु तुम्हारे मन में रह्यो है? तब सब वैष्णव चुप करि रहे। तब श्रीगुसांईजी ने कही जो—अब कछु उपाय करिये, जो—श्री गोवर्द्धननाथजी कों श्रम न करनो पड़े।

तब श्रीगुसांईजी आप ही मन में बिचारि के भीतरियान सों कही, और सब सेवकन कों आज्ञा दीनी, जो—आज पाछे संखनाद तीन बेर करिकैं, ता पाछे छण एक रहिकैं श्रीनाथजी के मन्दिर के किवाड़ खोलने।

यह सुनत ही गोविंददास बहुत ही प्रसन्न भये। सो गोविंददास ऐसे कृपापात्र भगवदीय भये।

वार्ता प्रसङ्ग १०—और श्रीगोवर्द्धननाथ जी गोविंददास कों घोड़ा करते। और आप गोविंददास की पीठ ऊपर असवार होय बन में पधारते। सो एक दिन श्रीगोवर्द्धननाथजी गोविंददास के ऊपर चढ़े चले जात हे, ता समैं गोविंदास कों लघी की शंका आई, सो मारग ठाड़े ठाड़े लघी करे जात हे।

सो एक दिन एक वैष्णव ने कह्यो जो—गोविंददास! यह कहा है? तब गोविंददास कछू बोलेहू नांही, वाको उत्तर हू न दियो। सो प्याऊ के ढांक की ओर चले ही गये।

सो आरती उपरांत श्रीगुसांईजी नीचे अपनी बेठक में बिराजे हते, तब उहां वा वैष्णवनें कही जो—महाराज! गोविंददास तो आज ठाढ़े २ निहोरे निहोरे जात हते। और लघी करत जात हते।

इतने में श्रीगुसांईजी की पास गोविंददास हू आये। तब

श्रीगुसांईजी ने गोविंददास तें पूछी जो—यह वैष्णव कहा कहत है ? जो तुम मारग में निहोरे निहोरे ठाड़े ठाड़े लघी करत जात हते? तब गोविंददास ने कही जो—महाराज ! घोड़ा हू कहुँ बैठिकैं लघी करत है ? और याकों तो सूझे नांही (जो) श्रीनाथजी तो मोकों घोड़ा करिके मेरी पीठ पर असवार होत हैं। और ता समें जो मोकों लंघी आई तब मैं बैठि कैं कैसें लघी करूं ? तातें मैं ठाड़े ही लंघी करी। सो तो याने देखी, परि श्रीनाथजी मेरी पीठ ऊपर असवार हते सो याकों सूझे नांही।

तब वा वैष्णव ने श्रीगुसांईजी कों दण्डवत करिकैं कही, जो—धन्य ! ए गोविंददास ! जीन पै महाराज की एसी कृपा है।

सो वे गोविंददास श्रीगोवर्द्धननाथजी के ऐसे कृपापात्र भगवदीय भये।

वार्ता प्रसंग ११--और एक समें श्रीगुसांईजी तो श्रीनाथजीद्वार पधारे हते। सो श्रीनाथजी की सेन आरति करिकैं श्रीनाथजी कों पोढ़ाय आपु नीचे अपनी बेठक में पधारे। पाछे गादी ऊपर बिराजे और वैष्णव सब आगे बैठे। तब श्रीगुसांईजी सों सब वैष्णवनने बिनती करी, जो-महाराज ! गोविंददासजी तो श्रीनाथजी के राजभोग आरती के पहेले महाप्रसाद लेत हैं ? तब इतने में ही गोविंददास तहाँ आये। तब श्रीगुसांईजीने पूछी जो-गोविंददास ! ये वैष्णव कहेत है, जो—तुम राजभोग की आरति के पहेले महाप्रसाद लेत हो ? तब गोविंददास ने श्रीगुसाँईजी सों बिनती करी जो—महाराज ! मैं परवस लेत हों, काहे तें, जो आप तो राजभोग आरति करिकैं अनोसर करत हो, और तुम्हारो लरिका आय कैं ठाड़ो होय हैं, और कहेत हैं जो-गोविंददास ! खेलिवे कों चलि। तातें हों पहेले ही प्रसाद लेत हों। तब श्रीगुसांईजी कहे, जो—राजभोग पहेले तो महाप्रसाद लीजे नांही। तातें राजभोग की आरति उपरांत प्रसाद लेवे कों आयो करि। तब गोविंददास ने कही, जो-महाराज ! जो आज्ञा। तब दूसरे दिन गोविंददास राजभोग आरति श्रीनाथजी की होय चुकी तब दरशन करिके ही तुरत आये। सो गोविंददास तो महाप्रसाद लेवे कों बैठे। और इहां श्रीगोवर्द्धननाथ जी अनोसर भये पाछें जगमोहन में आय के ठाड़े भये, और गोविंददास की राह देखत भये। इतने ही (में) महाप्रसाद लेकैं गोविंददास आये। तब

श्रीगोवर्द्धननाथजीने गोविंददास सों पूछयो, जो-गोविंददास ! तू इतनी बार लों कहां गयो ? मैं तीन बेर जगमोहन में गयो, और तीन ही बेर पाछो आयो । और आय के तेरी राह देखत हों ।

तब गोविंददासने कह्यो, जो—महाराज ! मैं तो तुम्हारो राजभोग सरतो तब तुरत ही महाप्रसाद लेत हतो । सो काल्हि रात्रि कों श्रीगुसांईजीने यह आज्ञा दीनी हैं, जो-राजभोग की आरति पाछें महाप्रसाद लियो कर । सो अबही आरति पाछें आयो हों । सो सुनि के श्रीनाथजी चुप करि रहे । ता पाछें गोविंददास की पीठ पर असवार होय कें श्रीनाथजी तो बन कों पधारे ।

ता पाछें उत्थापन को समय भयो तब श्रीगुसांईजी स्नान करि कें श्रीगिरिराज ऊपर जाय कें संखनाद कराये । ता पाछें मंदिर में पधारे, तब गडुवा भरन लागे । तब श्रीनाथजीने श्रीगुसांईजी सों कही, जो-तुमने गोविंददास को राजभोग आरति भये पाछे प्रसाद लेवे की आज्ञा दीनी हैं, सो मोकों आज बन में खेलवे कों अबार भई । सो तीन बेर जगमोहन में आय के फिरि गयो । ता पाछें कितनीक बेर लों जगमोहन में ठाड़ो रह्यो । जब गोविंददास प्रसाद ले कें आयो तब याकी पीठ पर असवार होय के खेलन कों गयो । तातें याकों आज्ञा दीजो, जो-जा भाँति नित्य प्रसाद लेत है तैसे ही लियो करे ।

ता पाछें उत्थापन भोग धरे । सो भोग धरि के अपरस ही में श्रीगुसांईजी नीचे पधारे,पाछे तुरत ही गोविंददास कों नीचे बुलाये। तब गोविंददासने आयकें श्रीगुसांईजी कों दंडवत करी । तब श्रीगुसांईजी गोविंददास कों देखिकें मुसिकाने ।

पाछे गोविंददास सों कह्यो जो-गोविंददास ! तुम नित्य प्रसाद लेत हो तेसेही ताही भाँति सों प्रसाद लियो करो, तुम कों कछु दोष नांही है । तुम कों प्रसाद लेत अबार भई तासों श्रीनाथजी कों गेल देखनी परी । तब गोविंददासने श्रीगुसांईजी कों दंडवत करि कें कही, जो—आज्ञा ।

ता पाछें श्रीगुसांईजी फेरि श्रीगिरिराज पें पधारि कें श्रीनाथजी को भोग सरायो । ता पाछें आरती करि के अनोसर कराये ।

सो वे गोविंददास श्रीनाथजी के ऐसे कृपापात्र भगवदीय अंतरंगी सखा हुते ।

वार्ता प्रसंग १२—और एक समैं गोविंददास जसोदा घाट उपर बैठे हते। तहां प्रातःकाल को समो हतो। सो गोविंददासनें भैरव राग अलाप्यो। सो गोविंददास को गरो बहोत आछो हतो। और आप गावत ही बहोत आछें हते। सो भैरव राग एसो जम्यो जो कछु कहिवे में नांही आवे।

सो एक म्लेच्छ चल्यो जात हुतो सो वानें गोविंददास को अलाप सुनि कें माथो धुन्यो। और कह्यो जो-वाह वाह! कैसा भैरव अलाप्या है। जो एसें वा म्लेच्छ ने कह्यो। सो वा म्लेच्छ की वात गोविंददासने सुनी। तव सुनिकें गोविंददासने कह्यो, जो-अरे! राग तो छी गयो। (और) कह्यो जो-म्लेच्छने सराह्यो है, सो राग श्रीगोवर्द्धननाथजी के आगे कैसे गाऊं? राग तो छी गयो। सो ता दिननें गोविंददासने भैरव राग में कोई पद कियो नांही। जो वे गोविंददास एसे टेक के कृपापात्र भगवदीय भये।

वार्ता प्रसंग १३—और एक समैं गोविंददास जसोदा घाट उपर बैठे हते। सो कोउ जल भरिवे को आवतो तासों बतरावते। और अपने हृदय विषे भगवद्भाव, तातें जो चतुर होय तासों टोक करते।

सो एक दिन गोविंददास बैठे हते तहाँ एक वैरागी आय कें बैठ्यो, और गावन लाग्यो। सो कहूँ तो सुर, कहूँ ताल कहूँ अक्षर कहूँ राग। तव गोविंददास ने सुनिकें वा वैरागी सों कह्यो, जो-अरे वैरागी! तू मति गावै। गायवे को खराब मति करें, न तो तेरो सुर सुद्ध, न तेरो राग सुद्ध, न तेरो गायवे को ठिकानो। एसे काहे कों गावत हैं? तो पें गायवो न आवे तो मति गावें।

तव उन वैरागी ने कह्यो, जो-हों तो अपने राम कों रिझावत हूँ। मोकों गायवो नांही आवे तो कहा भयो? मेरे राग सों मेरो राम तो रिझत हैं।

तव गोविंददासने कह्यो जो—तेरो राम कछू मूरख नाहीं, जो तेरे गायवे पें रिझेगो, तातें तू मति गावे। तव वह वैरागी चुप करि रह्यो। जो उन गोविंददास उपर एसी कृपा हती जो सवसों निशंक बोलते। वे गोविंददास एसे कृपापत्र भगवदीय हते।

वार्ता प्रसंग १४—और वे गोविंददास पाग आछी बांधते। सो एक दिन महावन तें श्रीगोकुल आवत हते। सो मारग में काहू ब्रजवासीने माथेपैंते पाग उतार लीनी। तब तासों गोविंददासने कही, जो—सारे! सोलह टूक हैं समारि लीजो, हों सकारे तेरे घर आय के ले जाउंगो। पाछे वह ब्रजवासी पाँयन परि कैं गोविंददास कों पाग दे गयो। सो वे गोविंददास एसे भगवदीय भये।

वार्ता प्रसङ्ग १५—और गोविंददास महावन में महावन के टीलन पर एक समैं कीर्तन करत हते। सो तहां श्रीगोकुलनाथजी कीर्तन सुनिवे कों आवते। तब आपने अपने खवास सों कही, जो—सावधान रहियो। जब श्रीगुसांईजी भोजन करिवे कों पधारे (तब) समैं होयतब तू मोकों बुलाय लीजो। सो भीतर राजभोग आवतें ता समय आप तहां पधारते, और इहां सावधान मनुष्य जो बेठारयो हतो, सो जब समो होय तब बुलावन कों आवतो, एसे नित्य करते।

सो उहां एक दिन जो मनुष्य रहतो सो कछु काम कों गयो हतो, सो जब श्रीगुसांईजी भोजन कों पधारन लागे। तब सब बेटान कों बुलाये. तब तहां श्रीवल्लभ नांही हते। तब आप श्रीगुसांईजी कहे, ,जो—महावन की ओर जाउ, तहां गोविंददास कीर्तन करत हैं, तहांतैं श्रीवल्लभ कों बुलाय के ले आवो।

ता पाछे मनुष्य दोरे, सो तहांते श्रीगोकुलनाथजी कों ले आये। तब श्रीगुसांईजी भोजन कों पधारे। सो गोविंददास गावत आछो हते। तातें श्रीगोकुलनाथजी सुनिवे कों जाते। सो वे गोविंददास एसे कृपापात्र भगवदीय भये।

वार्ता प्रसंग १६—और एक दिन श्रीगुसांईजी मथुराजी में केशोरायजी के दर्शन कों पधारे, जो साथ गोविंददास हू हते। सो उहां केशोरायजी को श्रृंगार बहुत ही भारी भयो हतो, सो जरी को वागा, चीरा, ताके ऊपर जरी की ओढ़नी उढ़ाये।

सो श्रीगुसांईजी तो केशोरायजी के (निज) मन्दिर में ठाड़े भये। और गोविंददास द्वार सों लागे दरसन करत हते। (सो) वागा जरी को ताके ऊपर ओढ़नी जरी की ओढ़े देखि के गोविंददास ने केशोरायजी सों कह्यो जो—महाराज! नीके तो हो?

तब श्रीगुसांईजी गोविंददास की ओर देखि कैं मुसिकाये। ता पाछें श्रीगुसांईजी तो केशोरायजी के दरशन करि कैं बाहिर आये,

तब श्रीगुसांईजी गोविन्ददास सों कहे, जो—गोविंददास ! एसें न कहिये ।

तब गोविंददास ने कही, जो—महाराज ! उष्णकाल के तो दिन और तैसी गरमी पड़ें, और जरीन को वागा ऊपर जरीन की ओढ़नी उढ़ाई है, जब कहा कहूँ ? तब श्रीगुसांईजी मुसिक्याय कें चुप होय रहे । सो वे गोविन्ददास ऐसें कृपापात्र भगवदीय भये ।

वार्ता प्रसंग १७—और एक समें गोविंददास की वेटी आंतरी नें आई । जो वह थोरीसी रही, परि गोविंददास नें कबहू वासों सम्भाषन हू न कर्यो, जो कानबाई गोविन्ददास की बहेन हती तानें कही, जो—गोविंददास ! तू कबहू वेटी सों बोलत ही नांही कब हू कछु कहेत ही नांही, येहूं न पूछे, जो तू कब आई है, सो यह कहा?

तब गोविंददास ने कानबाई सों कही, जो—कन्हीयां ! मन तो एक हैं । सो श्रीठाकुरजी में लगाउं के वेटी में लगाउं ? तब कान्हबाई सुनि कें चुप होय रही ।

पाछें कितनेक दिन रहिकें जब गोविंददास की वेटी आंतरी कों चली, तब कान्हबाई वाकों बहूवेटिन के पास ले गई । तब बहु वेटीननें गोविंददास की वेटी जानि कें कछु चोली साडी लहेगा श्रीपारवती बहूजी ने दियो । और वरनतें औरन ने हू थोरो थोरो दीनों । ता पाछें बहूवेटीन सों विदा होय कें गोविंददास की वेटी चली । ता पाछें गोविंददास जब घर आये तब कान्हबाई ने कही, जो—गोविंददास ! वेटी तो चली गई । तब गोविंददास ने कही जो—काहू ने कछु दीनो ? तब कान्हबाई ने कही, जो—बहू वेटीन ने साड़ी चोली दीनी हैं ।

तब तो यह बात सुनि कें गोविंददास वेटी के पाछें दौरें, सो कोस एक ऊपर जाय पहोंचे । तब वेटी सों गोविंददास ने कही, जो—तोकों बहू वेटिन ने जो कछू दीनों है, सो फेरि दे आऊं, याके लिए तें आपुनो बुरो होयगो ।

तब वेटी जो लाई हती सो सब फेरि दे आई, ता पाछें कान्हबाई सों आय के गोविंददास ने कह्यो जो—कन्हीयां ! तेने घरसों क्यों न दीनो ? एसे न करिये । तब कान्हबाई सुनि कें चुप होय रही । सो वे गोविंददास श्रीगुसांईजी के एसे कृपापात्र भगवदीय हते ।

———

अब श्रीगुसांईजी के सेवक चतुर्भुजदास, कुंभनदास जी के बेटा, अष्टछाप में जिनके पद गाइयत हैं, तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं—

★

भावप्रकाश—

ये चतुर्भुजदासजी लीला में श्रीठाकुरजी के "विशाल" सखा को प्रागट्य हैं। सो दिवस की लीला में तो ये "विशाल" सखा हैं, और रात्रि की लीला में "विमला" सखी हैं।

वार्ता प्रसंग १—सो ये चतुर्भुजदास जमुनावता में कुंभनदास जी के यहां जन्मे। सो कुंभनदास जी के प्रथम पांच बेटा हुते, तिनको मन लौकिक में बहोत आसक्त देखि कैं कुंभनदासजी के मन में बहुत ही दुःख भयो। और मन में बिचारे, जो—मेरे काउ एसो पुत्र न भयो, जातें हो अपने मन को भेद कहों। पाछे कुंभनदासजी ने पांचो बेटान कों न्यारे करि दिये। और कुंभनदासजी की बहू श्रीआचार्यजी महाप्रभु की सेवक हती, और एक बेटी ही, सोउ परम भगवदीय हती, सो वह बेटी हू श्रीआचार्यजी महाप्रभुन की सेवक हती। ब्याह होत ही याको पुरुष तो मरि गयो। तातें वह बेटी हू (भतीजी ?) कुंभनदासजी के घर रहेती। सो तीनों जने जमुनावते गाम में रहते।

ता पाछें एक बेटा कुंभनदासजी के और भयो। ताको नाम कुंभनदासजी ने कृष्णदास धर्यो। सो कृष्णदास बड़े भये। तब श्रीनाथजी की गायन की सेवा करते। और कीर्तन कोई न आवते। सो कृष्णदास ने श्रीनाथजी की गाय बचाई, और आपु नहार के सन्मुख होय कैं अपनो सरीर दियो। सो उनकी वार्ता में प्रसिद्ध हैं।

परि कुंभनदासजी के मन में यह मनोरथ जो—कोई एसो पुत्र न भयो। जासों मैं अपने मन को भाव सब कहों, और सब भगवद्वार्ता करों। तासों कुंभनदासजी उदास रहते।

ता पाछें एक दिन श्रीगोवर्द्धननाथजी ने परासोली में कुंभनदास सो पूछी, जो—कुंभना! तू! उदास क्यों है? तब कुंभनदास कही, महाराज! सत्संग नांहि हैं। फेरि श्रीगोवर्द्धननाथजी ने

मुसिक्याय के कह्यो, जो—अरे कुंभना ! सत्संग को फल जो "मैं,"
सो तो तेरे पाछे पाछे डोलत हौं, तोहू तो कों सत्संग की चाहना है ?

तब कुंभनदास ने कह्यो, जो—महाराज ! भगवदीयन के संग बिना जीव आपके स्वरूपानन्द को कैसें जाने ? आपके स्वरूप में रह्यो जो—आनन्द, सोतो भगवदीय ही जानत हैं और जानत नाहीं। तातें भगवदीयन के संग बिना आपके स्वरूप में मन उरझत नहीं है।

तब श्रीगोवर्द्धननाथजीने हँसि के आज्ञा करि, जो—कुंभना ! तू धन्य है, जा, मैंनें तोकों सत्सङ्ग के लिए भगवदीय पुत्र दियो।

तो हू कुंभनदासजी यह बिचारि कें उदास रहते जो कब पुत्र होयगो, फेरि कबतो वो बड़ो होयगो ? और न जाने वो कौन से भाव में मगन रहेगो ? एसे करत करत पुत्र होयवे को फेर समय भयो। सो कुंभनदासजी की स्त्री को फेर गर्भ स्थिति भई।

सो एक दिन श्रीगोवर्द्धननाथजी ने आय कें श्रीमुखतें कुंभनदासजी सों कही, जो—कुंभनदास ! तू मेरे संग चलि। तब कुंभनदासजी श्रीगोवर्द्धननाथजी कें संग चले, सो एक ब्रज-भक्त के घर में श्रीनाथजी पधारें। वे ब्रजभक्त दहीं माखन की मथनियां दोऊ ऊंचे छींका पें धरिकें आपु कछु कार्य कों गई हती। सो ताही समैं श्रीगोवर्द्धननाथजी तहां आयके आप एक हाथ तें दहीं की मथनियां लई। तब ही गोवर्द्धननाथजी को पीतांबर खुलि गयो, सो भूमि में गिरन लाग्यो। सो श्रीगोवर्द्धननाथजी नें आप तत्काल दोय भुजा और नीचे प्रकट करिकैं पीतांबर थांभ्यो। और दोय भुजान में माखन दहीं की मथनियां लिये रहे, ता समैं चतुर्भुज स्वरूप को कुंभनदासजी कों दरशन भयो।

ता पाछे श्रीगोवर्द्धननाथजी तो सखान सहित दूध दहीं माखन सब आरोगे, बच्यो सो बनचरन कों खवाय दियो। ताही समैं वह गोपिका अपने घर में दौरि आई, सो उहां देखे तो—दहीं माखन श्रीठाकुरजी आरोगत हैं। तब वह गोपिका श्रीठाकुरजी कों पकरिवे कों दोरी। तब सखा तो सब भाजि गये। तब कुंभनदासजी और श्रीगोवर्द्धननाथजी ठाड़े रहि गये।

सो जब वह गोपिका निकट आई तब श्रीगोवर्द्धननाथजी अपने श्रीमुख में दूध भरिकें वा गोपिका के मुख ऊपर डारे, सो वाके सगरे मुख में नेत्रन में दूध भरि गयो। सो वह ठाड़ी होय रही।

तब कुंभनदासजी और श्रीगोवर्द्धननाथजी वहां तें भाजे। सो श्रीगोवर्द्धननाथजी आप तो अपने मन्दिर में पधारे, और कुंभनदासजी जमनावते गाम में अपने घर गये। ता समें मारग में जातें यह पद कुंभनदासजी ने गायो। राग सारंग—

आनि पाये हो हरि नीकें।
चोरि चोरि दधि माखन खायो गिरधर दिन प्रतिही के॥
रोक्यो भवन द्वार ब्रज सुन्दरि नूपुर मोर अचानक ही के।
अब कैसें जइयत घर अपने में भाजन फोरि दुध दधि पीके॥
"कुंभनदास" प्रभु भले परे फंद जान न देहों भावतें जीय के।
अरि गंडूष छींट दे नेंनन में गिरिधर धाय चले दे कीके॥

यह कीर्तन कुंभनदासजी करत चले। चतुर्भुज स्वरूप को जो दर्शन भयो हतो, सो कुंभनदासजी ताके भाव में रस सों भरे अपने आप घर आये। ताही समें कुंभनदास की स्त्री के वेटा भयो। सो सुनि कें कुंभनदासजी ने कह्यो, जो—या लरिका को नाम चतुर्भुजदास हैं।

पाछे उत्थापन के समैं श्रीगुसांईजी के पास आय कें कुंभनदासजी ने दंडवत कियो तब श्रीगुसांईजी मुसिक्याय कें कुंभनदासजी सों पूछे, जो—चतुर्भुजदास आछे हैं? तब कुंभनदासजी ने बिनती कीनी, जो—महाराज! जाके ऊपर आप एसी कृपा करत हो सो तो सदा ही आछे हैं। ताको सब ठौर कल्यान ही हैं।

तब श्रीगुसांईजी कुंभनदासजी सों कहे, जो—या पुत्र सों तुमकों बहोत ही सुख होयगो। सो तुमारे मन में जैसो मनोरथ हतो ताही भांति सों तुमारे मनोरथ सब सिद्ध भये हैं।

पाछे जब पिंडरू होय चुक्यो, तब कुंभनदासजी आछे सुद्धि होय पुत्र कों स्नान करायो। और वाकों अपनी गोदि में ले, श्री गुसांई जी कों आय कें कुंभनदास जी ने दण्डवत करी। पाछे चतुर्भुजदास को मस्तक श्रीगुसांईजी के चरन कमल सों परस कराय कें कुंभनदास जी ने विनती करी, जो—महाराज! कृपा करि कें चतुर्भुजदास कों नाम सुनाईये। तब श्रीगुसांई जी आप मुसिक्याय कें कहे, जो—राजभोग सरे पाछें नाम निवेदन दोइ संग करवावेंगे।

यह सुनि कैं चतुर्भुजदास ताही समैं किलक कैं हंसे। तब कुंभनदासजी हूं मन में बहोत प्रसन्न भये। पाछे राजभोग सरवे को समय भयो तब माला बोली। तब श्रीगुसांईजी भीतरियान कों आज्ञा दिनी, जो—तुम बाहिर जावो। तब सब भीतरिया, पौरिया सब बाहिर जाय बैठे। ता समें मन्दिर में श्रीगोवर्द्धननाथजी और कुंभनदासजी (रहे)। ता समय श्रीगुसांईजी चतुर्भुजदास कों नाम सुनाय, पाछें तुलसी ले कैं कुंभनदास तें कहे,जो–चतुर्भुजदास कों (आगे) लावो। सो श्रीगोवर्द्धननाथजी के सन्मुख चतुर्भुजदास कों ब्रह्मसम्बन्ध करवायो। पाछे तुलसी श्रीगोवर्द्धननाथजी के चरण कमल पर समर्पे। जो ताही समय सगरी लीला की स्फुरति चतुर्भुजदास कों भई, और श्रीगुसांईजी को स्वरूप हृदयारूढ़ भयो। तब ताही समें चतुर्भुजदास ने यह कीर्तन गायो। सो पद्—

राग सारंग—सेवक की सुखरास सदा श्रीवल्लभ राज कुमार ×

यह कीर्तन चतुर्भुजदास ने गायो, सो सुनि कैं श्रीगुसांईजी बहोत प्रसन्न भये। और कुंभनदास जी हू प्रसन्न भये। अपने मन में आनन्द पाये, और कहे, जो मोकों जैसो मनोरथ हतो तैसे ही भगवदीय को संग मिल्यो।

ता पाछे मन्दिर के किवाड़ खुले। सब लोगन कों दरसन भये। पाछे श्रीगुसांई जी श्रीगोवर्द्धननाथजी की आरती उतारि कैं श्रीगोवर्द्धननाथजी कों अनोसर करवाये। और माला बीड़ा लेकैं श्रीगुसांईजी परवत तें नीचे उतरि, अपनी बैठक में पधारे। तहां सब वैष्णव हू आये। तहां कुंभनदासजी हू चतुर्भुजदास कों लेकैं आये। तब सबन के आगे चतुर्भुजदास मुग्ध बालक होय चुप करि रहे। ता पाछे श्रीगुसांईजी सब वैष्णवन कों विदा किये। पाछे आप श्रीगुसांईजी भोजन करिवे कों पधारे। ता पाछे श्रीगुसांईजी आप कृपा करि कैं अपने श्रीहस्त सों कुंभनदास, चतुर्भुजदास कों अपनी जूठन की पातर धरी, सो उन दोउ जनेंन नें महाप्रसाद लियो।

पाछे श्रीगुसांईजी गादी ऊपर विराजे, सो आप बीड़ा आरोगत हतें, तब कुंभनदासजी, चतुर्भुजदासजी आचमन करिकैं श्रीगुसांईजी के पास आये। तब श्रीगुसांईजी कृपा करिकैं दोउन कों न्यारो न्यारो उगार दिये, सो कुंभनदास चतुर्भुजदास ने लियो।

ता पाछैं श्रीगुसांईजी विसराम करन कों पधारे। तब कुंभनदासजी चतुर्भुजदास कों गोदि में लै कैं श्रीगुसांईजी कों दंडवत करिकैं जमनावते गाम में अपने घर में आये।

सो जब एकांत में कुंभनदासजी बैठे होंई तब चतुर्भुजदास श्रीगोवर्द्धननाथजी की वार्ता लीला को भाव और श्रीआचार्यजी श्रीगुसांईजी की वार्ता करें। तब दोउ जनैं परस्पर आनंद कों पावे। और जब कोउ तीसरो जनो आवे तब चतुर्भुजदास बालक की नाँई मुग्ध होय रहें। और जा दिनतें चतुर्भुजदास नाम समर्पन पाये हते, ता दिन तें श्रीगोवर्द्धननाथजी के दर्शन किये बिना चतुर्भुजदास दूध हू न पीवते। एसे करत करत बरस पांच के भये।

सो चतुर्भुजदास नेम सों दरशन करते। सो वे चतुर्भुजदास ऐसे भगवदीय हते।

वार्ता प्रसंग २—और एक दिन श्रीनाथजी नें कह्यो, जो—चतुर्भुजदास! आज तू मेरे संग गाय चरावन कों चलियो। तब चतुर्भुजदास राजभोग आरती के दरशन करिकैं आप गोविंदकुंड ऊपर जाय कैं बैठ रहे। तब मंदिर में कुंभनदासजीने सबन सों पूंछी, जो—चतुर्भुजदास आज कहां गयो। तब सबन नें कह्यो जो-दर्शन में तो देखे हे, और पाछैं तो हमने देखे नांही।

तब कुंभनदासजी अपने मनमें विचार करन लागे,जो-चतुर्भुजदास कहां गयो ? पाछैं श्रीगुसांईजी (जब) श्रीगोवर्द्धननाथजी कों अनोसर कराय कैं अपनी बैठक में बिराजें। तब कुंभनदासजीने आयकैं दंडवत कीनी। जब श्रीगुसांईजीने कुंभनदास सों कह्यो, जो—कुंभनदास! तुम उदास क्यों हो ? तब कुंभनदासजी ने कह्यो, जो—महाराज! चतुर्भुजदास आज दर्शन में तो हतो, सो अब नांही देखियत है, सो कहाँ गयो ?

तब श्रीगुसांईजीने कुंभनदास सौं कह्यो, जो—तुम आज पाछैं चतुर्भुजदास की चिंता मति करो। श्रीगोवर्द्धननाथजी वाकों आज्ञा किये हैं, जो-तू मेरे संग गाय चरावन कों चलि हो। तातें चतुर्भुजदास श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन करिकैं ततकाल गोविंदकुंड के ऊपर जाय कैं बैठ्यो है।

सो अब श्रीगोवर्द्धननाथजी गायन कों सखान संग लेकें बन में पधारत हैं, श्रीबलदेवजी सखान सहित। सो अब कोई घड़ीएक में श्यामढांक कों पधारेंगे। जो तुमकों जानो होय तो सूधे श्यामढांक कों जाव। तहाँ श्रीगोवर्द्धननाथजी, चतुर्भुजदास समाज सहित मिलेंगे। यह सुनिकें कुंभनदासजी तहां तें चले, सो सूधे श्यामढांक कों आये। तहां देखें, तो—श्रीठाकुरजी श्रीबलदेवजी सहित विराजत हैं। सो सखा तो सब बैठें है, और चहुँ दिस गाय सब चरत हैं।

तब कुंभनदासजीने जाय कें दंडवत कीनी। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी ने कुंभनदासजी तें हसि के कह्यो, जो—कुंभनदास! आवो बैठो। तब कुंभनदासजीने श्रीगोवर्द्धननाथजी कों दंडवत कीनी। फेर बिनती कीनी, जो—महाराज! आज चतुर्भुजदास पर बड़ी कृपा करी। तातें याके परम भाग्य हैं। यह सुनि कें श्रीगोवर्द्धननाथजी चुप होय रहे। सो या भाँति श्रीगोवर्द्धननाथजी चतुर्भुजदास कें ऊपर कृपा करन लागे।

वार्ता प्रसंग ३—और ऐसे समैं श्रीगोवर्द्धननाथजी ब्रजवासिन कें घर दूध दहीं माखन की चोरी करन कों पधारे। तब चतुर्भुजदास कों यह आज्ञा करें, जो—कुंभनाकें! तू हू चलियो। सो जाय कें एक ब्रजबासी कें घर में पैठे। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी दूध दही माखन सब खाये।

ता पाछें वा ब्रजवासी की बेटीनें चतुर्भुजदास कों देखे। श्रीठाकुरजी तो वासों दीसे नहीं। तब वह अपने बापकों पुकारी, जो या कुंभना के बेटाने हमारो दूध, दही, माखन सब खायो है। तब यह बात सुनिकें दस पांच ब्रजवासी दौरि आये। तब श्रीठाकुरजी तो सखान सहित भाजि गये, वे तो चोरी की रीत जानत हते। और चतुर्भुजदास तो प्रथम ही इनके साथ आये हते। सो ये तो कछु जानत नांही। तातें उहां ठाड़े होय रहें। सो सब ब्रजवासी आय कें चतुर्भुजदास कों पकरिकें भलि-भांति सों मार्यो। पाछे वे ब्रजवासी चतुर्भुजदासतें कहे जो—आज पाछे तू कबहू चोरी करन कों पैठेंगो तो हम तेरे बाप कुंभना कों पकरि लावेंगे।

एसे कहिकें ब्रजवासिनने चतुर्भुजदासकों छोड़ि दियो। तब चतुर्भुजदास श्रीगोवर्द्धननाथजी के पास आये। तब श्रीगोवर्द्धन-

ता पाछैं श्रीगुसांईजी विसराम करन कों पधारे। तब कुंभनदासजी चतुर्भुजदास कों गोदि में लै कैं श्रीगुसाईजी कों दंडवत करिकैं जमनावते गाम में अपने घर में आये।

सो जब एकांत में कुंभनदासजी बैठे होंई तब चतुर्भुजदास श्रीगोवर्द्धननाथजी की वार्ता लीला को भाव और श्रीआचार्यजी श्रीगुसांईजी की वार्ता करें। तब दोउ जनें परस्पर आनंद कों पावे। और जब कोउ तीसरो जनो आवे तब चतुर्भुजदास बालक की नाँई मुग्ध होय रहें। और जा दिनतें चतुर्भुजदास नाम समर्पन पाये हते, ता दिन तें श्रीगोवर्द्धननाथजी के दर्शन किये बिना चतुर्भुजदास दूध हू न पीवते। एसे करत करत वरस पांच के भये।

सो चतुर्भुजदास नेम सों दरशन करते। सो वे चतुर्भुजदास ऐसे भगवदीय हते।

वार्ता प्रसंग २—और एक दिन श्रीनाथजी नें कह्यो, जो—चतुर्भुजदास! आज तू मेरे संग गाय चरावन कों चलियो। तब चतुर्भुजदास राजभोग आरती के दरशन करिकैं आप गोविंदकुंड ऊपर जाय कैं बैठ रहे। तब मंदिर में कुंभनदासजीने सबन सों पूंछी, जो—चतुर्भुजदास आज कहां गयो। तव सबन नें कह्यो जो-दर्शन में तो देखे हे, और पाछैं तो हमने देखे नांही।

तब कुंभनदासजी अपने मनमें विचार करन लागे,जो-चतुर्भुजदास कहां गयो ? पाछैं श्रीगुसांईजी (जब) श्रीगोवर्द्धननाथजी कों अनोसर कराय कैं अपनी बैठक में बिराजें। तब कुंभनदासजीने आयकैं दंडवत कीनी। जब श्रीगुसांईजीने कुंभनदास सों कह्यो, जो—कुंभनदास! तुम उदास क्यों हो ? तब कुंभनदासजी ने कह्यो, जो—महाराज! चतुर्भुजदास आज दर्शन में तो हतो, सो अब नांही देखियत है, सो कहाँ गयो ?

तब श्रीगुसांईजीने कुंभनदास सौं कह्यो, जो—तुम आज पाछैं चतुर्भुजदास की चिंता मति करो। श्रीगोवर्द्धननाथजी वाकों आज्ञा किये हैं, जो-तू मेरे संग गाय चरावन कों चलि हो। तातें चतुर्भुजदास श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन करिकैं तत्काल गोविंदकुंड के ऊपर जाय कैं बैठ्यो है।

सो अब श्रीगोवर्द्धननाथजी गायन कों सखान संग लेकैं बन में पधारत हैं, श्रीबलदेवजी सखान सहित। सो अब कोई घड़ीएक में श्यामढांक कों पधारेंगे। जो तुमकों जानो होय तो सूधे श्यामढांक कों जाव। तहाँ श्रीगोवर्द्धननाथजी, चतुर्भुजदास समाज सहित मिलेंगे। यह सुनिकैं कुंभनदासजी तहां तें चले, सो सूधे श्यामढांक कों आये। तहां देखैं, तो—श्रीठाकुरजी श्रीबलदेवजी सहित विराजत हैं। सो सखा तो सब बैठें है, और चहुँ दिस गाय सब चरत हैं।

तब कुंभनदासजीने जाय कैं दंडवत कीनी। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी ने कुंभनदासजी तें हसि कै कह्यो, जो—कुंभनदास! आवो बैठो। तब कुंभनदासजीने श्रीगोवर्द्धननाथजी कों दंडवत कीनी। फेर बिनती कीनी, जो—महाराज! आज चतुर्भुजदास पर बड़ी कृपा करी। तातें याके परम भाग्य हैं। यह सुनि कैं श्रीगोवर्द्धननाथजी चुप होय रहे। सो या भाँति श्रीगोवर्द्धननाथजी चतुर्भुजदास कैं ऊपर कृपा करन लागे।

वार्ता प्रसंग ३—और ऐसे समैं श्रीगोवर्द्धननाथजी ब्रजवासिन कैं घर दूध दहीं माखन की चोरी करन कों पधारे। तब चतुर्भुजदास कों यह आज्ञा करें, जो—कुंभनाकैं! तू हू चलियो। सो जाय कैं एक ब्रजवासी कैं घर में पैठे। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी दूध दही माखन सब खाये।

ता पाछैं वा ब्रजवासी की बेटीनें चतुर्भुजदास कों देखे। श्री ठाकुरजी तो वासों दीसे नहीं। तब वह अपने बापकों पुकारी, जो या कुंभना के बेटाने हमारो दूध, दही, माखन सब खायो है। तब यह बात सुनिकैं दस पांच ब्रजवासी दौरि आये। तब श्रीठाकुरजी तो सखान सहित भाजि गये, वे तो चोरी की रीत जानत हते। और चतुर्भुजदास तो प्रथम ही इनके साथ आये हते। सो ये तो कछु जानत नांही। तातें उहां ठाड़े होय रहें। सो सब ब्रजवासी आय कैं चतुर्भुजदास कों पकरिकैं भलि-भांति सों मार्यो। पाछे वे ब्रजवासी चतुर्भुजदासतें कहे जो—आज पाछे तू कबहू चोरी करन कों पैठेंगो तो हम तेरे बाप कुंभना कों पकरि लावेंगे।

एसे कहिकैं ब्रजवासिनने चतुर्भुजदासकों छोड़ि दियो। तब चतुर्भुजदास श्रीगोवर्द्धननाथजी के पास आये। तब श्रीगोवर्द्धन-

नाथजी सखान सहित बहोत ही हँसे । तब चतुर्भुजदास ने श्रीगोवर्द्धननाथजी सों कह्यो, जो—महाराज ! दूध, दही, माखन तो सखान सहित आप आरोगे और मार मोकों खवाई ?

तब श्रीगोवर्द्धननाथजीने चतुर्भुजदास सों कह्यो, जो-तैंने हू दूध, दही माखन क्यों न खायो ? और जहां मैं भाज्यो और सब सखा भाजे, तहाँ तूहू क्यों न भाज्यो ? तू क्यों मार खाय रह्यो । तब चतुर्भुजदास सुनिकैं चुप होय रहे । सो वे चतुर्भुजदास श्रीगोवर्द्धननाथजी के तथा श्रीगुसांईजी के एसे कृपापात्र भगवदीय भये ।

वार्ता प्रसंग ४—और एक समैं कुंभनदासजी और चतुर्भुजदास 'जमुनावता' गाम में अपने घर में बैठे हुते, जो अर्द्धरात्रि के समय श्रीगोवर्द्धननाथजी कैं मंदिर में दीया बरत देख्यो । तब कुंभनदासजी ने चतुर्भुजदास सों यह सुनाय कैं कही जो—

'वह देखो बरत झरोखन दीपक हरि पोढ़ें ऊँची चित्रसारी'

सो कुंभनदासजी इतनो कहिकैं चुप होय रहे । तब यह सुनिकैं चतुर्भुजदासनें कह्यो जो—

सुंदर बदन निहारन कारन राखे हैंबहुत जतन करि प्यारी' ।

यह सुनिकैं कुंभनदासजी बहोत प्रसन्न भये । और पूंछ्यो ,जो-तोकों या लीला को अनुभव भयो ? तब चतुर्भुजदासने कुंभनदासजी तें कह्यो जो—श्रीगुसांईजी की कृपातें और श्रीआचार्यजी महाप्रभुन की कानि ते यह लीला को अनुभव श्रीगोवर्द्धननाथजी आप जनावत हैं । तब कुंभनदासजी यह सुनिकैं आपु बहोत प्रसन्न भये । और यह कीर्तन संपूर्ण करिकैं भाव सहित चतुर्भुजदास कों सुनायो । और चतुर्भुजदास सों कुंभनदासजी ने कह्यो जो-श्रीगोवर्द्धननाथजी आप तोसों छिपाये नाहीं तो मैंहू तोसों न छिपाऊंगो । ता दिन तैं कुंभनदासजी रहस्य-लीला वार्ता सब चतुर्भुजदास सों करते । कछु गोप्य न राखते ।

सो वे कुंभनदासजी, चतुर्भुजदास श्रीगोवर्द्धननाथजी के एसे अंतरंगी सखा हते, कृपापात्र भगवदीय हते ।

वार्ता प्रसंग—५ और एक दिवस श्रीआचार्यजी महाप्रभुन को

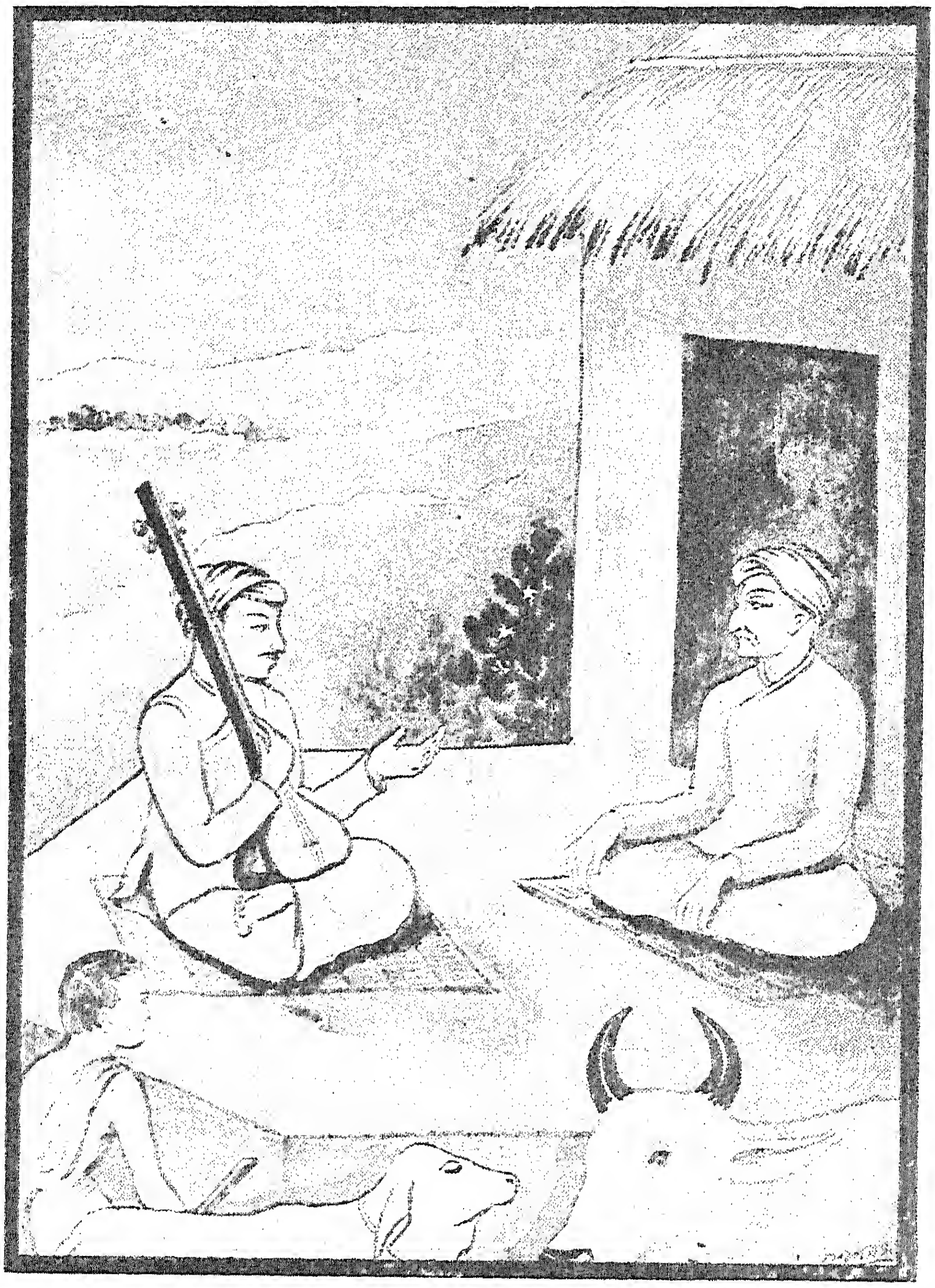

अपने पिता कुंभनदास से गायन की शिक्षा प्राप्त करते हुए—

चतुर्भुजदास

जन्म सं० १५८७] [देहावसान सं० १६४२

जनम दिवस आयो। तब श्रीगुसांईजी श्रीजीद्वार हते सो नाना प्रकार की सामग्री सिंगार सब जन्माष्टमी की रीत करी।

ता समय श्रीगोवर्द्धननाथजी के सिंगार के दर्शन करिकैं चतुर्भुजदासने यह कीर्तन सुनायो सो पद— राग बिलावल।

'सुभग सिंगार निरखि मोहन को ले दरपन कर पियहिं दिखावे'।

यहकीर्तन चतुर्भुजदासनेगायो, सोसुनिकैं श्रीगुसांईजी बहोतही प्रसन्न भये। ता पाछे श्रीगुसांईजी राजभोग धरिकैं गोविंदकुंड पै संध्यावंदन करिवे कों पधारे। तब चतुर्भुजदास और एक वैष्णव श्रीगुसांईजी के साथ हते। तब श्रीगुसांईजी सों वा वैष्णव ने पूंछ्यो, जो—महाराज! आप तो नित्य ही भांति २ सों सिंगार करत हो, दरसन करावत हो, दर्पन दिखावत हो। और चतुर्भुजदासने तो आज कीर्तन में कह्यो, जो—'आज की छवि कछु कहत न आवे' जो—महाराज! ताको कारन कहा?

तब श्रीगुसांईजी ने आप श्रीमुखतें वा वैष्णव सों कह्यो, जो—तुम यह बात चतुर्भुजदास ही तें पूंछो। तब वा वैष्णव ने चतुर्भुजदास सों पूंछ्यो, जो—तुम आज यह कीर्तन किये, ताको कारन कहा?

तब चतुर्भुजदासने वा वैष्णव सों कह्यो, जो-सुनो! ता पाछें चतुर्भुजदासने तहां गोविंदकुंड ऊपर दूसरो पद गायो। सो पद—

राग बिलावल। 'माईरी आज और काल और नित्यप्रति छिनु और और देखिये रसिक गिरिराजधरण'।

यह कीर्तन चतुर्भुजदासने गायो, तब श्रीगुसांईजी आप चतुर्भुजदास की ओर देखिकैं मुसिकाये। ता पाछें वह वैष्णव कों और ही संदेह भयो। जो—चतुर्भुजदासजी ने दोय कीर्तन किये ताको भेद मैंने न जान्यो।

पाछें श्रीगुसांईजी आप संध्यावंदन कर चुके तब राजभोग को समय भयो हतो। सो श्रीगुसांईजी तो मंदिर में पधारे। ता पाछें श्रीगोवर्द्धननाथजी को राजभोग सराय कैं राजभोग आरति करिकैं श्रीगोवर्द्धन परवत तें नीचे उतरे। पाछें बैठक में आय कैं श्रीगुसांईजी आप गादी ऊपर बिराजे। पाछें सब वैष्णवन कों

विदा करिकैं श्रीगुसांईजी आपु भोजन कों पधारे। सो भोजन करिके आचमन लेकै श्रीगुसांईजी आप गादी ऊपर बिराजे, बीड़ा आरोगत हते। तब सब वैष्णव तो अपने २ डेरा गये हुते, और श्रीगुसांईजीसों वा वैष्णव ने बिनती करी, जो—महाराज! आज चतुर्भुजदासने दोय कीर्तन सिंगार के समैं किये तिनको भेद मैं न समझ्यो, जो आप कृपा करिकैं मेरो संदेह दूरि करो।

तब श्रीगुसांईजी आप वा वैष्णव सों कहे, जो—आज श्रीआचार्यजी महाप्रभुन को जनम उत्सव हतो। तातें आज श्रीस्वामिनीजी अपने मनोरथ की सामग्री, सब सिंगार अपने हाथ सों धराये हैं। तातें श्रीगोवर्द्धननाथजी आप बहुत ही प्रसन्न भये हैं। यातें चतुर्भुजदास ने कह्यो, जो—"आज और काल और, जो आज की छवि कछु कहत न आवे।"

और गोविंदकुंड पें दूसरो कीर्तन कियो, ताको भाव ये है, जो—नित्य जितने व्रजभक्त हैं सो अपने २ मनोरथ की सामग्री धरावत हैं। अपने २ वस्त्र आभूषन धरावत हैं। तातें आज और, सो छण २ में अनेक व्रजभक्तन को सनमान करत हैं। सो जैसो व्रजभक्तन को भाव हैं, जो उनके मनोरथ हैं, तैसे श्रीगोवर्द्धननाथजी आपहु विनके मनोरथ सिद्ध करत हैं। तातें छण छण मे श्रीगोवर्द्धननाथजी की सोभा होत है।

जो या भांति सों श्रीगुसांईजी वा वैष्णव सों कहे। तब वा वैष्णव को संदेह दूरि भयो। तव वा वैष्णव ने अपने मन में कही, जो—या चतुर्भुजदास को बड़ो भाग्य है। जो—श्रीगोवर्द्धननाथजी सब लीला सहित दरसन देत हैं। सो वे चतुर्भुजदास श्रीगुसांईजी के ऐसे कृपापात्र भगवदीय भये।

वार्ता प्रसंग६—और एक समय 'आन्योर' में रासधारी आये हते। सो श्रीगुसांईजी तो श्रीगोकुल हते। और श्रीगिरिधरजी, श्रीगोविंदरायजी, श्रीबालकृष्णजी, श्रीगोकुलनाथजी और श्रीरघुनाथजी ए पांचो बालक श्रीजीद्वार हते। और जदुनाथजी, श्रीगोकुल में हे और श्रीघनश्यामजी को प्राकट्य भयो न हतो।

सो ए रासधारी श्रीगोकुलनाथजी के पास आए। और बहोत

बिनती कीनी जो—आप पधारो तो हम रास करें। तब श्रीगोकुलनाथजी नें रासधारीन तें कह्यो, जो—मैं श्रीगिरिधरजी तें पूंछि कें कहुंगो।

ता पाछें जब श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेन आरती होय चुकी और अनोसर भये, पाछें श्रीगोकुलनाथजी श्रीगिरिधरजी सों पूछ्यो जो—तुम कहो तो मैं रास कराउं, और हू बालकन को मन है और तुम हू रास में आओ तो आछो है।

तब श्रीगिरिधरजी नें कह्यो, जो—इहां श्रीगुसांईजी तो है नांही, होतें तो उनतें पूछिकें 'रास कराइये। तातें मति :(कहुं) मेरे ऊपर श्रीगुसांईजी आप खीजें तो। तातें तुमारो मन होय तो परासोली चंद्रसरोवर के ऊपर रास करावो। और मेरो आवनो तो न होयगो। तब श्रीगोकुलनाथजी आदि दे कें सब बालक रासधारीन को लैं क संग परासोली चंद्रसरोवर पें आये। सो श्रीगोकुलनाथजी चतुर्भुजदास हू कों अपने संग लै गये हते। और श्रीगिरिधरजी तो आप श्रीगुसांईजी की बैठक में सेन कर रहे हते।

सो जब प्रहर एक रात्रि गए तब चंद्रसरोवर पें रास को मंडान भयो। चैत्र सुदी पूर्णमासी को दिन हुतो। सो जब तीन प्रहर रात्रि गई और एक प्रहर रात्रि रही, तब श्रीगोकुलनाथजो ने चतुर्भुजदास सों कह्यो, जो चतुर्भुजदास कछुगावो। तब चतुर्भुजदासने कह्यो, जो—मैं तो श्रीगोवर्द्धननाथजी कों रास करत देखों तब गाऊं, जो रासके करनवारे तो श्रीगिरिधरजी के निकट हैं।

तब श्रीगोकुलनाथजी ने चतुर्भुजदास सों कही, जो—अब कहा करिये? रात्रि तो प्रहर एक बाकी रही है, और अब जो बुलायवे जइये तो जात आवत ही में भोर होय जाय। फेर उनके मनमें आवे तो वे आवें, नहीं तो न भी आवें। जो अब कहा करिये?

तब चतुर्भुजदास ने कह्यो, जो:--चिंता मति करो। कोई एक घड़ी में श्रीगोवर्द्धननाथजी और श्रीगिरिधरजी इहां पधारत हैं। ताही समैं श्रीगोवर्द्धननाथजी श्रीगिरिधरजी की बैठक में श्रीगिरिधरजी की पास पधारे, और उनसों कह्यो, जो—परासोली चंद्रसरोवर ऊपर चलं, जो उहां रास करिये। तब श्रीगिरिधरजी तहां

तें अकेले ही चलै, सो दोऊ जनें चंद्रसरोवर ऊपर आये। तब रासधारीनकों श्रीगिरिधरजी के दर्शन भये, और श्रीगोवर्द्धननाथ जी के दर्शन न भये, और सब बालकनकों दर्शन भये। पाछे श्रीगोवर्द्धननाथजी आपने व्रजभक्तन के संग रासलीला करी, सो रात्रि हू बढ़ि गई, और चंद्रमा हू और भांतिसों सोभा देन लाग्यो। ता समैं चतुर्भुजदास ने यह कीर्तन गायो। सो पद—राग केदारो

चरचरी (ताल)–'अद्भुत नट भेख धरे जमुनातट स्यामसुंदर, गुननिधान गिरिवरधर रास रंग राचे।'

यह कीर्तन चतुर्भुजदासने गायो, तब सुनिकैं श्रीगोवर्द्धननाथजी आज्ञा करे जो—चतुर्भुजदास! यह बिरियां कौन है? तब चतुर्भुजदास यह दूसरो पद गायो। सो पद—

राग भैरव।'प्यारी ग्रीवा पै भुज मेलि निरतत पिय सुजान०।'

यह कीर्तन चतुर्भुजदासने गायो, सो सुनिकैं श्रीगोवर्द्धननाथजी बहुत प्रसन्न भये। और चतुर्भुजदास के सामने मुसिक्याए। तब चतुर्भुजदासने जान्यो, जो—धन्य मेरो भाग्य है।

सो ऐसे ऐसे बहोत कीर्तन चतुर्भुजदासने रास कैं गाये। ता पाछे रात्रि घड़ी दोय रही, तब श्रीगोवर्द्धननाथजी आप मंदिर में पधारे। पाछे श्रीगिरधरजी चतुर्भुजदास कों संग लैकैं गोपालपुर आये। ता पाछे रासधारीन कों श्रीगोकुलनाथजीने कछु द्रव्य देकैं विदा किये,पाछे सब बालकन सहित आप गोपालपुर आये। ता पाछे कछुक दिन रहिकैं श्रीगोकुल पधारे।

पाछे जब श्रीगुसांईजी श्रीगोकुल तें श्रीजीद्वार पधारे, तब श्रीगिरधरजीने रास कैं समाचार सब कहे, श्रीगुसांईजी सों। तब श्रीगुसांईजी आप आज्ञा किये, जो—आपुन कों श्रीगोवर्द्धननाथजी सों हठ करनो योग्य नांही। श्रीगोवर्द्धननाथजी कों श्रम होत है, और श्रीगोवर्द्धननाथजी तो अपनी इच्छा तें नित्य ही रास करत हैं।

सो या भांति सों श्रीगुसांईजी श्रीगिरधरजी सों कह्यो। तब सुनिकें श्रीगिरधरजी चुप करि रहे। सो वे चतुर्भुजदास श्रीगोवर्द्धननाथजी कैं एसे कृपापात्र भगवदीय हते।

वार्ता प्रसङ्ग ७—और एक दिन श्रीगुसांईजी चतुर्भुजदास सों कहे, जो–तुम 'अपछरा' कुंड ऊपर जायकें रामदासजी कों इहां पठाय दीजो, और तुम रामदास कों पठाय कैं कछु फूल मिले तो लेते आइयो। तब चतुर्भुजदास आप अपछरा कुंड ऊपर आय, तहां इनकों रामदासजी मिले। तिनसों चतुर्भुजदास ने कही, जो–तुमकों श्रीगुसांईजी बुलावत हैं, सो तुम बेगे जाओ। यह सुनिकें रामदासजी। श्रीगुसांईजी के पास चले। सो चतुर्भुजदास अकेले ही फूल वीनत वीनत श्रीगोवर्द्धन की कंदरा के पास आय निकसे। तहां देखे तो—श्रीगोवर्द्धननाथजी और श्रीस्वामिनीजी कंदरा में.तें उनींदे पधारे हैं। सो चतुर्भुजदास कों ता समय एसे दरसन भये। तब यह पद चतुर्भुजदासने गायो, सोपद—

राग विभास। 'श्रीगोवर्द्धन—गिरि सघन कंदरा रेन निवास कियो पिय प्यारी०।'

यह कीर्तन श्रीगोवर्द्धननाथजी आप सुनिकैं आज्ञा किये, जो—चतुर्भुजदास! कछु और गावो। तव चतुर्भुजदासने यह दूसरो कीर्तन ताही समैं गायो। सो पद—

राग विलावल। 'रजनी राज कियो निकुंज नगर की रानी।'

यह कीर्तन चतुर्भुजदासने गायो। पाछैं श्रीगोवर्द्धननाथजी कों दंडवत करिकैं ताही समैं चतुर्भुजदास आनंद में फूल लैकैं, श्रीगुसांईजी कों आयकें दंडवत करी। तब श्रीगुसांईजी कहे, जो—चतुर्भुजदास! तू फूल लेन कों गयो सो अब तांई कहां रह्यो? तब चतुर्भुजदासने सब समाचार श्रीगुसांईजी सों कहे। तब श्रीगुसांईजी सुनिकैं चतुर्भुजदास के ऊपर वहोत प्रसन्न भये।

ता दिन तें श्रीगुसांईजी आप श्रीमुख तें आज्ञा किये, जो—चतुर्भुजदास! जब श्रीगोवर्द्धननाथजी को शृंगार होय, ता समैं तू नित्य दरसन कों आयो कर। पाछे जब श्रीगोवर्द्धननाथजी को शृंगार होतो तब चतुर्भुजदास ठाड़े दरसन करते।

वार्ता प्रसंग ८—फेर ता पाछैं चतुर्भुजदास व्याह न करते। तब श्रीगोवर्द्धननाथजीने चतुर्भुजदास सों कह्यो, जो—चतुर्भुजदास! तू व्याह कर। तब चतुर्भुजदासने कही, जो महाराज! मैं यह सुख छांड़िकैं आपदा में क्यों परौं! तब श्रीगोवर्द्धननाथजी ने फैर आज्ञा करी, जो—वेगि व्याह कर।

तव श्रीगोवर्द्धननाथजी की आज्ञा मानि कैं चतुर्भुजदास ने ब्याह कर्यो।

सो कछुक दिन पाछे चतुर्भुजदास की वहू मरि गई। तब चतुर्भुजदास कों अटकाव (सूतक) भयो, तब वे अत्यंत विरह करिकैं आतुर भये। तब चतुर्भुजदास के अंतःकरण को श्रीगोवर्द्धननाथजी ने जानी। सो बन में चतुर्भुजदास बैठे बैठे बिरह करते, श्रीगोवर्द्धन-नाथजी सों प्रार्थना करते। सो कीर्तन करिकैं दिन वितीत किये। ता समैं चतुर्भुजदासने कीर्तन गाये। सो पद—

राग भैरव। 'भोर भाँवतो श्रीगिरिधर देखों०।'

राग बिलावल। 'श्यामसुंदर प्राणप्यारे छिन जिन होउ न्यारे०।'

राग धनाश्री। 'गोपाल को मुखारविंद जियमें विचारो।'

एसे एसे प्रार्थना के चतुर्भुजदासने बहोत कीर्तन करि कैं सूतक के दिन वितीत किये, ता पाछे सुद्ध होयकैं श्रीनाथजी के शृंगार के दरसन चतुर्भुजदासने किये। तब साष्टांग दंडवत करिकैं हाथ जोरि कैं श्रीगोवर्द्धननाथजीके साम्हैं चतुर्भुजदास ठाड़े भये। तव श्रीनाथ-जी उनकी सामनें देखिकैं मुसिकयाये। ता पाछे ग्वालके, राजभोगके दरसन करिकैं चतुर्भुजदास मन में विचारे, जो—घर चलिये। तब फेर श्रीगोवर्द्धननाथजी चतुर्भुजदास सों कहें, जो—चतुर्भुजदास! तू दूसरो विवाह कर। तब चतुर्भुजदासने कही, जो--महाराज! जाति में तो लरिकिनी कोई नाहीं है। तब श्रीगोवर्द्धननाथजीने चतुर्भुजदास सों फेरि कह्यो, जो-तू घरेजो कर। तब वह बात सुनि कैं चतुर्भुजदास कछु बोले नांही।

ता पाछे नित्य दिन ५—७ लों आप श्रीगोवर्द्धननाथजी कहे, परंतु चतुर्भुजदास के मन में यह बात न आई। तब यह बात श्रीनाथजीने सदूपांडे सों जताई, जो—तुम ढूंढिकैं चतुर्भुजदास को घरेजो कराय देउ।

तब सदूपांडे ने चतुर्भुजदास तें कही, जो—श्रीगोवर्द्धननाथजी ने यह आज्ञा करी है, तातें अवश्य श्रीप्रभुजी की आज्ञा करी चहिये। तब चतुर्भुजदासने कही जो-वे तो मेरे पाछे परे हैं, अब कहा करें?

ता पाछैं एक मुकद्दम की बेटी रांड हती, सो वासों सदूपांडेने कहिकैं चतुर्भुजदासकों धरेजो करायो । ता पाछैं श्रीगोवर्द्धननाथजी चतुर्भुजदास सों हसन लागे, जो –यह देखो कुंभनदासजी सारिखे को बेटा होयकैं स्त्री मरि गई तोऊ दोई च्यारि महिनाहू न रह्यो गयो, सो तुरत ही धरेजो कियो, और तोहू संतोष नांही । सो या भांति सों चतुर्भुजदास की हांसो श्रीगोवर्द्धननाथजी सखा सहित नित्य करते ।

सो एक दिन चतुर्भुजदास नेहू यह सुनी सो श्रीगोवर्द्धननाथजी सों कह्यो, जो—मोकों तो तुम नित्य एसे कहत हो, परंतु तुम हू तो घर घर व्रजवधून के संग लागे रहत हो, (और) संग डोलत हो। यह सुनिकैं श्रीगोवर्द्धननाथजी लज्या पाये। सो चतुर्भुजदास तें तो कछु बोले नांही, परि श्रीगोवर्द्धननाथजीने श्रीगुसांईजी सों जायकैं कह्यो, जो—मोकों चतुर्भुजदास या भांति सों कहत है। तातें तुम वाकों बरजि दीजो, जो—अब एसे कबहु न कहे ।

पाछे जब चतुर्भुजदास मंदिरमें दरसन करन कों आये, तब श्री गुसांईजी चतुर्भुजदासकों बुलायकैं कहे, जो—तू श्रीगोवर्द्धननाथजी सों एसे क्यों कह्यो ? तब चतुर्भुजदासने श्रीगोवर्द्धननाथजी की बात सब श्रीगुसांइजी के आगे कही, जो—महाराज ! ये मेरी नित्य हांसी करत हैं, जो एक बार मैंने हू एसे कह्यो। तब श्रीगुसांईजीने चतुर्भुजदास सों कह्यो जो-आज पाछे एसे तुम मति कहियो ।

ता दिनतें श्रीगोवर्द्धनाथजी कहते, परि चतुर्भुजदास कछु न कहते। और श्रीनाथजी आप तो हांसी करते। एसी कृपा श्री-गोवर्द्धननाथजी चतुर्भुजदास की ऊपर करते।

सो वे चतुर्भुजदास श्रीगोवर्द्धननाथजी सों एसे सानुभावता सों बात करते। तातें वे चतुर्भुजदास श्रीगुसांईजी के एसे कृपा-पात्र भगवदीय हते ।

वार्ता प्रसंग ६—और एक समय श्रीगुसांईजी आप परदेस पधारे। सो फागुन वद ७ कों श्रीगोवर्द्धननाथजी आप मथुरा में श्रीगुसांईजी के घर पधारे हते। तब श्रीगिरिधरजी आदि सब बालक बहु बेटीनने सगरो घर, गहेना, वस्त्रादि सब श्रीगोवर्द्धन-नाथजी की भेंट करि दियो। तब एक बेटीजी ने सोने की मुदरी छिपाय राखी हती।

तब श्रीगोवर्द्धननाथजी श्रीगिरिधरजी सों कहे, जो—मेरी भेंट फलानी बेटी के पास है, सो तुम लै आओ। तब श्रीगिरिधरजी ने आयकें कह्यो, जो अपनो घर श्रीगोवर्द्धननाथजी की भेंट करयो है, तामें तें तुम कछु राख्यो है, सो देहु। तब उन ने मुदरी राखी हती सो दीनी। ता पाछे सब बहू बेटी बहोत ही प्रसन्न भये। जो-हमारी सत्ता की वस्तु श्रीगोवर्द्धननाथजीने अत्यंत प्रीति सों मांगि कें अंगीकार कीनी, सो अपनो बड़ो भाग्य है।

सो जा समैं श्रीगोवर्द्धननाथजी मथुरा पधारे,ता समैं चतुर्भुजदास जमुनावता अपने घर हते। सो जान्यो नांही, जो-श्रीगोवर्द्धननाथ जी आप मथुरा पधारे हैं। सो चतुर्भुजदास उत्थापन के समैं श्रीनाथजी के मंदिर में आये। तब श्रीगिरिराज पर्वत की ऊपर श्रीनाथजी कों न देखे। तब सबन सों पूछे, जो—श्रीगोवर्द्धननाथजी आप कहां पधारे हैं? तब पौरिया ने और सब सेवकन ने कह्यो, जो—श्रीनाथजी तो मथुराजी पधारे हैं। यह सुनिकैं चतुर्भुजदास के मन में बहोत विरह भयो। तब श्रीगिरिराज के ऊपर बैठिक विरह के कीर्तन करन लागे। सो पद—

राग गोरी—'बात हिलग की कासों कहिये०।'

एसे एसे कीर्तन चतुर्भुजदासने बहोत किये।

ता पाछे नृसिंह चतुर्दशी को एक दिवस बाकी रह्यो, तब तेरस के दिन संध्या आरती के समय चतुर्भुजदास गिरिराज परवत के ऊपर आये, सो श्रीगोवर्द्धननाथजी बिना मंदिर देख्यो न गयो। तब चतुर्भुजदास के मन में अत्यंत विरह भयो। तब यह कीर्तन चतुर्भुजदास ने कियो। सो पद—

राग गोरी—'श्रीगोवर्द्धनवासी सांवरे लाल! तुम बिन रह्यो न जाय हो।

या भांति सों अत्यंत विरह के कीर्तन चतुर्भुजदासने किये। सो प्रथम तो गायन के झुंड के दर्शन चतुर्भुजदास कों भये। ता पाछे सखान के मध्य श्रीगोवर्द्धननाथजी श्रीबलदेवजी के दर्शन भये। तब चतुर्भुजदास ने निकट जायकें दंडवत करिकें श्रीनाथजी सों बिनती कीनी, जो—महाराज! आप कृपा करि कें मोकों श्रीगोवर्द्धन

पर्वत ऊपर दरसन कब देउगे ? तब श्रीगोवर्द्धननाथजी चतुर्भुज-दास सों कहें, जो—मैं कालिह श्रीगोवर्द्धन परवत ऊपर पधारूंगो।

ऐसे चतुर्भुजदास कों धीरज देकें श्रीनाथजी आप तो अंतर्ध्यान भये। सो चतुर्भुजदास ने सगरी रात्रि विरह के पद गाये।

ता पाछें प्रहर एक रात्रि गई। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी ने श्री गिरिधरजी सों जताई, जो—कालि प्रात मोकों गोवर्द्धन पर्वत के ऊपर पधरावो। जो कालि श्रीगुसांईजी उहां पधारेंगे, तातें तुम अब ढील मति करो।

पाछे श्रीगोकुलनाथजी ने श्रीगिरिधरजी सों कह्यो, जो—श्री-गुसांईजी दोय चार दिन में पधारिवे वारे हैं, सो अपने घरमें श्री गोवर्द्धननाथजी को दरसन श्रीगुसांईजी करें तो आछो। तातें श्रीनाथजी कों चारि दिन और राखो। तब श्रीगिरिधरजी ने कह्यो, जो—तुम कहो सो तो सांच, परंतु श्रीगोवर्द्धननाथजी की इच्छा ऐसी है, तातें प्रातःकाल अवश्य श्रीगोवर्द्धननाथजी कों श्री गोवर्द्धन परवत ऊपर पधरावने।

पाछे रात्रि कों सब तैयारी करि राखी। ता पाछें रात्रि घड़ी ४ रही, तब श्रीनाथजी कों जगायकें मंगल भोग समर्पे। पाछें मंगला आरती करि, रथ पर श्रीगोवर्द्धननाथजी कों पधरायकें सब बालक, बहू, बेटी सब संग चले। और इहां चतुर्भुजदास गिरिराज परवत के ऊपर ऊंचे चढिकें वारंवार देखत हैं, जो—अब श्रीगोवर्द्धन-नाथजी पधारेंगे। तब चतुर्भुजदास ने ता समय यह कीर्तन गायो—

राग सारंग—'तबतें जुग समान पल जात०।'

यह कीर्तन चतुर्भुजदास ने कह्यो। इतने में श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन चतुर्भुजदास कों भये। पाछें श्रीगिरिधरजी आदि सब बालकन कों दंडवत किये। पाछे श्रीगिरिधरजी श्रीगोवर्द्धननाथजी को शृंगार कियो और राजभोग की तैयारी होन लागी।

ता पाछें श्रीगुसांईजी आप गुजरात के परदेसतें पधारे, सो श्रीगोवर्द्धननाथजी के उत्थापन भोग को समों हतो। तब श्रीगुसांई जी आयकें अपनी बैठक में पधारे, सो श्रीगिरिधरजी आदि सब बालक आयकें मिले।

ताही समय श्रीगोवर्द्धननाथजी के राजभोग की माला बोली। तब श्रीगुसांईजीने श्रीगिरिधरजी सों पूछी, जो—श्रीगोवर्द्धननाथजी के इहां राजभोग की इतनी अवार काहे कों है ? तब श्रीगिरिधरजी ने श्रीगुसांईजी सों कह्यो, जो आज श्रीगोवर्द्धननाथजी मध्याह्न समैं मथुरातें इहां पधारे हैं। तातें आज इतनी ढील भई है।

तब श्रीगोकुलनाथजी ने श्रीगुसांईजी सों कह्यो, जो—हम तो दादातें कहे हुते, जो दोय दिन श्रीगोवर्द्धननाथजी कों अपने घर और राखो, तातें श्रीगुसांईजी आपु अपने घरमें श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन करें तो आछो। परि दादा ने न मानी, सो आज ही गोवर्द्धननाथजी कों पधराये हैं।

तब श्रीगुसांईजी श्रीगिरिधरजी के ऊपर बहुत प्रसन्न भये। और श्रीगिरिधरजी सों कहे, जो—तुमने मेरे मन को अभिप्राय जान्यो। जो मैं श्रीगोवर्द्धननाथजी कों श्रीगिरिराज पर्वत ऊपर न देखतो तो मोसों रह्यो न जातो।

ता पाछें श्रीगुसांईजी तुरत ही स्नान करिकैं श्रीनाथजी के मंदिर में पधारे, सो नृसिंह जयंती को उत्सव कियो।

ता दिन तें प्रतिवर्ष नृसिंह जयंती के दिन सेन आरती के समय श्रीगोवर्द्धननाथजी कों राजभोग आवे, फेरि माला बोले, जो यह रीत भई। सो चतुर्भुजदास कों श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन करि कैं बड़ो आनंद भयो। ता पाछे अनोसर करिकैं श्रीगुसांईजी अपनी बैठक में पधारे। तब चतुर्भुजदास ने श्रीगुसांईजी कों दंडवत करि कैं सब समाचार कहे, जो—या भांति सों श्रीगोवर्द्धननाथजी मथुरा पधारे। ता पाछें आज यहाँ श्रीगोवर्द्धन परवत पै पधारे हैं।

तब श्रीगुसांईजी आप श्रीमुख तें कहे, जो—श्रीगोवर्द्धननाथजी परम दयाल हैं। अपने जनकी आरति सहि सकत नांही हैं। पाछे आप श्रीगुसांई जी पौढि रहे।

सो वे चतुर्भुजदास श्रीनाथजी तथा श्रीगुसांईजी के ऐसे कृपापात्र भगवदीय हते।

वार्ता प्रसंग १०—और एक समय श्रीगोकुलनाथजीने श्रीगुसांई जी सों पूछ्यो, जो—आप आज्ञा करो तो एक बार चतुर्भुजदासकों

श्रीगोकुल लै जाऊं। तब श्रीगुसांईजी कहैं, जो—चतुर्भुजदास आवे तो ले जाउ।

ता पाछैं श्रीगोकुलनाथजीने चतुर्भुजदास सों कह्यो, जो—पेंठ्यो गाम है (तहाँ) हम कों कछु काम है, सो तुम हमारे संग चलो।

तब चतुर्भुजदास श्रीगोकुलनाथजी के साथ चले। जब पेंठ्यो गाम में श्रीगोकुलनाथजी आये तब चतुर्भुजदास सों ये कह्यो, जो-हम कों श्रीगोकुल जानो है, जो हमारे संग खवास कोऊ नांही है, तातें तुम हमारे संग श्रीगोकुल तांई चलो। तहाँ श्रीनवनीतप्रियजी के दर्शन करिकैं तुमकों फेरि हम यहाँ लै आवेंगे।

तब श्रीगोकुलनाथजी घोड़ा ऊपर असवार होयके पधारे। तब चतुर्भुजदास हू संग चले। पाछे श्रीगुसांईजी यह सुनिकैं श्रीगिरिधरजी कों श्रीनाथजी की पास राखिकैं आप हू घोड़ा ऊपर असवार होयकैं श्रीगोकुल पधारे। सो उत्थापन को समय हतो, सो श्रीगुसांईजी स्नान करिकैं श्रीनवनीतप्रियजी कों जगाये।

ता पाछे संध्यार्ति के समय श्रीगोकुलनाथजीने और चतुर्भुजदासनें सुन्यो, जो-श्रीगुसांईजी आप यहाँ पधारे हैं। तब श्रीगोकुलनाथजी और चतुर्भुजदास बहोत प्रसन्न भये। सो तत्काल श्रीनवनीतप्रियजी के मंदिर में आये। तब श्रीगुसांईजी श्रीनवनीतप्रियजी के मंदिर में पधारे, और चतुर्भुजदास कों बुलायकैं श्रीनवनीतप्रियजी के दरसन करवाये। सो दरसन करिकैं ता समैं चतुर्भुजदास ने गायो। सो पद—राग बिलावल।

१ महा महोत्सव श्रीगोकुल गाम०।

२ अंगुरी छांड़ि रेंगत अरग थरग०।

या भाँति सों लीला सहित चतुर्भुजदास ने और हू कीर्तन गाये। सो सुनिकैं श्रीगुसांईजी ने चतुर्भुजदास तें कह्यो, जो—चतुर्भुजदास! तोकों चहिये सो मांग। तब चतुर्भुजदासने श्रीगुसांईजी सों हाथ जोरिकैं बिनती कीनी, जो—महाराज! आपतो अंतरगत की जानत हो, तातें आप मोकों कृपा करिकैं श्रीगोवर्द्धननाथजीके दरसन कराओ। तब श्रीगुसांईजी ने चतुर्भुजदास सों कह्यो, जो कालिह श्रीनवनीतप्रियजी को शृंगार करिकैं, पालना झुलाय कें हम हू

चलेंगे, तब तुम हू संग चलियो। तब तो चतुर्भुजदास मनमें बहुत प्रसन्न भये। ता पाछे रात्रि कों तो चतुर्भुजदास सोय रहे। पाछैं प्रातःकाल होत ही चतुर्भुजदासने आयकैं श्रीगुसांईजी कों दंडवत किये। ता समैं मंगला के दरसन भये, तहां चतुर्भुजदास ने यह पद गायो। सो पद—

१ राग विलावल। हौं वारी नवनीतप्रिया०।

२ राग देवगंधार। दिन दिन देन उराहनो आवति०।

ऐसे ऐसे कीर्तन चतुर्भुजदासने तहाँ गाये।

पाछे श्रीगुसांईजी आपु श्रीनवनीतप्रियजी कों भोग सराय कैं शृंगार करिकैं पालने झुलायें। ता समय चतुर्भुजदास ने यह पालना को पद गायो—राग रामकली।

१ अपने री बाल गोपाले हो, रानी जू पालने झुलावे०।

२ झूलो पालने गोविंद०

यह पालना चतुर्भुजदासने गाये, सो सुनिक श्रीगुसांईजी बहोत प्रसन्न भये।

ता पाछे श्रीगुसांईजी घोड़ा मंगाय, ता ऊपर सवार होय कैं चतुर्भुजदास कों संग लैकैं गिरिराज पधारे।

उहां श्रीगोवर्द्धननाथजी के राजभोग को समय हतो। सो श्रीगुसांईजी आप तत्काल स्नान करिकैं श्रीगोवर्द्धननाथजी के राज-भोग समर्प्यो। पाछे समो भयो, भोग सरायो। जब दरसन के किंवाड़ खुले, तब चतुर्भुजदास सों कुंभनदासने कही, जो—कछु कीर्तन गाव। तब चतुर्भुजदास ने यह कीर्तन गायो। सो पद—

राग सारंग। तब तैं और कछुन सुहाय०।

यह सुनिकैं श्रीगोवर्द्धननाथजी चतुर्भुजदास के साम्हे देखि कैं मुसिक्याये। तब चतुर्भुजदास ने दंडवत करिकैं कह्यो, जो—आज मेरो धन्य भाग्य है, जो–श्रीगोवर्द्धननाथजी के दर्शन भये।

पाछे इतने में टेरा आयो। तब चतुर्भुजदास दंडवत करिकैं बाहिर आये। तब कुंभनदास चतुर्भुजदास तें पूछे, जो—चतुर्भुज-दास! तू कहाँ गयो हतो। तव चतुर्भुजदास ने कुंभनदास सों कह्यो, जो—श्रीगोकुलनाथजी श्रीगोकुल लिवाय गये हते। सो अबहि

श्रीगुसाईंजी के संग आयो हूँ ! तब चतुर्भुजदास तें कुंभनदासजी नें कह्यो, जो--तू प्रमान में जाय पर्यो।

तब यह बात कुंभनदासके मुख तें सुनिकैं श्रीगुसांईजी आप मंदिर में हँसे। ता पाछैं श्रीगोवर्द्धननाथजी कों अनोसर करिकैं श्रीगुसांईजी आप अपनी बैठक में पधारे। तब चतुर्भुजदास ने श्रीगुसांईजी सों विनती करी, जो--महाराज ! कुंभनदासजी ने मोतैं कह्यो, जो तू कहाँ गयो हतो ? तब मैं कह्यो, जो--श्रीगोकुलनाथजी के संग श्रीगोकुल गयो हतो। तब उन मोतैं कह्यो, जो-तू प्रमान में जाय पर्यो। सो श्रीगोकुल कों प्रमान क्यों गिने ?

तब श्रीगुसांईजी आपु चतुर्भुजदास सों कहे, जो कुंभनदास को मन श्रीगोवर्द्धननाथजी में लाग्यो है। जो एक क्षण हू न्यारे नांहि होत हैं। तातैं ए और लीला कों प्रमान जानत हैं, और हैं तो दोऊ लीला एक ही। ता दिन तैं चतुर्भुजदास श्रीगिरिराजजी की तलेटी छाँड़ि कैं कहूँ न जाते। ता पाछैं श्रीगुसांईजी आप तो भोजन करिकैं विसराम किये। तब चतुर्भुजदास दंडवत करिकैं अपने घर आये। श्रीगोवर्द्धननाथजी हू चतुर्भुजदास पे परम कृपा करते। सो वे चतुर्भुजदास एसे परम कृपापात्र भगवदीय हते।

वार्ता प्रसंग ११—और कितेक दिन पाछैं श्रीगुसांईजी आप श्रीगिरिराज की कंदरा में होयकैं, लीला में पधारे, तब श्रीगिरिधरजी कों अपनो उपरेना दिये। और यह कहे, जो—श्रीगोवर्द्धननाथजी की आज्ञा में रहियो। जामें श्रीगोवर्द्धननाथजी प्रसन्न रहें सोई कीजो, और सब बालकन को समाधान राखियो। श्रीनाथजी के सेवक, जो वैष्णव हैं इन सबन को समाधान राखियो। और जो मेरे अंग को उपरेना है, ताको सब लौकिक संस्कार कीजो। काहेतैं जो--संस्कार न करोगे, तो फिरि कोई कर्मसंस्कार न करेगो। तातैं तुम अवश्य करियो और काहू बात की चिंता मति करियो। सब वस्तु के कर्ता श्रीगोवर्द्धननाथजी हैं।

एसे श्रीगिरिधरजी को समाधान करिकैं श्रीगुसांईजी आप तो गिरिराज की कंदरा में होयकैं लीला में पधारे।

ता पाछैं श्रीगिरिधरजी आदि दे सब बालकन सहित, सब

सेवकन सहित महाबिरह करि कैं महाव्याकुल भये। सो ता समय को विरह कछु कहिवे में न आवे।

पाछें फेर धीरज धरिकैं श्रीगुसांईजी ने जो उपरेना की जैसे आज्ञा कीनी हती, तैसेई श्रीगिरिधरजी ने वा उपरेना कों अग्नि संस्कार कियो। पाछे वेदोक्त विधि सों सब कर्म दस गात्र-विधान कियो, और हू लौकिक विधि सब करि सुद्ध होये। ता पाछे श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेवा में सावधान भये।

सो जा समय श्रीगुसांई जी श्रीगोवर्द्धन पर्वत की कंदरा में होय कैं लीला में पधारे, ता समैं चतुर्भुजदास जमुनावता गाम में अपने घर में हुते। सो सुनिकैं चतुर्भुजदास दौरे ही आये, सो आयकैं महाव्याकुल होय कंदरा के आगे गिरि परे; और महाविलाप करन लागे। जो—महाराज! पधारत समैं मोकों आपके दरसन हू न भये। और मैं आप बिना या पृथ्वी ऊपर कौनकों देखूंगो, तातैं अब या पृथ्वी ऊपर मोकों मति राखो। मोहू कों आपके चरनारविंद कैं पास निकट ही राखो, मोहू कों बुलाय लीजे। एसे महाबिरह संयुक्त होयकैं चतुर्भुजदास ने तहां यह कीर्तन गायो। सो पद— राग केदारो।

फिर ब्रज बसहू श्रीविट्ठलेस।
कृपा करिकैं दरस दिखावहु वह लीला वह वेस॥
संग गाय अरु ग्वाल लैं गोकुल गांव करहु प्रवेस।
नंदराय जो बिलसी संपति बहु ऊर नरेस॥
भक्ति मारग प्रकट करि कलिजन देहु उपदेस।
रचो रास विलास वह सब गिरि गोवरधन देस॥
वदन इन्दु तें विमुख नैन चकोर तपत विसेस।
सुधापान कराई मेटहु विरह को लवलेस॥
श्रीबल्लभनंदन, दुःख निकंदन, सुनहु चित्त संदेस।
'चतुर्भुज' प्रभु घोखकुल के हरहु सकल कलेस॥

जो एसे विरह के कीर्तन चतुर्भुजदास ने बहुत किये। तब श्री-गुसांईजी ने चतुर्भुजदास की बहोत आरति जानिकैं महाआनन्द स्वरूप (सों) चतुर्भुजदास के हृदय में आयकैं आपु दरसन दिये।

और कहैं, जो—चतुर्भुजदास ! तू इतनो विरह काहे कों करत हैं ? मैं तो सदा, तेरे पास ही हूं। तातें तू अब इतनो खेद अपने मन में मति करे। और अब तो मेरो दरसन तू श्रीगोवर्द्धननाथजी के निकट ही कर्‌यो कर। जहां श्रीगोवर्द्धननाथजी हैं (वहां) सदैव मोहू कों तिनके पास जान्यो कर, तहां ही मैं रहत हों।

एसें चतुर्भुजदास को समाधान करिकैं श्रीगुसांईजी तो आप अन्तर्ध्यान भये। पाछैं चतुर्भुजदास ताही स्वरूपानन्द में मगन होय कैं तहां यह कीर्तन गायो। सो पद—

राग केदारो।

श्रीविट्ठल प्रभु भये न ह्वै हैं।
पाछैं सुनैं न आगें देखै यह छवि फेर न बनि हैं ॥ १ ॥
मनुष देह धरि भक्त-हेत कलिकाल जनम को लै हैं।
को फिरि नन्दराय को वैभव ब्रजबासिन बिलसै हैं ॥ २ ॥
को कृतज्ञ करुणा सेवक तन कृपा सुदृष्टि चितै हैं।
ग्वाल गाय सब संग लेकैं को फिरि गोकुल गाम वसै हैं ॥३॥
धर्मथंम होय ज्ञान कर्म, को जगति भक्ति प्रकटै हैं।
को करकमल सीस धरकें अधमनि वैकुण्ठ पठै हैं ॥ ४ ॥
रासविलास महोछ्व हरि को राग भोग सुख दैहैं।
को सादर गिरिराजधरण की सेवा सार दृढै हैं ॥ ५ ॥
भूषण बसन गोपाललाल के को सिंगार सिखै हैं।
को आरति वारत श्रीमुख पर आनन्द प्रेम बढै हैं ॥ ६ ॥
मथुरा—मंडल खग मृग की को महिमा करि बरनै हैं।
को वृन्दावनचंद गोविंद को प्रकट स्वरूप दिखै हैं ॥ ७ ॥
का को बहोरि प्रताप जु एसो प्रकट पुहुमि में छै हैं।
का को गुन कीरत लीला जसु सकल लोक चलि जै हैं ॥ ८ ॥
श्रीबल्लभसुत दरसन कारन अब सब कोउ पछितै हैं।
'चतुर्भुज' आस इतनी जो यह सुमिरित जन्म सिरै हैं ॥ ९ ॥

एसे एसे बहोत कीर्तन चतुर्भुजदास ने करिकैं श्रीगुसांईजी के चरनारविंद में मन राखि, अपनी देह छोड़ी कैं आप हू लीला में जाय प्राप्त भये। सो चतुर्भुजदास की यह लीला देखिकैं और जो वैष्णव हते तिनकैं (और) सेवकन के मन में बहोत दुःख भयो।

ता पाछे चतुर्भुजदास के एक बेटा हतो राघोदास सो आयो, और वैष्णव सब आये। तिन सबनने मिलकैं चतुर्भुजदास को अग्निसंस्कार कियो। और क्रिया कर्म दसगात्र करि सुद्ध होये।

ता पाछैं वे राघोदास जो हे चतुर्भुजदासजी के बेटा, सो तिनहू श्रीगुसांईजी सों नाम पायो हो।

सो राघोदास एक समें गांठोली की कदमखंडी में श्रीगोवर्द्धननाथजी की गायन कों चरावत हते, सो उनकों गायन के मध्य श्री गोवर्द्धननाथजी के दरसन भये। होरी खेलत गोपीन के जूथ के मध्य दरसन भये। सो एसे दरसन करिकैं तहां राघौदास ने एक धमार करिकैं गाई, जो—'अरीचल जइये जहाँ हरि खेलत होरी०।

यह धमार राघौदास ने संपूर्ण करिकैं गाई, ता पाछैं तहां ही राघौदास ने देह छोड़ि दीनी।

तब तहां जो गांठौली के वैष्णव हते तिन सुनी, सो सबन मिलि कैं राघौदास को अग्निसंस्कार कियो।

ता पाछे वे वैष्णव आय कैं श्रीगिरिधरजी सों कहे, जो—महाराज! राघौदास ने या प्रकार सों यह धमारि गाइ कैं अपनी देह छोड़ि दीनी। तब श्रीगिरिधरजी हँसे और कहें, जो—राघौदास बड़े भगवदीय भये। सो उनकों श्रीगोवर्द्धननाथजी ने होरी के खेल के दरसन दिये गोपीन सहित।

भावप्रकाश—ता समैं राघोदास नें यह धमारि गाइ कैं अपनी देह छोड़ि दीनी। सो ताको कारन यह है, जो—श्रीगोवर्द्धननाथजी के लीला सुख को अनुभव राघौदास या देह सों ताको प्रकार सह्यो न गयो। तातैं या देह छोड़ि कैं राघौदास हू जाय कैं लीला में प्राप्त भये।

और श्रीगिरिधरजी हँसे ताको कारन यह, जो-जिनके बाप दादान ने या देह सों लीला सुख को हृदय में अनुभव करि दूसरेन कों हू ताकैं पद गाइ के अनुभव करायो, ताको बेटा यह राघोदास। तासों इतनो सुख हू हृदय में धारन कियो न गयो?

पाछैं राघौदास की बेटी ने डेढ़ तुक बनाइ वा धमार पूरी कीनी।

सो वे राघौदास और उनकी बेटी श्रीगोवर्द्धननाथजी के एसे कृपापात्र भगवदीय हते।

अब श्रीगुसांईजी के सेवक नन्ददास जी सनाढ्य ब्राह्मण, रामपुर में रहते, जिनके पद अष्टछाप में गाइयत हैं– तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं—

★

भावप्रकाश—

ये नन्ददासजी लीला में श्रीठाकुरजी के 'भोज' सखा अंतरंग, तिनको प्राकट्य हैं। सो दिवस की लीला में तो ये 'भोज' सखा हैं, और रात्रि की लीला में श्रीचन्द्रावलीजी की सखी 'चन्द्ररेखा' इनको नाम है। सो वे पूरब में 'रामपुर' गाम में जन्मे।

वार्ता प्रसंग १—सो वे तुलसीदासजी के भाई सनोढ़िया ब्राह्मण हते। सो तुलसीदासजी तो वड़े भाई, और छोटे भाई नन्ददासजी हते। सो वे नन्ददासजी पढ़े वहुत हते।

तुलसीदासजी तो रामानदीन के सेवक हते। सो नंददास हू कों रामानंदीन को सेवक करवायो। उन नंददास कों लौकिक विषय में प्रीति वहोत हती। जो कहूँ भवैया नांचे तो तहां जायकें ठाड़े रहें, सुनवे लगें। सो तुलसीदासजी नन्ददास कों वहोत समुझावें जो—जहां तहां तूम मति वेठिवो करे। सो वे नन्ददास मानते नांही।

सो कछुक दिनमें एक संघ पूरव चल्यो तहांतें सो श्रीरणछोड़जीके दरसन कों श्रीद्वारकाजी को चल्यो। तब नंददास ने मनमें विचारी जो-बने तो मैं हूँ ऐसे संघमें श्रीरणछोडजी के दरसन करि आऊं। तब नंददासने तुलसीदासजी सों कह्यो, जो—तुम कहो तो मैं या संघमें श्रीरणछोडजी के दरसन करि आऊं।

तब तुलसीदासजीने नंददास कों वहोत समझायो, जो—तू कहूँ मति जाय, मारग में दुःख वहोत हैं। अनेक दुःसंग हैं। जो—जायगो तो तू भ्रष्ट होय जायगो। तातें तू श्रीरणछोडजी तांई न पहुँच सकेगो, वीच ही में रहेगो। तातें श्रीरघुनाथजी कौ स्मरन कर और अपने घर में बैठ्यो रहे।

तब नंददासने तुलसीदासजी सों कह्यो,जो-मेरे तो श्रीरघुनाथजी है, परि मैं एकवार श्रीरणछोड़जी के दरसन कों अवश्य करिकैं जाऊंगो। तुम कोटि उपाय करो परि मैं न रहूँगो।

तब तुलसीदासजीने जान्यो, जो—यह न रहेगो, जब संघ में जो-मुखिया सिरदार हतो ताके पास नंददास कों लैकैं तुलसीदासजी गये। और मुखिया सों नंददासकी भलामन तुलसीदासजीने दीनी, जो—यह नंददास तुम्हारे संग आवत है। तातें तुम मारग में याकी खबरि राखियो। ऐसो करियो, जो—इहां फेरि नंददास आवे, काहु गाम मैं रहि न जाय। तब वा मुखिया ने कह्यो, जो-आछो, या बात की चिंता मति करो।

ता पाछैं वह संघ चल्यो, सो वाके संग नंददास हू चले सो कछुक दिनमें वह संघ मथुराजी में आय पहुँच्यो। तब संघ तो मधुपुरी में रह्यो, और नंददास तो मधुपुरी की सोभा देखत देखत विश्रांत ऊपर आये। सो तहां अनेक स्त्री पुरुष स्नान करत देखे, और सुंदर स्वरूप के देखे। सो नंददास तो मनमें देखिकैं बहुत ही मोहित भये। मनमें बिचार कियो, जो ऐसी जगह में कछुक दिन रहिये तो आछो है। सो या भांति नंददास अपने मनमें लुभाये।

ता पाछैं नंददास ने अपने मनमें यह विचार कियो, जो—एक वार श्रीरणछोड़जी के दरसन करि आऊं। ता पाछे आयकैं विश्रांत घाट ऊपर रहेंगे। पाछैं नंददासनें सुनी, जो-संघ तो मथुराजी में दस दिन और रहेगो। तब इनने विचार कियो जो—संग तो अब ही मथुराजी में बहुत दिन लों रहेगो। तो मैं इनतैं अकेलो होयकैं श्रीरणछोड़जी के दरसन कों जाऊँगो।

ऐसो विचार अपने मनमें नंददास करिकैं रात्रिकों तो सोय रहे। ता पाछे नंददास प्रातःकाल उठिकैं चले, सो काहू तें कछु कही नांहीं। पाछैं वा संघ में जो मुखिया हतो, ताने अपने संगमें नंददास कों जब न देख्यो, तब सगरी मथुराजी में ढूंढ्यो।

जब नंददास कहूँ नजर न पड़े, तब ढूंढि कैं बैठि रहे। और नंददासने तो काहूँसों पूछी हू नांही। वे तो अकेले चले ही गये। सो श्रीद्वारकाजी को तो मारग भूलि गये, और चले चले सिंहनंद जाइ निकसे। सो गाम के भीतर चले जात हते। तहां एक क्षत्री श्रीगुसांईजी को सेवक रहतो हतो। सो ताकी वहू अत्यन्त सुंदर हती। सो वह स्त्री अपने घरमें नहाय कैं ऊपर ठाड़ी ठाड़ी केस सुखावत हुती। सो चले जात में वह स्त्री नंददास की दृष्टि परी।

सो नंददास तो वाकों देखिकैं मोहित भये। औरमन में कह्यो, जो—या पृथ्वी ऊपर ऐसे हू मनुष्य हैं ? और वह स्त्री तो उतरि कैं अपने घर के कामकाज में लगी। और नंददास तो तहीं ठाड़े ठाड़े मनमें विचार करन लागे, जो—अब तो एक बार याको मुख देखौं तब जलपान करूंगो। पाछैं ता दिन तो नंददास गये सो कोउ स्थल में जाय कैं सोय रहे, रात्रि कों।

ता पाछैं दूसरे दिन नंददास प्रातःकाल उठिकैं वा स्त्री के द्वार पर आयकैं बैठें। सो नंददास कों तो बैठे बैठे तीन प्रहर व्यतीत होय गये। तब वा क्षत्री के एक लोंड़ी हती, ताने बहू सों कह्यो, जो—एक ब्राह्मण प्रातःकाल को अपने घर के द्वार पर बैठ्यो है। सो वाने पानी हू नांहीं पियो। तब बहूने लोंड़ी सो कह्यो, जो–वा ब्राह्मण सों पूछो तो सही, जो—तुम द्वार ऊपर काहे कों बैठे हो ?

तब लोंड़ी ने आइकैं नंददास सों कह्यो, जो—तुम इहां हमारे द्वार पै क्यों बैठे हो ? तब नंददास नें वा लोंड़ी सों कह्यो, जो—मैं तो तेरी बहू को एक वार मुख देखूंगो। ता पाछैं जलपान करूंगो, तब जाऊंगो। तब वा लोंड़ी वह सुनिकैं अपनी बहू पास गई। और वह सब बात बहू सों कही, जो—वह ब्राह्मण तो तिहारो मुख देखिकैं जायगो। तब बहूनें लोंड़ी सों कह्यो, जो–मैं तो वाकों अपनो मुख दिखाऊंगी नांही। वह तो आपही तें उठि जायगो।

सो ऐसेही नंददास कों हू लाज (हठ ?) पड़ि गई। तब वा लोंड़ीनें बहू तें फेरि कही, जो तुम मेरी एक बात सुनो।

"एक समैं श्रीगोकुल श्रीगुसांईजी के दरसन कों अपनो सगरो घर गयो हो। तब संगमें मैं हुती और तुमही हे। सो श्रीगुसांईजी श्रीगोकुल तें श्रीजीद्वार पधारत हते। और मैं, तुम, तुम्हारो ससुर सब संग हते। ज्येष्ठ को महीना हतो। सो मारग में एक म्लेच्छानी प्यासी होयकैं विकल भई परी हती। वह मेवा फरोसनी हती। सो ताही मारग में होय कैं श्रीगुसांईजी पधारे। श्रीगुसांईजी निकट आये, तब खवासनें वासों कह्यो,—तू मारग छोड़ि कैं न्यारी उठि बैठि। सो वाकों तो उठिवे की सकती नांही। याको तो कंठ पान विना सूखि गयो, सो नेत्रन में प्राण आय रहे हते। सो वापै बोल्यो हू न जाय। तब श्रीगुसांईजी पूछे, जो-यह कहा है ? तब खवासने

श्रीगुसांईजी सों कह्यो, जो—महाराज ! एक म्लेच्छानी है, सो मारग में परी है। जो बहोतेरो वासों कहत है पारे वह उठत नांही ?

तब श्रीगुसांईजीनें वा म्लेच्छानी की ओर देख्यो। तब म्लेच्छानी ने श्रीगुसांईजी की ओर हाथ सों बतायो, जो—मैं तो प्यासी हों। तब श्रीगुसांईजीनें खवास सों कह्यो, जो—याकों वेग ही जल प्यावो। तब खवासनें श्रीगुसांईजी सों कह्यो, जो—महाराज ! इहां तो काहू के पास जल नांही है, और तलाव कूआ हू निकट नांही है, सो पानी कहाँते पाइये ?

तब श्रीगुसांईजीने खवास सों कह्यो, जो-हमारी झारी में जल होयगो। तब खवासनें कही, महाराज ! झारी छुई जायगी। तब श्रीगुसांईजीने खवास तें कह्यो,-झारी तो और आवेगी, परंतु फेरि या म्लेच्छानी के प्रान कहाँते आवंगे ? तातें बेगि जल प्यावो, जीवमात्र पर दया राखनी ॥

सो वह श्रीनवनीतप्रियजी को महाप्रसादी जल हतो। जो वा म्लेच्छानी कों प्यायो, सो वह जल पी गई। तब वा म्लेच्छानी के अंग अंग में सीतलता होय गई।

तब वा म्लेच्छानीनें उठिकें श्रीगुसांईजी सों कह्यो, जो-महाराज ! मैंनें कन्हैयाजी सुने हते, सो आज मैंनें नैनन सों देखे। तातें तुम 'गुसांईयां' सांचे हो, सो मोकों जिवाई।

ता पाछें वह गोकुल रही। सो वह सुंदर मेवा लायकें श्रीगुसांई जी के द्वार लैकें आवै। सो वह म्लेच्छानी श्रीगुसांईजी के मनुष्यतें कहे, जो—ए मेवा तुम राखो। तब वे मनुष्य कहें, जो—तू मोल कहै। तो लेंय, तो यह हमारे काम आवे। तब वह थोरे पैसा कहें सो या भाँति सों वाने अपनो जनम व्यतीत कियो। सो वा म्लेच्छानी के ऊपर श्रीगुसांईजी बहुत प्रसन्न रहते।

ता पाछें वह म्लेच्छानीने देह छोड़ी। सो वाने महावन में जाय कें ब्राह्मण कें घर जनम पायो। सो फेर वे श्रीगुसांईजी की सेवकनी भई, और वह कृतार्थ भई।

सो या भाँति सों लोंड़ीने अपनी बहूसों कह्यो जो—जीव मात्र

ऊपर दया राखनी। तातें ब्राह्मण प्रातःकाल को भूख्यो प्यासो बैठ्यो है, सो यह बात आछी नांही है। तब वह बात बहू के हृदे में आई। पाछें वा लोंड़ी के संग बहू द्वार ऊपर गई। तब नंददास वाको मुख देखिकें उठि गये।

सो या भाँति सों वे नंददास नित्य आवें। सो वाको मुख देखिकें चले जाँय। तब पाछें वाके घर के धनी क्षत्रीने सुनी, जो-यह ब्राह्मण हमारे घर याकों देखवे कों आवत है। तब वा क्षत्रीने आयकें नंददास सों कह्यो, जो—तुम हमारे घर के द्वार पर नित्य आवत हो, सो हमारी जगत में हाँसी बहोत होत हैं।

तब नंददासने वा क्षत्री सों कह्या, जो—मैं तुमतें माँगत नाहीं, कछु तुम्हारो बिगारत नांही। ता पाछें और तुम कहत हो मोसों, तो मैं तुम्हारे माथे मरूंगो।

तब यह नंददास के वचन सुनिकें यह क्षत्रो डरप्यो, जो—अब यातें मैं बोलूंगो तो—यह ब्राह्मण हत्या देयगो, सो कछु कहे नांही। और नंनदास तो वेसेंई नित्य आवें सो वाको मुख देखिकें चलै जांय।

ता पाछें कितेक दिन में यह बात सगरे गाममें भई। जो-फलाने क्षत्री की वहू कों एक ब्राह्मण देखिवे कों नित्य आवत है। सो यह बात सुनिकें वा क्षत्रो कों लाज आई। जब क्षत्री ने अपने पुत्र सों कह्यो, जो-अब हमकों यह गाम छोड़नो आयो।

ता पाछें घरमें को सब वस्तु भाव वेचिकें सब की हुंडी कराई। ता पाछें एक गाड़ी भाड़े करि, दस—पांच मनुष्य मारग के लिये चाकर राखे। प्रातःकालतें नंददास वा वहूको म्होडो देखिकें गये हते। ता पाछे वह क्षत्री, क्षत्री को वेटा, क्षत्री की वहू और चोथी लोंड़ी, सो ये चारों जनें वा गाड़ी में वैठिकें श्रीगोकुल कों चले।

ता पाछै दूसरे दिन नंददास वाके घर आये। सो देखे तो वाके घरको ताला लग्यो है। तब नंददासने वाके परोसीन सों पूछी, जो-आज या घरके ताला लाग्यो है, सो या क्षत्री के घरके लोग कहाँ गये? तब और लोगननें कही, जो—अरे भले आदमी! तेरे दुःख तें तो वा क्षत्रीनें अपनो गाम हू छोड़ि दीनो है। सो वह तो काल प्रातः हो को श्रीगोकुल कों गयो है।

यह वचन सुनतें ही नन्ददास तो अपने डेरा में आये। जो अपनी वस्तुभाव लैकैं ताही समैं श्रीगोकुल कों चले। सो चलत चलत सांझ के समय जहां वा क्षत्री की गाड़ी उतर रही, तहां नन्ददास हू जाय पहोंचे। सो जायकैं वा क्षत्री की गाड़ी के निकट ही बैठि गये। तब वा क्षत्री ने नन्ददास कों देखिकैं कह्यो, जो—जा दुखतें हमने अपनो घर छोड्यो, देस छोड्यो, सो दुख तो हमारे संग ही लग्यो आयो। ता पाछें वा क्षत्री के मनुष्य वासों लरन लागे, जो—तू हमारे संग काहे कों आवत है? तब नन्ददास उठिकैं दूरि जाय बैठे, और कह्यो, जो—हम तुम सों मांगत तो नांहीं कछू, और यह गामहू तुमारो नांही, ता पाछे रात्रि कों तो तहां सोय रहे।

पाछैं प्रातःकाल होत ही वह क्षत्री तो गाड़ी में बैठिकैं तहांतें चल्यो। तब वासों नेक दूरि कै नन्ददास हू चले। सो याही भांति कछूक दिन में श्रीगोकुल के घाट ऊपर आये।

तब उन क्षत्री ने विचार कियो, जो—हम तो या ब्राह्मण के दुःख के मारे गाम छोड़िकैं आये। तोहू वह तो हमारे संग ही आयो है। तातें एसो जतन होई, जो—यह हमारे संग श्रीजमुनाजी उतरिकैं श्रीगोकुल न चले तो आछो है। नांही (तो) हमारी हाँसी श्रीगोकुल में हू होयगी। और श्रीगुसांईजी यह बात सुनेंगे,तो—यह बात आछी नांही है। तब उन मलाहन सों कहे, (और) घटवारेन सों वा क्षत्री ने कह्यो, जो—हम तुमकों कछुक द्रव्य देंयगे, परि या ब्राह्मण कों पार मति उतारो। पाछैं वह क्षत्री नाव में बैठ्यो, तब नंददास हू नाव पर बैठन लागैं, तब उन मलाहनने हाथ पकरिकैं उतार दियो, नाव पें तें। तब नंददास तो श्रीजमुनाजी के तीर ठाड़े २ विचार करन लागैं। और वह क्षत्री तो नाव में बैठि कैं श्रीजमुनाजी के पार भयो। ता पाछैं वह क्षत्री श्रीगोकुल में आयकैं,लोंडीकों एक ठौर बैठाय कैं वाकैं पास सब वस्तुभाव धरिकैं, आप तीनों जनें श्रीगुसांईजी कैं दरसन कों आये। सो श्रीनवनीतप्रियजी कैं राजभोग कैं दरसन किये। ता पाछे अनोसर करायकैं श्रीगुसांईजी अपनी बैठक में पधारे। तब इन तीनों जनैंननें भेंट धरी, और दंडवत कीनी।

तब श्रीगुसांईजी ने पूछी, जो—वैष्णव! कब के आये हो? तब इन कही जो, महाराज! अब ही आये हैं। श्रीनवनीतप्रियजी कैं

राजभोग की आरती के दरसन आपकी दयातें करे हैं। तब श्री-गुसांईजी कहे, जो—आज तुम प्रसाद इहांई लीजो, अब बैठो।

ऐसे आज्ञा देकें श्रीगुसांईजी आप तो भोजन कों पधारे। ता पाछें आचमन करिकें अपनी जूठन की पातरि वा क्षत्री कों धरी। सो चारि पातर श्रीगुसांईजी ने उनकें आगें धरी।

तब वा वैष्णवन ने श्रीगुसांईजी सों बिनती कीनी, जो—महाराज! हम तो तीनही जनें हैं। और आपने चार पातरि कौन कौन की धरी हैं। इहां तो और वैष्णव कोइ दीसत नांही।

तब श्रीगुसांईजीने कह्यो, जो—वह तुमारे संग ब्राह्मण आयो है, जाकों तुम पार छोड़ि आये हो, सो वह कौन के घर जायगो? तब ए बचन श्रीगुसांईजी के सुनिकें तीनों जनें लज्जित भये। और कहें, जो—जा बात तें देखो हम डरपत हतें, जो—हमारी हाँसी श्रीगोकुल में न होय तो आछो है, सो यहां तो सब पहले ही प्रसिद्ध होय रही है। ऐसे कहिकें वे तीनों जनें अत्यंत सोच करन लागे।

सो श्रीगुसांईजी वा क्षत्री सों कहे, जो—तुम सोच काहे कों करत हो? वह तो दैवी जीव है, जो तुमारो संग पाइकें इहां आयो है। सो अब तुमकों दुख न देइगो।

ऐसे वासों कहिकें एक व्रजवासी कों बुलायकें आज्ञा दीनी, जो—तू पार जाइकें तहां श्रीजमुनाजी कें तीर एक नन्ददास ब्राह्मण बैठ्यो है, ताकों बुलाय लाव। तब वह व्रजवासी तत्काल आइकें नाव में बैठि कें पार कों चल्यो। और नन्ददास कों तो उन मलाहन ने नाव पें सों उतारि दियो, सो श्रीजमुनाजी कें तीर बैठे बैठे श्रीजमुनाजी कें आगें विज्ञप्ति के पद गावन लागे। सो पद—

राग रामकली—१'नेह कारन श्रीजमुना प्रथम आइ' २'भक्त पर करि कृपा श्रीजमुनाजू ऐसी' ३ 'श्रीजमुने २ जोइ गावे'

सो या भांति नंददास तो श्रीजमुनाजी कें तीर बैठे बैठे श्रीजमुना जी की स्तुति करत हे।

इतने में वह व्रजवासी जाकों श्रीगुसांईजी ने नन्ददास कों लेवे पठायो हतो, सो नाव लैकें पार जाय पहुँच्यो। सो तहां जायकें पूछ्यो, जो—नन्ददास ब्राह्मण कहां है? तब इन कही जो—नन्ददास

ब्राह्मण तो मैं ही हूं। तब वा व्रजवासी ने नन्ददास सों कह्यो, जो—तुमकों श्रीगुसांईजी ने बुलाये हैं, और यह नाव पठाई है, तामें तुम बैठिकैं वेगि चलो। तब तो नन्ददास प्रसन्न होइकै श्रीजमुनाजी कों दंडवत करिकैं, श्रीगोकुल कों दंडवत करि, पाछैं नाव में बैठकैं पार आये। और आयकैं श्रीगुसांईजीके दरसन करिकें साष्टांग दण्डवत करी। सो दरसन करत ही नन्ददास की बुद्धि निरमल होय गई।

तब तो श्रीगुसांईजी सों हाथ जोरि बिनती करी,जो—महाराज! मैं जब तें जनम पायो, तबतें विषय करत ही जनम गयो। और आप तो परम कृपालु हो, मेरे ऊपर कृपा करिकैं मोकों अपनी सरनि लीजे। सो एसे दैन्यता के वचन नन्ददास कैं सुनिकैं श्रीगुसांईजी बहोत प्रसन्न भये। तब श्रीगुसांईजी श्रीमुख तें आज्ञा किये, जो—नन्ददास! जाओ, स्नान करिकैं अपरस ही में इहां आइयो।

तब नन्ददास वैसे ही स्नान करिकैं अपरसही में श्रीगुसांईजी के पास आये। पाछैं श्रीगुसांईजी ने नन्ददास कों नामनिवेदन (भावात्मक रूप सों) करवायो। तब श्रीगुसांईजी को स्वरूप नन्ददास के हृदयारूढ भयो, ता समैं नन्ददासने यह कीर्तन कियो। सो पद—राग बिलावल। 'जयति रुक्मिनी नाथ पद्मावती—प्राणपति विप्रकुल–छत्र आनन्दकारी'।

सो नन्ददासने यह कीर्तन गायो। सो सुनिकैं श्रीगुसांईजी बहोत ही प्रसंन भये। ता पाछैं श्रीगुसांई जी नंददास कों आज्ञा दीनी, जो—तेरी महाप्रसाद की पातर धरी है, सो जाइकें महाप्रसाद लेवो।

सो नंददास आइकैं महाप्रसादी रसोई—घर में जायकैं श्री गुसांईजी की जूठन को प्रसाद लेन लागे। सो लेत ही स्वरूपानंद को अनुभव होन लग्यो। सो नन्ददास तो देह को अनुसंधान भूलि गये, और जहां के तहां बैठैं रहि गये। सो हाथ धोयवे कः हू सुधि न रही। जब उत्थापन को समय भयो, तब भीतरियान आइकैं श्रीगुसांईजी सों कह्यो, जो—महाराजाधिराज! नंददासजी तो महाप्रसाद लेकैं उहांई बैठि रहे हैं, उठे नांही हैं। तब श्रीगुसांईजीने उन भीतरिया सों कह्यो, जो—उहां तुम नंददास तें कोऊ बोलो मति। ता पाछैं चारि प्रहर रात्रि गई तोऊ नंददास कों देह की सुधि न रही। ता पाछैं दूसरे दिन प्रातःकाल नंददास के पास श्रीगुसांईजी पधारे।

तब श्रीगुसांईजी ने नन्ददास के कान में कह्यो जो--उठो नंददास ! दरसन कौ समय भयो है,तब नंददास उठिकैं श्रीगुसांईजी कौं साष्टांग दंडवत करी। ता समें नन्ददासने यह कीर्तन कियो। सो पद--

राग बिभास। १ प्रात समें श्रीवल्लभसुत को पुन्य पवित्र बिमल जस गाऊं०। २ प्रात समें श्रीवल्लभसुत को उठत ही रसना लीजे नाम०।

सो सुनिकैं श्रीगुसांईजी बहोत प्रसन्न भये।

ता पाछैं श्रीगुसांईजी तो मंदिर में पधारे और नंददास आप देह कृत्य करिवे गये। ता पाछैं श्रीनवनीतप्रियजी के दरसन कौ समय भयो। सो नददास श्रीनवनीतप्रियजी के दरसन करिकैं वहोत प्रसंन भये। तब नददास ने यह पद गायो। सो पद--

राग बिलावल। १ 'गोपाल ललन कों गोद भरि जसुमति हुलरावति०'

यह कीर्तन नददास ने तहां गायो। सो सुनिकें श्रीगुसांईजी वहोत प्रसन्न भये। तब नंददास ने श्रीगुसांईजी सों हाथ जोरि साष्टांग दंडवत करिकैं कह्यो, जो--महाराज ! मोसे पतित को उद्धार करोगे ? सो वे नंददास श्रीगुसांईजी के एसे कृपापात्र भगवदीय भये।

वार्ता प्रसंग २--और एक समय श्रीगुसांईजी रात्रि कों अपनी बैठक में विराजे हतें। तब आप आज्ञा करें, जो--कालि श्रीनाथजी द्वार अवश्य जानों। तब नंददासने बिनती कीनी, जो--महाराजाधिराज ! जैसे आपु कृपा करिकैं श्रीनवनीतप्रियजी के दरसन करवाये, तैसे श्रीनाथजी के दरसन करवावो।

ता पाछैं प्रात भये श्रीनवनीतप्रियजी कें मंगलाकैं दरसन करिकैं, शृंगार राजभोग करिक श्रीगुसांईजी श्रीनाथजीद्वार पधारे, और नददास कों हू संग लिए। सो उत्थापन के समय श्रीगिरिराज आइ पहोंचे। श्रीगुसांईजी तो न्हाय कें मंदिर में पधारे। समो भयो तब दरसन को टेरा खुल्यो। सो नंददास श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन करिकें वहोत प्रसन्न भये। ता समें नददास ने यह कीर्तन गायो। सो पद--राग नट। 'सोहत सुरंग दुरंग पाग कुरंग ललना कैसे लोइन लौने०'।

यह कीर्तन नंददास ने गायो, सो श्रीगुसांईजी मंदिर में सुने. पाछैं टेरा खेंचि लियो। ता पाछैं परमानंद में नंददासने वैठे वैठे औरहू कीर्तन किये। पाछैं संध्यार्ति के दरसन खुले तब नंददास ने दरसन करिकें यह कीर्तन गायो। सो पद--

राग गोरी । १ बन तें सखन संग गायन के पाछैं पाछैं आवत० । २ बनतें आवत गावत गोरी० । ३ देखि सखी हरि को बदन सरोज० । ४ नंदमहरि के मिषही मिष आवे गोकुल की नारी० ।

सो या भांति सों नंददास ने बहौत कीर्तन किये । ता पाछैं नंददास छैं मास पर्यन्त सूरदासजी कैं संग परासोली में रहे । सो श्रीगुसांईजी नंददास ऊपर सदा प्रसन्न रहते । वे नंददास एसे कृपापात्र भगवदीय भये ।

वार्ता प्रसंग ३—और एक समय श्रीमथुराजी को एक संघ पूरब चल्यो, गया:श्राद्ध करिबे कों । ता संघ में दस पांच वैष्णव हू हते । सो कितेक दिन में वह संघ पूरब कों चल्यो, काशीजी जाइ पहुँच्यो ।

तब तुलसीदासजी ने सुन्यो जो—संघ आयो है । तब वा संघ में तुलसीदासजी ने आइकैं पूछी, जो—एक नंददास ब्राह्मण इहां तें गयो है, सो मथुराजी में सुन्यो है । सो तुमने कहुं देख्यो होय तो कहो । तब एक वैष्णव ने कही, जो—तुलसीदासजी ! एक नंददास तो श्रीगुसांईजी को सेवक भयो है । सो वह नंददास पहले तो अत्यंत विषयी हतो, सो अब तो बड़ो ही कृपा पात्र भगवदीय भयो है !

तब तुलसीदासजी अपने मनमें बिचारे, जो—एसो तो वही नंददास है, सो श्रीगुसांईजी को सेवक भयो है । जो अब तो उनकों मेरी शिक्षा न लगेगी । तब तुलसीदासजी ने उन वैष्णवन सों कह्यो, जो—मैं तुमकों एक पत्र देऊं, ताको जुवाब तुम मोकों मगाय देउगे ? तब उन वैष्णवनने तुलसीदासजी सो कही, जो—काल्ह मेरो मनुष्य श्रीगोकुल कों चलेगो । जो तुमको पत्र देनो होय तो लिख कैं वेगि त्यार करियो । तब तुलसीदासजी ने ताही समें पत्र लिखिकें तैयार कियो । तामें लिख्यो, जो—तू पतिव्रत धर्म छाड़ि व्यभिचार धर्म लियो, सो आछो नांहीं कियो । अब तू आवे तो फेरि तोकों पतिव्रत धर्म बनाऊं । सो यह पत्र तुलसीदासजी ने वा वैष्णव के हाथ दियो । सो वह पत्र अपने पत्रान में धरिकैं वा वैष्णव ने कासिद के हाथ दियो । सो वह पत्र लेकैं श्रीगोकुल आयो । तब कासिद ने दंडवत करिकैं वे पत्र श्रीगुसांईजी कैं आगे धरे । तब उन पत्रान में नंददास कै नाम को जो पत्र हतो सो निकस्यो । तब श्रीगुसांईजी ने वह पत्र बांचि कैं नन्ददास कों बुलाय कैं दियो ।

तब नन्ददास ने वह पत्र लेकैं बांच्यो। पाछैं वा पत्र कों प्रति उत्तर लिख्यो, जो—मैरो तो प्रथम रामचन्द्रजी सों विवाह भयो हतो। सो वीच में श्रीकृष्ण दौरि आइकैं लूटि ले गये। सो रामचंद्रजी में जो बल हो तो ता मोंको श्रीकृष्ण कैसे ले जाते? और श्रीरामचन्द्र जी तो एक पत्नीव्रत हैं। सो दूसरी पत्नीकुं कैसे संभार सकेंगे? एक पत्नी हु बराबर संभारि न सकें, सो रावण हरिकैं ले गयो। और श्रीकृष्ण तो अनंत अवलान कैं स्वामी हैं, और इनकी पत्नी भये, पाछैं कोई प्रकार को भय रहे नांही है। एक कालावच्छिन्न अनंत पत्नीन कुं सुख देत हैं। जासों मैंने श्रीकृष्ण पति कीने हैं। सो जानोगे। सो मैं तो अब तन, मन, धन यह लोक, परलोक श्रीकृष्ण कों दीनो है। (और) अब तो मैं परवस होइकैं पर्यो हूँ।

एसो नंददास ने तुलसीदासजी कों पत्र लिख्यो। तामें एक पद यह लिख्यो। सो पद—

राग आसावरी—१ 'कृष्णनाम जबतें श्रवण सुन्यो री आली! भूलि री भवन हों। तो बावरी भई री०'।

यह कीर्तन नंददास ने पत्र में लिखिकैं वह पत्र कासिद कों दियो, सो वह कासिद कितेक दिननमें कासीजी में आयो। सो वे पत्र सब वैष्णव कों दिये। तब उन वैष्णव ने वह नंददास को पत्र बांचि के तुलसीदास कों बुलाय कैं दीनो। पाछैं तुलसीदास ने नंददास को पत्र बांचिकैं अपने मनमें जान्यो, जो—अब नंददास इहां कबहूँ न आवेगो। एसो जानिकैं तुलसीदासजी अपने घर आये।

सो वे नंददासजी श्रीगुसांईजी के एसे कृपापात्र भगवदीय भये, जिनकों श्रीगुसांईजी कैं स्वरूप में एसो दृढ भाव हतो।

वार्ता प्रसंग ४—औ एक समें तुलसीदास जी ने विचार कियो, जो नंददास श्रीगोकुल में है, सो मैं जाइकैं लिवाय लाऊं। यह विचारिकैं तुलसीदास काशीजीतें चले, सो कितेक दिन में श्रीमथुराजी में आइ पहोंचे। तब मथुराजी में पूछे जो—इहां नंददास ब्राह्मण काशी तें आयो है, सो तुम जानत होउ तो बताओ, जो-वह कहां होयगो? तब काहूने कह्यो, जो—एक नंददास तो आइकें श्रीगुसांईजी को सेवक भयो है, सो तो गोकुल होयगो, कै गिरिराज होयगो। तब तुलसीदासजी प्रथम तो श्रीगोकुल आये। सो श्रीगोकुल की सोभा देखि कैं तुलसीदासजी को मन बहुत ही प्रसंन भयो।

पाछें तुलसीदासजी मनमें विचारे जो-ऐसो स्थल छोड़ि कें नन्ददास कैसे चलेगो ? तब तुलसीदासजी ने तहां पूछयो जो—एक नंददास ब्राह्मण हैं, सो कहां होयगो ? तब काहू ने कही, जो—एक नन्ददास तो श्रीगुसांईजी को सेवक भयो। सो श्रीगुसांई जी तो श्रीनाथजी द्वार गये हैं, सो उहांही होयगो। तब तुलसीदासजी फेर मथुरा में आयकें श्रीजमुनाजी के दरसन करे, पाछें तहांते श्री गिरिराजजी गये, सो उहां परासोली में तुलसीदासजी नन्ददासकूं मिले।

तब तुलसीदासजीने नन्ददास सों कही, जो—तुम हमारे संग चलो। सो गाम रुचे तो अयोध्या में रहो, पुरी रुचे तो काशीमें रहो, पर्वत रुचे तो चित्रकूट में रहो, वन रुचे तो दंडकारण्य में रहो। ऐसे बड़े बड़े धाम श्रीरामचन्द्रजीने पवित्र करे हैं। तब नंददास ने उत्तर देयवेकू यें पद गायो। सो पद—

'जो गिरि रुचे तो बसो श्रीगोवर्द्धन, गाम रुचे तो बसो नंदगाम।
नगर रुचे तो बसो श्रीमधुपुरी सोभा-सागर अति अभिराम ॥१॥

सरिता रुचे तो बसो श्रीयमुनातट, सकल मनोरथ, पूरन काम।
'नन्ददास' कानन रुचे तो बसो भूमि वृंदावन धाम ॥२॥

पाछें नन्ददास सूरदासजी सों मिलि कें श्रीनाथजी के दर्शन करवे कूं गये। तब तुलसीदासजी हू उनके पाछें पाछें गये। जब श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन करे तब तुलसीदासजीने माथो नवायो नहीं। तब नन्ददास जानि गये, जो—ये श्रीरामचन्द्रजी बिना और दूसरे कों नहीं नमे हैं। तब नन्ददासने मनमें विचार कीनो, जो—यहाँ और श्रीगोकुलमें इनकों श्रीरामचन्द्रजी के दरसन कराऊं। तब ये श्रीकृष्ण को प्रभाव जानेंगे। पाछे—नंददासने श्रीगोवर्द्धननाथजी सों विनती करी। सो दोहा—

कहा कहूं छवि आज की, भले बने हो नाथ,
तुलसी-मस्तक तब नमे, धनुषबाण लो हाथ ॥

यह वात सुनिकें श्रीनाथजी कों श्रीगुसांईजी को कानतें विचार भयो, जो-श्रीगुसांईजी के सेवक कहैं, सो हमकूं मान्यो चहिये। पाछे श्रीगोवर्द्धननाथजी नें रामचन्द्रजी कौ रूप धरिकें तुलसीदास जीकों दरसन दिये। तब तुलसीदासजीने श्रीगोवर्द्धननाथजी कों

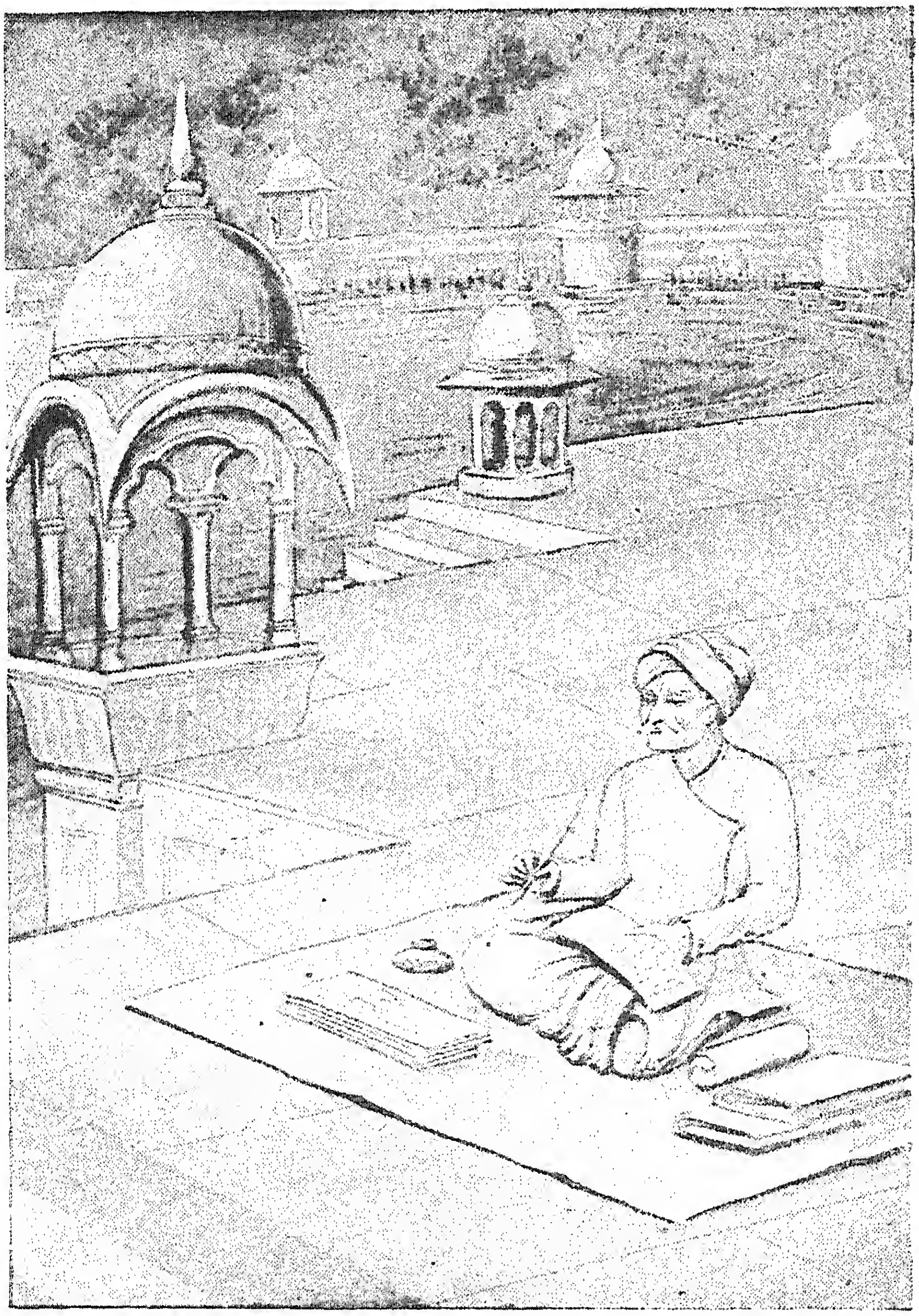

मानसी गंगा के निकट ग्रंथ-रचना में संलग्न—

नंददास

जन्म सं० १५९०]   [देहावसान सं० १६४०

साष्टांग दंडवत् करी । जब पाछैं तुलसीदासजी दरसन करिकैं बाहर आये, तब नन्ददास श्रीगोकुल चले । तब तुलसीदासजी हू संग संग आये । तब आयकैं नन्ददासने श्रीगुसांईजी के दरसन करि साष्टांग दंडवत् करी, और तुलसीदासजीनें दंडवत करी नांहि । पाछे नंददास कों तुलसीदासनें कही, जो—जैसे दरसन तुमने वहां कराये वैसेही यहाँ करावो । तब नन्ददासनें श्रीगुसांईजी सों बिनती करी, ये मेरे भाई तुलसीदास हैं सो श्रीरामचन्द्रजी बिना और कों नहीं नमैं हैं ।

तब श्रीगुसांईजीने कही, जो—तुलसीदासजी ! बैठो ।

ता समैं श्रीगुसांईजीकैं पाँचमैं पुत्र श्रीरघुनाथजी वहां ठाड़े हुते, और उन दिनन में श्रीरघुनाथजी को विवाह भयो हुतो । जब श्रीगुसांईजीनें कही, जो—श्रीरामचन्द्रजी ! तुम्हारे सेवक आये हैं, इनकों दरसन देवो । तब श्रीरघुनाथलालजीने तथा श्रीजानकीबहूजी नें श्रीरामचन्द्रजी को तथा श्रीजानकीजी को स्वरूप धरिकैं दरसन दिये । तब तुलसीदासजीने साष्टांग दंडवत करी ।

पाछैं तुलसीदासजी दरसन करिकैं वहोत प्रसन्न भये । और यह पद गायो । सो पद—

'बरनों अवधि श्रीगोकुल गाम । वहाँ सरजू यहाँ यमुना एक ही नाम०' ।

ता पाछैं तुलसीदासजीने श्रीगुसांईजी सों दंडवत करिकैं कह्यो- जो महाराज ! नंददास तो पहले बड़ो विषयी हतो, सो अब तो वाकों बड़ी अनन्य भक्ति भई है, ताको कारन कहा है ?

तब श्रीगुसांईजी नें तुलसीदासजी सों कह्यो, जो-नंददास उत्तम पात्र हुते, यातें पुष्टिमार्ग में आयकैं प्रवृत्त भये । और अब व्यसन अवस्था ताकों सिद्ध भई है । सो अब वे दृढ़ भये है । तब श्रीगुसांई जी के श्रीमुख के वचन सुनिकैं तुलसीदासजी प्रसन्न होय श्रीगुसांई जी कों दंडवत् करिकैं पाछे आप विदा होय काशी आये सो वे नंददासजी श्रीगुसांईजी के ऐसे कृपापात्र भगवदीय हते । जिनके कहेतें श्रीगोवर्द्धननाथजी कों तथा श्रीरघुनाथलालजी कों श्रीराम- चन्द्रजी को स्वरूप धरिकैं दरसन देने पड़े ।

वार्ता प्रसंग—५ सो एक दिन नंददास के मनमें ऐसी आई जो- जैसे तुलसीदासजीनें रामायण भाषा किये हैं, तैसे हमहू श्रीमद्-

भागवत भाषा करें। पाछें नंददासने श्रीमद्भागवत दशम भाषा संपूरन कियो। तब मथुरा के सब पंडित मिलिकें श्रीगुसांईजी सों विनती कीनी, जो महाराज ! हम श्रीभागवत की कथा कहिकें निरवाह करत हते, सो तुम्हारे सेवक नंददासजीने भाषा में श्रीभागवत कही है। सो अब हमारी कथा कोई न सुनेगो। तातें अब हमारी जीविका तो गई। सो अब आपके हाथ उपाय है।

तब श्रीगुसांईजीनें नंददास कों बुलायकें कह्यो, जो–नंददास ! तुमने जो श्रीमद् भागवत भाषा में कीनो है, सो इन ब्राह्मणन की जीविका में हानि होत है। तासों तुम ब्रजलीला तो पंचाध्याई तांई की राखो, और श्रीजमुनाजी में पधराय देउ। सो नंददासने श्रीगुसांईजी की आज्ञा प्रमान मानिकें ब्रजलीला तांई (भागवत) राखी, और सब श्रीजमुनाजी में पधराय दीनो।

सो वे नंददासजी श्रीगुसांईजी के ऐसे आज्ञाकारी और बड़े कृपापात्र हते।

वार्ता प्रसंग—६ और एक समैं अकबर बादसाह और बीरबल श्रीमथुराजी आये सो बीरबल श्रीगुसांईजी के दरसन कों आयो। सो श्रीनाथजीद्वार श्रीगुसांईजी पधारे हते और श्रीगिरिधरजी घर हते। सो–बीरबल श्रीगिरिधरजी के दरसन करिकें अकबर पात्साह के पास आये। तब पात्साहने पूछी जो–बीरबल ! तू कहाँ गया था? तब बीरबल ने कह्यो, जो–दीक्षितजी के दरसन को श्रीगोकुल गया था। सो श्रीगुसांईजी तो श्रीनाथजी के दरसन को श्रीगोवर्द्धन पधारे हैं, और उनके पुत्र श्रीगिरिधरजी घर थे, सो उनके दरसन करकें आया हूँ। तब पात्साहने बीरबल सों कह्यो, जो–दिन दो में हम भी श्रीगोवर्द्धन चलेंगे, वहाँ से तुम जाकर दीक्षितजी के दरसन कर आना।

ता पाछें दिन दोय में अकबर पात्साह के डेरा गोवर्द्धन मानसी गंगा पै भये। तब बीरबल श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन कों गोपालपुर आयो। सो दरसन करिकें श्रीगुसांईजी कों दंडवत करिकें ता पाछें अपने डेरा आयो। पाछे नन्ददासने सुनी जो—अकबर पात्साह के डेरा गोवर्द्धन में मानसी गंगा पै भये हैं। सो अकबर पात्साह के एक लौंड़ी हती। सो वह श्रीगुसांईजी की सेवक हती। ताके ऊपर श्रीगोवर्द्धननाथजी बड़ी कृपा करते, वाकों दरसन देते।

वा लौंड़ी सों नंददास सों बड़ी प्रीति हती सो नन्ददास वा लौंड़ी सों मिलिवे कों मानसी गंगा पै आये। सो तहाँ वा लौंड़ी कों ढूंढन लागे। सो वह लौंड़ी एक एकांत ठौर में बिलछू पै वृच्छन की लतान की तरें रसोई करत हती। सो रसोई करिकैं भोग धर्यो हो। तहाँ श्रीगोवर्द्धननाथजी आपु पधारे हुते। सो नंददास ता समैं श्री-गोवर्द्धननाथजी कों देखै। सो दरसन करिकैं नन्ददास बहोत ही प्रसन्न भये। और कह्यो, जो-याके बड़े भाग्य हैं।

ता पाछैं नन्ददास एक वृच्छ की ओट में ठाड़े रहिकैं यह कीर्तन गायो। सो पद—

राग टोडी-

चित्र सराहति चितवति दुरि मुरि गोपी बहोत सयानी० ।

यह कीर्तन तहाँ नंददास ने गायो। तब जानें जो-इहाँ नन्ददास आये हैं। तब वा लौंड़ीने चारों ओर देख्यो। तब देखे तो-एक वृच्छ की ओट में नन्ददास ठाड़े हैं। तब वा लौंड़ीने नन्ददास कों कह्यो, जो-तुम ऐसे छिपकैं क्यों ठाड़े हो? मेरे पास क्यों नाँहि आवत हो?

तब नन्ददास नें कही जो-राजभोग को समो हतो, श्रीगोवर्द्धन-नाथजी अरोगवे पधारे हते। तातें हों इहां ठाड़ो होय रह्यो। ता पाछें भोग सराय कैं अनोसर कराय कैं कह्यो, जो-मैं तुमतें कही नांही सकत हों, परि श्रीनाथजी को महाप्रसाद है, तामें हू दूध की सामग्री है। तातें तुम्हारो मन प्रसन्न होय सो लेउ। काहेतें, जो-तुम ब्राह्मण हो। तब नन्ददासनें कह्यो, जो—अब तो मैं रंचक रंचक सब सामग्री लेउंगो। तब उन दोउ जनैंन नें प्रसन्नता सों महाप्रसाद लियो। ता पाछैं आचमन करिकें बैठे। तब वा लौंड़ी नें नन्ददास सों कह्यो, जो-अब इहां तें कहूँ न जानो होय तो आछो है। यहाँ जो-मानसीगंगा है। यह श्रीगिरिराज प्रभुनकी दयातें स्थल प्राप्त भयोहै। तातें अब मैं काहू देसमें न जाँउ तो आछो है,और अब सदा तुम्हारो संग होय तो आछो। तब नन्ददास ने लौंड़ी सों कह्यो, जो-प्रभु ऐसे ही करेंगे। ता पाछैं लौंड़ी ने कह्यो जो-प्रभु ऐसे ही करेंगे। ता पाछैं लौंड़ी ने कह्यो, जो—अब इन आँखिनसों लौकिक को देखनो उचित नांही है। पाछैं नन्ददास रात्रि कों अपने स्थान मानसी गंगा पै जाय

रहे। और प्रात:काल श्रीगोवर्द्धननाथजीके दरसन कों आये, सो श्री गोवर्द्धननाथजी के दरसन किये। और श्रीगुसांईजी के दरसन किये। ता पाछैं अकबर पात्साह के आगे तानसेन रात्रिकों गायवे कों आये। सो तहां नन्ददास को कियो पद तानसेनने गायो। सो पद—

राग केदारो।

'देखो री! देखो नागर नट नृत्यत कालिंदी के तट०'

× × ×

(अंतमें) 'नंददास गावत तहाँ निपट निकट'

यह नन्ददासको कियो पद सुनिकैं अकबर पात्साहने तानसेन सों पूछी, जो—जिसने यह पद बनाया है, सो कहाँ है? तब बीरबल ने अकबर पात्साह सों कह्यो,—साहब! वह तो यहाँ ही है, श्रीनाथ-जी द्वार में रहता है। बड़ा कवि और भगवदीय है।

तब देसाधिपति ने बीरबल सों कह्यो, जो—इसी घड़ी उनको इहाँ बुलावो। तब बीरबलने पात्साह सों कह्यो, जो—साहब! वह इस भाँति से तो यहाँ न आवेंगे। मैं कल जाकर लिवा लाऊंगा।

ता पाछैं दूसरे दिन बीरबल गोपालपुर आयो। तब श्रीगुसांईजी के दरसन किये। ता पाछे नन्ददास सों बीरबलने कह्यो, जो-नंददास जी! तुमकों अकबर पात्साहने बुलाये हैं। तब नन्ददास ने बीरबल सों कह्यो, जो-मोकों अकबर पातसाह सों कहा प्रयोजन है? मोकों कछु द्रव्य की चाहना नांहि। जो—मैं जाऊं। और मेरे कछु द्रव्य नांही। जो-अकबर पात्साह लेइगो। तातें हमारो कहा काम है? तब बीरबल ने कह्यो जो-तुम न चलोगे तो अकबर पातसाह ही तुम्हारे पास आवेगो।

तब नन्ददासनें कही,जो-तुम इहाँ वाकों मति लावो। इहाँ भीड़ को काम नाँही है। तातें मैं सेन आरती पाछैं श्रीगुसांईजी सों दण्डवत करिकैं बिदा होयकैं मानसीगंगा आउंगो! पाछैं नंददास सेन आरती के दरसन करि, श्रीगुसांईजी सों दण्डवत करि कैं बिदा होय कैं मानसी गंगा आये! सो तहां अकबर पात्साह और बीरबल दोउ जनें बैठे हते। सो नंददास कों देखिकैं पात्साहने सन्मान करिकैं बैठाये। ता पाछैं अकबर पात्साह ने

नन्ददास सों कह्यो जो तुमने रास को पद बनायो है, तामें तुमने कह्यो है, जो—'नन्ददास गावे तहाँ निपट निकट' सो इतनो झूठ क्यों बोलत हो? जो तुम कहो, जो—कौन भाँति सों निकट आये? तब नन्ददासनें पातसाह सों कह्यो, जो—मेरे कहे को तुमकों विश्वास न होयगो। सो तुम्हारे घर में फलानी (रूपमंजरी?) लोंड़ी है तासों तुम पूछ लेउ, जो जानत हैं।

तब अकबर पातसाह ने बीरबल कों तो नंददास के पास बैठाये, और आप अपने डेरामें जायकें वा लोंड़ी सों पूछी, जो—यह रास को पद नन्ददास नें गायो है, सो ताको अभिप्राय कहा है? तब यह बचन पातसाह के सुनिकें वह लोंड़ी पछाड़ खायकें गिरि परी, सो देह छूटि गई। सो वह लीला में जायकें प्राप्त भई। तब देसाधिपति नंददास के पास दौरे आये। सो इहाँ आयकें देखे तो नन्ददास की हू देह छूटि गई है। सो एउ लीला में जायकें प्राप्त भये।

तब अकबर पातसाह कों बड़ो आश्चर्य भयो। तब वाने बीरबल सों पूंछी, जो इन दोउन की देह क्यों छूटि गई? तब बीरबल ने पातसाह सों कह्यो जो—साहिब इन (नें) अपनो धर्म राख्यो। काहे तें यह बात बतायवे में न आवे, कहिवे में न आवे। तासों या बात कों तो यही उपाय है। ता पाछें अकबर पातसाह अपने डेरान में आयो। ता पाछें यह बात वैष्णवननें सुनी सो आयकें यह समाचार सब श्रीगुसांईजी सों कहे, जो—महाराज! नंददासजीनें मानसीगंगा पै या रीति सों देह छोड़ी।

तब श्रीगुसांईजीनें बहोत ही सराहना करी। जो वैष्णव कों ऐसे ही अपनो धर्म (गुप्त) राख्यो चाहिये। जो—और कें आगे कहनो नांही। सो वह नंददासजी और वह लोंड़ी ऐसे भगवदीय हते। सो दोउ जनेननें अपनो धर्म गोप्य राख्यो।

सो वह लोंड़ीहू ऐसी भगवदीय भई और नंददासजीहू श्रीगुसांईजी के ऐसे कृपापात्र भगवदीय हते, जिनके ऊपर श्रीगुसांईजी सदा प्रसन्न रहते। और अपने स्वरूपानंद को वैभव दिखायो। तातें उनकी वार्ता कहाँ ताईं कहिए? ता वार्ता को पार ना आवे, ऐसे भगवदीय भये।

॥ इति श्री अष्टछाप की वार्ता संपूरन ॥

हमारे नये प्रकाशन

१—८४ वैष्णवन की वार्ता (तीन जन्म की) १२)

२—षटऋतु वार्ता (चतुर्भुजदास कथित) १)

३—वार्ता-साहित्य-मीमांसा ॥)

४—सूर-निर्णय ५)

५—अष्टछाप परिचय ५)

शीघ्र होने वाले प्रकाशन—

१—२५२ वैष्णवन की वार्ता (तीन जन्म की)

२—पुष्टिमार्गीय भक्त कवि

पत्र व्यवहार का पता—

द्वारकादास परीख,

सुरभिकुंड, जतीपुरा (मथुरा)

आप ग्राहक हैं ?

"वल्लभीय-सुधा"

(त्रैमासिक)

इसमें धर्म, इतिहास और कलात्मक—विशिष्ट अप्रसिद्ध साहित्य प्रकाशित होता है।

वार्षिक मूल्य केवल रु० २)

मिलने का पता—

द्वारकादास परीख

सुरभिकुंड, जतीपुरा (मथुरा)